Index/अनुक्रमणिका

01. Index/ अनुक्रमणिका 01

02. Regional Editor Board / Editorial Advisory Board 05/06

03. Referee Board 07

04. Spokesperson 09

(Science / विज्ञान)

05. Optical Properties and Characterization of Manganese Doped Zinc Sulfide Nanocrystals 11
(U. S. Patle)

06. Eco Friendly Pest Control Growing A Green World - Review (Dr. Rashmi Ahuja) 13

07. Mineralization Of Brilliant Cresyl Blue Dye Utilizing Visible Light And Tio_2 As 16
Photocatalyst (David Swami)

08. Effect Of Green Manure (*Vallisneria Spirallis)* On Gram *(Cicer Arietinum)* Germination 19
(Malini Johnson, D.K. Billore)

09. Common Ethnomedicinal Plants (Dr. Sarita Ghanghat) 22

10. Sacred Trees, Folk Deities And Conservation Of Environment (Dr. Kumud Dubey) 24

11. General Organization & Taxonomy of Reptile (Dr. Sunita Shakle) 26

12. Biomass Energy And Sustainable Development (Dr. Avinash Dube) 28

13. गिद्धों की घटती संख्या एवं संरक्षण (म.प्र. के कुछ जिलों में किए गए कार्यों के संदर्भ में) (अंचल रामटेके) 30

(Home Science / गृह विज्ञान)

14. Fabric Recycling and Reuse - Reducing Carbon Footprint (Dr. Smita Jain) 32

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

15. Indian Exports And FDI Outflow - An Overview (Dr. Anu Mehta) 35

16. Overview Of Small Scale Industries In Jammu And Kashmir 39
(Mohd. Rafi Malla, Dr. Laxmi Narayan Sharma)

17. Performance Appraisal System In BHEL (Dr. Lokesh Jarwal) 42

18. Supply Chain Management Network in E-Commerce (Dr. Monica Masih, Muriel Singh) 44

19. जबलपुर संभाग में महिला उद्यमिता की स्थिति–एक अध्ययन (डॉ. जय सिंह उर्वेती) 45

20. औद्योगिक विकास में नीतियॉ– उपलब्धियां एवं भावी सम्भावनाओं का अध्ययन 48
(डॉ. आर. के. खजवानिया, ज्योति विश्वकर्मा)

21. जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा द्वारा ग्रामीण हितग्राहियों को प्रदत्त अल्पकालीन साख का विश्लेषण 51
(वर्ष 2009–10 से 2013–14 तक) (डॉ. लक्ष्मण परवाल, श्याम कुमार मिनोटे)

22. देवास जिले की जिला सहकारी केन्द्रीय बैंकों का ग्रामीण विकास में योगदान (डॉ. रितेश शर्मा) 54

23. शासकीय योजनाए एवं जनजाति समुदाय की आर्थिक, जनांकिकीय स्थिति एक विश्लेषण संदर्भ – जिला बड़वानी 56
(डॉ. जयराम बघेल)

24. विकास एवं पर्यावरण संरक्षण (डॉ. पी. डी. ज्ञानानी) 58
25. महिला सशक्तिकरण की दशा एवं दिशा (डॉ. रायकू जमरा) 60
26. कर्ज माफी कृषकों की आर्थिक समस्या का हल नहीं ? एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. संजय जौहरी) 62

(Economics / अर्थशास्त्र)

27. भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की प्रवृत्तियां – एक अध्ययन (डॉ. विभा वासुदेव) 64
28. महिला उद्यमिता एवं स्वरोजगारमूलक योजनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में) 68
(कमलराज सिंह उईके)
29. भारत में लैंगिक असमानता – एक अध्ययन (डॉ. शक्ति जैन) 72
30. 'ग्रामीण विकास प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना का कृषि में आधुनिकीकरण पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन' 74
(धार जिले के विशेष सन्दर्भ में) (मंजुला मण्डलोई)
31. कृषक उपभोक्ता संरक्षण कानून अधिकार क्षेत्र और प्रक्रिया का आर्थिक प्रभाव (डॉ. राजमणि साकेत) 76
32. शिक्षा तथा स्वास्थ्य योजनाओं में महिलाओं की स्थिति में सुधार (जगदीश मुवेल) 78
33. ग्रामीण विकास में महिलाओं की स्थिति एवं भूमिका (डॉ. आशा दुबे) 80

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

34. लोक सेवा अधिनियम– सुशासन की ओर (डॉ. शकुन शुक्ला, मनीषा मिश्रा) 81
35. भारतीय लोकतंत्र की संरचना का पुख्ता आधार सामाजिक न्याय – एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (सुश्री पद्मासिनी) 84
36. आरक्षण नीति – एक अध्ययन (डॉ. भावना नायक) 87
37. राजनीति के क्षेत्र में पत्रकारिता की भूमिका एवं पत्रकारिता के पक्ष में सुझाव (डॉ. जे. के. संत, डॉ. माया पारस) 89
38. भारत में न्यायिक सक्रियता – स्थिति और संभावनाएं – एक अध्ययन (डॉ. प्रदीप कुमार चतुर्वेदी) 91

(History / इतिहास)

39. अर्बुदांचल में शैव मतावलम्बिय दर्शनीय स्थल (डॉ. मनोज दाधीच, संजय परिहार) 93
40. मुगल कालीन भारत में राज्य का स्वरूप (डॉ. सुनीता शुक्ला) 95

(Sociology / समाजशास्त्र)

41. बैगा जनजातियों की उपजातियाँ एवं गोत्र (मण्डला जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. ज्योति सिंह) 96
42. अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम, 1989 (अन्ना तिरकी) 100
43. आधुनिक भारत में महिलाओं के स्वतंत्रता एवं समानता के मसीहा – डॉ. अम्बेडकर (डॉ. संजय जोशी) 104
44. जनजातियों में मृत्यु संस्कार और मेनहिर (मध्य बस्तर नारायणपुर के जनजातियों के विशेष संदर्भ में) 107
(डॉ. बसंत नाग, डॉ. के. आर. ध्रुर्वे)
45. सम्मान हत्या का समाजशास्त्रीय अध्ययन (रीमा विकल) 110

46. भारतीय समाज में वृद्धजनों की समस्याएं (डॉ. सिद्धिश्री सिंह) 113
47. स्मॉग – हवा में घुलता जहर स्मोक और फॉग का जहरीला कॉकटेल एक समस्या (प्रो. शोभना परमार) 115

(Geography / भूगोल)

48. जाँजगीर–चॉम्पा जिले में खाद्य पदार्थों की उपलब्धता एवं आहार प्रतिरूप (डॉ. कपूरचंद गुप्ता) 116
49. मध्यप्रदेश की बैतूल जिले की कोरकू जनजाति का भौगोलिक विवेचन (मृदुला रानी मंडल) 120
50. थारू जनजाति में सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन की उभरती हुई नवीन प्रवृतियाँ 124
(हरद्वारी लाल, डॉ. अनिता रूडोला)
51. संजय सरोवर बांध में मत्स्य पालन विकास व संभावनायें (सिवनी जिले के संदर्भ में) (नीतू उइके) 127
52. भारतीय संस्कृति में पर्यावरण चिंतन एवं मानव स्वास्थ्य (डॉ. राम सिंह धुर्वे) 129
53. मुरार विकासखण्ड के नगरीय एवं ग्रामीण बालक एवं बालिकाओं के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन 132
(कंचन दुबे, डॉ. अंजू गुप्ता, डॉ. मंजू दुबे)

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

54. मूल्य केन्द्रित प्रतिनिधि कहानियों की विकास यात्रा (दिनेश कुमार अहिरवार) 134
55. दलित आत्मकथाओं द्वारा दलितों की सामाजिक स्थिति का अध्ययन (डॉ. आई. के. बेक, मनीष कुमार महरा) 137
56. हिन्दू–मुस्लिम समाज,संस्कृति केन्द्रित उपन्यासों की विकास यात्रा (संजय तिवारी) 140
57. छायावादी काव्य में नारी का बदलता दृष्टिकोण – एक अध्ययन (डॉ. ओ. एस. परिहार) 143
58. केशवदास की काव्य साधना (डॉ. वन्दना जैन) 146
59. मालवी कवि संत पीपा (डॉ. मुग्धा राजपूत) 148
60. वृन्दावनलाल वर्मा का स्त्री चिंतन (मेघा मिश्रा) 150
61. मालवी के मानद कवि–बालकवि बैरागी (डॉ. पारसमणि गुप्ता) 151

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

62. **Women Empowerment in the Novels of Premchand (Ravindra Kumar)** 152
63. **The Theme Of Alienation In The Works Of Bharati Mukherjee (Dr. Neha Gupta)** 155
64. **Love, Sex And Marriage In K. A. Porter's Ship Of Fool's (Dr. Anita Tripathi)** 157

(Psychology / मनोविज्ञान)

65. महिलाओं एवं पुरूषों में मधुमेह रोग के प्रति जागरूकता का अध्ययन (सुधा शाक्य) 159
66. उच्च समायोजनशील तथा निम्न समायोजनशील युवाओं में आक्रामकता का तुलनात्मक अध्ययन (भारती साहू) 162
67. अनुसूचित जन जाति एवं सामान्य जाति के छात्र/छात्राओं में उपलब्धि अभिप्रेरणा पर प्रभाव (घनश्याम डेहरिया) 165

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

68. A Comparative Study On Agility And Explosive Power Between Kabaddi And Korfball Players Of Agra District (Dr. Ramneek Jain) 167

(Education / शिक्षा)

69. आधुनिक परिप्रेक्ष्य में श्री अरविन्द के शिक्षा–दर्शन की प्रासंगिकता–एक अध्ययन (डॉ. शुभ्रा श्रीवास्तव) 170

(Drawing / चित्रकला)

70. भारतीय चित्रकला में राग रागिनी का सौन्दर्यपूर्ण अंकन (अर्चना) 172

****

Regional Editor Board - International & National

1. Dr. Manisha Thakur - Fulton College, Arizona State University, America.
2. Mr. Ashok Kumar - Employbility Operations Manager, Action Training Centre Ltd. London, U.K.
3. Ass. Prof. Beciu Silviu - Vice Dean (Management) Agriculture & Rural Development, UASVM, Bucharest, Romania.
4. Mr. Khgendra Prasad Subedi - Senior Psychologist, Public Service Commission, Central Office, Anamnagar, Kathmandu, Nepal.
5. Prof. Dr. G.C. Khimesara - Former Principal, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) India
6. Prof. Dr. Pramod Kr. Raghav - Research Guide, Jyoti Vidhyapeeth Women University, Jaipur (Raj.) India
7. Prof. Dr. Anoop Vyas - Former Dean, Commerce, Devi Ahilya University, Indore (India) India
8. Prof. Dr. P.P. Pandey - Dean, Commerce, Avadesh Pratapsingh University, Rewa (M.P.) India
9. Prof. Dr. Sanjay Bhayani - HOD, Business Management Deptt., Saurashtra University, Rajkot (Guj.) India
10. Prof. Dr. Pratap Rao Kadam - HOD, Commerce, Govt. Girls PG College, Khandwa (M.P.) India
11. Prof. Dr. B.S. Jhare - Professor, Commerce Deptt., Shri Shivaji College, Akola (Mh.) India
12. Prof. Dr. Sanjay Khare - Prof., Sociology, Govt. Auto. Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
13. Prof. Dr. R.P. Upadhayay - Exam Controller, Govt. Kamlaraje Girls Auto. PG College, Gwalior (M.P.) India
14. Prof. Dr. Pradeep Kr. Sharma - Professor, Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) India
15. Prof. Akhilesh Jadhav - Prof., Physics, Govt. J. Yoganandan Chattisgarh College, Raipur (C.G.) India
16. Prof. Dr. Kamal Jain - Prof., Commerce, Govt. PG College, Khargone (M.P.) India
17. Prof. Dr. D.L. Khadse - Prof., Commerce, Dhanvate National College, Nagpur (Maharastra) India
18. Prof. Dr.Vandna Jain - Prof., Hindi, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) India
19. Prof. Dr. Hardayal Ahirwar - Prof.,Economics, Govt. PG College, Shahdol (M.P.) India
20. Prof. Dr. Sharda Trivedi - Retd. Professor, Home Science, Indore (M.P.) India
21. Prof. Dr. Usha Shrivastav - HOD, Hindi Deptt., Acharya Institute of Graduate Study, Soldevanali, Bengaluru (Karnataka) India
22. Prof. Dr. G. P. Dawre - Professor, Commerce, Govt. College, Badwah (M.P.) India
23. Prof. Dr. H.K. Chouarsiya - Prof., Botany, T.N.V. College, Bhagalpur (Bihar) India
24. Prof. Dr. Vivek Patel - Prof., Commerce, Govt. College, Kotma, Distt., Anooppur (M.P.) India
25. Prof. Dr. Dinesh Kr. Chaudhary - Prof., Commerce, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) India
26. Prof. Dr. P.K. Mishra - Prof., Zoological, Govt. PG College, Betul (M.P.) India
27. Prof. Dr. Jitendra K. Sharma - Prof., Commerce, Maharishi Dayanand Uni. Centre, Palwal (Haryana) India
28. Prof. Dr. R. K. Gautam - Prof., Govt. Manjkuwar Bai Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.) India
29. Prof. Dr. Gayatri Vajpai - Professor, Hindi, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.) India
30. Prof. Dr. Avinash Shendare - HOD, Pragati Arts & Commerce College, Dombivali, Mumbai (Mh.) India
31. Prof. Dr. J.C. Mehta - Fr. HOD, Research Centre, Commerce, Devi Ahilya Uni., Indore (M.P.) India
32. Prof. Dr. B.S. Makkad - HOD, Research Centre Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) India
33. Prof. Dr. P.P. Mishra - HOD, Maths, Chattrasal Govt. PG College, Panna (M.P.) India
34. Prof. Dr. Sunil Kumar Sikarwar - Professor, Chemistry, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
35. Prof. Dr. K.L. Sahu - Professor, History, Govt. PG College, Narsinghpur (M.P.) India
36. Prof. Dr. Malini Johnson - Professor, Botany, Govt. PG College, Mahu (M.P.) India
37. Prof. Dr. Ravi Gaur - Asso. Professor, Mathematics, Gujarat University, Ahmedabad (Gujarat) India
38. Prof. Dr. Vishal Purohit - M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Miadan, Indore (M.P.) India

Editorial Advisory Board, INDIA

1. Prof. Dr. Narendra Shrivastav - Scientist , ISRO, Bengaluru (Karnataka) India
2. Prof. Dr. Aditya Lunawat - Director, Swami Vivekanand Career Guidance deptt. M.P. Higher Education, M.P. Govt., Bhopal (M.P.) India
3. Prof. Dr. Sanjay Jain - O.S.D., Additional Director Office, Bhopal (M.P.) India
4. Prof. Dr S.K. Joshi - Former Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) India
5. Prof. Dr. J.P.N. Pandey - Fr. Principal, Govt. Auto.Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.) India
6. Prof. Dr. Sumitra Waskel - Principal, Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.) India
7. Prof. Dr. P.R. Chandelkar - Principal, Govt. Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.) India
8. Prof. Dr. Mangal Mishra - Principal, Shri Cloth Market, Girls Commerce College, Indore (M.P.) India
9. Prof. Dr. R.K. Bhatt - Former Principal, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) India
10. Prof. Dr. Ashok Verma - Former HOD, Commerce (Dean) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
11. Prof. Dr. Rakesh Dhand - HOD, Student Welfare Deptt., Vikram University, Ujjain (M.P.) India
12. Prof. Dr. Anil Shivani - HOD, Commerce /Management, Govt. Hamidiya Arts And Commerce Degree College, Bhopal (M.P.) India
13. Prof. Dr. PadamSingh Patel - HOD, Commerce Deptt., Govt. College, Mahidpur (M.P.) India
14. Prof. Dr. Manju Dubey - HOD (Dean), Home Science Deptt. Jiwaji University, Gwalior (M.P.) India
15. Prof. Dr. A.K. Choudhary - Professor, Psychology, Govt. Meera Girls College, Udiapur (Raj.) India
16. Prof. Dr. T. M. Khan - Principal, Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) India
17. Prof. Dr. Pradeep Singh Rao - Principal, Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.) India
18. Prof. Dr. K.K. Shrivastava - Professor, Eco., Vijaya Raje Govt. Girls P.G. College, Gwalior (M.P.) India
19. Prof. Dr. Kanta Alawa - Professor, Pol. Sci., S.B.N.Govt. P.G. College, Badwani (M.P.) India
20. Prof. Dr. S.C. Jain - Professor, Commerce, Govt. P.G. College, Jhabua (M.P.) India
21. Prof. Dr. Kishan Yadav - Asso. Professor, Research Centre Bundelkhand College, Jhasi (U.P.) India
22. Prof. Dr. B.R. Nalwaya - Chairman,Commerce Deptt.,Vikram University, Ujjain (M.P.) India
23. Prof. Dr. Purshottam Gautam - Dean, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
24. Prof. Dr. Natwarlal Gupta - HOD, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
25. Prof. Dr. S.C. Mehta - Former, Professor/HOD, Govt. Bhagat Singh P.G. College, Jaora (M.P.) India

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Referee Board

Maths	-	(1)	Prof. Dr. V.K. Gupta, Director Vedic Maths - Research Centre, Ujjain (M.P.)
Physics	-	(1)	Prof. Dr. R.C. Dixit, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Neeraj Dubey, Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
Computer Science	-	(1)	Prof. Dr. Umesh Kumar Singh, HOD, Computer Study Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
Chemistry	-	(1)	Prof. Dr. Manmeet Kaur Makkad, Govt. Kalidas Girls College,Ujjain (M.P.)
Botany	-	(1)	Prof. Dr. Suchita Jain, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)
		(2)	Prof. Dr. Akhilesh Aayachi, Govt. Adarsh Science College, Jabalpur (M.P.)
Life Science	-	(1)	Prof. Dr. Manjulata Sharma, M.S.J. Govt. College, Bharatpur (Raj.)
	-	(2)	Prof. Dr. Amrita Khatri, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
Statitics	-	(1)	Prof. Dr. Ramesh Pandya, Govt. Arts - Commerce College, Ratlam (M.P.)
Military Science	-	(1)	Prof. Dr. Kailash Tyagi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
Biology	-	(1)	Dr. Kanchan Dhingara, Govt. M.H. Home Science College, Jabalpur (M.P.)
Geology	-	(1)	Prof. Dr. R.S. Raghuvanshi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Suyesh Kumar, Govt. Adarsh College, Gwalior (M.P.)
Medical Science	-	(1)	Dr.H.G. Varudhkar, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.)
Microbiology Sci.	-	(1)	Anurag D. Zaveri, **Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat)**
			***** Commerce *****
Commerece	-	(1)	Prof. Dr. P.K. Jain, Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Shailendra Bharal, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Laxman Parwal, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
		(4)	Naresh Kumar, Assistant Professor,Sidharth Govt. College, Nadaun (H.P.)
			***** Management *****
Management	-	(1)	Prof. Dr. Anand Tiwari, Govt. Autonomus PG Girls Excellence College, Sagar (M.P.)
Human Resources	-	(1)	Prof. Dr. Harwinder Soni, Pacific Business School, Udaipur (Raj.)
Business Administration	-	(1)	Prof. Dr. Kapildev Sharma, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)
			***** Law *****
Law	-	(1)	Prof. Dr. S.N. Sharma, Principal, Govt. Madhav Law College, Ujjain (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Narendra Kumar Jain, Principal, Shri Jawaharlal Nehru PG Law College, Mandsaur (M.P.)
			***** Arts *****
Economics	-	(1)	Prof. Dr. P.C. Ranka, Sri Sitaram Jaju Govt. Girls P.G. College, Neemuch (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. J.P. Mishra, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Anjana Jain, M.L.B. Govt. Girls P.G. College, Kila Maidan, Indore (M.P.)
		(4)	Prof. Rakesh Kumar Gupta, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)
Political Science	-	(1)	Prof. Dr. Ravindra Sohoni, Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Anil Jain, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Sulekha Mishra, Mankuwar Bai Govt. Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.)
Philosophy	-	(1)	Prof. Dr. Hemant Namdev, Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
Sociology	-	(1)	Prof. Dr. Uma Lavania, Govt. Girls College, Bina (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. H.L. Phulvare, Govt. P.G. College, Dhar (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Indira Burman, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)

Hindi	-	(1)	Prof. Dr. Vandana Agnihotri, Chairperson, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Kala Joshi , ABV Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Chanda Talera Jain, M.J.B. Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.)
		(4)	Prof. Dr. Jaya Priyadarshini Shukla, Vansthali Vidyapeeth (Raj.)
		(5)	Prof. Dr. Amit Shukla, Govt. Thakur Ranmatsingh College, Rewa (M.P.)
English	-	(1)	Prof. Dr. Ajay Bhargava, Govt. College, Badnagar (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Manjari Agnihotri, Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
Sanskrit	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Srivastava, Govt. Autonomus Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Balkrishan Prajapati, Govt. P.G. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
History	-	(1)	Prof. Dr. Naveen Gidiyan, Govt. Autonomus Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.)
Geography	-	(1)	Prof. Dr. Rajendra Srivastava, Govt. College, Pipliya Mandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
		(2)	Prof. Kajol Moitra, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.)
Psychology	-	(1)	Prof. Dr. Kamna Verma, Principal, Govt. Rajmata Sindhiya Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Saroj Kothari, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
Drawing	-	(1)	Prof. Dr. Alpana Upadhyay, Govt. Madhav Arts-Commerce-Law College. Ujjain (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Rekha Srivastava, Maharani Laxmibai Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Yatindera Mahobe, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.)
Music/Dance	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Grover (Kathak),Swami Vivekanand Subharti University, Meerut (U.P.)
		(2)	Prof. Dr. Sripad Aronkar, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.)
			***** Home Science *****
Diet/Nutrition	-	(1)	Prof.Dr. Pragati Desai, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
Science		(2)	Prof. Madhu Goyal, Swami Keshavanand Home Science College, Bikaner (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Sandhya Verma, Govt. Arts & Commerce College, Raipur (Chhattisgarh)
Human	-	(1)	Prof. Dr. Meenakshi Mathur, HOD, Jainarayan Vyas University, Jodhpur (Raj.)
Development		(2)	Prof. Dr. Abha Tiwari, HOD, Research Centre, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.)
Family Resource Management	-	(1)	Prof. Dr. Manju Sharma, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Namrata Arora, Vansthali Vidhyapeeth (Raj.)
			***** Education *****
Education	-	(1)	Prof. Dr. Manorama Mathur, Mahindra College of Education, Bangluru (Karnataka)
		(2)	Prof. Dr. N.M.G. Mathur, Principal/Dean, Pacific EducationCollege, Udaipur (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Neena Aneja, Principal, A.S. College Of Education, Khanna (Punjab)
		(4)	Prof. Dr. Satish Gill, Shiv College of Education,Tigaon, Faridabad (Haryana)
		(5)	Prof. Dr. Mahesh Kumar Muchhal, Digambar Jain (P.G.) College, Baraut (U.P.)
			***** Architecture *****
Architecture	-	(1)	Prof. Kiran P. Shindey, Principal,School of Architecture,IPS Academy, Indore (M.P.)
			***** Physical Education *****
Physical Education	-	(1)	Prof. Dr. Joginder Singh, Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj.)
		(2)	Dr. Ramneek Jain, Associate Professor, Madhav University, Pindwara (Raj.)
		(3)	Dr. Seema Gurjar, Associate Professor, Pacific University, Udaipur (Raj.)
			***** Library Science *****
Library Science	-	(1)	Dr. Anil Sirothia, Govt. Maharaja College, Chhattarpur (M.P.)

Spokesperson's

1.	Prof. Dr. Davendra Rathore	-	Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.)
2.	Prof. Smt. Vijaya Wadhwa	-	Govt. Girls P.G. College, Neemuch (M.P.)
3.	Dr. Surendra Shaktawat	-	Gyanodaya Institute of Management - Technology, Neemuch (M.P.)
4.	Prof. Dr. Devilal Ahir	-	Govt. College, Jawad, Distt. Neemuch (M.P.)
5.	Shri Ashish Dwivedi	-	Govt. College, Manasa, Distt. Neemuch (M.P.)
6.	Prof. Manoj Mahajan	-	Govt. College, Sonkach, Distt. Dewas (M.P.)
7.	Shri Umesh Sharma	-	Shree Sarvodaya Institute Of Professional Studies, Sarwaniya Maharaj, Jawad, Distt. Neemuch (M.P.)
8.	Prof. Dr. S.P. Panwar	-	Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.)
9.	Prof. Dr. Puralal Patidar	-	Govt. Girls College, Mandsaur (M.P.)
10.	Prof. Dr. Kshitij Purohit	-	Jain Arts, Commerce & Science College, Mandsaur (M.P.)
11.	Prof. Dr. N.K. Patidar	-	Govt. College, Pipliyamandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
12.	Prof. Dr. Y.K. Mishra	-	Govt. Arts & Commerce College, Ratlam (M.P.)
13.	Prof. Dr. Suresh Kataria	-	Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
14.	Prof. Dr. Abhay Pathak	-	Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
15.	Prof. Dr. Malsingh Chouhan	-	Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.)
16.	Prof. Dr. Gendalal Chouhan	-	Govt. Vikram College, Khachrod, Distt. Ujjain (M.P.)
17.	Prof. Dr. Prabhakar Mishra	-	Govt. College, Mahidpur, Distt. Ujjain (M.P.)
18.	Prof. Dr. Prakash Kumar Jain	-	Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
19.	Prof. Dr. Kamla Chauhan	-	Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
20.	Prof. Abha Dixit	-	Govt. Girls P.G. College, Ujjain (M.P.)
21.	Prof. Dr. Pankaj Maheshwari	-	Govt. College, Tarana, Distt. Ujjain (M.P.)
22.	Prof. Dr. D.C. Rathi	-	Swami Vivekanand Career Gudiance Deptt., Higher Education Deptt., M.P. Govt., Indore (M.P.)
23.	Prof. Dr. Anita Gagrade	-	Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
24.	Prof. Dr. Sanjay Pandit	-	Govt. M.J.B. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
25.	Prof.Dr. Rambabu Gupta	-	Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
26.	Prof. Dr. Anjana Saxena	-	Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
27.	Prof. Dr. Sonali Nargunde	-	Journalism & Mass Comm .Research Centre, D.A.V.V., Indore (M.P.)
28.	Prof. Dr. Bharti Joshi	-	Life Education Department, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
29.	Prof. Dr. M.D. Somani	-	Govt. M.J.B. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
30.	Prof. Dr. Priti Bhatt	-	Govt. N.S.P. Science College, Indore (M.P.)
31.	Prof. Dr. Sanjay Prasad	-	Govt. College, Sanwer, Distt. Indore (M.P.)
32.	Prof. Dr. Meena Matkar	-	Suganidevi Girls College, Indore (M.P.)
33.	Prof. Dr. Mohan Waskel	-	Govt. College, Thandla Distt. Jhabua (M.P.)
34.	Prof. Dr. Nitin Sahariya	-	Govt. College, Kotma Distt. Anooppur (M.P.)
35.	Prof. Dr. Manju Rajoriya	-	Govt. Girls College, Dewas (M.P.)
36.	Prof. Dr. Shahjad Qureshi	-	Govt. New Arts & Science College, Mundi, Distt. Khandwa (M.P.)
37.	Prof. Dr. Shail Bala Sanghi	-	Maharani Lakshmibai Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
38.	Prof. Dr. Praveen Ojha	-	Shri Bhagwat Sahay Govt. P.G. College, Gwalior (M.P.)
39.	Prof. Dr. Omprakash Sharma	-	Govt. P.G. College, Sheopur (M.P.)
40.	Prof. Dr. S.K. Shrivastava	-	Govt. Vijayaraje Girls P.G. College, Gwalior (M.P.)
41.	Prof. Dr. Anoop Moghe	-	Govt. Kamlaraje Girls P.G. College, Gwalior (M.P.)
42.	Prof. Dr. Hemlata Chouhan	-	Govt. College, Badnagar (M.P.)
43.	Prof. Dr. Maheshchandra Gupta	-	Govt. P.G. College, Khargone (M.P.)
44.	Prof. Dr. Mangla Thakur	-	Govt. P.G. College, Badhwah, Distt. Khargone (M.P.)
45.	Prof. Dr. K.R. Kumhekar	-	Govt College, Sanawad, Distt. Khargone(M.P.)

46. Prof. Dr. R.K. Yadav - Govt. Girls College, Khargone (M.P.)
47. Prof. Dr. Asha Sakhi Gupta - Govt. P.G. College, Badwani (M.P.)
48. Prof. Dr. Hemsingh Mandloi - Govt. P.G. College, Dhar (M.P.)
49. Prof. Dr. Prabha Pandey - Govt. P.G. College, Mehar, Distt. Satna (M.P.)
50. Prof. Dr. Rajesh Kumar - Govt. College, Amarpatan, Distt. Satna (M.P.)
51. Prof. Dr. Ravendra singh Patel - Govt. P.G. College, Satna (M.P.)
52. Prof. Dr. Manoharlal Gupta - Govt. P.G. College, Rajgarh, Biora (M.P.)
53. Prof. Dr. Madhusudan Prakash - Govt. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
54. Prof. Dr. Yuwraj Shirvatava - Dr. C.V. Raman Univeristy, Bilaspur (C.G.)
55. Prof. Dr. Sunil Vajpai - Govt. Tilak P.G. College, Katni (M.P.)
56. Prof. Dr. B.S. Sisodiya - Govt. P.G. College, Dhar (M.P
58. Prof. Dr. A. K. Pandey - Govt. Girls College, Satna (M.P.)
58. Prof. Dr. Shashi Prabha Jain - Govt. P.G. College, Agar-Malwa (M.P.)
59. Prof. Dr. Niyaz Ansari - Govt. College, Sinhaval, Distt. Sidhi (M.P.)
60. Prof. Dr. ArjunSingh Baghel - Govt. College, Harda (M.P.)
61. Dr. Suresh Kumar Vimal - Govt. College, Bansadehi, Distt. Betul (M.P.)
62. Prof. Dr. Amar Chand Jain - Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
63. Prof. Dr. Rashmi Dubey - Govt. Autonomus Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.)
64. Prof. Dr. A.K. Jain - Govt. P.G. College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
65. Prof. Dr. Sandhya Tikekar - Govt. Girls College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
66. Prof. Dr. Rajiv Sharma - Govt. Narmada P.G. College, Hoshangabad (M.P.)
67. Prof. Dr. Rashmi Srivastava - Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)
68. Prof. Dr. Laxmikant Chandela - Govt. Autonomus P.G. College, Chhindwara (M.P.)
69. Prof. Dr. Balram Singotiya - Govt. College, Saunsar, Distt. Chhindwara (M.P.)
70. Prof. Dr. Vimmi Bahel - Govt. College, Kalapipal, Distt. Shajapur (M.P.)
71. Prof. Aprajita Bhargava - R.D.Public School, Betul (M.P)
72. Prof. Dr. Meenu Gajala Khan - Govt. College, Maksi, Distt. Shajapaur (M.P.)
73. Prof. Dr. Pallavi Mishra - Govt. College, Mauganj Distt. Rewa (M.P.)
74. Prof. Dr. N.P. Sharma - Govt. College, Datia (M.P.)
75. Prof. Dr. Jaya Sharma - Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
76. Prof. Dr. Sunil Somwanshi - Govt. College, Nepanagar, Distt. Burhanpur (M.P.)
77. Prof. Dr. Ishrat Khan - Govt. College, Raisen (M.P.)
78. Prof. Dr. Kamlesh Singh Negi - Govt. P.G. College, Sehore (M.P.)
79. Prof. Dr. Bhawana Thakur - Govt. College, Rehati, Distt. Sehore (M.P.)
80. Prof. Dr. Keshavmani Sharma - Pandit Balkrishan Sharma New Govt. College, Shajapur (M.P.)
81. Prof. Dr. Renu Rajesh - Govt. Nehru Leading College ,Ashok Nagar (M.P.)
82. Prof. Dr. Avinash Dubey - Govt. P.G. College, Khandwa (M.P.)
83. Prof. Dr. V.K. Dixit - Chhatrasal Govt. P.G. College, Panna (M.P.)
84. Prof. Dr. Ram Awdesh Sharma - M.J.S. Govt. P.G. College, Bhind (M.P.)
85. Prof. Dr. Manoj Kr. Agnihotri - Sarojini Naidu Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
86. Prof. Dr. Sameer Kr. Shukla - Govt. Chandra Vijay College, Dhindori (M.P.)
87. Prof. Dr. Anoop Parsai - Govt. J. Yoganand Chattisgarh P.G. College, Raipur (Chattisgarh)
88. Prof. Dr. Anil Kumar Jain - Vardhaman Mahavir Open University, Kota (Rajasthan)
89. Prof. Dr. Kavita Bhadiriya - Govt. Girls College, Barwani (M.P.)
90. Prof. Dr. Archana Vishith - Govt. Rajrishi College, Alwar (Rajasthan)
91. Prof. Dr. Kalpana Parikh - S.S.G. Parikh P.G. College, Udaipur (Rajasthan)
92. Prof. Dr. Gajendra Siroha - Pacific University, Udaipur (Rajasthan)
93. Prof. Dr. Krishna Pensia - Harish Anjana College, Chhotisadri, Distt. Pratapgarh (Rajasthan)
94. Prof. Dr. Pradeep Singh - Central University Haryana, Mahendragarh (Haryana)
95. Prof. Dr. Smriti Agarwal - Research Consultant, New Delhi

Optical Properties and Characterization of Manganese Doped Zinc Sulfide Nanocrystals

U. S. Patle*

Abstract - Due to unique properties of nanoparticles of manganese doped ZnS capped with methanolic acid have been prepared by a chemical process are studied. The samples were characterized by UV-VIS absorption spectra and photoluminescence spectra. We prepared narrow size distribution particles under different synthesis condition the nanoparticles obtained all show quantum size effects in their optical spectra with respect to the parent ZnS nanoparticles exhibiting near band-edge luminescence. A considerable blue shift of absorption band was noted by the manganese concentration in the doped sample in comparison with ZnS quantum dots because of the decrease in the size of nanoparticles which may be due to quantum confinement.The photoluminescence (PL) emission observed at 585 nm is due to the emission of manganese and can be ascribed to a $^4T_1 \rightarrow {}^6A_1$ transition within the 3d shell (R.N Bhargava et al 1994).The effect of Mn concentrartion on the photoluminescence properties was investigated. We found that by narrowing the size distribution and doping concentration, ZnS samples can be prepared with high luminescence intensity. EPR spectra confirm the quantitative incorporation of manganese into the ZnS quantum dots. Clear difference in photoluminescence results between ZnS and ZnS:Mn samples.
Keywords - photoluminescence, quantum size effects, Electron paramagnetic resonance etc.

Introduction - Nano-sized semiconductor particles have attracted much attention in recent years because of their optical properties different from the corresponding bulk crystals [1-5]. Mn-doped ZnS nano particle have been intensively studied from the viewpoint of the quantum size effect and the luminescent efficiency. Recently, high luminescent efficiency associated with particle size has been observed in Mn-doped ZnS nanoparticles [4]. Quantum size effects become appreciable when the semiconductor crystallite size is comparable to the excitonic Bohr radius, e.g. 5 nm for ZnS. The blue shifts of the band gap have been observed in nano-sized ZnS semiconductor [4]. In this paper, microstructure and Mn distribution of Mn-doped ZnS nano-particles prepared by a new chemical process are studied. The influence of crystal size on the optical properties of Mn-doped ZnS nano-particles is also discussed.

Experimental - Mn doped ZnS nanoparticles was prepared from a mixture of zinc acetate and manganese acetate with sodium sulfide in methanolic media. The precipitate was kept dispersed with the aid of methacrylic acid at room temperature. UV absorption spectra of the nanoparticles were recorded by using a Perkin Elimer spectrophotometer Lemda 12. PL spectra were measured at room temperature by exciting the samples with a xenon lamp, using a photometer (Shimadzu, Spectrofluorophotometer RF-1500). Electron paramagnetic resonance (EPR) measurements were made on a Bruker 200 D X-band spectrometer employing 100 kHz modulation, magnetic field markers from an NMR gaussmeter and an external microwave frequency counter.

Results and Discussion - The increase in the band gap of semiconductor nanoparticles due to quantum confinement effects is widely reported [6-9]. The quantum size effects start to appear when the particles size becomes smaller than the Bohr diameter. The incorporation of manganese into the crystal lattice of nanometric semiconductors should have an effect on the optical properties. Band gap of ZnS nanoparticles increased with decreasing crystallite size, as shown by the ultraviolet (UV) absorption spectra Fig. 1. The optical band gap of the nanoparticles is about 4.21 eV (295 nm) for 2.3 nm, 4.18 eV (297 nm) for 2.5 nm and 4.14 eV (300 nm) for 2.7 nm nanoparticles, respectively, being much larger than that of bulk ZnS, 3.8 eV at room temperature. The blue shifts by 0.34 -0.41 eV with the decrease in the crystallite size by 0.4 nm must therefore be attributed to the quantum size effects [10]. The blue shift calculated in the present study was about 0.28 eV for 205 nm nanocrystallite size. The value is considerably smaller than the observed value, 0.38 eV, for 2.5 nm. The discrepancy has been reported for other nanosized semiconductors [10]. The cause is likely to be due to the effective masses in calculation. They were assumed to be constant in our calculation; however, they might change with crystallite size [11].

*Department of Physics, Govt. Narmada Postgraduate College, Hoshangabad (M.P.) INDIA

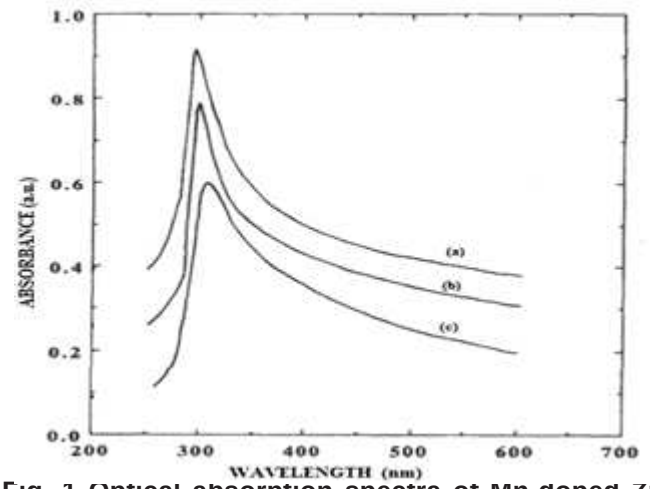

Fig. 1 Optical absorption spectra of Mn-doped ZnS nanoparticles (a) 2.3nm (b) 2.5 nm (c) 2.7 nm

The PL spectra of ZnS:Mn nanoparticles and a conventional bulk materials are shown in fig. 2. The characteristic emission of bulk ZnS:Mn is associated with transition from $^4T_1$ to $^6A_1$ states in Mn T_d symmetry [12] and peaks at around 585 nm at room temperature. In the case of Mn- doped ZnS nanoparticles, all the emission peaks are located consistently at 579 nm. The luminescence peak slightly shifted towered higher energy as compared with the peak of bulk ZnS:Mn . The blue shift of the nanoparticles is interpreted as being due to an increase of $^4T_1$ to $^6A_1$ states in Mn d_d configuration, with increasing band gap in ZnS nanoparticles due to quantum confinement.

It is more important to note that PL intensity of Mn doped ZnS nano particles is definitely than that of the bulk sample, and increases with decreasing crystallite size. The luminescence efficiency [5], η in the nanoparticles can be expressed as $\eta = 1 / (1+\beta D^2)$, where β is related to the ratio of the radiative and nonradiative decay time (τ_R / τ_{NR}) and D the volume of a nanoparticles. Hence, the luminescence efficiency in the nanoparticles increases with decreasing crystallite size. It is well known that the difference in the luminescence in the bulk ZnS:Mn is attributed to the Mn distribution [13]. In the present study, Mn^{2+} ions for varies sizes in samples with the addition of methacrylic acid are well dispersed as shown in ESR spectra of Fig.3. and the concentration of isolated Mn^{2+} ions of Mn doped ZnS nanoparticles, as determined from the hyperfine structure of ESR spectra, is almost the same.

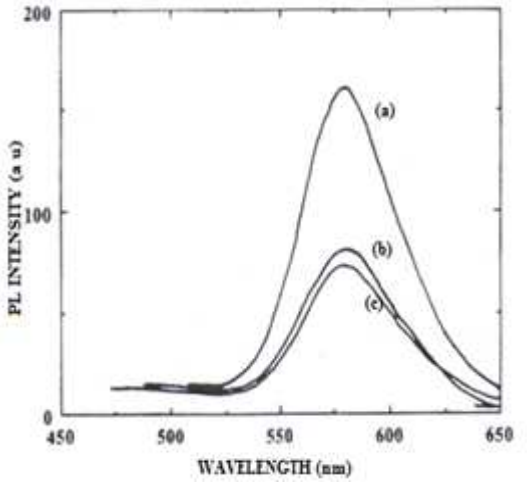

Fig.2 Photoluminescence spectra of ZnS:Mn nanoparticles

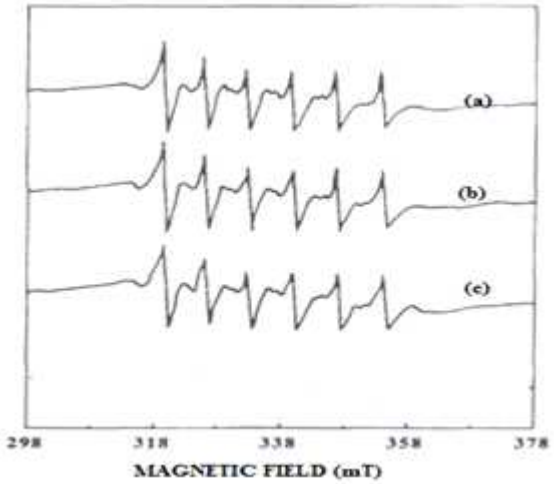

Fig.3 ESR spectra of Mn- doped ZnS nanoparticles (a) 2.3nm (b) 2.5 nm (c) 2.7 nm

Conclusions - Manganese doped zinc sulphide (ZnS:Mn) nanoparticles are prepared using methanolic acid as a surface passivator by chemical method at room temperature. Crystallite size of Mn-doped ZnS nanoparticles decrease with the amount of methacrylic acid added into a reactant mixture after precipitation. Blue shifts in the optical and gap of nano-particles were interpreted by quantum size effects. The enhanced PL intensity was explained by the nanosize effect and good distribution of isolated Mn^{2+} ions.

References :-

1. R. Rossetti, R. Hull, J.M. Gibson and L.E. Brus, J. Chem.Phys. 82, 552 (1985).
2. Y. Wang, N. Herron, K. Molller and T. Dein, Solid State Commun. 77, 33 (1991).
3. D. Gallagher,W. E. Deady J.M. Racz and R. N. Bhargava, J. Cryst. Growth 138, 970 (1994).
4. Y.L.Soo, Z.H. Ming,S.W. Huang, R.N. Bhargava and D.Gallagher, Phys. Rev. B50,7602 (1994).
5. R. N. Bhargava, D. Gallagher, X. Hong and A. Nurmikko, Phys. Rev.Lett. 72 416 (1994).

Eco Friendly Pest Control Growing A Green World - Review

Dr. Rashmi Ahuja*

Abstract - Agriculture is major income sector in the economy of India. Insect pest cause significant damage to agriculture production. Pesticides have been the most efficient weapons and play primary role in crop protection against agricultural pests. With the projection of population, there exists a strict need for eco-friendly insect pest management in Indian agriculture to sustain the agricultural products for future needs. Bio pesticides are generally less environmentally damaging and less toxic to non-targeted insects, mammals and aquatic life. The long term application of synthetic insecticides have resulted in residues accumulating in diffirent environmental components and have adverse effect on ecosystem, Human health and non-targeted organisms. Therefore bioinsecticides "Green pesticides" have posted as an alternative to synthetic insecticides in agriculture and public health sectors. This study highlights the present status and importance of biopesticides in agricultural sectors in India.
Key words – bioinsecticides, Green pesticides, Pest management.

Introduction - The environmental problem associated with the extensive use of slowly degrading pesticides have been appreciated for many years. Large quantities of these compounds are manufactured and deliberately distributed in environment to control plants and insects pests. Polychlorinated biphenyls have been extremely stable industrial compound. Chloroethane (Vinyl chloride) almost as stable as PCBs have been got lost to the environment each year in process of manufacturing of polyvinyl chloride plastics. Another example of hazardous halocarbon has been 1,2 dibromo, 3-chloropropane. This has caused sterility in the males exposed to this chemical in the course of manufacturing. Chlorinated organic materials are among the most widely used pesticides, their overall environmental impact coupled with the development of insect resistance to their effect give rise to incresing use of other class of compounds for pesticidal purpose.

Some Pesticides and their half lives in the Environment:

	Pesticide	Half Life in Years (App)
1.	Chlordane	5 yrs
2.	DDT	4.25 yrs
3.	Lindane, Dieldrin	3 yrs
4.	Haptachlor, aldrin	2 yrs
5.	2,4,5 trichlaro phenoxacetic acid	.5 yrs
6.	Organphodephate pesticide	.25 yrs

Need of Bio-pesticides – Because of environmental safety and reduced risk, different countries are assaying natural compounds of plant origin as pest control alternative. A large number of powders and essential oils from natural products have been used as sustainable control measures against different insects pests, Since they present no known risk to human and environment, unlike more conventional pesticides. Conventional pesticides have not only become less effective as target insect population have developed resistance but also kill non-targeted species and natural enemies of many insects pests, for that reason low risk pesticides have been observed and evaluated.

Study Objectives - The main objective of this study is to know the usefulness of bio-insecticides in farming. The other objectives are

1. To know the common pest in study area.
2. List down the material used for eco-friendly biopesticides.
3. Find out the problems related to organic pesticides.
4. Identify the factors influencing biopesticide and make appropriate recommendations .

Meaning of Bio-pesticides :

1. Use of natural resource to control pests.
2. Control of pest without Chemicals.
3. Leave the environment to control the pest own self.

Natural Pesticides In Farming – Organic pest control methods are generally less environmentally damaging and less toxic to non-targeted living systems. These natural pesticides are effective and helping to rid cropes of harmful critters but safe enough to keep from poisoning. Between weather, weeds and insects not to mention the challenges of soil fertility, it can be incredibly humbling experience to try to put non contaminated food especially when adhering to organic protocols that dont rely on quick, yet potentially harmful solutions such as habicides, pesticides and conventional fertilizers.

Another, far less time intensive method of knocking back insect populations is by applying natural or homemade

***Professor (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalay, Bhopal (M.P.) INDIA**

insecticides which can reduce their numbers or elimnate them all together. Not all insects are harmful, so applying insecticide indiscriminately, especially harsh pesticides that even the benficial insects can have a detrimental effect on ecosystem.

Organic pesticides may be the an appealing options for many consumers. Many natural based substances used as pesticides, that are allowed in organic farming include the following –

1. Neem oil/use of Neem/Vasaka Leaves – one of the most common form of organic pest management in use of Neem and Vasaka leaves. Farmers make paste of with Neem and Vasaka leaves, dry it and mixed with water and apply it on the affected crops in the field Neem oil derived from the seeds of Neem tree has an active ingredient called azadirachtir which block the progression of the insects life cycle.

High percentage of respondents were recognized that it is very much effective in controlling beetles followed by aphides and stem borers.

2. Garlic Spray - It is well known for its aroma. Garlic insecticide spray is an environment friendly natural pesticide which repels many pests such as aphides, spiders, mites and white flies. Not only is this natural pesticide environmentally safe but also biodegradab and does not affect flavor.

3. Soap Spray – The main ingredient, potassium salts of fatty acids derived from plants is what makes this natural pesticide misture environmentally friendly and biodegradable. It works well because the soap spray damage the insects cell membrane and insect to die.

4. Oil Spray – Vegetable oil mixed with mild soap (Dr. Bronners Castile Soap) can have devastating effect on certain troublesome insects like aphids; mites, thrips. It is sprayed directly on the surfaces of plants which are being affected by the little pest. The oil coats the body of insect, suffocating them, as it blocks the pores through which they breathe.

5. Diatomaceous earth as natural pesticide. The natural substance with a some what unwieldy name is made from a sedimentary rock created by fossilized oilgae (diatomos). This material works not by poisoning, but instead by virtue of its abrasive qualities and its affinity for absorbing the lipids from insects exoskletan which then dehydrate them to death.

6. Chile pepper insecticide spray - Similar to garlic spray chile pepper spray is a great homemade natural insect repellent can be used for different pests. To make a basic Chile spray from pepper powder, mix, 1 table spoon of Chile powder with 1 qurt. of water and several drops of mild liquid soap. This mixture can be used full strength on leaves of affected plants.

7. Raw apple cider vinegar spray – Is home made garden fungicides, simple to make and an environmentally friendly alternative to chemical products. Used to spray on plant leaves and soil.

8. Tomato leaf as a natural insecticide- Tomato plant contains alkaloids such as "tomatine" which can effectively control aphids and other insects. It is splayed on to plant foliage.

9. Essential Oils as biopesticide - Many essential oils have insecticidal, fumigant, anti feedant alternative and repellent activities against a broad spectrum of insects with some selectivity. Due to their volatility in nature they are used as fumigant against agriculture and storage food insect. EO's based insecticides are very important for control storage insects because they are active against variety insects, fast penetrating and no toxic residues in the treated product.

In contrast some problems like volatility, solubility and oxidation of EOS based insecticides were recorded, which plays important role in their activity application and persistent.

For this reason new formulations with nano technology "Nano formulation" can resolve these problems and offer numerous advantages. Beside these Baking soda solution for leaves and soil, Milk fungicide and apple cider vinegar are also used as an anti mildew treatment By contrast there are some 900 synthetic pesticides approved for use in conventional forming.

Discussion - "Green" is the environmental buzzword and it consists of more than organically grown vegetables. Among the chemical pollutants the greatest culprits are the chemical pesticides such toxic chemical pesticides can contaminate in many ways including unintended land and water when they are sprayed aerially or allowed to run off fields or when they escape from production sites and storage tanks. Though there can benefits using pesticides, inappropriate use can counter productivity increase pest resistance and kill the natural enemies of pests. The amount of pesticide that migrate from the intended application area is influenced by the particular chemical properties, its propensity for binding to soil, its vapor pressure, solubility in water and its resistance to being broken down over time. Some pesticides contribute to global warming and the depletion of the ozone layer. Integrated pest management developed in 1970's as a response to negative side effect of using pesticides. Pests were becoming resistant to chemical treatment and health of farmers. There hazards were far greater in third world countries and to day's evidence suggests that the situation has become even more volatile. The latest WHO figures suggests that atleast 3 million agriculture worker are poisoned each year by pesticides.

In a study scientists have reported about new research on these so called "Essential oil pesticides" or "Killer spices" These substances represents a relatively new class of natural insecticides that shows promise as an environmentally friendly alternative to conventional pesticides. These new pesticides are generally a mixture of tiny amounts of two as four different species diluted in water some kill insects outright, while others reple them.

Conclusion - Biopesticides are the products, expand the limited arsenal of organic grower to combat pests. They are still only a small piece of the inecticide market but glowing and gaining momentum. A new study reveals some organic pesticides can have a higher environmental impact than conventional pesticides. The effectiveness and environment impact of organic pesticides to those of conventional and novel reduced risk synthetic products or crops have been investigated and it is found the organic pesticide required larges doses and more harmful to pest that help protect the crop compared to synthetic pesticides.

References :-

1. Das, S.K. "Recent development and future of botanical pesticides in India", Popular Kheti, 2, 93-99 (2014).
2. Ignacimuthu, S– "Green pesticides for insect pest management", Current science 86(8) 1059-1060(2004).
3. Reddy, GVP and Bamba J.P. – "Impact of reduced risk insecticides against the insect pest on cabbage", P-255-259(2011).
4. Isman, MB, - Botanical insecticide research : many publications limited useful data. Trends Plant science 19, 140-145(2014).
5. S. Ezhil Vendan – Current food technology research Article. April (2016).
6. Khalid Rehman Hakeem et al - Effects of pesticides on environment. Chapter. Springler International. (2015).
7. Whalon, M.E., Mota Sanchez, D, Global pesticide resistance in Arthropods CABI, Oxford shire UK 576 PP, (2008).
8. Agrawal A, Pandey, R.S., Sharma, B. – Water pollution with special reference to pesticide contamination in India J water Res Prot 2(5) 432 – 448 (2010).
9. DENG,S., WEST BJ, PALU, AK. – Determination and comparative analysis of major iridoids in different parts and cultivation sources of Morinda citrofolia, Phytochem analysis 22:26 – 30 (2010).
10. Abdel tawab Mossa - Journal of Environmental science and Tech. 9(5) 354-378 (2016).

****

Mineralization Of Brilliant Cresyl Blue Dye Utilizing Visible Light And Tio$_2$ As Photocatalyst

David Swami *

Abstract - Photocatalytic degradation of Brilliant Cresyl Blue has been examined in TiO_2 despersions under visibile light. The degradations kinetics was studied under different conditions such as substrate and photocatalyst concentration, reaction pH, addtion of oxidants and temperature. The degradation rates proved to be strongly influenced by these parameters. As a result, it was found that the efficiency of the process strongly depends on the working conditions. The highest degradation rate of BCB was obtained at optimum parameters such as dosage of TiO_2 (150 mg / 100 ml), pH (11.00) and dye concentration 5.0 X 10^{-5} mol dm^{-3}. The degradation of dye was also investigated uder sunlight.
Key Words - Brilliant Cresyl Blue, TiO_2, Visible light, Degradation, Parameters, Mineralization.

Introduction - Paper, rubber, cosmetics, leather, ink, dyeing, plastic and textile industries use color for dyeing their products and thus use a huge amount of water which results in the production of dye-containing wastewater with hazardous effects on the environment. Dye containing wastewater produces huge amount of polluted effuents that are normally discharged on the surface water bodies and ground water aquifers. This wastewater causes damages to the ecological system of receiving surface water capacity and certain a lot of disturbance to the ground water resources. TiO_2 photocatalytic degradation technique has large capability for wastewater treatment. Among the new methods of colorful wastewater tretment TiO_2 photocatalysis based on the generation of very reactive species such as hydroxyl radicals have been proposed to oxidize quickly and none selectiviely a broad range of organic polutants. This technique can be utilized for the decomposition of organic and inorganic compounds and romoval of dyes. The TiO_2 semiconductor has been reported to be the most promising photocatalyst because of its low cost, non toxicity and relatively high efficiency and the possibility of using sunlight as a source of irradiation. Several other parameters such as initial dye concentration, amount of TiO_2, solution pH.

Materials and Methods -

(A) Reagents - Titanium dioxide (Loba Chemie) and Brilliant Cresyl Blue (Loba Chemie) were used. Titanium dioxide is mainly anatase (80%). All other chemicals used were of analytical grade. Double distilled water was used throughout the study to prepare the solution. The catalyst and dyes were used without further purification.

(B) Photo reactor and light source - A 500- W halogen lamp was used as the light source. The photocatalytic reaction was carried out in a batch reactor with dimension of 7.5 x 6.0 cm (height x diameter) provided with an external water flow jacket connected to a thermostatic bath and able to maintain the temperature in the range of 25-30^{0}c

(C) Procedure - For irradiation experiment 100ml aqueous solution of the dye of desired concentration was taken in the photoreactor and the solution was stirred and bubbled with air for at least 10 min in the dark to establish the adsorption equilibrium. Aliquots were taken at 10 min time intervals and centrifuged to separate the catalyst from the solution. The solution was then analyzed spectrometrically. A visible spectrophotometer (Systronic model no. 116) was used for measuring the absorbance of the reaction mixture. The intensity of light was measured by Digital lux meter (Lutron LX-101). The pH of the solution was measured using a digital pH meter. The desired pH of the solution was adjusted by the addition of previously standardized sulphuric acid and sodium hydroxide solution. To quantify the extent of mineralization of mixture, COD was measured at regular time intervals using closed reflux titrimetric method.

Results and Discussion -

Effect of initial dye concentration variation - The effect of different initial dye concentration was investigated in suspensions containing 150 mg / 100 mL TiO_2 at constant pH 11.0. An increase in the rate constant from 1.03 × $10^{-4}s^{-1}$ to 2.57 × 10^{-4} s^{-1} with increase in dye concentration from 1.0 × 10^{-5} mol dm^{-3} to 5.0 × 10^{-5} mol dm^{-3}. Thereafter, rate constant values decreased to 1.57 × 10^{-4} s^{-1} with increased dye concentration 7.0 × 10^{-5} mol dm^{-3}. Rate constant values have been found to be maximal at dye concentration of 5.0 × 10^{-5} mol dm^{-3}. (Fig. 1) It is reported that as the initial concentration of the dye increases, the degradation efficiency reduces. The possible reason suggested for this decrease that as the initial concentration of the dye got increased, more dye molecules got adsorbed onto the

*Deptt. of Chemistry, SBN Govt. P.G. College, Barwani (M.P.) INDIA

surface of TiO_2. But the adsorbed dye molecules are not degraded immediately because the intensity of the light and the catalyst amount remain constant and also the light penetration is less. On increasing the dye concentration, the solution gets more intense colored and the path length of photons entering the solution got decreased thereby fewer photons reached the catalyst surface. Hence, the production of hydroxyl and superoxide radicals got limited, therefore the photodegradation efficiency reduced.

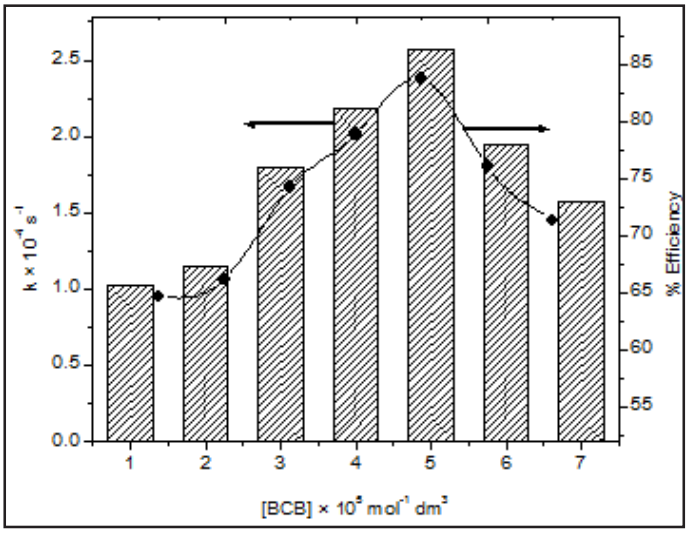

Fig.1 - Effect of initial dye concentration variation

Effect of amount of catalyst variation - The effect of TiO_2 loading on the photo degradation rate has been examined by varying its amount from 50 mg to 350 mg/100 mL in the reaction solution. Rate constant values increased from $1.03 \times 10^{-4}\ s^{-1}$ to $2.37 \times 10^{-4}\ s^{-1}$ with the increase in catalyst loading from 50 mg to 150 mg / 100 mL. Further, rate constant values decreased to $1.11 \times 10^{-4}\ s^{-1}$ with the increased catalyst loading (350 mg/100 mL). Rate constant value has been found to be maximal at 150 mg /100 mL of catalyst loading. (Fig. 2) Phtocatalytic degradation efficiency increased with an increase in catalysts mass. This behavior might be due to an increase in the amount of active site on surface of TiO_2 particles. After the optimum amount of TiO_2, the activity of photocatalytic decolorization decreased with increase of catalyst concentration. Because higher loading of catalyst also causes increase in turbidity of the solution which reduced the light penetration in photoactive volume. Hence photoactive volume shrinks and aggregations of TiO_2 particle causing decrease in the number of surface active sites.

Fig.2 - Effect of amount of catalyst variation (See in the next page)

Effect of solution pH - The photocatalyic degradation efficiency got greatly influenced by pH changes. The effect of pH on the photocatalytic reaction could be mainly explained by the surface charge of TiO_2. Point of zero change, (pzc) of TiO_2 is 6.8. Upon changing the pH, the surface hydroxyl group could undergo protonation and deprotation according to the following reactions.

$$TiOH + H^+ \rightleftharpoons TiOH_2^+ \quad (1)$$

$$TiOH + OH^- \rightleftharpoons TiO^- + H_2O \quad (2)$$

The TiO_2 surface is positively charged in acidic media (pH < 6.8), where as it is negatively charged under alkaline conditions (pH > 6.8). Since brilliant cresyl blue dye is cationic dye, in the acidic pH there was a poor adsorption. The decrease in pH value causes decrease in the reaction rate. At higher pH more dye molecules would adsorb on to the catalyst surface which resulted into high decolorization efficiency due to electrostatic attraction of the negatively charged TiO_2 with the cationic dye. The photocatalytic degradation reactions were conducted at different pH value varied from 5.0 to 13.0 and dye concentration 5.0×10^{-5} mol dm^{-3} at catalyst loading of 150 mg /100 mL (Fig. 3). The photocatalytic degradation of brilliant cresyl blue has been found to be maximal at pH 11.0. In the present observation, it could be presumed that the main reaction was presented by the hydroxyl radical attack. After optimal pH value, when pH further increased the rate of reaction found to be decreased because at high pH values the hydroxyl radicals are so rapidly scavenged that they do not have the opportunity to react with dye.

Fig. 3 - Effect of solution pH (See in the next page)

Conclusion - This study confirms that TiO_2 photocatalytic degradation technique is an efficient process for decolorization and mineralization of BCB dye. The photodegradation process is highly pH dependent. The result showed that BCB dye underwent massive degradation in alkaline pH.

Acknowledgement - Authors acknowledgement the support and laboratory facilities provided by Chemistry Department, S.B.N.Govt. College, Barwani (M.P.).

References:-

1. Akar, S. T., Akar, T. and Cabuk, A. 2009. Decolorization of a textile dye, reactive red 198 (rr198) by *Aspergillus parasiticus* fungal biosorbent. Brazilian Journal of Chemical Engineering, 26: 399-405.
2. Alex, S., Santhosh, U. and Das, S. 2005. Dye sensitization of nanocrystalline TiO_2: enhanced efficiency of unsymmetrical versus symmetrical squaraine dyes. Journal of Photochemistry A: Chemistry, 172(1):63-71.
3. Chen, F., Liu, H., Bagwasi, S., Shen, X. and Zhang, J. 2010. Photocatalytic study of BiOCl for degradation of organic pollutants under UV irradiation. Journal of Photochemistry and

a. Photobiology A: Chemistry, *215 (1)*: 76-80.

4. Chen, L.C. and Chou, T. C.1993. The Sonochemical Degradation of Azobenzene and Related Azo Dyes. Journal of Molecular Catalysis. 85: 201-214.
5. Evgenidou, E., Fytianos, K. and Poulios, I. 2005. Photocatalytic oxidation of dimethoate in aqueous solutions. Journal of Photochemistry and Photobiology A: Chemistry, 175: 29-38.

6. Galindo, C., Jacques, P. and Kalt, A. 2000. Photodegradation of the aminoazobenzene acid orange 52 by three advanced oxidation processes: UV/H_2O_2 UV/TiO_2 and VIS/TiO_2 - Comparative mechanistic and kinetic investigation. Journal of Photochemistry and Photobiology A: Chemistry, 130: 35-47.
7. Hoffman, M.R., Martin, S.T., Choi, W. and Bahnemann, D.W. 1995. Environmental Applications of Semiconductor Photocatalysis. Chemical Review, 95: 69-96.
8. Iqbal, M.J. and Ashiq, M.N. 2007. Adsorption of dyes from aqueous solutions on activated charcoal.Journal of Research Science, 139: 57-66.
9. Kyriacou, G., Tzaoanas, K. and Poulios, I. 1998. Photocatalytic decomposition of triclopyr over aqueous semiconductor suspension. Journal of Photochemistry and Photobiology A: Chemistry, 115: 175-183
10. Murugandham, M. and Swaminathan, M. 2004. Photochemical oxidation of reactive azo dye with UV–H_2O_2 process. Dyes and Pigments, 62: 269-275.
11. Neppolian, B., Choi, H. C., Sakthivel, S., Arabindoo, B. and Murgesan, V. 2002. Solar/UV-induced photocatalytic degradation of three commercial textile dyes. Journal of Hazardous Materials, 89: 303-317.
12. Nishimote, S., Ohtani, B., Kajiwara, H. and Kagiya, T. 1985. Correlation of the crystal structure of titanium dioxide prepared from titanium tetra-2-propoxide with the photocatalytic activity for redox reactions in aqueous propan-2-ol and silver salt solutions. Journal of Chemical Society, 81: 61-68.
13. Pare, B., Singh, P. and Bhagwat, V. W. 2008. Visible light induced heterogeneous advanced oxidation process to degrade pararosanilin dye in aqueous suspension of ZnO. Chemenviron,
14. 4: 12-16.
15. Sano, T., Puzenat, E., Guillard, C. and Geantet, C. 2009. Improvement of Photocatalytic Degradation Activity of Visible-Light-Responsive TiO_2 by Aid of Ultraviolet-Light Pretreatment. Journal of Physical Chemistry C, 113: 5535-5540.
16. Soares, E. T., Lansarin, M. A. and Moro, C. 2008. Photoeletrocatalytic oxidation of anionic surfactant used in leather industry on nanoporous Ti/TiO_2 eletrodes. Journal of Brazilian Chemical Society, 19: 29-33.
17. Subramani, A. K., Byrappa, K., Ananda, S. and Lokanatha Rai, M. K. 2007. Photocatalytic Degradation of indigo carmine dye using TiO_2 Impregmated Activated Carban . Bulletin Material Science, 30: 37-41.
18. Sun,Z., Chen, Y., Yang,Y and Yang, J. 2002. Photocatalytic Degradation of Cationic azo dye by TiO_2 bentonite nonacomposite. Journal of Photochemistry and Photobiology A: Chemistry 149:1233-1243.
19. Tang, W. Z., Zhang, Z., Quintana, M. O. and Torres, D. F. 1997. TiO_2/UV photodegradation of azo dyes in aqueous solutions. Environment Technology, 18: 1-12.
20. Tariq, M., Chuncheng, C., Dan, Z. and Jincai, Z. 2009. Effect of dye metal Complexation on Photocatalytic decomposition of the dyes on TiO_2 under visible Irradiation. Journal of Environment Science, 21: 263-267.
21. Timothy, T. Y. 2003 Ph. D. Thesis, the School of Chemical Engineering and Industrial Chemistry, The University of New South Wales, Sydney Australia.
22. Walter, Z., Tang, and Huren, A. 1995. UV/ TiO_2 photocatalytic oxidation of commercial dyes in aqueous solutions . Chemosphere, 9: 4157-4170.
23. Zhao, M., Chem, S. and Tao, Y. 1995.Characteristics of the photocatalytic reactor with an annular array of glass tubes surrounding a light source. Kinetic analysis. Journal of Chemical Technology and Biotechnology, 64: 339-344.

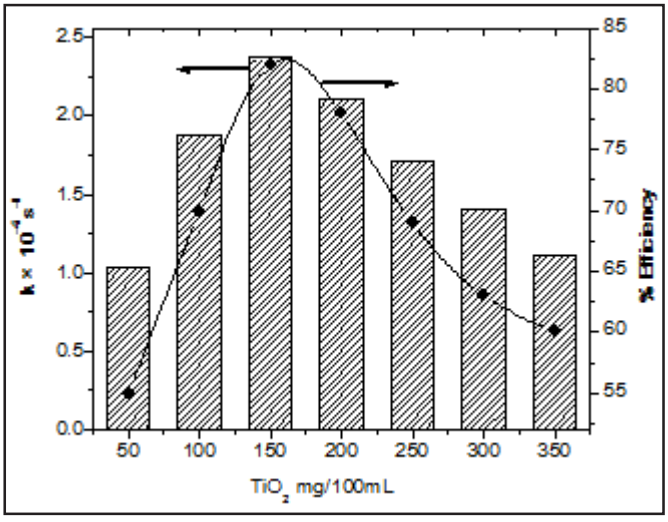

Fig.2 - Effect of amount of catalyst variation

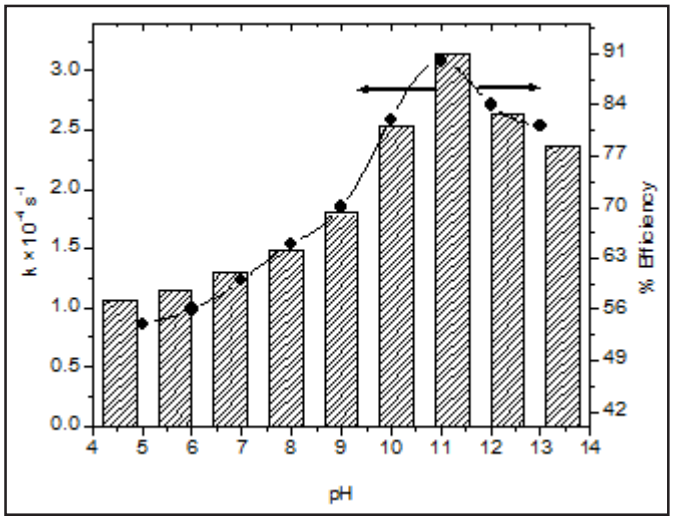

Fig. 3 - Effect of solution pH

****

Effect Of Green Manure (*Vallisneria Spirallis)* On Gram *(Cicer Arietinum)* Germination

Malini Johnson* D.K. Billore**

Abstract - *Vallisneria spiralis* is the rich source of variable nutrients and chemical constituents. The present investigation was conducted with submerged aquatic weed, *Vallisneria spiralis* obtained from Sirpur talab, Indore (M.P.) on grams (*Cicer arietinum)* plants. The fresh aquatic weeds were processed and mixed in different ratio with soil. The research was undertaken to study the affect of application of different ratio of green manure and soil on grams crop. There were five treatments in total consisting of green manure and soil. The present investigation has been initiated to evaluate the effectiveness of manure on growth of grams. The results obtained proved that all the vegetative growth parameter viz-number of pods and length of grams plants were significantly improved by the use of green manure manufactured from aquatic weeds- *Valisneria spirallis.* Farmers use huge chemical fertilizers for gram production, which causes health and environmental hazards. Adoption of green manure in grams cropping systems and improvement of organic manure are needed to reduce use of chemical fertilizer.
Key Words - Green manure, *Valisneria spirallis,* grams.

Introduction - *Vallisnaria spiralis* is a beautiful submerged aquatic plant with conspicuous transverse darker bands on leaves it can survive in a few centimeter of water. *Vallisnaria spiralis* is a perennial tufted stoloniferous herb with a bunch of adventitious roots. The plant possesses numerous mechanisms of vegetative reproduction that enable it to spread very rapidly. Management and control of this weed have been achieve by the potential use of it as green manure in agricultural field. The advantages of green manuring for increased crop productivity has also been reported elsewhere (Kelssa, 1988; Tadesse, 1989; Yeshanew and Asgelil, 1999). Use of chemical fertilizers has increased worldwide for cereal production (Abril et al., 2007) due to availability of inexpensive fertilizers (Graham and Vance, 2000). The continued use of chemical fertilizers causes health and environmental hazards (Pimentel, 1996). Effective use of green manure is an important issue in developing countries The manure contains important nutrients such as N, P, K, organic matter, Ca, Mg, etc. (Abdelhamid et al., 2004)

Effective use of green manure is an important issue in developing countries. Possible options to reduce chemical fertilizer use could be adoption of grams crops and reduces dependence on chemical fertilizer. Uses of such green manure in agriculture may contribute to conserve the environment as well as improve soil fertility.

Study Area - Indore district lies the heart of malwa plateue. Geographically it lies at 20 .40, N latitude and 75. 45, E longitude and 553 meter from sea level.Sirpur talab is constructed in the year 1868 during the regime of Holkar State. The Sirpur talab is located at the Sirpur village district Indore (M.P.) Sirpur talab is manmade, totally rain feed perennial water body, open enough to get solar radiations

Materials And Methods - The soil was collected from Sirpur talab and mixed well. This soil samples were dried samples and ground with the help of wooden pestle and mortar than it was passed through 2 mm sieve to separate the coarse particles.

Aquatic weed *Vallisneria spirallis* was separated by hand from Sirpur talab. Aquatic weeds absorbed nutrients are added back to soil on as fertilizer. They thus could be used for nutrient recycling. The aquatic weeds and soil mix properly and the soil of the experimental pot was prepared for growing grams by using different ratio of weeds and soil viz control and pure weeds in the ratio 3:1 the three part weeds and one part soil and another 1:1 50% weeds and 50% soil, similarly 1:3 ratio one part weeds and three part soil were mix and filled in pot.

Cicer arietinum –JG11 was grown in different pots in last week of November 2010. During observations water is the most important factor affecting crop cultivation. 250 ml. of water was given in different plastic pots alternate days. There cultivation was simple. Thus were harvested during the last two weeks of April.

Result And Discussion - Gram (*Cicer arietinum*) is one of the earliest grain legumes to be domesticated by man in the old world. The present study was undertaken to assess the effect of *Vallisneria spirallis use* as green manure on

*Asst. Professor (Botany) Govt College, Kannod (M.P.) INDIA
**Professor (Botany) Govt. College, Rau (M.P.) INDIA

productivity of grams. The seed chosen were having a high germination percentage (85 %). For rapid germination and emergence, a firm, smooth seedbed is required that will allow proper depth of planting as well as good seed-soil contact. Pot experiments were carried out with green manure of *Vallisneria spirallis* aquatic plant to find out effects of green manure on germination by grams. The Table No.01 shows the result grams with different ratios of fertilizers. The fertilizers increased efficiency of water use could result from restriction on the ability of the plants to extract water from the soil during early crop growth, leaving more to support the grain-filling stage.

Due to the fertilizer used in pots the growth of grown was betters than control. The pot in which *Cicer aritinum* was sown, the longest length of plant was observed to be 29.8 cm when the weed soil ratio was 3:1 and *Vallisneria spirallis* used as fertilizer while 17.8 cm. when the pure weed was used. Nitrogen content of composts were also increased due to N fixing Bactria (Wong et.al. 2001) Due to the fertilizer used in pots the growth of grown was betters than control.

Cicer arietinum the flowering started on after six weeks. The number of pods was more i.e. 16-21, when *Vallisneria spirallis* use as fertilizer in the ratio weed and soil 3: 1 was used and the control plant was having only 11-13 pods in the study year 2010-11.Good qualities of seeds were observed. Which were normal in colour and bright in appearance, they were unweathered and free from diseases. Care was taken so that the grain could not be damaged during thrashing and could remain free from insects and infestations. The moisture contents were also monitored so as to permit long storage. An economical analysis of the costs and benefits of the high performing green manure treatments would be valuable .Higher values were obtained for compost than for green manure of similar organic material. (Fujihiro et .al.2013).

The highest grain yield 4023 and 5007 kg ha-1 and Stover yield 5330 and 7170 kg ha-1 was recorded under 100% NPK + FYM 10 t ha-1 treatment (T9) in maize and wheat, respectively. Maximum uptake of macro (N, P, K) nutrients by maize and wheat crop was recorded under application of integrated use of chemical fertilizers along with manure (Meena et al 2019).

The above result indicate that green manure is superior to others in vegetative parameters for grams crop .(Miller et. al.2006) monitor equal or greater positive cropping sequence effect of pea on subsequent wheat than mustered. The improvement in number of pods is chickpea plant due to sufficient phosphorus supply.(Dixit et al.1993).

Conclusions - Higher values were obtained for green manures. *Vallisneria spirallis* absorbed nutrients from water. Death and decay of these plants release the nutrients in water, which help in obtaining crop yields of grams one step ahead in sustainable agriculture. However, before its recommendation to farmers, further field studies are required. Grams plants harvested poses good and healthy quality of seeds which mostly were of same size and shape.

References:-

1. Abdelhamid MT, Horiuchi T, Oba S (2004): Composting of rice straw with oilseed rape cake and poultry manure and its effects on faba bean (*Vicia faba L*.) growth and soil properties. Biores. Technol. 93: 183-189.
2. Abril A, Baleani D, Casado-Murillo N, Noe L (2007): Effect of wheat crop fertilization on nitrogen dynamics and balance in the Humid Pampas, Argentina. Agric. Ecosyst. Environ. 119: 171-176.
3. Dixit, J.P., Dubey, O.P., Soni, N.P., 1993. Effect of sowing date and irrigation on yield and nutrient uptake by chickpea (Cicer arietinum) cultivars under Tawa command area. Indian Journal of Agronomy 38, 227-231.
4. Graham PH, Vance CP (2000): Nitrogen fixation in perspective: an overview of research and extension needs. Field Crops Res. 65: 93-106.
5. Pimentel D (1996): Green Revolution and chemical hazards. The Sci. Total Environ. 188 (Suppl. 1): S86-S98.
6. Fujihiro.A.,Nkkiko.K. and Chio K(2013): Effects of compost and organic green manure on soil fertility and nutrient uptake in wheat-rice cropping system.Int.J.Manure Fertilizer (vol) 2 pp 407-412.
7. Kelssa K. **(**1988) Fertilizer requirement studies of maize (*Zea mays* L.) production in Ethiopia. *In*: Desta Beyene (eds.). A review of soil science research in Ethiopia. IAR, Addis Ababa, Ethiopia.
8. Miller,MR.,Engel.RE.,HolmesJA.,(2006): cropping sequence effect of pea and pea management on spring wheat in Northern great plains.Agron J 98;1610-1619.
9. Meena,B.L.; Sharma,S.K.; Meena,R.H.; Verma'A and PurohitH.S.: (2019):Effect of fertilizers and manure application on uptake & yield of maize-wheat and nutrient availability in Typic Haplustept. Green Farming Vol. 10 (1): 22-26.
10. Tadesse Y. (1989): Effect of green manuring on soil fertility and grain yield of maize. Sebil 2 (1-2), 26-28.
11. Yeshanew A, Asgelil D.(1999): The effect of green manuring and application of fertilizer on the yield of bread wheat at Adet in Northwestern Ethiopia. pp 182-185. *In*: The tenth regional wheat workshop for Eastern, Central and Southern Africa. Addis Ababa, Ethiopia: CIMMYT.
12. Table no 01The growth parameter of the *Cicer arietinum, Vallisneria spirallis* use as fertilizer2010-2011(cm).

Observation Table

S.NO.	WEEKS DURATION	CONTROL	100% WEEDS	WEEDS: SOIL,3:1	WEEDS: SOIL 1:1	WEEDS: SOIL 1:3
1	1	2.4	1.1	3.4	4.2	3.5
2	2	4.8	3.1	9.9	8.3	7.5
3	3	9.4	7.3	12.9	11.4	10.6
4	4	12.7	9.4	17.8	16.4	15.8
5	5	15.3	12.2	22.4	20.9	18.5
6	6	16.4	14.4	26.3	22.4	20.4
7	7	17.3	15.1	27.1	23.3	21.2
8	8	17.8	15.8	27.9	23.8	21.8
9	9	18.1	16.2	28.1	24.5	22.2
10	10	18.4	16.5	28.6	24.9	22.5
11	11	18.9	16.9	28.9	25.1	22.8
12	12	19.3	17.1	29.1	25.5	23.2
13	13	19.7	17.8	29.4	25.8	23.6
14	14	19.8	0	29.8	25.9	23.8

****

Common Ethnomedicinal Plants

Dr. Sarita Ghanghat *

Abstract - The word Ethno botany literally means the study of Ethno botany of the primitive human race. The term Ethno botany was first applied by **Hershberger** in 1895 to the study of plants used by primitive and aboriginal people. Ethno botany- the study of the interaction between plants and people, with a particular emphasis on traditional tribal cultures. Ethno botany is a branch of botany, the study plants and is closely related to cultural anthropology, the study of human societies. An important branch of ethno botany called economic botany focuses on the commercial use of plants, especially in industrialized societies. Ethno botany was defined by various ethno botanists as: Today there is an increasing desire to unravel the role of ethno-medicinal studies in trapping the centuries old traditional folk knowledge as well as in searching new plant resources of food, drug etc.(jain,1987,1991). People living in the developing countries rely quite effectively on traditional medicine for primary health care (Sullivan and shealy 1997; singh, 2002). Indian tradition medicine is based on different system such as Ayurveda, Siddha and Unani used by various communities (Gadgil, 1996). For centuries plants have been an important source of drugs. In India medicinal plants have long been used to treat different kinds of disease.

The present paper on 10 selected Ethno- medicinal plants belonging to 9 families with correct botanical identification, Botanical names, Family, Local names, parts used in diseases by the people.

Key Words - Ethno-medicinal, Tribal, Traditional medicine.

Introduction - - In India ,the use of different parts has been in vogue from ancient times. The indigenous system of medicine namely Ayurvedic , Siddha , and Unani, have been in existence for several centuries. During the thousands of years early human existence many natural material were identified for combating human either by instinct or intuition or trial error.

The tribes of India have presented a large bulk of traditional knowledge is handed down to generations through word of mouth and is extensively treatment of common diseases and conditions. medicinal plants have the principle sources of medicine in India .Since ancient past and presently they are becoming popular been a rapid extension of allopathic system of medical treatment in our country during the past century.

The WHO has already re contribution of traditional health care in tribal communities . In the present work authors' have collect species from different study sites.

Material And Methods - Madhya Pradesh sustains a very rich traditional medicinal plant wealth and inherits unique plant communities. The ethno-botanical study was conducted in 2010-2011. Extensive field trips were organized for collecting the plant species and data using an integrated approach of botanical collection, group discussion, interviews and questionnaires. Help of local medical practitioners was also taken. Plants were identified by referring to Flora of Bhopal by Oommachan (1977) and Flora of M.P. from Wikipedia.

Enumeration- In the following enumeration, plant names have been arranged alphabetically in disease wise. (Table-1)

Result and Discussion- The plant parts used for medical preparation were bark, root, stem leaves, fruits, The paper present a brief account of the uses of various ethno-medicinal plants parts against the diseases, skin disease, dysentery, wounds, jaundice, gastronomical, diseases by the people

Table -1 (see in next page)

Acknowlegment- Human beings always depend directly for their food , Shelters medicine and other needs on plants but with advancement of science and technology plants are being used in the form of tablets, juices and other readymade combination. The use of traditional medicine in developing countries is increasing .In India, almost 95% of the prescriptions are plant based in the traditional system of Ayurveda ,Unani and Siddha. The author express thanks to knowledgeable Persons who co- operated in sharing their knowledge at the time of study.

References :-

1. Bhattacharjee,supriya Kumar And De,L.C.,(2005) Medicinal Herbsand Flowers. Aavishkar publisher, distributors Jaipur(India)ISBN 81-79100960.
2. Gudgil ,M ; 1996 Documentriy diversity : An experiment curr.ci ; 70 (1) : 36
3. Ghanghat,Sarita (2014) Some Ethnomedicinal Plants used to different diseases by Local people of Vidisha

* **Assistant Professor (Botany) Govt. S.G.S.P.G. College, Ganjbasoda, Vidisha (M.P.) INDIA**

District. Madhy Pradesh.Naveen Sodh sansar (an International multidisciplinary Refered journal) ISSN2320-8767 impact factor 0.547 vol. II issue Vi-April to june 2014,pp (20-21).
4. Jain. S. k. (1987).A manual of Ethno botany. Scientific Publishers, Jodhpur India. ISBN 81850466
5. Jain, S. k., (1991) Dictionary of Indian Flok medicine and Ethno botany. Deep publication, New Delhi. ISBN : 8185622000.
6. Jain, S.K. (1995): Ethno botanical studies around vidisha district. Ph-D Thesis. Barkatullah University, Bhopal.
7. Kumar, U. (2013) An Introduction of Ethno botany, Agrobios(India).publisher Jodhpur ISBN978-81-7754-497-8.
8. Patel,Sheelwanth;(2009): Medicinal Trees ,Pointer Publishers Jaipur (Raj) india ISBN 978-81-7132-585-6
9. Sullivan, K.and C.N.Shealy , 1997 Complete Natural Home Remedies.Element Book Limited, Shaftsbury, U.K.
10. Oommachan, M. (1977): The flora of Bhopal J.K. jain Brothers, Bhopal.
11. Flora of M.P. from Wikipedia.

Table -1 Use of different plant species by the people

S.	Botanical Name	Local Name	Family	Parts Used	Uses of the plant
1	*Aloe vera L.*	Gheertkumari	Liliaceae	Leaf pulp	A teaspoonful of leaf juice used medicinally, Stomachic tonic,
2	*Argemone Mexican L.*	Pili kateri	Papaver -aceae	Stem	Fresh leaf is taken orally is effective for skin disease.
3	*Azadirachta indica A.juss.*	Neem	Meliaceae	Leaves	Taking two to three gm of Neem leaf powder, early in the Moring on empty stomach also removes worms.
4	*Bauhinia variegate Linn.*	Kachanar	Caesalpin -iaceae	Flower	Taking 500 gm of powder of kachnar flowers, twice daily for a week, cures hemorrhagic dysentery.
5	*Cinnamomum tamala Fr.Nees.*	Tejpatta	Lauraceae	Leaves	Brushing teeth with powdered Tej patta cures wounds of gums.
6	*Cinnamomum verum*	Dalchini	Lauraceae	Bark	One should also apply a pinch of Dalchini pasted with milk on the dark or brown spots for better results.
7	*Emblica officinalis Gaerth.*	Amla	Euphobi -aceae	fruit	Stomach disorder.
8	*Feronia limonia L.*	Kaith	Rutaceae	fruit	Taking juice of pulp of raw kaith fruits with a bit of curd, cures hemorrhagic non hemorrhagic dysentery.
9	*Ficus racemosa L.*	Gular	Moraceae		Taking decoction of gular roots cures dysentery.
10	*Mentha longifolia L.*	Pudina	Lamiaceae	Leaves	Treat liver and spleen diseases ,asthma and jaundice, indigestion rheumatic pains.

****

Sacred Trees, Folk Deities And Conservation Of Environment

Dr. Kumud Dubey*

Abstract - Plants are not only of utmost importance for all living organisms including human beings, but without plants, we cannot survive. Belief and knowledge in natural objects is always a way to conservation of nature. Worshipping sacred trees with a holy deity is traditional approach in the every village of the East Nimar area. This is an act which provides communal protection to trees and repositories of biodiversity. The younger generation of related area should adopt these traditional religious beliefs because it is the best way to conserve our environment.
Key Words - Sacred trees, Folk deities, Nature.

Introduction - A tree is a large perennial woody plant. Trees are beautiful and useful gift of nature as they are source of many products and also keep up the ecological balance. Trees are significant in many of the world's mythologies and religions. Trees are regarded as sacred in the ancient world in almost all religions. Worship of various components of nature like plants, animals, water, mountains, rivers, fire are done in all religions in all parts of the world. With regards to plants there is a belief that Yakshas or other deity may dwell in trees and nearby natural areas and by worshiping trees in which Yaksh may inhabit, it brings health and prosperity into their lives.

Sacred trees are generally associated with local deities. In most of the villages where agriculture is the main occupation, the powerful and significant divine present in the form of gramdevata. In other forms the deities are associated with local gods, local religions and folk religions. It is believed that deities' blessings bring prosperity to people. The present study is made to analyze the sacred trees, associated deities and people belief with them. It has its own importance not onlyecological but also related with eutheismas we know that trees are our lifeline.

Sacred Trees and Folk and Local Deities - Agriculture occupation is mainly connected with the concept of fertility and progress. Disease attack, rainfall or flood conditions affect the productivity, so main object in the worship of these deities is to propitiate them. Peepal (*Ficusreli giosa**)*** is most sacred tree in India and regarded as the dwelling place of the Brahma, Vishnu and Mahesh. Deities are sometimes garlanded with offering of neem (*Azadirachta indica*) flowers and leaves. In some parts of India neem tree itself is thought to be a goddess neemaridevi. It is associated with sheetaladevi in north and goddess Marimman in the south India. Bel(*Aeglem armelos)* is considered as an important sacred tree and Lord Shiva described as being connected with this tree. Hence he is also called Vilvadanda, one endowed with a staff of the bel tree.

Bamboo(*Dendrocalamus strictus*) plant grows in clusters ,so it is regarded as a symbol of a large progeny. In Sanskrit it is known as vansh, which means a clan or family. Mango(*Mangifera indica*) tree is considered as sign of fertility and prosperity. The leaves of mango tree are used almost all occasions, as toran and in marriage mandap. Leaves of Palash(*Butea monosperma)* are symbolic of the hindu trinity Brahma, Vishnu and Mahesh. Bargad(*Ficus benghalensis)*, Tulasi(*Ocimum sanctum)*, Amla(*Emblica officinalis)*, Parijat(*Nyctanthes arbortristis*), Imali (*Tamarindus indica*), Ashoka (*Saraca indica*), Banana(*Musa sps.*), Kachnar (*Bauhinia sps.*), Khajur (*Phoenix sps.*), Ber (*Ziziphus*), Babul(*Acacia*) and Coconut (*Cocos nucifera*) etc. plants are associated with special deities and considered as sacred plants.Special sacred trees occupy a respected ceremonial position and worshiped.

In south India Kurruppan, Adakky, Ondayi etc. are worshiped as kuldevata. Some ancient Indian tree deities such as Puliyidaivalaiyamman ,the tamil deity of tamarind tree or Kadambariyamman associated with Kadamba tree were seen as a manifestations of a goddess who offers her blessing fruits in abundance.In tamilTaalvaasini deity is related with palm tree. Deities are also connected with watery places.They may be either the protectors of watery places like dams,tanks,rivers,wells and canals and bring good shower to prosper cultivation. Jaldevi in north and Selli or Marimman in south is venerated for a good rainfall and relief from drought. The Yaksha and Yakshinis are associated with ashoka or sal trees.

In folk tradition pujas are performed when a community wishes.Sacred trees are worshiped and worshipers constitute mainly of a particular area.Sacred trees are may

***Associate Professor (Botany) M.L.C. Govt. Girls P.G. College, Khandwa (M.P.) INDIA**

located in the form of sacred groves,which are forest fragments and communally protected.Thetribals of almost all places in India worship their sacred groves with deities.In Jharkhand tribal areas sacred groves are known as Saranas. A sarana is a cluster of trees where adivasis worship on various occasions. Such a grove must have at least five sal trees held very sacred by tribals.The concept of sacred groves were also mentioned in ancient classical literature of Kalidas ,there has been a growing intrest in creating green patches as Nakshatravana.

In Nimar Region - Like our country in the east nimar region also sacred trees occupy a respected ceremonial position and worshiped.Many parts of the region are tribal dominated.Almost all the villages have a shrine of gram devata (local god) and the spirit of village boundry is called kakad(out skirt of village).In villages ,in forest or in crop fields the place of deity with sacred tree is known as thanak(sthanak),where folk tradition pujas are organized according to community or families.Specialnaivaidhya are made, known as kadhai. The precided deities are named variously as Bhilatdev, Hardulbaba, Danababa, Motibaba, Sheetalamata, Kakaddevata,Jaldevi etc. Folk deities with sacred trees in any region are the examples of environment conservation since ancient time. Cutting of these trees are strictly prohibited and it is believed that deities' blessing bring prosperity to people.

Role in Environment Conservation - Healthy environment is our prime concern.Healthy environment means clean air,freshwater,easily available natural resources,productive soil and development of capacity to adopt easily in the adverse conditions.Sacred trees are means of conservation of biodiversity as according to belief with local deities they are worshiped ,protected and no one is harm in the society.These plants have a lot of food and medicinal value too.In villages and tribal areas the sacred groves act as repositories of many medicinal plants,wild relatives of crops,seasonal fruit plants and timber yielding plants which act as the gene pools.They give much ecological and genetical significance and play an important role in wild life conservation.

Concluding Remarks - India is blessed with an extremely diverse flora and a large population of villagers and tribal peoples, who have a rich knowledge of the properties of their ambient vegetation. The trees and plants are regarded as animate beings so it is strictly prohibited to harm them in any way. Sacred trees with deities feature in different cultures throughout the world, as they are of special religious importance to a particular culture.Faith and knowledge in plants,animals and all other natural objects has largely contributed to natural conservation of environment. Younger generation should be aware towards their native places because religious belief and indigenous practices help in conservation of nature.

References:-

1. DafniAmost(2007) Rituals ,ceremonies and customs related to sacred trees with special reference to middle East.J.ofEthnobiology and Ethnomedicine.
2. Gupta S.S.(1980)Sared trees across culture and nations.Indian Pub. Calcutta folklore series.
3. Jain S.K.(1998)indias savior of sacred plants.Ethnobotany.
4. Khan M.L.et al (2008)The sacred gorves and their significance in conserving biodiversity;Anoverview.Ind. J. of Ecology and Env.Sc. 34 (3)277-291.

****

General Organization & Taxonomy of Reptile

Dr. Sunita Shakle*

Introduction - The Distinguishing features of the class that they are cold blooded, usually scaly vertebrate with a right and a left Aortic arch, a single occipital condyle and pulmonary respiration. The ovum is a large and meroblastic and embryo has an amnion and allantois. The class Reptile is represented at the present day by Lizards, Snakes turles tortoise, crocodiles, and the Newzealand Lizard sphenodon. These however are but a very small proportion of the whole class. The extinct groups, which are almost Confined to the secondary period of geological history, from by far the most important part of the class both in variety of structure and habit and in strangeness of from of the living groups the lizard and snakes are almost entirely terrestrial and not found fossil earlier than the tertiary period and then only in small numbers, the chelonia and crocodile which are partly aquatic date form the begining of the secondary periods while sphenodon is the representative of a sub-orderwhich made is appearance in the permian and has persisted to the present day.

Among the extinct forms we find the whole like marine Ichthyosuria the bird like flaying pterosauria, the huge bipealDinosauria and the mammal like Anomodoritia, it is a significant fact that some of the most highly specialized and ancient of Replile, such as the chelonia and pterosauria make their first appearance with all their special characters fully developed, and in none of the five sub classes can it be said that the earliest are definitely annectant to othere sub classes.

Some of the salient features of reptile-

1. The Reptile are essentially scaly tetrapodspentadactyle animals, but great modification in from and habit are met with the group.
2. The integument is scaly in all living reptiles. The scales horny epidermal structure usually placed on dermal papillae.
3. An upper and lower eyelid is generally present and frequently a third eyelid the nietitating membrane.
4. Cutaneous glands are contined to certain places and are not generally distributed the skin usually diversely coloured owing to the presence of pigment in the dremis and sometimes in the Deeper layers of the epidermis.
5. The vertebral column is usually divided in to cervical Thorasic, sacral and caudal regions.
6. A streium is very generally present.
7. In the skull there is a single occipital condyle to which the Exoccipital usually contribute.
8. The temporal fossa which is thus cutoff from the orbit is frequently divided into two by a bridge of bone formed by the post frontal sending backwards process to unite with an anteriorly directed prosess of the squamosal.
9. In the shoulders girdle there is a scapula and a coracoid which reaches the sternum when that structure is present, and clavicals and interclavicles are frequently found.
10. The pelvic exhibits great variations which are Discribed Later under the order: it may even be mammal like (some – anomedontia) or bird like (Dinosauria).
11. Central nervers system- the spind cord proe possesses except in snakes cervical and number enlargements and in some extinct forms the lumbar swelling seems to have been large than the brain.
12. The cerebro spinal Axis is bent at the function of spinal cord and brain. The cerebral hemisphere are small and smooth they are largest in the crocodilian.
13. The eyes are Always present through they very considerably in size.
14. The cochlear process in tubular in crocodiles and shpenodon.
15. The tympanic membrane and Eustachian tube are present except in snake and apodal lizards.
16. The Olfactory organ presents particularly in the chelonian and crocodilia.
17. Jacobsons'sorgan are present in crocodilian and chelonian. Int lacertilian and ophidia they are present between the nasal sacs and the roof of the mouth.
18. Teeth are usually on the premaxillae and dentary and frequently the palatine and pterygerid.
19. The alimentary canal presents no remarkable features. The large intestive is short and often has a small caecum.
20. Parental care is usually absent.
21. The developmental history of reptiles is direct very similar to that of birds.

According to Bogert there are more than 7000 living and several extinct species of reptiles, grouped in to

*Assistant Professor (Zoology) B.L.P. Govt. P.G. College, Mhow (M.P.) INDIA

approximately 16 orders of which only 4 are living, The class reptilian is first divide in to 5 major groups. Sub classes on the basis of presence or absence of certain openings through the posterolateral or temporal region of the skull.

1. **Sub class- Anapsida -** Primitives reptiles with a solid skull roof no. temporal openings.

Order 1.Cholonia or testudinata

1. Body short board and oval
2. Limbs clawed and or webbed paddle like.
3. Skill anapsid with a single Nasal opening and without a parietal foramen. Quadrate is immovable.
4. No sternum is found.
5. Teeth obscene. Jaws with Horney sheaths.
6. Heart incompletely 4 chambered with a partly divided ventricle.
7. Copulatory organ single and simple about 400 species of marine turtles freshwater terrapiris and terrestrial tortoises.

Subclass II euryopsida (extinct) - Skull with a single dorso lateral temporal opening on either side bonded below by postorbital and squamosal bones.

Subclass III Parapsida (extinct) - Skull with a single dorsotateral temporal opening on either side bounded below by the supratemporal and post formtal bones

Subclass IV Synapsida (extinct) - Skull with a single lateral temporal opening on either side bounded above by the post orbital and squamosal bones.

Subclass V Diapsida - Skull with two temporal openings on either side separated by the bar of postorbital and squamosal bones .

Order 2 Rhynchocephalia-

1. Body small elongaled lizards like.
2. Limbs pentadoctyleclowed and burrowing.
3. Skin covered by granular scales and a mid dorsal row of spins.
4. Skull diapsid, nosal openings seprated.
5. Vertebrae amphicaeus of biconcave.
6. Teeth acrodent.
7. Heart incompletely 4 chamberd.
8. No. Copulatery organ in male.

Order 3 squamata

1. Advance small to medium elongated.
2. Limbs clawed absent in snake and fer lizards.
3. Skull diapsid.
4. Vertebrae procoetous, ribs single headed.
5. Teeth accordant of pleurodont.
6. Heart incomplete 4 chambered.

Order 4 crocodilia

1. Large sized, carnivorous and aquatic reptiles.
2. Tail long and laterally compressed.
3. Limbs short.
4. Skull diapsid.
5. Ribs dicephalous.
6. Teeth numerous.
7. Heart completely 4 Chembered.

References :-

1. Personal Survey.

****

Biomass Energy And Sustainable Development

Dr. Avinash Dube*

Abstract - Biomass energy system offer significant possibilities for reducing greenhouse gas emissions due to their immense potential to replace fossil fuels in energy production.It is a type of renewable energy derived from organic matter of plant and animal origins.It can be used in various forms as solid,liquid or in gaseous form.In comparison to other countries our rural areas are less aware towards biomass energy production.Agriculture and Agro-forestry systems are the main sources to provide biomass,so preference should be given to development of small and large scale biomass based power plants.
Key Words - Biomass,energy conservation.

Introduction - Energy is an important input for development of modern civilization.Energy is prime mover of development and driver of growth.Per capita energy consumption is considered an important indicator of development.Due to industrial and agricultural growth,ever increasing use of energy is needed.But due to lack of focus on renewable and population explosion, energy dilemma has created which results into large scale energy deficit,fast depletion of fossil fuels and higher cost demand.Non-conventional source of energy such as wind, hydel, biomass, geothermal, tidal, solar,nuclear fusion etc. have the potential for being the future source of carbon neutral energy.Biomass is a renewable source of energy derived from the carbonaceous wastes of various natural and human activities.It is derived from the byproducts from the agricultural crops,raw material from the forest,timber industry,major parts of house hold waste and from wood.

All livings contain carbon compounds,biomass has energy stored in the form of chemical compounds.Direct burning of these materials generates heat.Generally it causes pollution but could be the cheapest form of energy.The present study is made to analyze biomass energy as alternative renewable source of energy for sustainable development,forms of biomass and efforts for proper utilization of biomass energy especially in rural areas because it is cost effective means of acquiring energy and almost pollution free.

Composition of Biomass - Depends on the biomass it varies significantly. Fuel performance is depends on the composition of materials.It includes carbon, hydrogen, nitrogen, sulphur, oxygen, chlorine and ash content.Generally carbon content of biomass is around 45%. Higher carbon content leads to a higher heat value.Hydrogen content of biomass is about 6% and higher hydrogen content leads to higher heating value. Nitrogen contents vary from 0.2% to 1%. Sulphur content is below 0.2%.Nitrogen and Sulphur content leads on combustion to formation of oxides.

The non-combustible content of biomass is referred as ash.Biomass fuels especially agricultural crops and residues tend to have a high ash content.The energy content of the most dry biomass fuel is in the 17-19 mj/kg (7300-8000 BTU/lb) range.This depends on the density and moisture content.Solid biomass as wood or garbage can burned directly to produce heat.Biomass can be converted into a gas called biogas or into liquid biofuel such as ethanol and biodiesel.Paper food scrapes and yard waste when decomposes in landfills or by processing of sewage biogas can forms. Ethanol is made from crops as corn and sugarcane that are fermented to produce fuel and used in vehicles.Biodiesel is produced from vegetable oils and animal fats.

Biomass Conversion - Biomass conversion is possible by thermal, chemical, biochemical and by electro chemical ways. In thermal conversion heat is used as dominant mechanism to convert biomass into another chemical form, it is a type of heating where liquid phase heat transfer medium is heated. Energy created by burning biomass is mainly suited for countries where fuel materials are available easily.

By certain chemical process biomass may convert into other forms to produce a fuel that is more conveniently used. For this first step is gasification, which is done at atmospheric pressure and cause combustion of biomass. It produces a gas mixture called producer gas. After certain processing it is used as fuel.Biochemical conversion is done by use of different enzymes of bacteria and other microbes, where natural break down takes place by biochemical

***Professor, S.N. Govt. P.G. College, Khandwa (M.P.) INDIA**

processes.Biomass converts into gaseous or liquid fuels as biogas or bioethanol.In few cases biomass can be directly converted to electrical energy by electrochemical oxidation of material. This can be performed in a direct carbon

Biomass gasify energy is suitable in most locations.It can be installed with varying capacity and even at lower loads any capacity can be operated. Ethanol is produced from corn in United States and from sugarcane in Brazil. It mixed with gasoline for wide use in automobiles. It is now being investigated to use ethanol or ETBE (Ethyle Tertiary Butyl Ether),an octane boosting agent to mix with gasoline in Japan.

Advantages and Disadvantages -

Advantages -

1. Always available and can be produced as a renewable resource.
2. It adds value to agricultural crop, as from agricultural wastes, it is a secondary product.
3. Use of waste material reduce land fill disposal.
4. Reduces need for fossil fuels.
5. Lesser pollution generating energy source.
6. Helps in cleanliness in villages and cities.
7. Provides manure for the agriculture.
8. It can be generated from every day human and animal wastes, vegetables and agriculture left over.
9. Recycling of waste reduces spread of diseases.
10. Emerging carbon dioxide by burning biomass is taken by plants.
11. More cost effective means of acquiring energy as compared to oil supplies.

Disadvantages -

1. Agricultural waste will not be available in sufficient amount.
2. Research is needed to reduce the cost of production of biomass based fuels.
3. Additional work and land needed for biomass energy conversion.
4. Cost of construction of biogas plant is high.
5. Continuous supply of biomass is required to generate biomass energy.
6. Many time biogas plant produces dirty smell.
7. Many crops which are used to produce biomass energy are seasonal and are not available over whole year.

SenerioIn Rural Areas - Biomass energy in rural areas is more reasonable but at the same time the technology is being developed to meet the large scale requirements using biomass. Improvement in agricultural practices promises to increased biomass yields, reduction in cultivation cost and improved environmental quality. Short rotation crops give higher yields than forests so smaller tracts are needed to produce biomass. Awareness in rural younger generation should be developed through organizing some demo and training program because this renewable energy source can be used in many gadgets and devices as biogas plant, gasifier, engine pump set, engine generator set, liquid bio fuel production etc.Efficient biomass handling technology and improvement in agro forestry system can play a major role in sustainable development in rural as well as in urban areas**.**

Concluding Remarks - Biomass is a renewable source of energy derived from plant and animal organic matter. Though it generates carbon di oxide when utilized, the biomass was created from solar energy, water, and carbon di oxide so does not increase the Earth's net volume of carbon di oxide. In this respect biomass is said to be carbon neutral.Biomass energy could also aid in modernizing the agricultural economy and creating significant job opportunities.Utilization of biomass based fuels will be instrumental in safeguarding the environment and health improvement especially in rural areas.

References :-

1. Akhtar A. et al(2018),A combined overview of combustion, pyrolysis and gasification of biomass energy and fuels.32 (7) pp7294-7318.
2. NaikS.N.etal (2010), Prod. Of first and second generation biofuels, A Comprehensive review. Renewable and sustainable energy Reviews.14(2) pp578-597.

****

गिद्धों की घटती संख्या एवं संरक्षण (म.प्र. के कुछ जिलों में किए गए कार्यों के संदर्भ में)

अंचल रामटेके *

शोध सारांश – किसी भी पारिस्थितिक तंत्र की रचना में जैविक तथा अजैविक घटकों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। जैविक घटकों में उत्पादक तथा उपभोक्ता सम्मिलित होते है, जो कि खाद्य श्रृंखला तथा खाद्य जाल बनाकर पारिस्थितिक तंत्र को संतुलित रखते है। खाद्य श्रृंखला में तृतीय या सर्वोच्य उपभोक्ता के रूप में अथवा मृतभक्षी के रूप में गिद्ध का स्थान महत्वपूर्ण है। जिसके बिना खाद्य श्रृंखला अपूर्ण है, परन्तु वर्तमान परिस्थितियां पारिस्थितिक तंत्र के इन मृतभक्षी जंतुओं के अस्तित्व के लिए खतरा बन गई है तथा इनके संरक्षण की ओर ध्यान आकर्षित कर रही है। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए गिद्धों की विलुप्ती के कारणों को ज्ञात कर सरकार द्वारा इनके संरक्षण के विभिन्न प्रयास किए जा रहे है।

शब्द कुंजी – पारिस्थितिक तंत्र, डाइक्लोफिन।

प्रस्तावना – गिद्धों को प्रकृति का सफाईकर्मी माना जाता है। इनका पारिस्थितिक तंत्र में विशेष महत्व है। खुले में जीवों की मृत्यु हो जाने के पत्तत् मृत शरीर का भक्षण करके ये स्वच्छ वातावरण बनाकर बीमारी को फैलने नहीं देते। वर्तमान में इनके लिए अनुकूल परिस्थितियों के नहीं मिलने से इनके प्रजनन में कमी आ रही है, वहीं इनका जीवन भी संकट में है। ये किसी ऊॅचे पेड पर अपना घों सला बनाते है, जिसमें मादा अपने एक या दो सफेद अंडे देती है। गिद्धों के नष्ट होने का मुख्य कारण पशुओं को दी जाने वाली दवाएं तथा इनका शिकार है। गिद्धों के खानपान में भी पर्याप्त विभिदता पाई जाती है, ये मृत जीवों के अलावा अंजीर, पक्षी, कीड़े, ताजा मांस, मूर्गी के चूजे आदि को भी भोजन के रूप में लेते है। परन्तु वर्तमान में इनकी घटती संख्या एक चिंता का विषय है।

उद्देश्य – इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य गिद्धों की घटती संख्या एवं उनके पतन के कारणों का अध्ययन करना एवं उनके संरक्षण हेतु आवश्यक उपायों को ज्ञात करना है।

अध्ययन स्त्रोत – उपरोक्त विषय के अध्ययन हेतु समाचार पत्रों में प्रकाशित लेख, इंटरनेट एवं पत्रिकाओं से प्राप्त जानकारी का उपयोग द्वितीयक स्त्रोत के रूप में किया गया है।

गिद्धों की प्रमुख प्रजातियां – भारत में पाई जाने वाली गिद्धों की प्रमुख प्रजातियां निम्न है –

1. भारतीय गिद्ध
2. लम्बी चोंच का गिद्ध
3. लाल सिर वाला गिद्ध
4. बंगाल का गिद्ध
5. सफेद गिद्ध

..... आदि

पर्यावरण में गिद्धों की भूमिका – पर्यावरण संरक्षण में गिद्धों की अहम भूमिका है क्योंकि गिद्ध ही मृत पशुओं का भक्षण करके पर्यावरण को स्वच्छ रखते है। पारिस्थितिक तंत्र की खाद्य श्रृंखला में गिद्धों का महत्वपूर्ण स्थान है लेकिन पिछले कुछ दशकों में गिद्धों की प्रजाति लुप्त होने की कगार पर है।

गिद्धों के पतन का मुख्य कारण – 1990 के दशक के पूर्व यह प्रजाति प्रचुर मात्रा में पाई जाती थी। परन्तु इसके पत्तत् इनकी 97 से 99 प्रतिशत जाति का पतन हो गया। इसका मुख्य कारण पशुओं के जोड़ो का दर्द मिटाने वाली दवा है।

जब यह दवाई खाया हुआ पशु मर जाता है और गिद्धों के द्वारा उसका भक्षण किया ताजा है तब उसकी मृत्यु हो जाती है।

पशु को दी जाने वाली दवा डाइक्लोफिन 2006 से प्रतिबंधित है। इसको उपयोग न करने के लिए आम लोगों को जागरूक भी किया जा रहा है। परन्तु आज भी प्रतिबंधित दवा पशु उपचार में उपयोग की जाती है जो कि गिद्धों के लिए हानिकारक है।

गिद्धों के संरक्षण के लिए उठाए जाने वाले कदम –

(i) डाइक्लोफिन पर प्रतिबंध लगाकर – यह बात दो दशक के पहले ही उजागर हो गई है कि पशुओं के इलाज के दौरान दी जाने वाली दर्द निवारक दवा गिद्धों के अस्तित्व के लिए सबसे बड़ा खतरा है। भारत सरकार भी हाल ही में हुए सर्वेक्षणों की रिर्पोट आने के बाद मान गई है कि इस दवाई के कारण ही गिद्धों की मृत्यु हो रही है।

(i) म.प्र. के विभिन्न जिलों में किए गए सर्वेक्षण कार्य –

(A) मण्डला जिले में गिद्धों की गणना – (सोमवार दिनांक 16 मई 2016 की रिर्पोट) मण्डला जिले में सिर्फ 38 गिद्ध नजर आए। भारतीय वन प्रबंधन संस्थान ने गिद्धों की प्रजातियों को बचाने के लिए गणना कराई है। गत दिवस की गणना पर जिले में भिन्न प्रजातियों के केवल 38 गिद्ध ही दिए है। इनके संरक्षण, संवर्धन की दिशा में काम किया जा रहा है। गणना के पत्तत् प्राप्त जानकारी प्रशासन को भेज दी गई है जिसके अनुसार शासन द्वारा नई योजना बनाकर इनके संरक्षण हेतु कार्य किया जा रहा है। पहले चरण की गणना के पत्तत् ऑकड़े लगभग 42 प्राप्त हुए। पांच माह बाद नौ स्थलों पर 38 गिद्ध नोटिस किए गए तथा वे स्थान जहां पूर्व में गिद्ध पाए जाते थे अब वहां नहीं दिखाई दे रहे है।

गणना के चरण	गणना की तिथी
प्रथम चरण	23.01.2016
द्वितीय चरण	14.05.2016

मण्डला में पाई जाने वाली मुख्य प्रजातियां – सफेद गिद्ध, काला गिद्ध,

* सहायक प्राध्यापक (प्राणिशास्त्र) शासकीय स्नातक महाविद्यालय, नैनपुर, जिला–मण्डला (म.प्र.) भारत

राज गिद्ध, यूरेशियाई गिद्ध, हिमालयी गिद्ध, चमर गिद्ध और पत्तल चोंच गिद्ध। भोजन की तलाश में ये गिद्ध व्यापक क्षेत्रों का भ्रमण करते है।

गणना की विधी – इस हेतु विभागीय कर्मियों को चुना गया तथा गणना सुबह के समय की गई क्योंकि इस समय गिद्ध समूह में होते है। जबकि दिन के समय ये विचरण करते हैं। जिससे गणना मे असुविधा होती है।

(B) मवई क्षेत्र में गिद्धों की गणना – मवई में की गई गिद्धों की गणना में 8 स्थानों पर 36 गिद्ध देखे गए। इसके साथ पश्चिम वन मण्डल के अधिकांश रेंजों में गणना हुई पर गिद्ध नजर नहीं आये केवल 1 स्थान पर 2 गिद्ध देखे गये। पूर्वी जंगल में भ्रमण के दौरान गिद्ध नजर नहीं आए।

योजना – मंवई में इनके प्रजनन की योजना तैयार की जा रही है।

(C) बरमान, तमोरिया में गिद्धों की गणना (26.04.2016) – इस कार्य हेतु टीमें बेलखेडा के समीप बरमान की पहाडियों, खमरिया की पहाडी और कटंगी के तमोरिया और पनागर के परियट की और रवाना की गई। वन अधिकारियों द्वारा गणना में शीतकाल तथा ग्रीष्मकाल में गिद्धों का ठिकाना प्राप्त करने में सफलता मिली। गिद्धों की संख्या में सवा गुना तक वृद्धि हुई। वन मण्डल द्वारा कटंगी के तमोरिया में ठंड में 17 गिद्ध पाए गए थे तथा इसके पश्चात की गई गणना में 22 पाए गए। बरमान में 6 गिद्ध होने की संभावना दर्शाई गई है। पनागर मे परियट में भी गिद्ध होने की संभावना व्यक्त की गई।

गणना हेतु स्थल –

1. चूँकि गिद्ध उँची चट्टानों पर अपना घौंसला बनाते है इसलिये वनकर्मी ऊँची चट्टानों पर लक्ष्य रखते हैं।
2. ग्रामीक्ष क्षेत्रों के आबादी युक्त स्थान।
3. नदी, झील अथवा जलाशय के समीप गिद्ध सुबह के समय शिकार हेतु देखे जाते हैं।

(1) म0प्र0 में 7000 गिद्धों का ठिकाना – (जबलपुर समाचार पत्र से प्राप्त) गर्मी में गिद्धों की संख्या व लोकेशन ठण्ड की अपेक्षा बढी।

मौसम	स्थान	गिद्धों की संख्या
मई (ग्रीष्म)	900	7000
जनवरी (ठण्ड)	876	6700

इस प्रकार जनवरी की तुलना में तीन सौ गिद्धों की संख्या व 25 नये क्षेत्रों की संख्या बढी।

सफेद गिद्धों की संख्या अधिक – गिद्धों की गणना में सफेद गिद्ध सबसे अधिक पाए गए, इसके बाद देशी गिद्ध मिले।

केन नदी के किनारे गिद्धों का स्थान – वन विभाग के नये आंकडों के अनुसार गिद्धों की संख्या पन्ना जिले में स्थित केन नदी के आस पास अधिक पायी गई है, यहां 700 अधिक गिद्ध मिले हैं।

गिद्ध गणना वर्ष 2018–19 के परिपेक्ष में कार्यशाला – सिवनी (12 दिसम्बर 2018) को वृत्त कार्यालय सिवनी के प्रांगण में स्थित सहभागिता भवन में प्रदेश व्यापी गिद्ध गणना 2018–19 के लिए कार्यशाला आयोजन की गई। इसके अंतर्गत मध्य प्रदेश तथा अन्य प्रदेशों में पाई जाने वाली गिद्धों की प्रजाति उनके रहवासी स्थान, उनकी पहचान, विशेषताओं तथा गणना प्रपत्र भरे जाने के संबंध में निर्देश दिए गए। प्रेजेन्टेषन में म0प्र0 में पाई जाने वाली गिद्धों की प्रमुख प्रजातियों के विषय में बताया गया है।

गणनां टीम के पास कैमरा, दूरबीन, बुकलेट, जे0पी0एस0 आदि सामग्री प्रदान की गई। गिद्ध गणना के दौरान केवल बैठे हुए गिद्धों के निवास स्थानों की जानकारी ली गई जैसे वे स्थान जहां ग्रामीणों द्वारा मृत पशुओं को छोडा जाता है, आदि।

उपसंहार – इस प्रकार उक्त लेख से सिद्ध है कि गिद्ध हमारे परिस्थितिक तंत्र के लिये अत्यंत आवश्यक है तथा इनकी उपयोगिता को देखते हुए इनकी विभिन्न प्रजातियों के संरक्षण हेतु सरकार द्वारा विभिन्न कार्यशालाओं का आयोजन कर तथा इस दिशा में कार्य कर इनका संरक्षण किया जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक भास्कर
2. दैनिक भास्कर
3. wekipedia
4. राज एक्सप्रेस
5. enviromental studies

****

Fabric Recycling and Reuse - Reducing Carbon Footprint

Dr. Smita Jain*

Introduction - India has a long history of producing textiles. The textile industry of India is among the most important industries at present. On the other hand, it is also true that it is also one of the most polluting industries. Not only is pollution released during the processing stages during the manufacture of textiles, but also in consumption, with used garments turning into fabric waste on being disposed. To minimise pollution as described above, entities within the textile industry have come up with various ways to cut down on the amount of fabric waste being sent to landfills and for incineration. Clothes are thrown away while much of their effective lifetime is still left. This only makes the recycling of these fabrics worthwhile and convenient, since not much processing is needed to increase the quality of the material up to standard.

Reuse of fabric waste can serve as a means of providing solutions to many economic, environmental and social issues. The reason for this is that putting fabric waste into dumps and landfills reduces its utility to society to zero, and using it as fuel for energy has a very low energy efficiency. On the other hand, the process of production of textiles from scratch uses a huge amount of energy and water in processing stages. All this can be saved through using fabric waste as a raw material in production of fabric products. This also reduces the net amount of labour expended, thereby bringing down the social and economic cost of wastage of good fabric. Fabric waste consists of a huge fraction of solid waste produced by modern cities, and if this is brought down, it would be a huge step towards reducing our carbon footprint.

Why it is Important to Recycle Textiles - In the times of fast fashion, when fashion trends come and go every season, fashionableness has become a major factor in the patterns of consumption of garments. Production of textiles in countries all over the world is at an all-time high, and since it is growing disproportionately with respect to population growth in the same areas, a greater amount of waste is being generated. In America alone, more than one crore tonnes of fabric waste go into landfills every year, with only 15% being donated or recycled.[1] According to research done by Greenpeace, the use and purchase of textiles worldwide makes up around 3% of the total CO2 emissions annually. Not only this, but the production and disposal of harmful chemicals used in making fixing agents and dyes can be reduced from going into the environment. Apart from that, soil pollution, water pollution and air pollution from the production processes and improper disposal of fabric waste can also be prevented.

Other types of waste such as copper wires, glass bottles, aluminium scrap, etc., which are recycled at a satisfactorily adequate rate; since the mechanisms for doing that are straightforward and prevalent. Unlike these, fabric waste is mostly put in landfills, and is posing grave risks to the environment. A lot of this clothing that is thrown away is synthetic – which means that the plastic polymers in it do not degrade for thousands of years, and when they do – harmful chemicals are released. Not only is environmental pollution happening in the stages of production of this extra fabric, but the disposal in landfills is harming the environment by being there itself, and also in the form of resources and energy wasted by not recycling it.The fact is that almost all, i.e. more than 90% of the clothes that are disposed of can be reused or recycled.[2]

Types of Fabric Waste - Fabric waste originates from textile products used for various purposes, such as for making clothes, upholstery and furnishings, etc. Furthermore, fabric waste can be classified into two categories, i.e. pre-consumer waste and post-consumer waste. Pre-consumer waste comprises of the by-products produced in the production of yarn, fabric, and garments. Most of this is scrap cloth left out during cutting of fabric sheets for garment making and leftover excess textile in factories. Post-consumer waste primarily consists of apparel and fabrics which are not used by the buyers. In this research paper, the researcher will focus on minimising wastage during reuse and recycling of post-consumer waste.

Methods and Techniques of Recycling Textiles - The first step in the process of recycling textiles is sorting. Sorting of fabric waste is usually done manually, and three types of material are obtained – clothing fit for reuse, rags, and fibres. The by-products of the process of sorting are buttons and zippers, which are not of relevance to the recycling of the fabric itself.

According to some fabric recyclers, half of the fabric disposed of by consumers is fit for reuse, and should not

***Professor, Institute for Excellence in Higher Education, Bhopal (M.P.) INDIA**

have ended up as waste. Often, these garments are sold off as second-hand clothing.[3]

Based on the type of processes used, fabric recycling can be either mechanical, or chemical. Mechanical fabric recycling involves turning fabric waste into new products, by cutting and stitching, i.e. using physical processes. The major downside of turning waste fabric into raw material in the form of virgin fibres is that due to breakage, the resulting length of the fibres is very short, which causes yarn made out of it to be of a very low quality.

Therefore, to be put into use to make decent quality fabrics, these recycled fibres have to be mixed with virgin fibres.[4]However, it is possible to use the shortest, over-processed and seemingly useless waste fibres to make paper. Ultimately, paper is made of a very similar kind of cellulose fibres as seen in plant-based fibres for clothing. It is interesting to note, that cotton fibres are already used in making currency notes in many countries such as India and the U.S. among many more. Therefore, paper manufacturing is certainly another potential use for short-length waste fibre from fabric waste.

Certain nylons, polyester, etc. can be recycled by melting down into pellets and making fibre out of them all over again. A very popular example of such type of recycling was in the case of Levi's, wherein the company used cold-drink bottles made of PET (polyethylene terephthalate) to make jeans. The PET plastic from these bottles was crushed into small pieces, cleaned, and melted and converted into polyester threads capable of being spun into fabric. Reportedly, eight plastic bottles get used up in making one pair of jeans with this method.[5]

On the other hand, chemical processing involves the use of chemicals to produce new products, such as producing Lyocell from old cotton clothes under which is being touted as the 'new Tencel' fibre. Some companies associated with this research are Lenzing, Evrnu and Renewcell among a few others.[7]

Primarily, the steps involved in the recycling of clothing on a large level involve the collection, category-based sorting and preliminary processing for turning into a uniform starting material.

Some of the end products that can be obtained from the recycling of fabric waste are small pieces of fabric, or rags, fabric recycled from fibres and other materials, such as paper, insulation material and building and construction material. More innovations are needed in textile recycling, such as use of textile waste in making composite building material, such as fibre-reinforced building materials similar to the ones that presently use geo-textile and carbon fibre. However, the technology that is available in the present day, especially in India, is not adequate for effectively turning fabric waste back into fibres.[8]

One of the greatest breakthroughs in the recycling of fabrics has been made by some start-ups, which are involved in converting cotton fabric waste into Lyocell-like fibres, which is a chemically modified form of cellulose. This works in a manner similar to the manufacturing of other cellulose-based synthetic fibres, since cotton fabric waste is also primarily composed of cellulose.[9] As a last resort, fabric waste can be processed and cut down into small pieces to be used as filling in pillows, mattresses and quilts. Such fabric can also be used as padding in furniture and insulation in car manufacturing.

Conclusion - There is certainly a presence of a fabric recycling culture in India, however it exists on a very sparse level, managing to recycle only a very small fraction of the total output of fabric waste in the country. The aim of the paper is to present various methods to recycle fabric, so that individuals and companies can get into this promising industry. Some of the processes mentioned above are utilised in factories in India based in Kandla and Panipat, where used garments and fabric from the western world is recycled and exported back to the west and Africa.

If the recycling practices mentioned above in the paper are made commonplace, and are practiced all over the country in the form of small and medium sized industries, it would have a highly beneficial impact on the social and economic problems related to unemployment by creating jobs, and at the same time be a huge boon to the environment through the saving of a large amount of resources and preventing a large amount of population as well. In short, it shall be a win-win situation wherein all aspects of welfare issues in society will be addressed. At a point where stress on resources which is going hand in hand with the booming and still growing population, this would be a great contribution to the efforts that have to be made by countries at the lowest and highest levels to make life sustainable in the long.

References :-

1. Elizabeth L. Cline, *Where does Discarded Clothing Go?,* The Atlantic, (July 18, 2014) *available at* https://www.theatlantic.com/business/archive/2014/07/where-does-discarded-clothing-go/374613/
2. J.J. Lu and H. Hamouda, *Current Status of Fiber Waste Recycling and its Future,* Advanced Materials Research (Vol. 878) pp. 122-131 (2014)
3. Rick Leblanc, *How Clothing Recycling Works*, (February 27, 2019) *available at* https://www.thebalancesmb.com/how-garment-recycling-works-2877992
4. Hannah Gould, *Recycling Clothes in the Fashion Industry*, The Guardian (February 26, 2015) *available at* https://www.theguardian.com/sustainable-business/sustainable-fashion-blog/2015/feb/26/waste-recycling-textiles-fashion-industry
5. Flemmich Webb, *Rubbish Jeans: How Levi's is Turning Plastic into Fashion* , The Guardian (April 18, 2013) *available at* https://www.theguardian.com/sustainable-business/rubbish-jeans-levis-plastic-fashion
6. Tencel's REFIBRA, *available at* https://www.tencel.com/refibra
7. John Mowbray, *Lenzing Launches Recycled Lyocell,*

Ecotextile News (February 7, 2017) *available at* https://www.ecotextile.com/2017020722573/materials-production-news/lenzing-launches-recycled-tencel-version.html

8. Greenpeace International, *Black Friday: Greenpeace calls timeout for fast fashion* , (November 24, 2016) *available at* https://www.greenpeace.org/international/press-release/7566/black-friday-greenpeace-calls-timeout-for-fast-fashion/
9. Hannah Gould,*Waste is so last season: recycling clothes in the fashion industry*, The Guardian, (February 26, 2015)

****

Indian Exports And FDI Outflow - An Overview

Dr. Anu Mehta*

Abstract - Indian foreign trade has come a long way in value terms from the time of gaining independence in 1947. After Liberalization of 1991, Indian trade growth has shown an increase in the last decade.Today international trade has become highly competitive and dynamic. There are various projects undertaken by central government for the upliftment of Indian economy. The present paper focuses on the direction of Indian exports and foreign direct investment outflows of last decade.
Key Words - Foreign trade, exports, direction and Foreign Direct Investment.

Introduction - Foreign trade is recognized as the most significant determinant of economic development of the country. The foreign trade of a country consists of inward and outward movement of goods and services, which result into outflow and inflow of foreign exchange. Development pace of foreign trade also depends on the Export-Import policy adopted by the country. In this research paper exports of the country have been studied from the perspective of direction of trade and foreign direct investment outflow. The objectives of this study are as follows:

Objectives -

1. To study the direction of India's export of last decade.
2. To study recent FDI outflow.

Research Methodology - This paper is purely based on the secondary sources of the data collected from books, journals, articles, RBI and other web links.

Direction of India's foreign trade - Over the years, India's trade with countries of the world has gone up substantially. Apart from that, India is now one of the major players in global trading system and all the major sectors if Indian economy is linked to world outside either directly or indirectly through international trade. Given the significance of India's trade, an attempt has been made hereby to give an overview of India's foreign trade in 2015 and its comparative performance over the last year. The analysis has been undertaken for India's export destinations and Foreign Direct Investment outflows.

India's Export Destinations - **(Graph See in the last page)**

From the above diagram direction of Indian exports are moving towards developing countries and these countries have emerged as good markets for Indian exports. It can be concluded from the above diagram that share of Asia, Africa and LAC region has increased from 58 per cent in 2004-05 and has gone up to 66per cent in 2014-15. Of this share of Asian region has also gone up from 48 per cent to 50per cent during this period i.e. from 2004-05 to 2014-15. This change in direction towards developing countries may be attributed to India's involvement in regional trading agreements particularly with developing countries.

India's major trading partners - As far as India's major trading partners are concerned in the FY 2015, the top most export destination of India was USA with US$ 42.4 bn. Second place was occupied by UAE with US$ 33.0 bn. Hongkong also registered an increase in its share in Indian exports with US$ 13.5 bn. In 2014 the China was at the first position with 12.4 per cent of global merchandise export with regard to it. India's share in global merchandise exports was 1.7 per cent as per WTO, whereas in FY 2015 China was at the fourth position with US$ 12.0 bn among Indian exports destination. In the list of top export destination of India Saudi Arabia stood at fifth position with US$ 11.2 bn. Germany, U.K., Japan and Russia were respectable destinations for Indian exports, but with their continuously decreasing shares in India's total export earnings they lost their place. However, the share of USA declined in the last couple of years, but it remained number one destination for Indian exports in FY2015.

India's Foreign Direct Investment outflow

RegionalFDI outflows **(Graph see in the last page)**

The first position of India's FDI outflow in FY 2015 was occupied by Netherlands with 26 per cent of Regional FDI outflow. Second most important FDI outflow in FY 2015was of Singapore with 14 per cent. Mauritius was having 12 per cent FDI outflow in FY 2015. British Virgin Island was stood up to fourth position with 10 per cent of total outflow as per the details given by Reserve Bank of India.

If we talk about sector wise Foreign Direct Investment outflow the first sector is Transportation, storage and communication services with 28%, at second position it is manufacturing sector with 24% of total outflow in FY 2015.

***Asst. Professor, IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA**

Third most important sector of FDI outflow is Agriculture and mining with 21% of total outflow. There were other sectors like wholesale, retail trade, restaurants and hotels with 10%. Financial, ins. & business services were at 8%. Minimum level of outflows from construction was 5% and others stood at 4% as per FY 2015 source proved by reserve bank of India.

Foreign Direct Investment Outflow from India stood at US $ 30.9 bn in 2014-15 where as foreign direct investment outflow if India of last few yearsis given below - **(Graph see in the last page)**

Strategy of India government regarding goal of doubling export of goods and service to $900 billion by 2020

Analysts and optimists are intrigued as to how the government will rise to the challenge and turn the tide of foreign trade. The government's goal of doubling export of goods and services to $900 billion by 2020 will require sustained growth in exports at double digit rates for the next few years.

The government is working on strategic, systematic and in a structural way to be able to realize the ambitious goal. It aims to bring missionary zeal in support for export growth by bringing all ministries, departments and state governments in sync, by easing export procedures and documentation and by ensuring better competitiveness and branding of products and services exported from the country.

There are three important elements in the government's export growth strategy. Firstly, the government intends to catalyse merchandise export by diversification of market and products, by participation in global value chain and by improving branding and competitiveness of exports of India and also by reducing transaction cost through online processing of authorizations.

Secondly, the government proposes to give a boost to services export by allowing fiscal incentives in the form of SEIS scrip and ensuring that the agreement on trade in services becomes an integral part of all trade agreements that are proposed by India to sign or has signed in the recent past. The government expects to boost services export from $145 billion to $300 billion.

The third and the most important part of the strategy are to increase concentration on utilization of trade agreement routes for accelerating export of goods and services.

Conclusion - International trade is very important part for the development of a country and it can prove to be an effective instrument of economic growth, employment generation and poverty alleviation. We can say that after liberalisation and with the development of science and technology in the country, there is a change in the nature of the Indian economy. There had been increase in the trade volume in the international trade of India and the export from India has also increased.

References :-

1. Francis Cherunilam, ¯International Trade and Export Management First Edition (1984), Himalaya Publishing House, Bombay.
2. Prasanta Kumar Ray and KunjaBihariKundu, ¯International Economics – Pure theory &Trade Policy First Edition(1969), Nababharat Publishers, Calcutta Dr.S.Sankaran, ¯International Trade and Foreign Exchange
3. Brian Copeland and AdityaMattoo (2008), ¯The Basic Economics of Services Trade (ed.) AdityaMattoo, Robert M. Stern and Gianni Zanini, Handbook of International Trade in Services, Oxford University Press, New York,
4. Chanda, R., (2005a), ¯Trade in Financial Services: India‘s Opportunities and Constraints , Working Paper No. 152, ICRIER, New Delhi.
5. Chanda, R., (2002), Globalization of Services: India‘s Opportunities and Constraints, Oxford University Press, New Delhi
6. Cohen, B (1964), ¯The Stagnation of Indian Exports, 1951-1961 , *Quarterly Journal of Economics.*

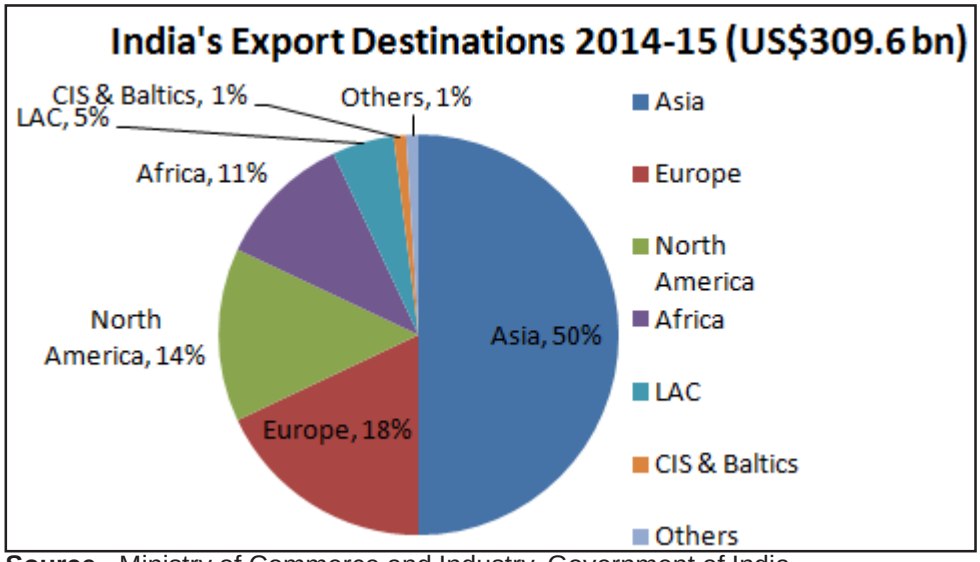

Source - Ministry of Commerce and Industry, Government of India

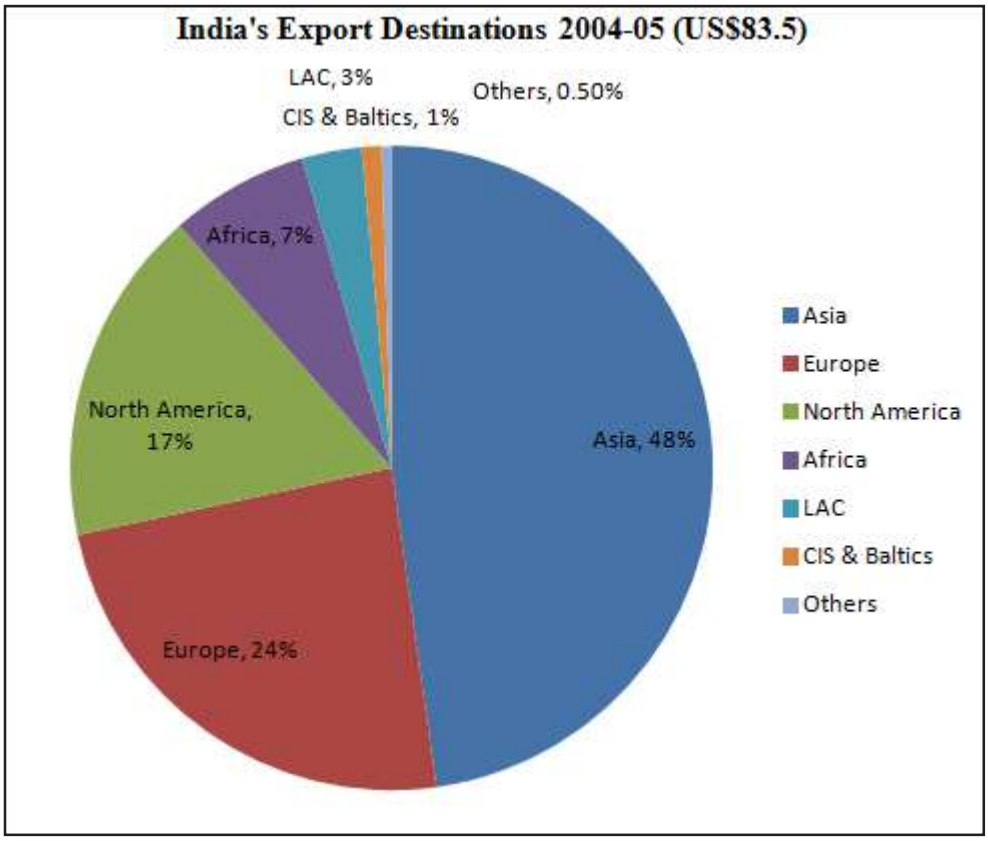

Source - Ministry of Commerce and Industry, Government of India

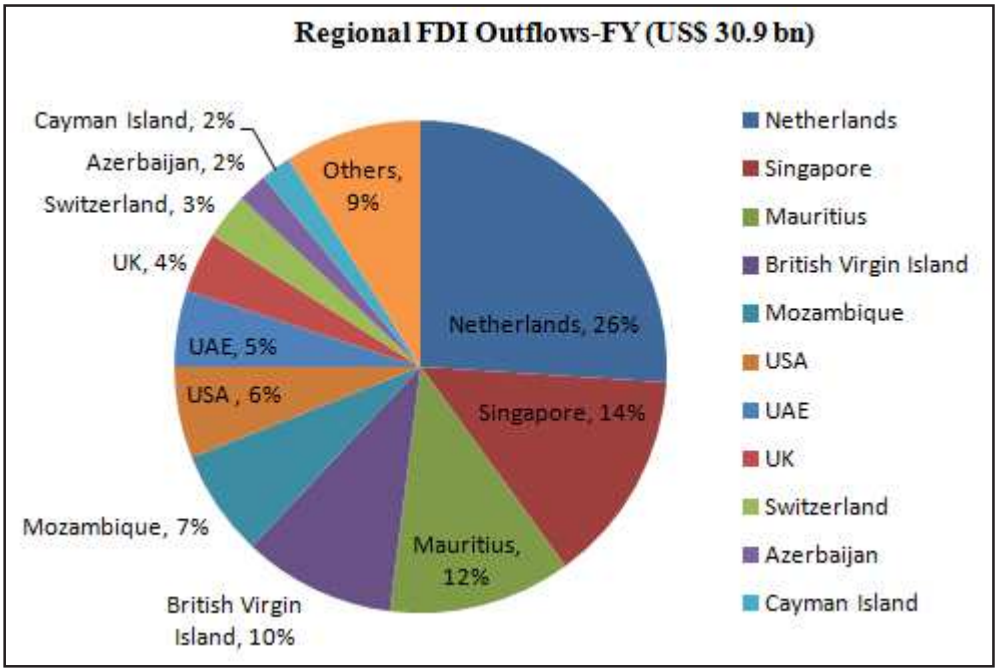

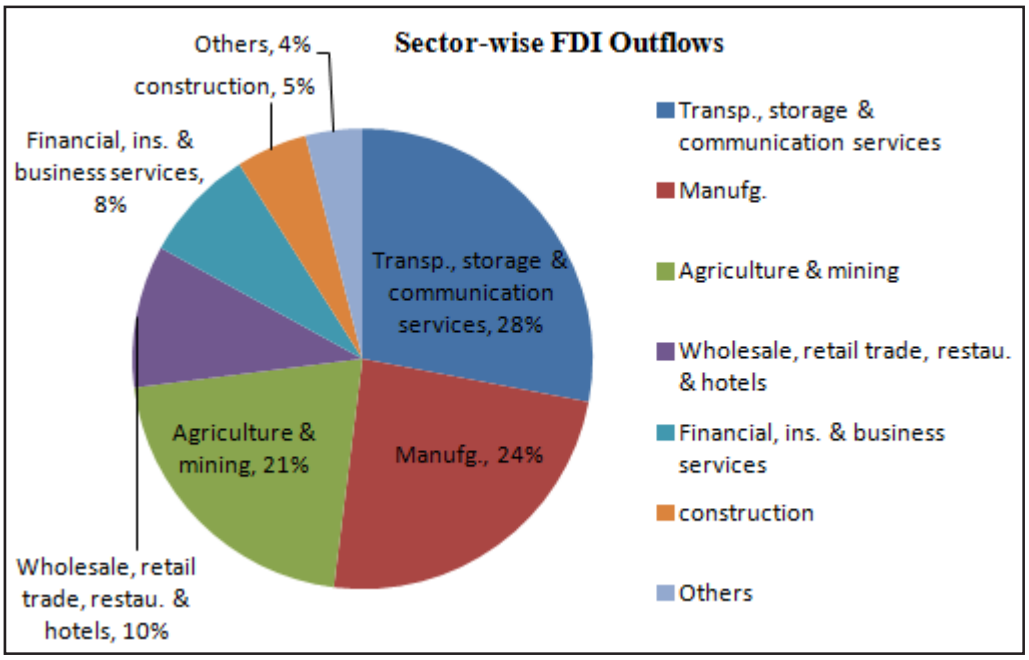

Note - FDI outflow include equity, loan guarantee issued.
Source - Reserve Bank of India.

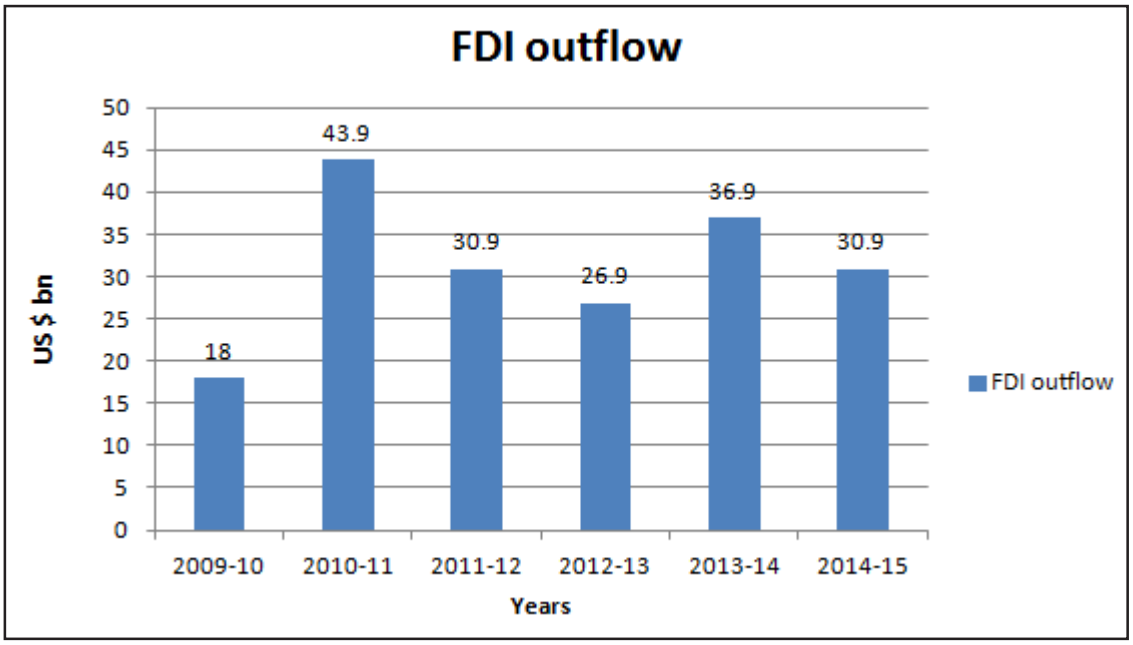

Note - FDI outflow include equity, loan guarantee issued
Source - Reserve Bank of India

****

Overview Of Small Scale Industries In Jammu And Kashmir

Mohd. Rafi Malla* **Dr. Laxmi Narayan Sharma****

Abstract - Jammu & Kashmir State has registered a reasonable growth in small scale industries since 1970's when the state formulated a comprehensive set of incentives for the development of industries particularly, small scale industries. Micro, Small and Medium Enterprises (MSMEs) have played an imperative role in the economic activities of advanced industrialized countries like Great Britain Germany, Japan, and the United States of America. In developing countries like India, these industries or Enterprises have an enormous importance due to its high level employment potential with low capital cost. MSMEs are also supporting in industrialization of rural backward areas. This sector is also called the nursery of entrepreneurship. This study is regarding Jammu and Kashmir (J&K) of the India, an industrial backward state of India. In J&K large scale industries are present in small numbers; only MSMEs/SSI units are growing after a long gap of disturbance. From last two decades MSMEs/SSI have been growing in a satisfactory pace as per circumstances of the state. However these enterprises are facing different hurdles in overall growth and development like poor infrastructure, shortage of electricity, political instability and financial problems. Government is outlining different policies and schemes for the growth of this sector but unfortunately failing to complete their objectives. This paper will draw attention towards Growth, Challenges and Issues related to Micro, Small and Medium Enterprises (MSMEs) of J&K.

Key Words - MSMEs; Growth; Employment; Political instability; Challenges

Introduction - Industrialization is a key to economic development of a country Micro, Small and Medium enterprises (MSMEs) have played an imperative role in the economic activities of highly developed industrialized countries like Japan, Germany, Great Britain and the United States of America. In developing economy like India, where agriculture is main source of livelihood, poverty and unemployment is prevailing all over. In order to eradicate poverty and unemployment, manufacturing sectors has to develop obligatory. Both in developed and developing countries, Small scale industries or micro, small and medium enterprises have been documented as noteworthy contributors in satisfying various socio-economic objectives such as higher growth of employment,promotion of exports & fosteri entrepreneurship. These enterprises are nursery for entrepreneurship and seedbed for future growth. The MSMEs sector is a key pillar of a Indian economy. Jammu and Kashmir is located in northern of India, covered with Himalayan Mountains. The political, climatic and geographical conditions of the state are absolutely different from other states. Unfortunately, J&K is not able to attract investment in secondary sector and remained industrial backward state. The political instability and poor infrastructure are key causes of industrial backwardness. The armed conflict has not only taken the precious lives but also it has shaken the economy of the state from its roots. The educated unemployment level of the state is growing day by day, due to backwardness of manufacturing sector. Large scale industries are absent in state. Only micro, small and medium enterprises are growing with the efforts of centre and state governments. The number of small scale industrial units as on November, 2014 registered with the State Directorate of Industries and Commerce is more than fifty seven thousands providing employment opportunities to 2.77 lakh people. The opportunities for MSMEs are adequate in the state, the availability of raw material and cultural conditions are supporting those enterprises. But the blockages in path of industrialization like climatic conditions, poor infrastructure, political instability, shortage of raw material, lack of skilled labour, financial problems etc. are main hurdles in the swiftness of industrial sector in state.

Review of Literature- State has registered a reasonable growth in small scale industries since 1970's when the state formulated a comprehensive set of incentives for the development of industries particularly, small scale industries. There has been marked growth in the number o f units formally registered in the state. The units have gone-up from just 2203 units in 1973-74 to 36821 units as on 1995-96 20. The small scale sector in the state is widely diversified and the production range consists of paints, biscuits, confectionery, wax candlcs, joinary, furniture, stccl-wirc, barbed wire, channel fencing, textiles, pharmaceuticals ,plastic products, chemicals, juices, sanitary ware, abrasives, paper products, printing, electric and electronics etc. Small and Medium enterprises are playing predominant role in Indian economy in terms of employment, production, exports and fostering entrepreneurship in a nation. Sharma et al have reported that MSMEs are the back bone of the Indian manufacturing sector and have been engine of economic growth in India. MSMEs as compare with big enterprises are providing employment opportunities with minimum capital cost. Their study found that the MSMEs are facing different problems like sub-optional sale of operation, technological obsolescence, supply chain insufficiencies, increasing domestic and global completion, Fund shortages, Change in manufacturing strategies and turbulent and

*Research Scholar (Commerce) Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
**Professor (Commerce) Govt. P.G, College, Neemuch (M.P.) INDIA

uncertain market scenario. Bhat and Malik have concluded their study with-that industrial sector plays an important role in economic development and employment generation of an economy. They also highlighted that industrial sector is major contributor to the gross national product (GNP) after services sector in India. Suggestion was provided in their study that development of Micro, small and medium enterprises (MSMES) are necessary for the Jammu and Kashmir economy in terms of output, employment generation, foreign exchange earnings in national income. Mohandass in his study revealed that Micro, Small and Medium enterprises are providing maximum opportunities for both selfemployment and job outside agricultural sector. Onukwuli et al. have suggested that with the growth and development of MSMEs the poverty will automatically remove. Kumar and Kamal have suggested that latest technology (Emarketing or web marketing) may help small manufacturer to connect with large number of buyer. They also highlighted that small industries need to improve their distribution channels for maximum coverage of the buyer.

Objectives of the Study -

1. To identify the employment opportunities and growth of small scale industries in Jammu & Kashmir.
2. To identify the various opportunities for small scale industries in Jammu & Kashmir.
3. To identify the various challenges of small scale industries in Jammu & Kashmir.

Research Methodology - Research is a well-planned, well designed and systematic study of an identified problem. It involves, collection of data and analysis it to discover of new facts.

Data collection - Both primary and secondary sources of data were used in the present study. Primary data was collected through simple random sampling technique from a sample of 100 MSMEs respondents by a questionnaire from Jammu and Kashmir. Secondary source of data was collected from different published sources of departments like Ministry of Micro, Small and Medium Enterprises, and Directorate of Economic Planning and Statistics, J&K. The other relevant data was collected from journals, libraries and websites.

Growth of Small Scale Industries in Jammu and Kashmir - There is no denying of the fact that industrialization is of utmost importance to the developing economies like ours for solving the problems of economic backwardness. Establishing of wide variety of industries, however, alone is not important but what matters most is their survival and growth. To draw a total and candid picture of the state s industrial potential, it will be obviously essential to have a close view of resource endowments, infra- structural capital, geo-physical features, economic policies and systems, political leadership with vision and mission, peace and stability and true democracy. Industrialization plays a significant role in employment creation of any economy. The Jammu and Kashmir State is on the path of Industrializations, large-scale and heavy industries are not present in an acceptable statistics; due to political instability, poor infrastructure and climatic disadvantages. Only Micro, Small and Medium enterprises are growing in a state. The availability of raw material, cultural and climatic conditions is supporting those enterprises in growth. Prospect and opportunities in this sector is dazzling; if proper attention will divert towards these enterprises. Small scale industrial units of the state are manufacturing food products, beverages, slick, bricks, plastic products etc. MSMEs are growing in state; at the end of 2014 total number of MSMEs was 57193 and providing employment to 277653 individuals. For immediate growth of MSMEs in state, registration procedure was simplified. District Industries Centre (DIC) has been set up in each district of the state, to provide all services to the entrepreneurs under one roof. The Jammu and Kashmir entrepreneurship development institute in a valley is boosting, helping and guiding educated youth and diverting their attention towards manufacturing sector. All these will help in the development of industrial units in the state of Jammu and Kashmir the state, it also contributes to the Gross State Domestic Product (GSDP) that is, it contributes 12.55% to GSDP. The small scale industrial sector has recorded a constant growth rate. The total number of permanent registered small scale industrial units at the end of November 2010 stood at 53157, providing employment to 247065 persons, out of these formally registered units, 526 units were registered during the year 2010, providing employment to 3654 persons.

Opportunities of Small Scale Industries in Jammu and Kashmir - Jammu and Kashmir is bestowed by the Allah with distinctive natural resources and fruits. The State of Jammu and Kashmir is very rich in Agro, Forest, Horticulture and Live Stock resources. There is plentiful availability of resources, which are quite suitable for setting up of different types of small scale industrial units in the area of Food Processing, Sports Goods, Leather Goods, Engineering Products and units based on medical Plants and herbs etc. The climatic condition of the state is very favorable for Electronics. Some other key opportunities for MAMEs are discussed below.

1. Jammu and Kashmir has border connectivity with different countries like Pakistan and china. If the old trade links will restore again and new channels will open, positively benefited for the industrial sector of the state. The transportation cost will minimize, products of MSMEs can compete easily in international markets.
2. Handicraft and sericulture industrial units have a great prospect in valley, due to availability of abundant raw material
3. The availability of fruits in a good quality and quantity offers opportunity for food processing units.
4. Wool and Khadi industries have opportunities in rural and forest areas of valley. Sheep farming is main occupation of those areas; availability of cheap raw material is obvious.
5. Small scale Cricket bat manufacturing units have a prospect, due to availability of raw materials and demand from tourists.
6. Dry fruit packing units have an opportunity in state.
7. Growth of MSMEs can minimize the migration of skilled labours from J&K to other states; State gross domestic production can increase (SGDP).
8. Kangri (Fire Pot) makers have Opportunities, due to cultural and climatic advantages.

Challenges of Small scale Industries in J&K - Each sector of an economy has dissimilar challenge in growth and development, same case with the industrial sector. Jammu and Kashmir is state, where challenges of all sectors are totally different from other states of nation like Political instability,

unique climatic and geographical conditions. From the above cited conditions, it is undoubtedly understandable that large scale industries cannot survive in state, result is same. Small enterprises are backbone of industrial sector of state. But regrettably this sector is facing different problems in day-to-day operations of production and marketing. Poor infrastructure and limited sources of financial amenities are major problems of state. From last two and half decades Jammu and Kashmir has been under the political turmoil, impacted economy of state [2].

Even basic infrastructure facilities like power supply, road and communication system linger underdeveloped due to political instability. In order to reach the ground level situation, simple random sampling technique was used; 250 MSMEs was selected from state. Through questionnaire the magnitude of different problems was identified by Garrett's ranking technique. In this method, the respondents were asked to rank the given problem according to the magnitude of the problem. The order of merit given by the respondents was converted into ranks by using the Garrett's formula.

Conclusion - Micro, small and medium enterprises have emerged as the engine of economic growth and equitable distribution of national income. Jammu and Kashmir as an industrial backward state of India, only micro, small and medium enterprises are growing after a long gap of disturbance with the efforts of centre and state government. The attention of young educated generation is diverting toward manufacturing sector by the firm efforts of Jammu and Kashmir entrepreneurship development institute (JKEDI). J&K is attempting diligently to create investment atmosphere, due to political instability all is fruitless. There is a need to eradicate all the stumbling blocks coming in the way of industrial development in the state like poor infrastructure, poor marketing connectivity, political instability, shortage of electricity and lack proper entrepreneurs training institutes. Small scale industrial sector of the state have an incredible potential of feeding thousands of unemployed educated youths in state, if developed properly. An assist is need from centre and state, to frame such policies and programmes through which the Micro, small and medium enterprises in the state can be develop by leaps and bounds. With the growth of this sector unemployment level will diminish automatically, which is the main anxiety in state.

References :-

1. Dar BA, Bhat FA (2013) Small Scale Industries in Jammu and Kashmir (J&K) growth, Performance and Challenges. International NGO Journal8: 38-43.
2. Islam AU (2014) Impact of Armed Conflict on Economy and Tourism: A Study of State of Jammu and Kashmir. IOSR Journal of Economics andFinance 4: 55-60.
3. Butt AK (2005) Strategizing Industrial Development in Jammu & Kashmir. New Century Publications, New Delhi.
4. Sharma BS, Mukesh S, Gayatri D (2015) Contribution of MSMEs in thereduction of Wealth & Growth in Employment and Income. The IndianEconomic Journal, Article 7: 79-88.
5. Bhat FA, Malik R (2014) Prospects and Problems of Micro, Small andMedium Enterprises in Jammu & Kashmir. Golden Research Thoughts 3:1-5.
6. Mohandass S (2014) Impact of globalization on Micro, Small andMedium enterprises in India. Asia pacific journal of research 1: 165-170.
7. Onukwuli AG, Akam UG, Mary E, Onwuka EM (2014) Challenges ofSmall Scale Industries in Sustainable Development in Nigeria. IOSRJournal of Business and Management 16: 19-25.
8. Kumar P, Kamal (2013) Marketing Strategies of Small Scale Industries: AReview. International Journal on Arts, Management and Humanities 2:35-38.
9. Mahapatra D (2007) Conflict and Development in Kashmir: Challengesand opportunities. Proceedings of the International Conference onSustainable Development in Conflict Environments, Kathmandu: Centrefor International Studies & Cooperation, pp: 68-77.
10. Abdullah A, Kamarulzaman Y, Farinda AG (2008) Legal Services and Marketing Limitations: A focus on SME in Malysia. International review of business research papers 4: 308-319.

Growth in number of units and employment by the Small Scale Sector of Jammu & Kashmir

Sr.	Year	No. of MSME Units	Changes in MSME Units (%)	Employment	Changes in Employment (%)
1	1998-1999	40627	-	178004	-
2	1999-2000	41950	3.25	183698	3.19
3	2000-2001	42808	2.04	187399	2.01
4	2001-2002	43689	2.05	193285	3.14
5	2002-2003	44701	2.31	198238	2.56
6	2003-2004	45672	2.17	203328	2.56
7.	2004-2005	46818	2.50	209322	2.94
8	2005-2006	48224	3.00	219127	4.68
9	2006-2007	49426	2.49	225963	3.11
8	2007-2008	50470	2.11	232915	3.07
9	2008-2009	51441	1.92	238281	2.30
10	2009-2010	52629	2.30	245774	3.14
11	2010-2011	53544	1.73	251551	2.35
12	2011-2012	54714	2.18	260393	3.51
13	2012-2013	55742	1.87	267194	2.61
14	2013-2014	56660	1.64	274011	2.55
15	2014-2015	57193	03.94	277653	1.32

Performance Appraisal System In BHEL

Dr. Lokesh Jarwal*

Abstract - Generally All Companies Have Some Formal & Informal Means Of Appearing Their Employees Performance. Once Any Organization Has Been Selected Employee For Their Organization. It Need To Trained & Motivated For Getting Expected Performance From Employees. Once Employee Trained & Motivated He Is Then Appraised For His Performance. Performance Appraisal Is The Step Where Organization Management Find How Effectively Employee Working In Organization & How Much Employee Aware Towards His Own Career & Organization's Goal. We Can Say Performance Appraisal Is Various Step Of Procedure Which Includes ,Setting Work Standards For Employee & Evaluate The Employee Actual Performance Relatives To Those Standards & Also Providing Feedback Regarding Their Performance With The Aim Of Motivating Him To Reduce Or Remove Any Performance Deficiencies.

Introduction - Heyels Observes It Is the Process of Evaluating the Performance & Qualifications of the Employees in Term of Requirement's Of the Job for Which He Employed. For Purposes Of Administration Including Placement, Selection, Promotion, Providing Financial Rewards Other Action Which Require Differential Treatment Among The Members Of The Group As As Distinguished From Action Affecting All Member's Equally.1 The Appraisal Of Individuals An Employment Has Been Labeled & Described By Experts Over The Years In Different Ways. Common Descriptions Include Performance Appraisal, Merit Rating, Behavioral Review, Progress Report, Staff Assessment, and Service Rating & Fitness Report.2

objectives of the study the study -

- To asses & analyze existing performance appraisal methods in BHEL.
- To know the perception of the employees for the effectiveness of existing system of performance appraisal in BHEL Bhopal To Study The Existing Performance Appraisal System Being Undertaken In BHEL, Bhopal
- To Give Suggestions & Recommendations For Further Improvement In Employee Training Program & P.A System Is Needed.

Review Of Literature - Bhatia S.K (1986) In The Research Article " Training In Public Enterprises: Future Directions" Reported Trend In The Area Enterprises. Training In Enterprises Is Very Dominating Factor. In The Area Of Threat Cut Competition & Fast Economic Environment Charges Can Affect Enterprises Prostituted City. Training Can Prepare Employee For Technical Challenges \.Mainuna Muhamman Nda & Dr. Rashad Yazdani Fard. Teed In Their Research Paper, The Impact Of Employee Training & Development On Employee Productivity (Nov.Dec2013), Training & Development Ultimately Upgrade Not Only The Productivity Of Employees But Also Of The Organization. It Has Rightly Been Said, Employee Development Is The Key To Organization Sustainable Development.

Otuko Chege & Douglas In Their Research Article " Effect Of Training Dimensions On Employee's Work On Performance A Case Of Mumias Sugar Company In Kakamega County" ( ) Told Theet There Was A Positive & Significant Effect Between Training Need Assessment & Employee Performance In Munias Sugar Company.

Importance Of Performance Appraisal - Performance Appraisal Is Most Important Tool For An Organization It Has Provide Information Regarding Employee For Various Personnel Aspect Such As Career Development, Training Need, Promotion Thes Kind Of Accurate Information Play A Very Significant Role In The Organization For Decision Making Strategy. Performance Appraisal Helps Managers To See What Are The Weak Area Of Employee & Which Employee Need Training & Counseling Finding That Kind Of Employee Organization Can Arrange More Useful Training Programme. Its Also Help Mfor Organization To Provide Systematic Judgment To Back Mp Salary Increases, Demotions, Promotions & Terminations.3 Most Important Thing about Performance Appraisal System Is That It Has Provide Significant & Vital Information in Organization .Importance Of Performance Appraisal Are Given Below -

- Getting Suitable Employee For Organization.
- It Provide Useful Information Regarding Decision Making.
- For Increasing Employee Performance.
- For Enhance Productivity.
- Produce Best Supervisors.
- For Employee Motivation.
- Protects Managers.
- It Help For Better Employer-Employee Relation.
- Weeded Out Or Persuaded Employee.
- Same Methods Of Measurement.

***Asst. Professor, MPRP Govt. Girls College, Dewas (M.P.) INDIA**

A Historical perspective of BHEL - BHEL is one of the largest engineering & manufacturing enterprises in india & is one of the leading international companies in the field of power. Today it ranks among the leading power equipment manufacturer in the world the wide network of BHEL of 14 manufacturing divisions, 8 services centres, 4 power sector reginal centres, 18 regional offices & 150 sites spread all over india & abroad enables the company to promptly serves its coustmors. BHEL provides electrical population system, controls & roling stocks of various capacities to india railways, india's most important transportation infrastructures with large share of passenger traffic & goods. BHEL has proved its capabilities & technological excellence by successfully establishing itself as on indigenous manufacturer of energy efficient IGBT based propulsion system for ac derives of locomotives, a landmark achievement in transportation, a landmark achievement in transportation sector. BHEL has also diversified into the area of track maintenance machines & coach building for Indian railways4

Performance appraisal policy in BHEL - BHEL Bhopal has well established performance evaluation system for version categories in term of annual confidential report. The various parameters of performance evaluation system are will laid down in the ACR forms with the marketing system. The total 100 marks are allowed for performance evaluation, based on marks;

As in BHEL Bhopal, the workers are classified into three different categories I.E. executive, supervisor & artisan cadres the manner in which performance appraisal is administered is also different for each category.

Performance appraisal for executive's executive cadre employees performance appraised through a performance management system by BHEL Bhopal, which designed for the executives in BHEL, known as map was moving ahead through performance. The introduced in BHEL in the financial year 2002-03 features & the tools of map have been designed to reduce subjectivity & individual biases the may impact the effectiveness of performance management system map focuses on the growth & development of the employee the development plan is build with careful though process using training of emp. Map format has sour categories which included KRA (key result area), your development plan, your skill competencies, qualitative assessment.

Concept of map - In the first section of map general information about employee has been included like staff numbers, staff name, appraises id , appraisar name, unit, unique role & responsibility id no, performance cycle year etc. second section of map realate with KRA, 'key result area' are critical outcomes towards which effort is directed to achieve desiered business result. KRA target with 5 point rating scale. Level 1 is significantly below expeclations & level 5 is significantly above expectations of apprasee about his achived target. Appraiser also put his comment wheather he is agreed or not with apprise will have a set of essential KRA's he can select maximum 12 KRA's , third section of map has two part A&B included development objectives, & part B is relavant with employee's personal trait like creativity, planning, leadership, communication etc. appraiser & reuiewer gave score individually to appraise. Fourth segment in map is belonging with qualitative assessment which include parameter like contribution to group objectives. Process orientation cost effectiveness & quality of work.

Objective of MAP at BHEL -

- To recommend new KRA's
- To identify specific training & development requirements of individually employees
- To assess the overall organizational performance.
- To identify the better performing employees who should get majority of avalible merit pay increase, bonuses & performance.
- To identify & communicate performance expectation & goals & than ensuring the realization of these goals.

Findings -

- Performance appraisal policy provide a opportunity to employee of career advancement.
- The Performance appraisal of BHEL is very systematic and implied effectively.
- The communication system of Performance appraisal is very advanced,
- The Performance appraisal system is lagging behind in satisfying social need rather than satisfying monetary needs.

Conclusion - The overall purpose of this study to find effectiveness of BHEL's performance policy.BHEL needs. BHEL Performance appraisal system is well structured and effectively implied.employee must be satisfied with this system.but inspite of that there is a strong need to change the process of Performance appraisal system in a changeable employee needs. Messuring Performance is useful only when it convert in to healthy action toward employee.it is important to create an healthy environment in organization so employee can put hundred percent effectiveness with a system of reward and punishment(if needed)

References :-

1. Heyels, C. The Encyclopidea Of Management . Renhold Publishing Corporation Ltd. New York 1973,P.654
2. Oberg, Wanston " Making Performance Relevant" , In Hawards Business Review, Vol.50 No.I 1972,Pp-61-62.
3. Mcgregor,Douglous, An Uneasy Look At Performance Appraisal" In Havard Business School Review May/ June,1957,P-89-94
4. www.BHEL.com

****

Supply Chain Management Network in E-Commerce

Dr. Monica Masih* Muriel Singh**

Introduction - The term supply chain management has not only been use to explain the logistics activities and the planning control of material and information flows internally with in a company or externally between company . Competition in the 21st Century will be across supply chain, not individual companies . A supply chain is a network of facilities and distribution option for the entire network of companies to work together to design, produces, deliver and service product. The supply chain management is the backbone of E-Commerce. E-commerce does not just mean trading and shopping on the internet. It means having the right product at the right place at the right time can save money.

Supply chain management are the four square circulation frame work. The level of integration and management of a business process link is a function of the number and level of components. Companies success was its vertically in integrated structure where design, production, distribution were integrated. Based on the feedback from the stores, the store specialist provided the designers with an outline of the new styles, designs and fabric as demanded by the stores the procurement and production management provided input regarding the capacity and manufacturing cost. The designers came out with the design specifications and the technical brief. Once the designs had been decided upon, fabric procurement and production planning began.

Depending on the styles and sizes to be produced, the fabric was cut own high tech automated facilities. Due to this flexibility in production processes ,when the demand for any design was low, company was able to stop its production. At the same time, it was able to modify its processes to produce more of the designs in demand. The company considered several factors like expertise, cost and especially time sensitivity before opting for outsourcing.

A distribution channel is a chain of business through which a good or services passes until its reaches the end consumer. It can include wholesales, retailers, distributers and internet. Supply chain management software helps in planning, projecting and implementing the chain of distribution. Plan and implement a supply chain and distribution program, understanding the role of each player along the distribution channel.

Business world is moving ever faster than before. Adaptation to change is very important for any e-business software. Agility will become a necessity for any e-business infrastructure software. Purpose is to increase enterprise satisfaction and confidence in doing business on the internet. Establish credibility of enterprises, suppliers and distributers to help a world- class customer experience, innovate rapidly and lower its cost.

It is very difficult to compare supply chain management software solution of several vendors. The vendors use different names for the same function which lead to intransparency regarding the software functionalities. However to make the effort to search for the best system and to implement it pays off. The objective of supply chain management is to optimize the efficiency of the whole supply chain. With supply chain management system companies can improve the integration and co-ordination of all partners along time supply chain and consequently reduce cost.

Nevertheless companies are today forced to continuously improve their information management system, internal processes and develop all kinds of supply chain simplification to produce their products at lower cost thus remaining competitive in the market.

References :-

1. "*The standard for internet commerce*"- version 1.0.1999-12
2. Zhang shengsheng; "*Virtual enterprises and agile supply chain*" computer integrated manufacturing system; 1999.5
3. *Floating on Air, Economist*, May 19, 2001
4. Global brand, The Business Week, august at 2005.

***Asst. Professor (Commerce) Govt. Arts College, Panagar (M.P.) INDIA**
***Asst. Professor (Commerce) Govt. Arts College Kannod, Dewas (M.P.) INDIA**

जबलपुर संभाग में महिला उद्यमिता की स्थिति-एक अध्ययन

डॉ. जय सिंह उर्वेती *

प्रस्तावना – आधुनिक समाज व अर्थव्यवस्था उद्यमिता की देन है। हमारे जीवन में जो सुख-सुविधाए व साधन विकसित हुए हैं, वे उद्यमिता के कारण संभव हो सकें हैं। विश्व के विभिन्न देशों की सामाजिक व आर्थिक प्रगति में उद्यमिता विकास कार्यक्रमों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मनुष्य अपने जीवन-यापन के लिए कोई न कोई आर्थिक क्रिया सम्पन्न करता है। इसे सामान्यत: उद्यम या उद्यमीय क्रिया कहा जाता है। इस कार्य को सम्पन्न करने वाले व्यक्ति को 'उद्यमी' कहा जाता है। 'उद्यमी' के आंतरिक गुणों (जिनके माध्यम से वह 'उद्यमीय क्रिया' सम्पन्न करने में समर्थ होता है) को उद्यमिता कहा जाता है। आधुनिक सभ्यता 'उद्यमिता विकास' की देन है। विश्व के विभिन्न देशों में जो आर्थिक व सामाजिक विकास हुआ है वह सब उद्यमिता कार्यक्रमों का परिणाम है। उद्यमिता, विकास का प्रत्यक्ष संबंध 'उद्यमी' वर्ग से है। 'उद्यमी' वह व्यक्ति होता है, जो कि जीवन की जरूरतों और इच्छाओं को पूरा करने के लिए आर्थिक क्रियाओं द्वारा स्वरोजगार प्राप्त कर, जीवन उपयोगी वस्तुएँ और सेवाएँ अच्छी तरह प्राप्त करता है।

अध्ययन क्षेत्र – जबलपुर संभाग मध्यप्रदेश के जबलपुर, कटनी, मण्डला, नरसिंहपुर, सिवनी, छिंदवाडा, बालाघाट जिलों को सम्मिलित करके बनाया गया है, जबलपुर संभाग का पुनर्गठन वर्ष 2009 में किया गया था। अब जबलपुर संभाग में 7 जिले हैं।

अध्ययन के उद्देश्य – अध्ययन का मूल उद्देश्य उद्यमिता को तथ्यात्मक स्थिति को प्रकाश में लाना, उद्यमिता विकास का आंकलन करना, उद्यमिता विकास कार्यक्रमों व उनकी प्रगति की विवेचना करना, उद्यमिता विकास में वित्तीय संस्थाओं और गैर सरकारी संगठनों की भूमिका का परीक्षण करना और उद्यमियों की समस्याओं का पता लगाना तथा उनके संतुष्टि स्तर का माप करना है।

परिकल्पनाएँ – अध्ययन के संबंध में यह संकल्पना प्रतिपादित की गई है कि संभाग में राज्य द्वारा उद्यमिता विकास के संबंध में आवश्यक प्रयास किए जा रहे हैं। इस कार्य में वित्तीय संस्थाएँ व गैर सरकारी संगठन भी सहयोग कर रहे हैं।

शोध प्रविधि – शोध अध्ययन प्राथमिक व द्वितीयक समंकों पर आधारित है अध्ययन हेतु जबलपुर संभाग के शहरी व अर्द्धशहरी ग्रामीण क्षेत्रों में सर्वेक्षण द्वारा प्राथमिक संमकों का संकलन किया गया है। अध्ययन हेतु पंजीकृत उद्यमियों का चयन किया गया है।

महिला उद्यमिता विकास की स्थिति – अध्ययन हेतु 120 हितग्राहियों का चयन किया गया जिनमें से 25 महिला उद्यमी सम्मिलित हैं। महिला उद्यमिता विकास की विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत महिला उद्यमिता की विकास की स्थिति का विवेचन 25 महिला उद्यमियों के सर्वेक्षण के आधार पर किया गया है। यहाँ महिला उद्यमियों की निश्चित संख्या पता करना कठिन है, क्योंकि शासकीय विभागों के पास इनके अद्यतन समंक उपलब्ध नहीं हैं। जिन बैंकों द्वारा उद्यमिता विकास कार्यक्रमों व योजनाओं के अंतर्गत, वित्त प्रदान किया गया है। उनके पास भी अब तक की पूर्ण जानकारी (केवल महिला उद्यमियों के संबंध में) उपलब्ध नहीं है। जिन महिला उद्यमियों द्वारा उद्यमिता विकास कार्यक्रमों के अंतर्गत पंजीकरण कराया गया है, उनकी संख्या लगभग 100 है। इसमें से 25 महिला उद्यमियों से संपर्क स्थापित करके विभिन्न सूचनाएँ संकलित की गई हैं। ये महिला उद्यमी विभिन्न उद्योगों व्यापार व सेवा में संलग्न हैं। देव निर्देशन आधार पर महिला उद्यमियों का चयन करते समय यह ध्यान रखा गया है कि प्रमुख उद्योग व व्यापार क्षेत्रों से उद्यमी का प्रतिनिधित्व हो जावे।

महिला उद्यमिता विकास की स्थिति को जानने के लिए अध्ययन में कुछ मापदण्ड निर्धारित किए गए हैं जैसे शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में महिला उद्यमियों की संख्या, पारिवारिक पृष्ठभूमि, वैवाहिक स्थिति, पिता या पति की शिक्षा आदि। सर्वेक्षण के आधार पर निम्न तालिका में जबलपुर संभाग के शहरी व अर्द्धशहरी/ग्रामीण क्षेत्र की महिला उद्यमियों की संख्या व उनके उद्यम का स्वरूप स्पष्ट किया गया है।

क्र.	क्षेत्र	उद्यम का विवरण	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
1.	शहरी	ब्यूटी पार्लर, वस्त्र निर्माण, सिलाई, कढ़ाई, खाद्य पदार्थ आदि	20	80
2.	ग्रामीण	ब्यूटी, पार्लर, वस्त्र निर्माण, सिलाई कढ़ाई, खाद्य पदार्थ आदि	05	20
			25	100

स्पष्ट है कि शहरी क्षेत्र से 20 (80 प्रतिशत) व ग्रामीण क्षेत्र 5 (20 प्रतिशत) महिलाओं का चयन किया गया है। महिला उद्यमिता की स्थिति का आंकलन करते समय महिला उद्यमियों से जब यह पूछा गया कि क्या वे आयकर के अलावा अन्य व्यवसायिक करों का भुगतान करती है? यदि 'हाँ' तो कितना? तब इस प्रश्न के उत्तर में यह ज्ञात हुआ कि ऐसी महिला उद्यमियों की संख्या बहुत कम लगभग 20 प्रतिशत है। इनमें आयकर की सीमा में आने वाली महिलाओं की संख्या बहुत कम है। इससे स्पष्ट है कि महिला उद्यमियों का राजकोष में योगदान अत्यन्त सीमित है। इसी प्रकार महिला उद्यमियों से लेखांकन व सलाहकारी सेवाओं के बारे में पूछताछ की गई, जिसके आधार पर यह ज्ञात हुआ कि विधिवत लेखा-जोखा रखने वाली महिलाओं उद्यमियों की संख्या सीमित हैं और विशेषज्ञों की सेवाएं जैसे कर संबंधी सलाह आदि भी सीमित महिला उद्यमियों द्वारा प्राप्त की जा रही है। जिन महिला उद्यमियों के उद्यमों के उद्यमों का आकार बड़ा है वे लेखा विशेषज्ञों, मुनीमों आदि की सेवाएं ले रही है। मात्र 6 प्रतिशत महिला उद्यमियों

*सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, नैनपुर, जिला – मण्डला (म.प्र.) भारत

ने यह सूचित किया कि वे चार्टर्ड एकाउन्टेंट की सहायता लेती है।

उद्यमिता विकास के निर्धारक घटक में उद्यमियों की पारिवारिक पृष्ठभूमि महत्वपूर्ण होती है। सामान्यत: जिन परिवारों में उद्यमिता पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही होती है, उन परिवारों में उद्यमिता विकास की दिशा व मात्रा प्राय: स्वमेव निर्धारित हो जाती है। पारिवारिक वातावरण से ही उनमें उद्यमशीलता के गुणों का विकास होता है और अभिप्रेरणाएँ भी मिलती हैं। अभिप्रेरणाओं का प्रभाव तब दृष्टिगोचर होता है, जब यह तथ्य उभरकर सामने आए कि उद्यमीय पारिवारिक पृष्ठभूमि के अलावा अन्य क्षेत्र की पारिवारिक पृष्ठभूमि वाले नव उद्यमियों की संख्या सर्वाधिक हो, इसे उद्यमशीलता की अभिप्रेरणाओं का परिणाम माना जाता है।

महिला उद्यमियों की वैवाहिक स्थिति को प्रकट करने संबंधी जानकारी के आधार पर 84 प्रतिशत विवाहित महिलाओं को अपने परिवार/पति से पर्याप्त प्रोत्साहन मिल रहा है। विवाहित महिलाओं द्वारा उद्यम संचालित करना यह प्रकट करता है कि परिवारों में महिला उद्यमिता पक्ष में मानसिकता निर्मित हो रही है। एक समय था, जब विवाहित महिलाओं को घर के कामकाज तक सीमित रखा जाता था, अब स्थिति वैसी नहीं है। वर्तमान समय में समाज में विवाह के औचित्य को पूर्ण मान्यता प्राप्त है। लड़कियों के विवाह को प्रधानता दी जाती हैं न कि उद्यमिता को यही कारण है कि अविवाहित महिला उद्यमियों की संख्या बहुत कम (12%) है

महिला उद्यमियों की शिक्षा

क्र.	शिक्षा का स्तर	उद्यमियों की संख्या	प्रतिशत
1.	हाईस्कूल	2	8
2.	हायर सेकेण्डरी	4	16
3.	स्नातक	10	40
4.	स्नातकोत्तर	9	36
	कुल	25	100

उक्त तालिका में महिला उद्यमियों की शिक्षा का विवरण स्पष्ट किया गया है कि लगभग 24 प्रतिशत महिला उद्यमियों की शिक्षा हायर सेकेण्डरी एवं हाईस्कूल या इससे कम है। शिक्षा के अभाव में ऐसी महिलाओं का स्वयं का उद्यम स्थापित करने और उसके कुशल संचालन की अपेक्षा नहीं की जा सकती है। यह सैद्धांतिक मीमांसा है और वस्तु स्थिति इसके विपरीत भी हो सकती है किन्तु ऐसी स्थिति अपवाद स्वरूप भी हो सकती है। स्नातक व स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त करने वाली महिला उद्यमियों का प्रतिशत 40 व 36 है।

महिला उद्यमियों के द्वारा प्राप्त किए गए प्रशिक्षण का विवरण

क्रं.	प्रशिक्षण	उद्यमियों की संख्या	प्रतिशत
1.	उद्यमिता की स्थिति से पूर्व		
	1. तकनीक प्रशिक्षण	1	4
	2. गैर तकनीक प्रशिक्षण	3	12
	3. कोई प्रशिक्षण प्राप्त नहीं किया	21	84
	कुल	25	100
2.	उद्यमिता के स्थिति के उपरान्त		
	1. तकनीक प्रशिक्षण	2	8
	2. गैर तकनीक प्रशिक्षण	8	32
	3. कोई प्रशिक्षण प्राप्त नहीं किया	15	60
	कुल	25	100

महिला उद्यमियों से प्राप्त सूचना के अनुसार उद्यमिता की स्थिति से पूर्व एक महिला उद्यमी तकनीकी प्रशिक्षण प्राप्त किया था और 3 महिला उद्यमियों ने गैर तकनीकी प्रशिक्षण प्राप्त किया था जबकि शेष 21 महिला उद्यमियों ने कोई भी प्रशिक्षण प्राप्त नहीं किया था। उद्यमिता की स्थिति के बाद 2 ने तकनीकि व 4 ने गैर तकनीकी प्रशिक्षण प्राप्त नहीं किया है। शेष ने कोई भी प्रशिक्षण प्राप्त नहीं किया है।

अध्ययन से ज्ञात हुआ कि 1990 के दशक में 40 प्रतिशत महिला उद्यमियों द्वारा विभिन्न उद्यमों की स्थापना की गई थी, जबकि 2000 के दशक में सर्वाधिक महिला उद्यमियों ने 90 के दशक की तुलना में दो से तीन गुना वृद्धि कर उद्यम स्थापित किए हैं। समाज में महिला उद्यमियों द्वारा रूढ़ीवादी परम्पराओं से ऊपर उठकर आधुनिक सोच व युग का आरंभ हुआ है। इन सबके परिणामस्वरूप उद्यमिता विकास योजनाओं का क्रियान्वयन तीव्र गति से हुआ है। साथ ही महिला शिक्षा में प्रसार व तेजी से परिवर्तित सामाजिक परिवेश भी महिला उद्यमिता की दर को तीव्र करने में सहायक सिद्ध हुआ है।

समस्याएँ – जबलपुर संभाग में उद्यमिता विकास की गति अत्याधिक मंद व सीमित संख्या में दर्ज हुई है, किंतु यह संतोष का विषय है कि परम्परागत सामाजिक व्यवस्था में एक नई शुरूआत हुई है। उद्यमियों ने अतिलघु, लघु, मध्यम, वृहद स्तर के मध्य स्थापित किये हैं और समाज को नवीन दिशा प्रदान की है। उद्यमिता विकास की दर को अधिक समुन्नत किया जा सकता है, यदि इससे संबंधित विभिन्न समस्याओं की पहचान करके इन्हें दूर करने का प्रयास किया जाये। उद्यमियों से प्रत्यक्ष संपर्क सथापित करके उनकी समस्याओं के बारे में जानकारी संकलित की गई। इस संबंध में उद्यमियों की **निम्नलिखित समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त हुई –**

1. अधोसंरचनात्मक सुविधाओं की कमी।
2. कच्चे माल की समस्या।
3. उत्पाद विपणन की समस्या।
4. कार्मिक समस्या।
5. वित्त की समस्या।
6. प्रशिक्षण की सुविधाओं का अभाव।
7. अन्य समस्याएँ–सामाजिक व पारिवारिक बाधाएँ, सरकारी विभागों का असहयोग, सरकारी नीति व कार्यक्रमों की जटिलता आदि।

सुझाव – क्षेत्रीय आर्थिक व सामाजिक असंतुलन की समस्या को सुलझाए बिना आर्थिक विकास का दावा करना व्यर्थ है। राज्य व संभाग के पिछड़े क्षेत्रों के आर्थिक व सामाजिक विकास के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु इन क्षेत्रों में वित्तीय अभिप्रेरणाओं के माध्यम से उद्यमिता विकास किया जा रहा है। यद्यपि मध्यप्रदेश एवं संभाग के पिछड़े क्षेत्रों में वित्तीय अभिप्रेरणाओं का उद्यमिता विकास पर अनुकूल प्रभाव पड़ा है, किन्तु इसके मार्ग में व्याप्त बाधाओं के रहते इसके परिणाम संतोषजनक नहीं हैं। पिछड़े क्षेत्रों में उद्यमिता विकास की दर को बढ़ाने के उद्देश्य से इससे संबंधित विभिन्न समस्याओं का निराकरण किया जाना आवश्यक है।

उद्यमिता विकास की एक अन्य प्रमुख समस्या उद्यमिता विकास हेतु संबंधित विभिन्न विभागों व अन्य अभिकरणों के मध्य समुचित समन्वय का अभाव होना भी हैं। इसके परिणामस्वरूप उद्यमियों द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली परियोजनाओं की अभिस्वीकृति में आवश्यक विलम्ब होता है, इसके कालान्तर में परियोजना की लागत बढ़ जाने से उस पर वित्तीय भार बढ़ जाता है और इकाई अपनी आरंभिक अवस्था में ही रूग्णता का शिकार हो

जाती हैं।

निष्कर्ष – जबलपुर संभाग को दृष्टिपात करें तो यह स्पष्ट होता है कि महाकौशल अंचल में स्थित है। अत: महिला अपने आप उल्लेखनीय होते हुए भी उस स्थिति पर नहीं पहुँची जो स्थिति इन्दौर या मालवांचल, भोपाल और ग्वालियर में देखने को मिलती है। ऐसा नहीं है कि संभाग की महिलाएँ जागरूकता को लेकर किसी से पीछे नहीं, परंतु बढ़ने के लिए अवसर चाहिए परंतु ये अवसर औद्योगिक एवं आर्थिक विकास प्रदान करते हैं। चूंकि औद्योगिक एवं आर्थिक विकास में हम पिछड़े हुए हैं। इस संभाग के लोगों में समृद्धि भी उस पैमाने पर नहीं फैली है जिस पैमाने पर इन्दौर तथा भोपाल में देखने में मिलती है। अत: संभाग में उद्योग एवं व्यवसाय स्थापित करने की अपनी सीमाएँ हैं और उन सीमाओं का यदि आकलन करें तो स्थिति कतई निराशाजनक नहीं है। सर्वेक्षण से यह स्पष्ट हुआ है कि सीमित अवसरों को भुनाने में जबलपुर संभाग की महिलाएँ अत्यन्त योग्यता का परिचय देती हैं। निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि सीमित औद्योगिक विकास के चलते जो भी अवसर पैदा हुए हैं, उन अवसरों का लाभ महिलाओं ने उठाया है और आर्थिक प्रगति की ओर अग्रसर है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. लघु उद्योग समाचार पत्रिका उद्यम, एवं उद्योग, फरवरी 1993 पृ. 30
2. मिश्रा डी.एन. 'एण्टरप्रिनियोरशिप डेव्हलपमेंट एण्ड प्लानिंग इन इण्डिया', चुग पब्लिकेशन्स 1990 पृ.1
3. कोचरन टी.सी. एण्टरप्रिन्योरिशिप, इण्टरनेशनल एनसायक्लोपीडिया ऑफ सोशल सांइसेज स्किल्स डी.एल.एडीसन
4. शुम्पिटर – इकोनोमिक थ्यौरी एण्ड एण्टरप्रिन्योरिशिप, हिस्ट्री एक्सपोलेण्ट इण्टरप्राईजेज पृ. 48
5. देसाई बसंत – डायनामिक्स ऑफ इण्टर प्रिन्योरशिप डेव्हलपमेंट एण्ड मैनेजमेंट, हिमालया पब्लिशिंग हाऊस मुंबई 1998 पृ. 672

****

औद्योगिक विकास में नीतियॉ- उपलब्धियां एवं भावी सम्भावनाओं का अध्ययन

डॉ. आर. के. खजवानिया * ज्योति विश्वकर्मा **

प्रस्तावना – किसी भी राज्य की आर्थिक क्रियाओं का अधिकांश केन्द्र उद्योगों के इर्दगिर्द ही रहता है। मध्यप्रदेश क्षेत्र की दृष्टि से भारत का द्वितीय राज्य है तथा खनिज की दृष्टि से पिछडें राज्यों की श्रेणी में गिना जाता है। अपार खनिज सम्पदा तथा प्राकृतिक संसाधनों के बावजूद मध्यप्रदेश में औद्योगिकीकरण की गति धीमी रही है। सन् 1956 के उपरांत अर्थात द्वितीय पंचवर्षीय योजनावधि के दौरान मध्यप्रदेश में उपलब्ध संसाधनों का सुचारू रूप से दोहन करने के लिए औद्योगिक शिक्षा में सार्थक पहल की गई है। राज्य के औद्योगिक विकास में मध्यप्रदेश में औद्योगिक विकास निगम, मध्यप्रदेश लघु उद्योग विकास निगम, मध्यप्रदेश निर्यात निगम, मध्यप्रदेश खनिज निगम आदि का सक्रिय योगदान रहा है। बीसवीं शताब्दी के सातवे दशक में मध्यप्रदेश में उद्योगों के विस्तार हेतु जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना की गई। ग्रामीण एवं नगरीय अंचलों में योजनाबद्ध तरीको से औद्योगिकीकरण की दिशा में एक क्रांति के रूप में आठवें दशक का माना जाता है। उद्योगों की आवश्यकता व अधोसरंचना के विकास हेतु महत्वपूर्ण उद्योग टेलीकम्युनिकेशन, ऑटोमोबाईल एण्ड प्रोसेसिंग, इलेक्ट्रिकल्स एवं पेट्रोलियम आदि उद्योगो की स्थापना पर विशेष ध्यान दिया गया है।

औद्योगिक विकास की दृष्टि से मध्य प्रदेश समृद्ध राज्य है। औद्योगिक विकास में मध्य प्रदेश का देश में सातवां स्थान है राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में निर्माण उद्योग का योगदान लगभग 28.29: है। द्वितीय परियोजना के समय राज्य में औद्योगिकरण के विस्तार हेतु बी.एल.इ.एल भोपाल साल्वेन्ट कन्ट्रशन प्लान्ट उज्जैन, काटन स्पिनिंग मील सनावद, एल्कोहल प्लान्ट भोपाल जैसें वृहद्ध उद्योगों के साथ-साथ ग्वालियर, इन्दौर में औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना की गई।

शोध प्रविधि – शोधार्थी द्वारा शोध पत्र में विषय से सम्बधित प्राथमिक एवं द्वितीय समंकों का प्रयोग किया गया है, जिसके माध्यम सें जनमानस तक औद्योगिक विकास को आसानी सें पहुचाया जा सकें। उपलब्ध समंकों के गहन अध्ययन द्वारा ही शोध पत्र के उद्देश्यों की पूर्ती की गई है।

परिकल्पना – शोध पत्र को पूर्ण करने के लिए शोधार्थी योजना बनाता है जिससे कोई समस्या उत्पन्न न हो शोध परिकल्पना समस्या के चयन के आगें की कड़ी है कार्य को करने के लिए परिकल्पना का होना आवश्यक है

1. औद्योगिक विकास में नीतियां
2. औद्योगिक नितियों का क्रियान्वयन

उद्देश्य – शोध पत्र को पूर्ण करने के लिए कुछ उद्देश्यों को परखा गया है।

1. औद्योगिक विकास का अध्ययन करना
2. सरकार की नीतियों का मुल्याकंन करना
3. समस्याओं का निराकरण करना
4. भावी सम्भावनाओं को जानना
5. निष्कर्ष एवं सुझाव देना

शब्द कुंजी – औद्योगिक विकास, मध्यप्रदेश, नीतियां, प्रगति, कृषि, सम्भावना, अवधारणा

प्रमुख उद्योग – प्रदेश में सर्वप्रथम कृषि आधारित उद्योग की स्थापना की गई थी 1980 के दशक तक राज्य में कृषि आधारित उद्योगों में सूती वस्त्र उद्योग की प्रधानता थी परंतु वर्तमान में कृषि आधारित उद्योग में वनस्पती तेल, चीनी मील आदि की प्रधानता है। राज्य में कृषि पर आधारित प्रमुख उद्योग निम्न है।

1. चीनी उद्योग 2. वनस्पती घी उद्योग, 3. सूती कपड़ा उद्योग, 4. चीनी मिट्टी उद्योग, 5. सीमेंट उद्योग, 6. कागज उद्योग, 7. लकड़ी उद्योग, 8. इलेक्ट्रानिक्स उद्योग, 9. वाहन उद्योग आदि।

औद्योगिक ढांचे का विविधीकरण –प्रथम योजना के आरंभ में कुल औद्योगिक उत्पादन में केवल चार उद्योगो (खाद्य पदार्थ, कपड़ा, लकड़ी व फर्नीचर तथा मूल धातु) का हिस्सा दो-तिहाई था जबकि नब्बे के दशक के आरंभ में इसका हिस्सा मात्र एक तिहाई रह गया, अर्थात इस उद्योगों के अतिरिक्त अन्य उद्योगो के भी उत्पादन में तीव्रता आई है। इसके साथ ही मशीनरी, रसायनों, गैर धातु खनिज पदार्थो तथा परिवहन उपकरणो का उत्पादन करने वाले उद्योगों में उल्लेखनीय प्रगति हुई हैं। जैसे की जिन क्षेत्रों में प्रगति हुई है, वह निम्नानुसार है।

1. सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में औद्योगिक क्षेत्र के हिस्से में वृद्धि -
2. सॉफ्टवेयर उद्योगों का तीव्र विकास
3. रसायन, पैट्रो-रसायन तथा इनसे संबंधित उद्योगों को अधिक महत्व
4. सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार

मध्यप्रदेश के औद्योगिक विकास में शासन की नीतियां – मध्यप्रदेश शासन द्वारा प्रदेश को समद्ध राज्य तथाप्रदेश की विकास दर अन्य विकसित राज्यों के समतुल्य करने के उददेष्य से नई नीतियॉ बनाई गयी है।

औद्योगिक नीति, 1991 -24 जुलाई 1991 को नयी औद्योगिक नीति की घोषणा की गई। वर्ष 1991 के आर्थिक सुधार के अन्तर्गत जितने भी क्षेत्रों में परिवर्तन किए गए उनमें सर्वाधिक परिवर्तन औद्योगिक नीति के अन्तर्गत किए गए क्योंकि उदारीकरण, निजीकरण, वैष्वीकरण एवं बाजारीकरण नई आर्थिक नीति के आधार स्तम्भ थे, वे सभी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से औद्योगिक नीति से ही संबंधित थे।

औद्योगिक लाइसेंस नीति – कुछ उद्योगों को छोड़कर शेष सभी के लिए

* विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भेल, भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

लाईसेंस हटा लिए जाएगे। जिन शहरों की जनसंख्या 10 लाख से कम है वहॉ अनिवार्य लाइसेंस वाले उद्योगों को छोड़कर कोई भी इकाई स्थापित करने के लिए स्वीकृत नहीं लेनी पडेग़ी।

उद्योग संबंधन नीति के महत्वपूर्ण बिन्दु –

1. उद्योगों को कर छूट जैसी राहत पूर्ववत जारी रखना
2. स्थानीय लोगो को रोजगार देने वाले उद्योगों को अतिरिक्त सहायता
3. उद्योगों मे न्यूनतम 50 प्रतिशत स्थानीय लोगो को रोजगार देना
4. लैण्ड बेंक की स्थापना जो उद्योगों के लिए जमीन की व्यवस्था करेगा
5. रूग्ण इकाइयों का जीर्णोद्धार
6. शहर वार अपशिष्ट प्रबंध संयत्र की स्थापना
7. औद्योगिक क्षेत्रों में स्टाम्प ड्यूटी से छूट
8. सड़क बिजली आदी की व्यवस्था करना

औद्योगिक प्रक्षेत्र सरकार के अंतर्गत औद्योगिक उपलब्धियॉ –

सकल घरेलू मुल्यवर्धन – राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में द्वितीयक क्षेत्र (उद्योग) का योगदान वर्ष 2004–05 के 27.17 प्रतिशत की तुलना में बढ़कर वर्ष 2013–14 में 25.90 प्रतिशत तथा वर्ष 2014–15 के अग्रिम अनुमानो के अनुसार 24.55 प्रतिशत आंका गया है।

यह वर्ष 2011–12 के 27.09 प्रतिशत की तुलना में बढ़कर वर्ष 2015–16 मे 25.22 प्रतिशत तथा वर्ष 2016–17 को त्वरित अनुमानों के अनुसार 23.87 प्रतिशत आंका गया है।

कुटीर उद्योग – प्रदेश मे वर्ष 2014–15 नवीन मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना में लागत 658 शिल्पियों को रोजगार समर्थन कराया गया। वर्ष 2015–16 में माह सितम्बर 2015 तक लगभग 320 उद्यमियों को रोजगार समर्थन दिया जा रहा है।

वर्ष 2014–15 मे एकीकृत क्लस्टर विकास कार्यक्रम/स्वसहायता समूह/अशासकीय संस्थाओं को सहयोग/युवा बुनकरो को संस्थागत प्रशिक्षण/वेलफेयर योजना/हथकरघा बुनकरो को वित्तीय पैकेज/हथकरघा उद्योग विकास योजना एंव मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना के अंतर्गत कुछ वार्षिक लक्ष्य 1117.15 लाख के विरूद्ध मार्च 2015 तक 1105.80 लाख की वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई गई। जिसके अंतर्गत कुछ 22168 हितग्राहियो/बुनकर/क्लस्टर लाभांवित हुऐं।

खनिज अन्वेषण – राज्य की अर्थव्यवस्था एवं औद्योगिक प्रगति में खनिजों का महत्वपूर्ण योगदान है।खनिज सम्पदा की दृष्टि से प्रदेश राष्ट्र की आठ खनिज सम्पन्न राज्यो में से एक है, प्रदेश में प्रमुख रूप से 8 प्रकार के खनिजों का उत्पादन वर्तमान में किया जा रहा है। हीरा उत्पादन में प्रदेश को राष्ट्र में एकाधिकार प्राप्त होने के साथ साथ ताम्र अयस्क, मैग्नीज अयस्क के उत्पदन में भी राष्ट्र को प्रथम स्थान प्राप्त है। इसके अतिरिक्त प्रदेश को राकफास्फेट के उत्पादन में द्वितीय तथा कोयला एवं चूना पत्थर के उत्पादन में चतुर्थ स्थान प्राप्त है।

ऊर्जा – राज्य शासन की औद्योगिक नीति के तहत अपारंपरिक स्त्रोतों से विद्युत उत्पादन को बढ़ावा दिया जा रहा है। विद्युत कम्पनियों तथा उपभोक्ताओं के हितो के संरक्षण, विद्युत क्षेत्र में राज्य सरकार का कार्य नीति निर्धारित तक सीमित करने तथा विद्युत दरो के निर्धारण एवं नियमन कार्यो के लिए राज्य विद्युत नियामक आयोग की वर्ष 1998 में स्थापना की गयी थी।

पर्यटन – पर्यटन विभाग को औद्योगिक विकास का एक हिस्सा माना जाता है। प्रदेश के विकास में शासन के स्त्रोतों के साथ–साथ निजी क्षेत्रों की भागीदारी का भी महत्वपूर्ण योगादान होता है। पर्यटन क्षेत्र की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए विभाग द्वारा पर्यटन नीति 2018 को लागू की गई जिससे निजी क्षेत्र को निवेश के लिए अधिकाधिक आकर्षिक किए जाने का प्रयास किया जा रहा है। पर्यटन को सुविधा उपलब्ध कराने के दृष्टिकोण से पर्यटन विकास निगम द्वारा वर्ष 2016–17 में नई आवासीय इकाईयां टूरिस्ट काम्पलेक्स हनुवंतिया उज्जियनी उज्जैन, सागौन रिट्रीट देलावाडी, बाइसन रिट्रीट मढई, विन्ध्य रिट्रीट रीवा शुरू की गई। वर्ष 2015–16 में मध्यप्रदेश राज्य पर्यटन विकास निगम को रू. 10869.65 लाख पर्यटन आय के रूप में प्राप्त हुई है। वित्तीय वर्ष 2016–17 में माह दिसम्बर तक 7956.71 लाख की आय प्राप्त हुई है।

प्रदेश में अधोसरंचना से संबंधित भावी सम्भावनाऍ – अधोसंरचना के विकास में आने वाली वित्तीय कठिनाईयो को दूर करने के लिऐं कोष उपलब्ध कराने पर बल दिया गया है। दिल्ली–मुम्बई इण्डस्ट्रियल डी.एम.आई.सी. परियोजनांतर्गत निम्न इन्वेस्टमेंट नोड्ल का विकास कर विश्व स्तरीय औद्योगिक अधोसंरचना एवं सहायक अधोसंरचना निर्मित की जायेगी:–

1. पीथमपुर–धार–महू इन्वेस्टमेंट रीजन (कम से कम 200 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में)
2. रतलाम–नागदा इन्वेस्टमेंट रीजन (कम से कम 200 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में)
3. शाजापुर–देवास इण्डस्ट्रियल एरिया (कम से कम 100 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में)
4. नीमच–नयागॉव इण्डस्ट्रियल एरिया (कम से कम 100 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में)

मध्य प्रदेश के प्रथम उद्योग –

उद्योग	स्थान	स्थापना वर्ष
प्रथम सूती मिल	बुरहानपुर	1906
प्रथम सीमेन्ट प्लान्ट	बानमौर (मुरैना)	1922–23
प्रथम चीनी मिल	जावरा (रतलाम)	1934
प्रथम कागज मिल	नेपानगर (बुरहानपुर)	1956

निष्कर्ष एवं सुझाव – मध्यप्रदेश के औद्योगिक विकास के सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय तथ्य है कि इसके लिए केन्द्र तथा राज्य सरकार दोनों ही निरंतर प्रयत्नशील है। मध्यप्रदेश सरकार द्वारा समय–समय पर औद्योगिक नीतियों को बनाया गया जिससे राज्य के सुस्थिर औद्योगिकरण के साथ आर्थिक समृद्धि सुनिश्चित की जा सके तथा नीतियों द्वारा औद्योगिक विकास में इसका प्रयोग किस प्रकार सार्थक हो रहा है। ताकि औद्योगिकीकरण कों एक नई दिशा प्रदान की जा सकें राज्य सरकार द्वारा औद्योगिक विकास की नीतियों क्रियान्वयन तथा औद्योगिकरण की गति कों तीव्रता प्रदान की जा सकें जिससें मध्यप्रदेश में उद्योग उन्नति एवं विकास के मार्ग पर अग्रसर रहें इसी को दृष्टिगत रखते हुए औद्योगिक विकास मध्यप्रदेश के सन्दर्भ में शोध पत्र तैयार किया गया है। प्राकृतिक एवं मानव संसाधनों की दृष्टि सें मध्यप्रदेश अग्रणी राज्य है। परन्तु इन संसाधनों का उचित दोहन तथा मानव ससांधनों का योजनाबद्ध तरीकें से प्रयोग न होने के कारण औद्योगिक विकास पिछड़ रहा है।

सुझाव –

- संसोधनों का पूर्ण दोहन
- अधोंसरंचना का विकास
- वित्त की व्यवस्था

- परिवहन साधनों का विकास
- बीमार इकाईयों का पुनर्वास
- जिला उद्योग केन्द्रो कों प्रोत्साहन

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सामान्य ज्ञान मध्यप्रदेश, मुकेश महेश्वरी 2012
2. लोक प्रशासन एवं शोध प्रविधि, डॉ. वी.एल.फड़िया 2005
3. व्यवसायिक पर्यावरण नई दिल्ली 2012
4. सामान्य ज्ञान मध्यप्रदेश, गोतम भारद्वाज एवं भदोरिया 2010
5. मध्यप्रदेश शासन वाणिज्य उद्योग एवं रोजगार विभाग भोपाल।
6. स्वयं के विचार एवं वेबसाइड।

****

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा द्वारा ग्रामीण हितग्राहियों को प्रदत्त अल्पकालीन साख का विश्लेषण (वर्ष 2009–10 से 2013–14 तक)

डॉ. लक्ष्मण परवाल *श्याम कुमार मिनोटे **

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था एक विकासशील अर्थव्यवस्था है। प्रारम्भ से ही कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की मुख्य आधार रही है। भारत के ग्रामीण विकास में कृषि का प्रमुख योगदान है। भारत की लगभग दो तिहाई जनसंख्या गाँव में निवास करती है, जिनका मुख्य व्यवसाय कृषि उत्पादन है। वर्तमान में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक ग्रामीण विकास में रीढ़ की हड्डी के समान है। यह कृषकों के जीवन स्तर में सुधार लाने तथा कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाने के साथ–साथ कृषि साख, अकृषि साख व अन्य शासकीय योजनान्तर्गत साख प्रदाय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

सहकारी बैंक अल्पकालीन साख को उसके सदस्यों की तात्कालिक वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए स्वीकृत करता है। अल्पकालीन साख कृषकों को फसल के समय आवश्यक संसाधन व उत्तम किस्म के बीज, उर्वरक, खाद, कीटनाशक दवाईयाँ आदि क्रय करने के लिए प्रदान की जाती है। यह साख फसल के समय उपलब्ध करवाया जाता है तथा इसकी वसूली भी उसी फसल के विपणन से प्राप्त राशि के द्वारा की जाती है। अल्पकालीन साख की अधिकतम समयावधि 12 माह की होती है।

पात्रता – अल्पकालीन साख जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा द्वारा प्रत्येक कृषक के लिए उसकी फसल उत्पादन क्षमता के अनुसार बनाए गए नार्मल क्रेडिट लिमिट (एन.सी.एल.) के आधार पर तकनीकी समूह की सिफारिश पर उनकी पात्रता के अनुसार स्वीकृत की जाती है। अल्पकालीन साख प्राप्त करने वाले ग्रामीण कृषक के पास कम से कम 01 हेक्टेयर भूमि होना आवश्यक है।

साख स्वीकार करने की प्रक्रिया – यदि कोई ग्रामीण कृषक जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक से सीधे अल्पकालीन साख प्राप्त करना चाहता है, तो उसे यह साख सीधे उपलब्ध नहीं होता है क्योंकि इसके लिए कृषक को उसकी कृषि भूमि वाले गाँव से जुड़ी सोसायटी का सदस्य बनना जरूरी होता है। यदि कोई कृषक सोसायटी का सदस्य नहीं है, तो उस कृषक को साख लेने के लिए शुरू में आवेदन पत्र के समय 05 रूपये का सदस्यता शुल्क तथा इसके अतिरिक्त 100 रूपये के अंश लेना जरूरी होता है। जिसके पश्चात् सोसायटी व समिति के संचालक मण्डल की सभा में उस कृषक को सदस्यता प्रदान की जाती है। सदस्यता मिलने के बाद ही वह समिति से साख प्राप्त कर सकता है। जिस कृषक को साख लेनी होती है, उसे आवेदन पत्र के साथ घोषणा–पत्र भी देना होता है, जिसमें कृषि भूमि की जानकारी जैसे सिंचित भूमि व असिंचित भूमि आदि जानकारी का उल्लेख होता है। इसी के आधार पर समिति सामान्य साख सीमा पत्रक तैयार करती है। ये पत्रक अध्यक्ष के समक्ष प्रस्तुत किए जाते है। यदि प्रबंध समिति ने कोई अतिरिक्त उपसमिति बनाई हो तो अध्यक्ष ऐसे सभी आवेदन–पत्रों को जाँच के लिए उपसमिति के पास भेजता है और कोई उपसमिति नहीं बनाई गई हो तो अध्यक्ष समस्त आवेदन पत्रों को स्वीकृति प्रदान करने के लिए प्रबंध समिति के सम्मुख रखता है। प्रबंध समिति की सभा में साख स्वीकृत होने के पश्चात् अध्यक्ष समस्त आवेदन प्रपत्रों को जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक के शाखा प्रबंधक को भेजता है।

शाखा प्रबन्धक साखा प्रकरण की जाँच के लिए पर्यवेक्षक को सौंपता है। इसके पश्चात् पर्यवेक्षक समस्त जानकारी प्राप्त कर सलाहकर समिति को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करता है। सलाहकार समिति अपनी संस्तुति देती है और बैंक शाखा साख को स्वीकृति प्रदान करती है। बैंक से साख प्राप्त होने पर सात दिन के अन्दर संबन्धित सदस्य को राशि प्रदान कर दी जाती है। साख की राशि स्वीकृत होने पर लघु एवं सीमांत कृषक स्वीकृत राशि के 05 प्रतिशत तथा बड़े कृषकों को 10 प्रतिशत अंश एक मुश्त में क्रय करना अनिवार्य होता है। साख की स्वीकृति मिलने पर समिति का सेवक एक ऋण दस्तावेज लिखता है, जिस पर दो जमानतदारों के हस्ताक्षर लिए जाते है। समिति अपने प्रत्येक सदस्य को प्रथम ऋण के समय पंजीयक द्वारा निर्धारित प्रारूप में पुस्तिका प्रदान करती है। ऋण का लेखा इसी पुस्तिका में किया जाता है एवं प्रबन्धक इसे प्रमाणित करता है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययन जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा द्वारा ग्रामीण हितग्राहियों को प्रदत्त अल्पकालीन साख का विश्लेषण निम्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया गया है–

- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा द्वारा ग्रामीण हितग्राहियों को प्रदत्त कुल अल्पकालीन साख राशि का विश्लेषण करना।
- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा द्वारा ग्रामीण हितग्राहियों को प्रदत्त अल्पकालीन साख का प्रतिशत के आधार पर कमी अथवा वृद्धि का विश्लेषण करना।

अध्ययन प्रणाली – यह अध्ययन मध्यप्रदेश के छिन्दवाड़ा जिले में स्थित जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक द्वारा ग्रामीण हितग्राहियों को प्रदान किए गए अल्पकालीन साख के विश्लेषण के आधार पर किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन द्वितीयक संमकों पर आधारित है, जिन्हें जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा से संग्रहित किया गया है। अध्ययन की अवधि 05 वर्ष (वर्ष 2009–10 से 2013–14 तक) की ली गई है। इस अध्ययन में ग्रामीण हितग्राहियों को प्रदान किए गए अल्पकालीन साख के आधार पर विश्लेषण किया गया है। अध्ययन अवधि 05 वर्षो के संमको के आधार पर औसत, प्रतिशत, निर्देशांक व रेखाचित्र जैसे सांख्यिकीय एवं गणितीय विधियों का प्रयोग कर अपेक्षित परिणाम ज्ञात किए गए है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य)स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी(वाणिज्य)स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

विश्लेषण एवं परिणाम – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा द्वारा ग्रामीण हितग्राहियों को प्रदत्त अल्पकालीन साख का विश्लेषण गत 05 वर्षो (वर्ष 2009–10 से 2013–14 तक) के आधार पर शोधार्थी द्वारा उपर्युक्त तालिका में दर्शाया गया है। तालिका में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक द्वारा प्रदान किए गए अल्पकालीन साख की राशि की जानकारी, औसत, प्रतिशत व निर्देशांक के आधार पर दर्शायी गयी है –

तालिका 1 **(नीचे दी गई तालिका देखे)**

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा द्वारा ग्रामीण हितग्राहियों को प्रदत्त अल्पकालीन साख का विश्लेषण **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

तालिका से स्पष्ट है कि जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा द्वारा गत 05 वर्षो में (वर्ष 2009–10 से 2013–14 तक) ग्रामीण हितग्राहियों को लगभग 06 अरब, 10 करोड़, 41 लाख, 48 हजार, रूपये साख के रूप में प्रदान किए गए है।

वर्ष 2009–10 में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा द्वारा अल्पकालीन साख के रूप में कुल 57 करोड़, 14 लाख, 24 हजार रूपये प्रदान किया गया है जो कुल प्रदान की गई साख राशि के 09.36 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2010–11 में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा द्वारा अल्पकालीन साख के रूप में कुल 75 करोड़, 91 लाख, 55 हजार रूपये प्रदान किया गया है जो कि आधार वर्ष 2009–10 की तुलना में 32.85 प्रतिशत अधिक है। यह कुल प्रदान की गई साख राशि के 12.44 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2011–12 में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा द्वारा अल्पकालीन साख के रूप में कुल 82 करोड़, 41 लाख रूपये प्रदान किया गया है जो कि आधार वर्ष 2009–10 की तुलना में 44.22 प्रतिशत अधिक है। यह कुल प्रदान की गई साख राशि के 13.50 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2012–13 में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा द्वारा अल्पकालीन साख के रूप में कुल 01 अरब, 56 करोड़, 67 लाख, 72 हजार रूपये प्रदान किया गया है, जो कि आधार वर्ष 2009–10 की तुलना में 174.19 प्रतिशत अधिक है। यह कुल प्रदान की गई साख राशि के 25.67 प्रतिशत के बराबर है।

इसी प्रकार अंतिम वर्ष 2013–14 में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा द्वारा अल्पकालीन साख के रूप में कुल 02 अरब, 38 करोड़, 26 लाख, 97 हजार, रूपये प्रदान किया गया है, जो कि आधार वर्ष 2009–10 की तुलना में 316.98 प्रतिशत अधिक है। यह कुल प्रदान की गई साख राशि के 39.03 प्रतिशत के बराबर है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध कार्य के अन्त में निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि गत 05 वर्षो में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा द्वारा प्रदान किये गये अल्पकालीन साख में लगभग चार गुने से अधिक की वृद्धि दर्ज हुई है। अल्पकालीन साख में प्रतिवर्ष उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। औसत रूप से अल्पकालीन साख में प्रतिशत 01 अरब, 22 करोड़, 08 लाख, 30 हजार रूपये जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा द्वारा साख के रूप में प्रदान किये गये है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शोध पत्र की सम्पूर्ण सामग्री शोधार्थी श्याम कुमार मिनोटे, वाणिज्य संकाय, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) के शोध प्रबंध 'जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा द्वारा प्रदत्त ग्रामीण साख का हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति पर प्रभाव' (वर्ष 2009–10 से 2013–14 तक) शोध विषय से लिया गया है जो विक्रम विश्व विद्यालय उज्जैन से पंजीकृत होकर शोध कार्य कर रहे है।

तालिका – 1

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा द्वारा ग्रामीण हितग्राहियों को प्रदत्त अल्पकालीन साख का विश्लेषण (वर्ष 2009–10 से 2013–14 तक)

वर्ष	अल्पकालीन साख	कुल योग से प्रतिशत	निर्देशांक	प्रतिशत वृद्धि
2009–10	5,714.24	9.36	100	–
2010–11	7,591.55	12.44	132.85	32.85
2011–12	8,241.00	13.50	144.22	44.22
2012–13	15,667.72	25.67	274.19	174.19
2013–14	23,826.97	39.03	416.98	316.98
योग :	61,041.48	100.00	–	–
औसत :	12,208.30	–	–	–

स्त्रोत – वार्षिक प्रतिवेदन, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, छिन्दवाड़ा।

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक छिन्दवाड़ा द्वारा ग्रामीण हितग्राहियों को प्रदत्त अल्पकालीन साख का विश्लेषण

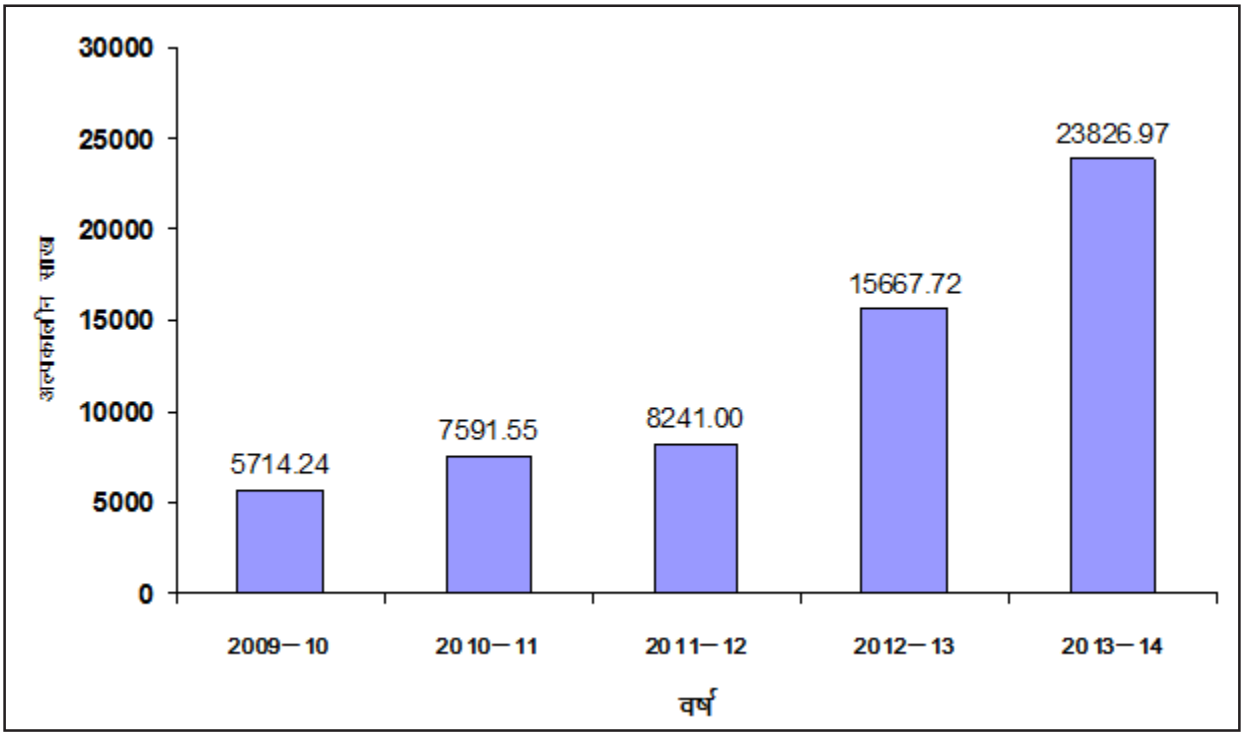

****

देवास जिले की जिला सहकारी केन्द्रीय बैंकों का ग्रामीण विकास में योगदान

डॉ. रितेश शर्मा *

प्रस्तावना – देवास जिले की जिला सहकारी बैंकों का कार्य सिर्फ ग्रामीणों को साख प्रदान करने तक ही सीमित नहीं है अपितु जिले के ग्रामीण विकास को महत्वपूर्ण दिशा देना एवं ग्रामीण विकास की विभिन्न योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु हितग्राहियों को लाभांवित करना है। देवास जिले के ग्रामीण विकास में जिला सहकारी बैंकों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। देवास जिले के ग्रामीणों को कृषि ऋण, अकृषि ऋण, स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से ऋण एवं अन्य शासकीय योजनाओं के अन्तर्गत ऋण प्रदान किए जाते हैं। आवास, तालाब निर्माण, मछली पालन, दुधारू पशु पालन, बागवानी, किसान क्रेडिट कार्ड, फसल बीमा, कुआँ निर्माण, कृषि यंत्र क्रय, नवीन तकनीक यंत्र, स्वरोजगार हेतु कुटीर एवं लघु, व्यक्तिगत उच्च शिक्षा, वाहन परियोजना एवं विभिन्न प्रकार के ऋण प्रदान कर ग्रामीण विकास को बैंक ने नई दिशा प्रदान की हैं। बैंक ने न केवल कृषि बल्कि ग्रामीण विकास हेतु सभी प्रकार के ऋण उपलब्ध कराए हैं। इन प्राप्त ऋणों से ग्रामीण हितग्राहियों की वार्षिक आय में वृद्धि, सिंचाई साधनों में वृद्धि, आर्थिक एवं सामाजिक स्तर में सुधार हुआ है। स्वयं सहायता समूहों एवं लघु कुटीर उद्योग में ऋण प्रदत्त करने से शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों की दूरी कम हुई है। परिवहन तथा संचार साधनों में आकस्मिक वृद्धि हुई है।

देवास जिले में स्वयं सहायता समूहों द्वारा अचार, पापड़, आलू चिप्स, मसाला, नमकीन, बेसन तथा अगरबत्ती एवं अगरबत्ती व कुल्फी के लिए लकड़ी की इकाईयों का निर्माण प्रारंभ हो चुका है, जिनमें महिलाओं की भागीदारी महत्वपूर्ण हैं।

शोध कार्य के उद्देश्य :

1. ग्रामीण विकास में वित्त हेतु जिला सहकारी बैंकों के योगदान का अध्ययन करना।
2. जिला सहकारी बैंकों के वित्त प्राप्ति के साधनों का अध्ययन करना।
3. जिला सहकारी बैंक द्वारा स्वयं सहायता समूहों एवं अन्य शासकीय योजनान्तर्गत प्रदत्त ऋणों का विश्लेषण करना।
4. बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋणों में ग्रामीण हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति पर प्रभाव का अध्ययन करना।
5. जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक, देवास द्वारा ग्रामीण विकास हेतु प्रदत्त ऋणों का हितग्राहियों के आर्थिक विकास पर प्रभाव का अध्ययन करना।
6. देवास जिले के कुछ हितग्राहियों द्वारा जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक से प्राप्त ऋणों का उपयोग गैर आर्थिक कार्यों में किया जाता है जिससे ऋण अदायगी पूर्णता से नहीं हो पाती का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – किसी भी शोध को पूर्ण करने के लिए समंकों की आवश्यकता होती है। समंक दो प्रकार के होते हैं। प्राथमिक समंक एवं द्वितीयक समंक।

सभी तथ्यों एवं विचारों को ध्यान में रखते हुए किए जाने वाले शोध कार्य में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के समंकों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक समंकों का एकत्रीकरण एक अनुसूची बनाकर सर्वेक्षित 300 ग्रामीण हितग्राहियों से भरवायी गयी, जिससे सम्बन्धित विषय की महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त हुई हैं। द्वितीयक समंकों का एकत्रीकरण जिला सहकारी बैंकों, समितियों की शाखाओं, जिला वाणिज्यिक बैंकों की शाखाओं, जिला क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की शाखाओं एवं अन्य क्षेत्रों (गैर सरकारी संगठनों) से किया गया है।

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक देवास की ऋण नीति का हितग्राहियों के आर्थिक विकास पर प्रभाव का विश्लेषण – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक देवास की ऋण नीति का हितग्राहियों के आर्थिक विकास पर प्रभाव का अध्ययन करते समय अनेक प्रश्न इस सम्बन्ध में पूछे गए जिनमें से महत्वपूर्ण प्रश्नों को अग्रतालिका में उत्तर सहित प्रस्तुत किया गया है। जो कि निम्न प्रकार है–

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक देवास की ऋण नीति का हितग्राहियों के आर्थिक विकास पर प्रभाव का विश्लेषण

(प्रतिशत में)

क्र.	विवरण	वृद्धि	कमी	कोई प्रभाव नहीं	योग
1	कृषि उत्पादन पर प्रभाव	73.33	5.67	21.00	100
2	सिंचित भूमि के क्षेत्र पर प्रभाव	80.67	4.33	15.00	100
3	रोजगार पर प्रभाव	78.33	7.67	14.00	100
4	आय पर प्रभाव	84.33	5.67	10.00	100
5	बचत पर प्रभाव	76.67	6.00	17.33	100
	योग	393.33	29.34	77.33	500
	औसत	78.67	5.87	15.46	100

स्त्रोत– शोध सर्वेक्षण से प्राप्त समंक पर आधारित (प्रतिशत में)

उपर्युक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट है कि जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक देवास की ऋण नीति से सर्वेक्षित 300 हितग्राहियों में से औसतन 78.67 प्रतिशत का मानना है कि उनकी कृषि उत्पादन, सिंचित भूमि के क्षेत्र, रोजगार, आय एवं बचत में वृद्धि हुई हैं, जबकि 5.87 प्रतिशत ने ऋण नीति से इनमें कमी की स्थिति बतायी है, जबकि 15.46 प्रतिशत का मानना

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) म.पु. रा. प. शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.) भारत

है कि ऋण नीति से कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। अत: कहा जा सकता है कि जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक देवास की ऋण नीति से हितग्राहियों का आर्थिक विकास हुआ है।

हितग्राहियों द्वारा समय पर ऋण राशि का भुगतान न करने का विश्लेषण शोध सर्वेक्षण में हितग्राहियों द्वारा ऋण भुगतान न करने के कारण के सम्बन्ध में जो समंक एकत्रित हुए, उन्हें अग्र तालिका में प्रस्तुत किया गया है–

हितग्राहियों द्वारा समय पर ऋण राशि का भुगतान न करने का विश्लेषण

क्र.	ऋण राशि के समय पर भुगतान न करने के कारण	सर्वेक्षित ग्रामीण हितग्राहियों की संख्या	कुल हितग्राहियों के साथ प्रतिशत
1	प्राकृतिक आपदा/ फसल का नष्ट होना	180	60.00
2	बीमारी/दुर्घटना	20	06.67
3	विवाह या मृत्यु भोज	70	23.33
4	अन्य कार्यों में उपयोग	30	10.00
	योग	300	100.00

स्त्रोत– शोध सर्वेक्षण से प्राप्त समंक पर आधारित

उपर्युक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षित 300 हितग्राहियों में से 180 प्राकृतिक आपदा/फसल के नष्ट होने, 20 बीमारी/ दुर्घटना, 70 विवाह या मृत्यु भोज एवं 30 अन्य कार्यों में ऋण राशि को खर्च होना बताते हैं जिसके कारण ऋण राशि समय पर भुगतान नहीं कर पाते। विश्लेषण से ज्ञात होता है कि प्राकृतिक आपदा/फसल का नष्ट होना ग्रामीण हितग्राहियों के नियंत्रण में नहीं है, किन्तु बीमारी/दुर्घटना, विवाह या मृत्यु भोज एवं अन्य कार्यों में ऋण राशि का उपयोग दुरूपयोग माना जाता है। विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि 40 प्रतिशत ग्रामीण हितग्राही ऋण राशि का गैर आर्थिक कार्यों में उपयोग करते हैं जिसके कारण ऋण आदयगी पूर्ण एवं समय पर नहीं हो पाती, जबकि 60 प्रतिशत ग्रामीण हितग्राही प्राकृतिक आपदा/फसल नष्ट होने के कारण ऋण राशि का समय पर भुगतान नहीं कर पाते।

समस्याएँ :

1. अत्यधिक कागजी कार्यवाही
2. अल्पकालीन ऋणों पर अधिक जोर
3. आवश्यक समय पर ऋण राशि की उपलब्धता नहीं
4. अपर्याप्त ऋण राशि
6. नगद व वस्तु ऋण की समस्या
7. प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन नही
8. शासकीय योजनाओं का पूर्ण प्रचार–प्रसार नहीं

सुझाव :

1. ग्रामीणों को जानकारी देने हेतु निश्चित दिन व समय
2. कागजी कार्यवाही कम करना
3. आवश्यक समय पर ऋण एवं माँग अनुसार ऋण प्रदान करना
4. उचित ऋण राशि प्रदत्त करना
5. ऋण वसूली की सूचना एवं अच्छा व्यवहार
6. नगद ऋणों को प्राथमिकता

निष्कर्ष :

1. सर्वेक्षण में पाया गया कि 73.33 प्रतिशत हितग्राहियों के कृषि उत्पादन में, 80.67 प्रतिशत हितग्राहियों को सिंचित भूमि में, 78.33 प्रतिशत हितग्राहियों के रोजगार में, 84.33 प्रतिशत हितग्राहियों के आय में, 76.67 प्रतिशत हितग्राहियों की बचत में वृद्धि हुई है।
2. सर्वेक्षित हितग्राहियों में 40 प्रतिशत हितग्राही ऋण राशि का उपयोग बीमारी/दुर्घटना, विवाह/मृत्युभोज एवं अन्य कार्यों में लेते हैं इसके कारण वे ऋण राशि का समय पर भुगतान नहीं कर पाते।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. मुख्य कार्यालय जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक देवास के वार्षिक प्रतिवेदन
2. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, जिला सांख्यिकी कार्यालय देवास

वेबसाइट

3. www.nabard.org.in
4. www.bankofindia.com.in

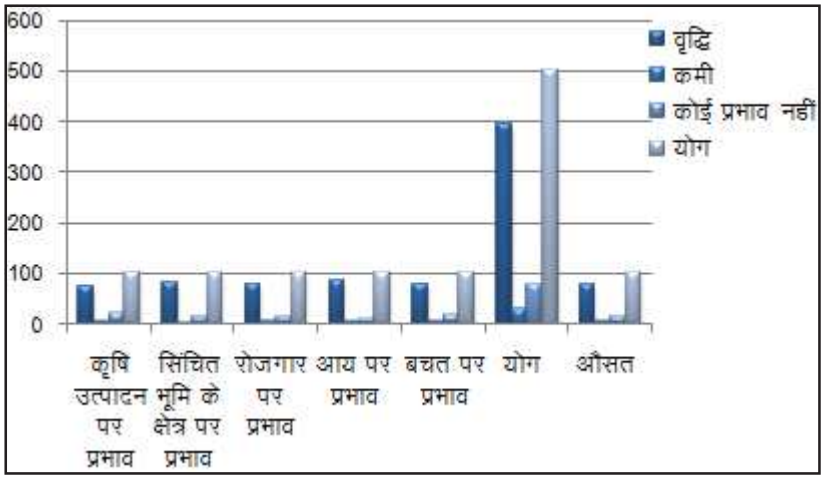

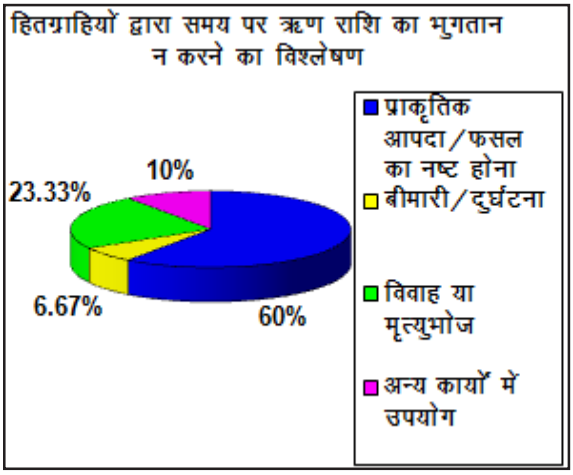

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक देवास की ऋण नीति का हितग्राहियों के आर्थिक विकास पर प्रभाव का विश्लेषण

शासकीय योजनाए एवं जनजाति समुदाय की आर्थिक , जनांकिकीय स्थिति एक विश्लेषण संदर्भ – जिला बड़वानी

डॉ. जयराम बघेल *

शोध सारांश – मानव अपने समग्र विकास के लिए सतत् प्रयासरत है तथा वह प्रयासरत होने के कारण कई उँचाईयों को छुआ है। संतुलित विकास कि अवधारणा इस विचार से उत्पन्न है कि देश समस्त क्षेत्रों एवं समस्त वर्गो एवं समस्त इकाई का विकास साथ – साथ चले। संतुलित विकास की इस अवधारणा को ध्यान में रखते हुए एवं भारत सरकार ने कमजोर तबको के लिए योजनात्मक विकास को बढ़ावा दिया । जिसके अन्तर्गत योजनाओं एवं कार्यक्रमों को इस तरह से बनाया गया कि देश के प्रत्येक क्षेत्र लाभ प्राप्त हो।

शब्द कुंजी – संतुलित, विकास, योजनात्मक विकास, कमजोर तबका ।

प्रस्तावना – वर्ष 2011 की जनसंख्या के अनुसार भारत में अनुसुचित जनजाति की कुल जनसंख्या देश की कुल जनसंख्या का 8.61 प्रतिशत है और देश के क्षेत्रफल के लगभग 15 प्रतिशत भाग पर जनजातीय वर्ग के लोग निवास करते है, जनजाति समुदायों से विकास की दृष्टि से पिछडे हुए है। जनजाति वर्ग के लोगों पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है। जिससे कि उनके आर्थिक एवं सामाजिक विकास को बढ़ाया जा सके।

शोध विषय का चयन – देश का यह आर्थिक सामाजिक रूप से पिछड़ा समाज भी अन्य समाजों के साथ कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ सके । इस बात को ध्यान में रखकर केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा अनेक कल्याणकारी कार्यक्रम एवं योजनाओं का संचालन किया जा रहा है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार म.प्र. की कुल जनसंख्या में 21.13 प्रतिशत त जनसंख्या जनजातीय समुदाय की है। क्या मध्यप्रदेश के बड़वानी जिले की कुल जनसंख्या में 69.42 प्रतिशत जनसंख्या जनजातीय समुदाय की है।

अत: अनेक आर्थिक व कल्याणकारी योजनाओं के संचालन एवं अत्यधिक जनजाति समुदाय के वितरण को ध्यान में रखते हुए विषय का चयन किया गया ।

उद्देश्य –

जनजाति समुदाय की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना

जनजाति समुदाय के आयों तथा व्ययों का अध्ययन करना

परिकल्पनाए –

जनजाति समुदाय आर्थिक विकास के लिए संघर्षरत् है।

जनजाति समुदाय आय से अधिक व्यय करता है।

अध्ययन का क्षेत्र – प्रस्तुत कार्य के लिए म.प्र. के पश्चिमी क्षेत्र के बड़वानी जिले का चयन किया गया जिसमे 9 तहसीलों को शामिल किया गया

निर्दशन प्रक्रिया – अध्ययन का समग्र – अध्ययन के समग्र के रूप में बड़वानी जिले की समस्त परिवारों को शामिल किया गया ।

अध्ययन की इकाई – अध्ययन की इकाई के रूप में बड़वानी जिले में विकासरत् जनजाति परिवारों को शामिल किया गया है।

उत्तर दाताओं का चयन – जिले की कुल 9 तहसीलों में से 30–30 उत्तरदाताओं का चयन किया गया जिसमें कुल 270 उत्तरदाताओं का चयन किया गया । प्राथमिक तथा द्वितीय दोनों आकड़ों का संकलन कर विश्लेषण किया गया है।

महत्व – भारत सरकार अपने नागरिकों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिये कर्तव्य बद्ध है। वह कई विकासगत कार्यक्रमों एवं योजनाओं का सहारा लेकर इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्रयासरत् रहती है।

प्रस्तुत शोध – कार्य के माध्यम से पता चल सकेगा कि योजनाओं और कार्यक्रमों का लाभ अंतिम व्यक्ति तक प्राप्त हुआ है या नहीं । साथ ही योजनाओं के प्रति आम नागरिकों का दृष्टिकोण क्या है। उनका लाभ लेने में क्या–क्या बाधाएँ आती है। इसे कैसे दूर किया जा सकता है।

जिले में कुल 259 छोटी उपयोग इकाईयॉ पंजीकृत है। जिनमें आटामिल,दालमिल,तेलमिल,कपासमिल ,टाईल्स–फैक्ट्री आदि लघु एवं कुटी अद्योग है। परन्तु जनजातियों का निवेश संतोषजनक नहीं है।

जिले में कुल कृषि करने योग्य भूमि 337332 हैक्टेयर है। वनाच्छित क्षेत्रफल 183000 हैक्टेयर है।

जिले कि कुल जनजाति का 60: मजदूरी लगभग 20: खेतीहर मजदूर एवं 10: कृषि कार्य करते है।

व्यवसाय लगभग निवेश 2: का है। बाकी अन्य कार्यो में सलग्न है।

बड़वानी जिले की अनुसूचित जनजाति का वितरण है –

(देखे आगे पृष्ठ पर)

निष्कर्ष – जनजाति समाज में आय से अधिक व्यय करने की प्रवृत्ति निरंतर कम हो रही है। आदिवासी शिक्षित समाज नौकरी पेषो के अलावा खेती तथा व्यवसाय की तरफ अग्रसर होने लगा है।

आदिवासी अशिक्षित समाज अभी भी मजदूर एवं परम्परागत खेती कार्य कर रहा है।

आदिवासी समाज में शिक्षा का प्रतिशत निरंतर बढ़ रहा है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मध्यप्रदेश का रावत पब्लिकेशन जयपुर– 2009
2. भारत की जनसंख्या – 2011 मध्यप्रदेश श्रृंखला – 24
3. मध्यप्रदेश की जनजातियॉ मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल – 2015

* सहायक प्राध्यापक, शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

क्र.	विकासखण्ड	कुल जनजातिय	अ.ज.जा की जनसंख्या	कुल जनसंख्या का प्रतिशत
1	पाटी	162432	13645	184.01
2	बड़वानी	155557	111081	71.41
3	राजपूर	182186	144373	79.26
4	ठीकरी	135409	58803	43.43
5	सेंधवा	303554	270920	89.25
6	निवाली	112639	98467	87.42
7	पानसेमल	130065	105551	81.15
	कुल	1181812	925600	78.32

अनुसुचित जनजाति के खेतिहर मजदूर तथा कास्तकारों की संख्या – जिला बड़वानी

खेतिहर मजदूर की संख्या		काश्तकारों की संख्या	
पुरूष	2039988	पुरूष	1460531
स्त्री	2204220	स्त्री	990666
योग	4244208	योग	2451197

****

विकास एवं पर्यावरण संरक्षण

डॉ. पी. डी. ज्ञानानी *

प्रस्तावना – पर्यावरण मनुष्य के शारीरिक, सामाजिक तथा आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण पहलू है। आसपास के स्वच्छ वातावरण का मानव स्वास्थ्य पर असर पड़ता है। जिस तरह भोजन, वस्त्र, आवास के अलावा शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन, यातायात की समुचित व्यवस्था का सामाजिक विकास पर असर पड़ता है, उसी प्रकार प्राकृतिक संसाधनों के विकास का सीधा संबंध आर्थिक विकास से है, जो पूर्णत: पर्यावरण पर निर्भर करता है। इस प्रकार मानव के सर्वांगीण विकास में पर्यावरण का महत्वूर्ण स्थान है। मानव जीवन के इस महत्वपूर्ण पहलू की उपेक्षा का ही परिणाम है कि पर्यावरण की सुरक्षा आज विश्व के लिए चुनौती बनी हुई है।

जनसंख्या वृद्धि, गरीबी, बिगड़ती परिवहन व्यवस्था तथा वनों की कटाई पर्यावरण के विनाश प्रमुख कारण बने हुए है। आज पर्यावरण के बिगड़ते हालात से सभी देश चिंतित हैं। स्थानीय , राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सम्मेलनों, गोष्ठियों, सेमिनारों तथा कार्यशालाओं के माध्यम से पर्यावरण की सुरक्षा पर विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम तय किये जा रहे है। पृथ्वी सम्मेलन, दिल्ली सम्मेलन सहित दर्जनों अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में इस पर घोर चिंता व्यक्त की गई है। जापान के क्योटो शहर में विश्व जलवायु सम्मेलन में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण अंसतुलन के भयावह खतरे के प्रति विश्व को सचेत किया गया तथा विकसित देशों में ग्रीन हाउस गैसों में कटौती का प्रस्ताव किया गया। विकसित देशों ने इस प्रस्ताव को स्वीकृति भी दी। भारत ने भी इस सम्मेलन के प्रस्तावों को अपनी स्वीकृति दी।

आज संपूर्ण मानव समाज तथा उसके सहयोगी जीव जंतुओं, पेड़-पौधों, वायुमंडल, कीड़े-मकोड़ों, खाद्यान्नों, फल-सब्जियों सभी क्षेत्रों में पर्यावरण का संकट व्याप्त है। इस संकट का कारण भी मानव समाज है तथा परिणाम भी उन्हें ही भुगतने है। पाश्चात्य तथा उपभोक्तावादी संस्कृति के बढ़ते प्रभाव, बढ़ती जनसंख्या तथा प्राकृतिक सम्पदा के निमर्मता से हो रहे दोहन का परिणाम यही होने वाला है कि आने वाले समय में हमारा अस्तित्व संकट में पड़ जाएगा।

पर्यावरणविदों का मानना है कि पर्यावरण को असंतुलित करने में 50 प्रतिशत वायु प्रदूषण जिम्मेवार है जो वायुमण्डल में विभिन्न कल-कारखानों से निकलने वाले धुएं, गैस, धूल कण और जलावन, कोयला, पेट्रोलियम पदार्थो से वायुमंडल को प्रदूषित करता है। कभी कभी जंगलों में लगने वाली आग भी बड़े पैमाने पर प्रदूषण पैदा करती है। हानिकारक गैसों में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है और इसके परिणामस्वरुप पृथ्वी का तापक्रम बढ़ता जा रहा है और इनका दबाव समुद्रतल पर बढ़ रहा है। समुद्रतल पर निरंतर बढ़ता दबाव कभी भी भारी खतरों का कारण बन सकता है।

क्लोरोफ्लोरों कार्बन गैस के संबंध में विशेषज्ञों का मानना हे कि यह गैस ओजोन परत को नष्ट कर रही है। ओजोन परत यानी सुरक्षापट्टी के नष्ट होने का खतरा यह होगा कि सूर्य की पराबैंगनी किरणे सीधा पृथ्वी पर पहुँचेगी और मानव, जीव जंतु पेड़ पौधो, कृषि तथा जलवायु सभी को बर्बाद कर मानव जीवन के अस्तित्व को ही संकट में डाल देगी।

मानव समाज, जीव-जंतु तथा पेड़ पौधों के जीवन की रक्षा हेतु नि:शुल्क प्रदत्त जल स्त्रोतों तथा नदियों में भी भारी प्रदूषण जारी है। औद्योगिक विकास का नकारात्मक पहलू नदियों का दुर्दशा के रुप में देखा जा सकता है। अधिकांश औद्योगिक इकाईयों को नदियों के किनारे स्थापित कर उसके स्वच्छ जल में गदां तथा जहरीला प्रदूषित जल छोड़ा जाता है। इस प्रदूषित जल के कारण जल प्राणी संकट में पड़ गये है। कहीं कहीं जलप्राणियों के मरने की भी खबरें भी प्रकाशित होती रहती है। ऐसा भी देखा गया है कि नदियों के आसपास के गांवों में जल प्रदूषण के अलावा वायु प्रदूषण, मच्छर मक्खियो के भयानक प्रकोप आदि के चलते विभिन्न प्रकार की बीमारियों का भी प्रकोप बढ़ता जा रहा है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि दुनिया के तथा साथ ही भारत के भी आधे जलस्त्रोत प्रदूषित हो चुके है।

ध्वनि प्रदूषण की समस्या संपूर्ण विश्व खासकर भारत में विकराल रुप धारण किए है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार 45 डेसीबल से ज्यादा तेज ध्वनि मानव जीवन के लिये, हानिकारक है, जबकि वहां 90-100 डेसीबल से ज्यादा तेज ध्वनि सामान्यत: सुनने को हम विवश है। इस असामान्य ध्वनि का सीधा असर मानव मस्तिष्क पर पड़ता है। इस प्रदूषण से अनिद्रा, अंधापन, हृदयरोग, वर्णान्धता, मस्तिष्क रोग, चिड़चिड़ापन, विक्षिप्तता, श्रवणदोष जैसी अनेक बीमारियों का प्रकोप झेलने को मानव समाज विवश है। अनियोजित औद्योगिक विकास, अत्यधिक मोटर वाहनों का प्रयोग तथा विभिन्न प्रकार के यान्त्रिक दोषयुक्त वाहनों का परिचालन पर्यावरण को प्रदूषित करने में महत्वपूर्ण योगदान कर रहे है।

आज विश्व की बेलगाम बढ़ती जनसंख्या पर्यावरण असंतुलन का प्रमुख कारण बनी हुई है। जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर बहुआयामी असर होता है। संसार की सारी क्रियाएं मानव के लिये ही होती है। इस प्रकार जन्म लेने के साथ ही मानव को खाद्यान्न आपूर्ति, जलावन, दवा, आवास सहित अनेक उपभोग सामग्रीयों की आवश्यकता पड़ती है। खाद्यान्न आपूर्ति के लिये खेतों में बेतरतीब ढंग से खाद तथा कीटनाशकों का प्रयोग किया जाता है जो एक साथ जल तथा वायु प्रदूषित करने के साथ खाद्यान्नों, फलो-सब्जियों के माध्यम से मानव जीवन में जहर घोलते है। साथ की कृषि के लिये उपयोगी कीड़े मकौडों को भी मार डालते है। जलावन और फर्नीचरों के लिये धड़ल्ले से वनों की कटाई की जा रही है। इतना ही नहीं जनसंख्या वृद्धि का प्रभाव कृषि योग्य भूमि को कम करने पर भी पड़ रहा है। विकास के लम्बे

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

चौड़े दावों के बावजूद आज भी विश्व की करीब 8 अरब जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा गरीबी तथा कुपोषण का शिकार है। इसके बावजूद जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्ति जारी है, जो पर्यावरण को बिगाड़ने में अहम भूमिका अदा करती है।

बेरहमी से वनों के कटने का असर वन्यप्राणियों तथा दुर्लभ पक्षियों पर भी पड़ता है। उसका जीवन वनों के उजड़ने के साथ ही उजड़ जाता है और वे अन्यत्र पलायन को विवश होते है। इतना ही नहीं वन्य प्राणियों तथा पक्षियों की मांस, चमड़ी, दांत, सींग तथा सुंगधित क्रीम के निर्माण के लिये बेरहमी से हत्याएं भी की जा रही है और इसका परिणाम है कि सैकड़ों प्रकार के वन्यप्राणी नष्ट हो चुके है, जिनका पर्यावरण के दृष्टिकोण से विशेष महत्व है। पर्यावरण असंतुलन का भयावह परिणाम यह भी देखने को मिल रहा है कि सैंकड़ों जीव जंतु लुप्त हो गए है ओर विलुप्त प्रजातियों की संख्या लगातार बढ़ रही है। इतना ही नहीं अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण संरक्षण आई.यू.सी.एन. की भविष्यवाणी के अनुसार चार सौ से अधिक पक्षियों, तीन सौ से अधिक स्तनधारी जानवरों, दो सौ से अधिक प्रकार की जलचर तथा मछलियों तथा डेढ़ सौ प्रकार के उभयचर रेंगने वाली जातियों के प्राणियों के लुप्त होने की प्रबल संभावना है।

पर्यावरण के क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निभाते हुए भारत सरकार ने अब तक अंतर्राष्ट्रीय व्हेल नियमन समझौता, अंतर्राष्ट्रीय पादप संरक्षण समझौता, वन्यप्राणियों तथा वनस्पतियों की विलुप्त प्रजातियों के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर समझौता, खतरनाक पदार्थो के आवागमन के लिए सीमा संबंधी वेसल समझौता, जलवायु परिवर्तन संबंधी संरचना समझौता, जैव विविधता समझौता, ओजोन परत को क्षीण करने वाले पदार्थो के बारे में मान्ट्रियल करार एवं मरुभूमि विस्तार नियंत्रण के लिये अंतर्राष्ट्रीय समझौता जैसे विभिन्न करारों पर हस्ताक्षर किए है।

इस प्रकार अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किए गए जाने वाले समझौतों तथा राष्ट्रीय स्तर पर लिए जाने वाले निर्णयों तथा कार्यक्रमों के व्यापक प्रचार-प्रसार में इलेक्ट्रानिक मीडिया की मुख्य भूमिका अवश्य ही रही है परंतु अभी इसे जन जन तक ले जाना आवश्यक है। मानव हित में दैनिक पत्रों का सहयोग लेने के साथ पर्यावरण सुरक्षा संबंधी साहित्य गाँव-गाँव, घर-घर तक पहुँचाना, सरकारी स्तर पर जिला, प्रखण्ड पंचायतों में गोष्ठियाँ आयोजित करना, सामाजिक राजनीतिक कार्यकर्ताओं को भी इन कार्यक्रमों से जोड़कर पर्यावरण सुरक्षा को और ज्यादा प्रभावी बनाना आवश्यक है। भारत जैसे विकासशील राष्ट्र में इस दिशा में विशेष प्रयास की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आधुनिक जीवन और पर्यावरण - दामोदर शर्मा, हरिशचंद्र व्यास।
2. Environmental Managment - G.N. Pandey.
3. Perpectives in environmental studies - Anubha Kaushik, C.P. Kaushik.
4. पर्यावरण शिक्षा - हरिशचंद्र व्यास।
5. पर्यावरण - शिवेश प्रतापसिंह।
6. नईदुनिया, राजस्थान पत्रिका, रचना।

****

महिला सशक्तिकरण की दशा एवं दिशा

डॉ. रायकू जमरा*

प्रस्तावना – साधारण शब्दों में महिलाओं के सशक्तिकरण का मतलब है कि महिलाओं को अपनी जिंदगी का फैसला करने की स्वतंत्रता देना या उनमें ऐसी क्षमताएँ पैदा करना ताकि वे समाज में अपना सही स्थान स्थापित कर सकें।

महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य सामाजिक सुविधाओं की उपलब्धता, राजनैतिक और आर्थिक नीति निर्धारण में भागीदारी, समाज कार्य के लिए समान वेतन, कानून के तरह सुरक्षा व प्रजनन अधिकारों आदि को सम्मिलित किया जाना है। महिला सशक्तिकरण का अर्थ किसी कार्य को करने या रोकने की क्षमता से है, जिसमें महिलाओं को जागरूक करके उन्हें आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षिक एवं स्वास्थ्य संबंधी साधनों को उपलब्ध कराया जायें ताकि उनके लिए सामाजिक न्याय और महिला–पुरूष समानता का लक्ष्य हासिल हो सके। महिला सशक्तिकरण द्वारा महिला को अपने सम्मान स्व–अधिकारों एवं योग्यता में संवर्धन की और अग्रसर करना है। जिससे महिलाओं को घर एवं बाहर दोनों में सुरक्षित करना है। महिलाओं को हाशिऐं से हटाकर समाज की मुख्य धारा में लाना और निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना ही सशक्तिकरण है। समाज में महिला भय मुक्त होकर कहीं भी आ जा सके, बिना सम्मान खोए अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकें। तथा उनकी इच्छाओं की समाज में कदर की जाए, और उनको उनका वाजिब हक मिल सके। देश की प्रगति भी तभी हो सकती है, जब महिला सशक्त होगी। महिला शक्ति का परचम दिखाना है, महिलाओं को आगे बढाना है।

महिलाए आगे बढ रही है हर कुरीतियों से लड रही है।
महिला सशक्तिकरण का नारा है, समाज को तरक्की के मार्ग पर लाना है।
महिलाएँ है देश की तरक्की का आधार, उनके प्रति बदलो अपने विचार।
महिला का दर्जा सबसे बडा, असका त्याग है, सबसे बडा।
कभी माॅ, तो कभी बहन, तो कभी पत्नि बनकर दुलारती है,
महिला ना जाने कितने जीवन संवारती है।
महिलाओं की शक्ति को कम मत समझो, उनकी शक्ति को वहम मत समझो।

हमारा भारत देश पुरूष प्रधान देश है, जहॉ पुरूषों को महिलाओं की तुलना में ज्यादा महत्व दिया जाता है जो कि उचित नहीं है। आज भी भारत में महिलाओं को पुरूषों की तरह काम नहीं करने दिया जाता है। तथा उन्हें परिवार की देखभाल और घर से बाहर नही निकालने की हिदायत दी जाती है। भारत में महिला सशक्तिकरण की कमी एक सबसे बड़ा कारण है कि आज भी भारत विकासशील देशों में गिना जाता है अगर हमारे देश की महिलाएँ सशक्त बने और पुरूषों की तरह ही अपने ज्ञान को विश्व के साथ बॉटे और पुरूषों साथ कंधा से कंधा मिलाकर काम करें तो वह दिन दूर नही है, जब हमारा देश भी विकसित देशों की सूची में दिखेगा। महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए पुरूषों की मदद तथा सरकार द्वारा नियम व कानून बनाने चाहिए।

महिला सशक्तिकरण का नारा समाज में इसलिए उठा है क्योंकि हमारे समाज में हमारे देश में आज भी लिंग भेदभाव हो रहा है, जो कि एक बहुत ही शर्म की बात है। आज भी लोग महिलाओं को पुरूषों से कम समझ रहे है। अगर सही मायने में देखे तो आज भी महिलाओं के साथ अन्याय, अत्याचार हो रहे है। हर घर में महिलाएँ होने के बावजूद भी महिला को तुच्छ नजर से देखा जाता है तथा उसे प्रताड़ित किया जाता है। इस दुनिया में हर व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से जीने और जीवन में आगें बढने का हक है।

समाज के सन्दर्भ में नारी की स्थिति युगानुयुग परिवर्तनशील बनी रही है। महिला की महता और गौरव एवं उसका वर्चस्व और गरिमा कभी उच्च से उच्चतर हो रही है, तो कभी उसमें ह्रास परिलक्षित होता है। एक सा स्वरूप उसका कभी नहीं रहा। आज महिलाओं की जो सामाजिक स्थिति है 'कल' वैसी न थी, प्रत्येक रूप में महिलाओं की भाँति–भाँति की पात्रता अभिनीत करना पडती है। चूँकि आज की नारी का कार्यक्षैत्र परिवार तक ही सीमित नहीं रह गया है। उसे अपने कार्यस्थल पर भी अनेक रूपों में अपना दायित्व भली–भाँति निर्वहन करना पडता है। इस प्रकार एक ही महिला को एक ही दिन में कई प्रकार की भूमिका निभाना पडती है।

अत: स्पष्ट है, कि नारी शक्तिरूपा है, जगत जननी है, नारी के संबंध में यहाँ तक कहा गया, कि नारी में पृथ्वी के समान क्षमा, सूर्य के समान तेज, समुद्र के समान गंभीरता, चन्द्रमा के समान शीतलता एवं पर्वत के समान उच्चता के दर्शन होते है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि युग चाहे जो भी हो संसार की तरक्की नारी के विकास पर ही आधारित है।

'महिलाओं को आगे करो,
हर मुष्किल से उन्हें दूर करो।'

समाज में महिलाओं को जब तक उचित आदर प्राप्त नहीं होगा उसका विकास संभव नहीं है, इसलिए नारी को ऐसी स्थिति में लाना होगा, जहॉ वह अपनी समस्याओं का अपने ढंग से समाधान स्वंय कर सके भारत की नारी किसी भी कार्य को करने के लिए उतना ही समर्थ है, जितना विश्व की अन्य देशों की महिलाएँ है। भारत में इंदिरा गाँधी, रानी लक्ष्मीबाई, अहिल्याबाई, कल्पना चावला तथा अन्य और भी महिलाओं जैसे निर्भीक नारी की परम्परा को जारी रखना होगा।

महिला सशक्ति में मुख्य भूमिका शिक्षा निभा सकती है। शिक्षा मनुष्य के रहन–सहन आचार–विचार तथा व्यवस्था सभी में परविर्तन कर देती है। शिक्षा महिलाओं के सर्वांगिण विकास समाज की चर्तुभुजी उन्नति तथा विविध क्षेत्रों में परिवर्तन कर देती है। शिक्षा महिला सशक्तिकरण में मील का पत्थर

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

साबित हो सकती है। महिला शिक्षा के क्षेत्र में सुधार हेतु सुझाव देने के लिए 1958 में देशमुख समिति का गठन किया गया, इस समिति ने महिला शिक्षा के विस्तार हेतु अनेक उपाय बताए। इसके बाद महिला शिक्षा के संबंध में पुन: विस्तार से सुझाव देते हुए 1962 में हंसा समिति का गठन किया 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा की गई। जिसमें नारी को पुरूषों के समान शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होगा। इसमें महिलाओं को विज्ञान, तकनीकी और मेनेजमेन्ट की शिक्षा के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।

2 अक्टूबर 1964 को शिक्षा आयोग के उद्घाटन भाषण में श्री एमसी छगला (तत्कालीन केन्द्रीय शिक्षा मंत्री) ने भी संकेत किया था ' एक शिक्षित नारी का प्रभाव चमत्कारी होता है और उसका प्रभाव समाज पर प्रभावकारी होता है। अत: महिला शिक्षा बहुत ही आवश्यक है तथा वर्ष 2001 में महिला नीति बनायी गई जो महिला समानता, न्याय के आधार पर महिला सशक्तिकरण हेतु प्रतिबद्धता का प्रयास कहा जा सकता है ।

महिला सशक्तिकरण हेतु सरकारी प्रयास

निरक्षर महिलाओं को साक्षार बनाने के लिए यथासंभव स्थानीय स्तर पर उपलब्ध शिक्षित स्वयं सेवको को दायित्व सौपा गया। तथा महिलाओं के नवक्षार होने के बाद उनके सशक्तिकरण की दिशा में महिला स्व–सहायता समूहो के गठन को बढावा दिया गया। साक्षरता अभियान के माध्यम से अब तक राज्य में लगभग 2–3 हजार महिला स्वयं सहायता समूह विभिन्न जिलों में गठित किए जा चुके है। महिलाओं को आर्थिक स्वालंबलन प्रदान करने के लिए उनके निजी बचत खाते, बैकों, डाकघरों में खोलने को प्राथमिकता दी गई। बालिकाओं को वैज्ञानिक व तकनीकी शिक्षा दिए जाने हेतु प्रोत्साहन दिया गया। महिला सशक्तिकरण के लिए भारत सरकार द्वारा कई योजनाएँ चलायी जा रही है। उनमें कुछ प्रमुख योजनाएँ बेटी बचाओं बेटी पढाओं योजना महिला हेल्पलाइन योजना, उज्वला योजना, सपोर्ट टू ट्रेनिंग एंड एम्प्लायमेंट प्रोग्राम फार वूमन (स्टेप), महिला शक्ति केन्द्र, पंचायती राज योजनाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण आदि योजनाएँ चलायी जा रही है जिससे महिलाओं को सशक्त बनाने का प्रयास किया जा रहा है। नरेन्द्र मोदी जी द्वारा महिला दिवस पर कहा गया मशहूर वाक्य 'देश की तरक्की के लिये पहले हमें भारत की महिलाओं को सशक्त बनाना होगा।'

आज हम सभी स्व. इंदिरा गांधी को लौह नारी के रूप में स्मरण करते है। बैंकों का राष्ट्रीयकरण और बांग्लादेश का निर्माण यह इंदिरा गांधी जैसी सशक्त नारी की देन है। आज देश के प्रथम नागरिक 'राष्ट्रपति' के रूप में श्रीमति प्रतिभा पाटिल रह चुकी है। काँग्रेस की सत्ता संगठन को सम्हालने वाली अध्यक्ष सोनिया गाँधी है। दिल्ली में शीला दीक्षित मुख्यमंत्री का दायित्व निभा चूकी है। समाज सेवा, शिक्षा, खेल, कला एवं अन्य क्षेत्रों में अब मध्यप्रदेश की महिलाएँ भी आगे आ रही है। महिलाओं का सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान है। नारी के बिना परिवार या समाज की कल्पना नही की जा सकती है। परिवार एवं समाज में इनका योगदान अतुलनीय है। महिलाएँ समाज व परिवार की मार्गदर्शक है। युवा पीढी की सफलता की श्रोताधार है, परिवार की पथपदर्षक है। अविष्कारी मस्तिष्क तो नारी के पास सदैव रहा है। यही नारी पूरी दुनिया की नींव खडी करती है। इसलिए इसे सम्मान दिया जाय और सशक्त बनाया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. टी. राधाकृष्ण मध्यप्रदेश महिला नीति भोपाल, 1997
2. श्रीवास्तव रांगिनी, आधुनिक समाज एवं महिलाएँ इन्दौर, 2011
3. महिला सशक्तिकरण विकिपिडया
4. महिला सशक्तिकरण निबंध
5. keshavside.wordpress.com

****

कर्ज माफी कृषकों की आर्थिक समस्या का हल नहीं ? एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. संजय जौहरी *

प्रस्तावना – भारत एक कृषि प्रधान देश है। देश की कुल जनसंख्या का 60 प्रतिशत कृषि पर निर्भर है। 1960 के बाद कृषि क्षेत्र में हरित क्रांति का दौर आया। एक प्राचीन कहावत है कि 'देश का किसान कर्ज में जन्म लेता है, कर्ज में जीता है एवं कर्ज में मरता है।' भारत में कृषि मानसून के जुंआ पर आधारित है। कृषि ऋण भारत के कृषि क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण संसाधन सहायता है। कृषि गतिविधियों के लिए किसानों को आर्थिक मदद कृषि ऋण के माध्यम से दी जाती है। कृषि ऋण का प्रवाह वर्ष दर वर्ष लगातार बढ़ रहा है और यह वर्ष 2017–18 के औसत 900000 करोड रूपयें की तुलना में 1065756 करोड रूपयें हो गया है। वर्ष 2017–18 में 1000000 करोड कृषि ऋण का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। भारत में कृषि ही एक ऐसा आधार है, जिस देश के 505 लाख से भी अधिक गांवों में निवास करने वाली 75 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से आजीविका प्राप्त करती है।

ऋणग्रस्त किसानों द्वारा कर्जमाफी मांग के कारण –

1. किसानों के वित्तीय संकटग्रस्त होने की एक बड़ी वजह हैं कि खेती की लागत बढ़ती जा रही है और उनकी उपज का मुनाफे भरा मूल्य नहीं मिल पा रहा है।
2. कृषि ऋण का उपयोग गैर– कृषि कार्य के लिए करना।
3. बिचौलियों द्वारा कृषि उपज के विक्रय पर अधिकतम लाभ प्राप्त करना।
4. खराब मानसून एवं जलवायु परिवर्तन के कारण फसल खराब होना।
5. भूमि जल का स्तर की कमी।
6. मिटटी की गुणवत्त खराब होना।
7. भारत में अधिकांश खेती देश के ग्रामीण हिस्सों में की जाती है। हालांकि भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में सुधार हुआ है लेकिन भारत में ग्रामीण एवं शहरी अंतर के पुल को कम करने के लिए यह पर्याप्त नहीं है। अधिकांश किसानों का यह मानना है कि शहरी जीवन ग्रामीण जीवन से बेहतर है।
8. किसानों को कर्ज तुरंत चुकाना पडता है। फसल आने के बाद अपनी फसल एक ही समय में बाजार में बेचते है, इसलिए किसान अपने खर्चो का प्रबंधन करने में असमर्थ होते है और उन्हें साहूकारों से अत्याधिक उंची दरों पर पैसा उधार लेना पड़ता है।

उपरोक्त कर्ज माफी की मांग के कारणों का निष्कर्ष यह है कि किसानों की प्रमुख समस्याए जोखिम एवं लाभप्रदता। किसानों की जोखिम उठाने की क्षमता भी क्षीण हो रही है।

कृषि ऋण माफी का इतिहास – भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए कृषि ऋण माफी कोई नई बात नहीं है। पहला राष्ट्रव्यापी कृषि ऋणमाफी योजना 1990 में तत्कालीन प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह ने 10000 करोड रूपयें के ऋण किसानों के माफ किये थे। 29 फरवरी 2008 में तत्कालीन वित्तमंत्री पी. चिदंबरम ने किसानों के लिए एक राहत पैकेज की घोषणा की थी। 60000 करोड रूपयें का पैकेज ऋण माफी के लिए आवंटित किए थे। 2014 में तेलंगाना एवं आंध्रप्रदेश के किसानों के 17000 करोड रूपए के कृषि ऋण माफ किए थे। 2017 में उत्तरप्रदेश महाराष्ट्र, पंजाब, कर्नाटक ने किसानों के ऋणमाफी की घोषणा की लगभग 13.6 मिलियन अमेरिकी डॉलर के ऋणमुक्त किए गए। वर्ष 2018 में मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ ने किसानों के ऋणमुक्त करने की घोषणा की। आर्थिक विशेषज्ञों का कहना है कि उपरोक्त कर्जमाफी सकल घरेलू उत्पाद का 2–2.6.1 हैं।

कृषि ऋण माफी की घोषणा वित्तीय वर्ष 2017–18 एवं 2018–19

राज्य	ऋणमाफी (करोड़ रू.)
कर्नाटक	44000
मध्यप्रदेश	38000
उत्तरप्रदेश	36000
महाराष्ट्र	34000
छत्तीसगढ़	6100
तमिलनाडु	1800
पंजाब	1500
आंध्रप्रदेश	3600
तेलंगाना	3000
असम	650

कर्जमाफी के दुष्प्रभाव या दुष्परिणाम – देश में निरंतर ऋणमाफी अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। अन्य प्रतिकूल प्रभाव निम्न है–

1. कृषि ऋण माफी एक ईमानदार क्रेडिट (उधार) संस्कृति को कम करती है।
2. यह क्रेडिट अनुशासन को प्रभावित करती है एवं भविष्य में उधारकर्ता को ऋण के चुकाने के लिए हतोत्साहित करता है।
3. ऋणमाफी नैतिक खतरें को बढ़ाती है।
4. कर्जमाफी करदाताओं से उधारकर्ता को हस्तांतरित होती है।
5. कर्जमाफी के कारण सरकार की उधारी बनती है एवं सरकारी बांड की ब्याजदर भी प्रभावित होती है।
6. कर्ज में बडे कृषकों को फायदा होता है। छोटे किसान साहूकारों से ऊँची दर पर लिए गए ऋण में दबे होते है।
7. इस प्रकार की ऋणमाफी राष्ट्रीय बेलेंसशीट को प्रभावित करती है। कई आर्थिक विशेषज्ञों को लगता हैं कि माफ किए धन का उपयोग बुनियादी ढॉचा परियोजनाओं में निवेश किया जा सकता है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) बी.एल.पी. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

सुझाव –

1. बार–बार ऋण माफी की घोषणा करने के स्थान पर सरकार को समय पर पुनर्भुगतान के लिए किसानों को सब्सिडी दी जाना चाहिए। ऋण माफी के स्थान पर कृषि उपकरणों आदि पर सब्सिडी देना चाहिए।
2. स्मार्ट खेती का चलन बढाना चाहिए। इस तरह की खेती से क्रय संसाधनों के साथ ज्यादा पैदावार हासिल करने के लिए प्रौधोगिकी का इस्तेमाल किया जाता है। इसमें जीपीएस, जीएमएसएस और ड्रोन के इस्तेमाल से इस बात का सटीक अनुमान लगाया जाता हैं कि अधिकतम पैदावार के लिए कौन–सी फसल और मिटटी चाहिए तथा फसल बर्बादी को कम कैसे किया जाए। फसल काटने के बाद ही गतिविधियों में भी इसका उपयोग होता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सकें कि कृषि उत्पादों का भंडारण वहॉ हो, जहॉ मौसम ओर उपकरणों को नियंत्रित करने के लिए उर्जा का सर्वोत्तम इस्तेमाल होता है। भारत में स्मार्ट खेती के चलन की सीमा है क्योंकि इसके उपकरण की लागत ऊँची होती है एवं आयात करने पड़ते है। सरकार देश में स्मार्ट खेती के लिए अनुसंधान बढ़ाने की आवश्यकता है।
3. कृषि बाजार में सुधारों की आवश्यकता है, किसानो को उनकी उपज के लिए उचित मूल्य मिले, इसमें राज्य स्तरीय एम.सी.डी. अधिनियमों संशोधन किया जाए। प्रधानमंत्री फसलबीमा योजना का क्षेत्र को बढ़ाने की जरूरत है, ताकि किसानों को फसल खराब होने के खतरों से बचाया जा सके।
4. कृषक को कृषि के क्षेत्र में होने वाले अनुसंधान से अवगत कराने के लिए सूचनातंत्र को और अधिक सुदृढ़ बनाने एवं प्रचार प्रसार पर अधिक बल देने की आवश्यकता है।
5. कृषि उत्पादों की ऑनलाईन ट्रेडिंग के लिए राष्ट्रीय कृषि बाजार को मजबूत बनाना चाहिए।
6. भारत में कृषि से संबंधित समस्याओं को हल करने के लिए सरकार द्वारा किए गए प्रयासों के बावजूद भारत में सुसंगत कृषि नीति नहीं है। भारतीय कृषि में स्थिरता और उत्पादकता में वृद्धि के लिए संसुगत कृषि नीति बनाना चाहिए।

कृषि ऋण समस्या के लिए राजनीतिक एवं तकनीकी दोनों समाधान होना चाहिए। कृषि ऋण समस्या के लक्षणों का इलाज हो रहा है।, लेकिन संरचनात्मक मुद्दो का नहीं। प्रधान मंत्री फसल बीमा को सही तरीके से लागू करना चाहिए। कृषि ऋण के ब्याज को माफ किया जा सकता हैं। किसानों के ऋण माफी के लिए राजनैतिक तर्क यह है कि कारपोरेट ऋण अपलिखित किया जा सकता है, तो मेहनतकश, कड़ा श्रम करने वाले किसानों को ऋण माफ क्यों नहीं किया जा सकता है। हालाकि, उपरोक्त तर्क उचित नहीं है, औद्योगिक क्षेत्र में खराब ऋणों को अपलिखित कर तकनीक रूप से चिटठे को व्यवस्थित की जाता है और ऋण वसूली जारी रहती है, जबकि ऋण माफी पूरी तरह से उधारकर्ता को देयता के भुगतान से मुक्त कर देती है और राज्यों के वित्त पर सीधा बोझ बन जाती है। दोनों ही मध्यम अवधि के लिए राजकोषीय संतुलन के लिए हानिकारक हैं। यदि सम्पूर्ण देश का कृषि ऋण माफ किया जाए तो ऋण माफी 200000 करोड़ तक जा सकती है। यह पूरा भार राज्य सरकार पर पड़ेगा, बैंको पर तकनीकी रूप से इसका प्रभाव नहीं पड़ेगा। सभी राज्य सरकारों के संयुक्त वित्तीय घाटें तीव्रगति से बढ़ जायेंगे। वित्तीय वर्ष 2017–18 में, राज्य के राज्यकोषीय घाटे का अनुमान सकल घरेलू उत्पादन के 2.7 प्रतिशत है। यदि सम्पूर्ण देश कृषि ऋण माफ किया जाता हैं, तो वर्ष 2019 में वास्तविक राजकोषीय घाटा 4.5 प्रतिशत के करीब हो सकता है। यह देश की अर्थव्यवस्था के लिए हानिकारक है। राजकोषीय घाटे की पूर्ति के लिए भारतीय रिजर्व बैंक कागजी मुद्रा छापना पड़ेगी। जिसके फलस्वरूप मुद्रा स्फीति में वृद्धि होगी। कृषि ऋण माफी योजना किसानों के बढ़ते कर्ज से तत्काल राहत दे सकती है लेकिन यह समस्या का स्थायी समाधान नहीं है। कृषि ऋण माफी का स्थायी समाधान संरचनात्मक कृषि सुधारों में निहित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वार्षिक रिपोर्ट 2017–18 कृषि सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग, भारत सरकार।
2. आर.बी.आई. रिपोर्ट।
3. बिजनेस स्टेण्डर्ड।
4. इकॉनामिक्स टाईम्स।
5. दैनिक भास्कर।
6. इंटरनेट वेबसाईट।

****

भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की प्रवृत्तियां - एक अध्ययन

डॉ. विभा वासुदेव *

शोध सारांश - भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश का दायरा निरन्तर बढ़ता जा रहा है, साथ ही इसके मानकों में भी उदार प्रवृत्ति को अपनाया जा रहा है क्योंकि देश के तीव्रतम आर्थिक विकास के लिए निवेश व तकनीकी की अत्यन्त आवश्यकता है, जो हमें विदेशों से प्राप्त हो सकती है, इसीलिए वर्तमान में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश पर अधिकाधिक ध्यान केन्द्रित कर विदेशी नीतियों में परिवर्तन किया जा रहा है, परन्तु इसके साथ ही साथ यह भी ध्यान रखना आवश्यक होगा कि इसके सामने कहीं हमारा घरेलू उद्योग व्यापार बौना न रह जाए। युवाओं के रोजगार, उत्पादन, जनता की क्रयशक्ति पर सकारात्मक प्रभाव ही भारतीय अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाकर विकसित देश की श्रेणी में खड़ा कर सकता है जबकि विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की नीतियों को देशहित में क्रियान्वित किया जाए व इसके सभी पहलूओं पर गहराई से विचार करते हुए उचित मॉडल अपनाया जाए। भारत की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, भौगोलिक तथा पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुसार ही विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जाए, क्योंकि आर्थिक विकास के साथ-साथ सभ्यता, संस्कृति, पर्यावरणीय तथा मानवीय मूल्यों एवं हितों का संरक्षण भी अत्यन्त आवश्यक है।

प्रस्तावना - विश्व में आर्थिक विकास को गति देने के लिए विकासशील देशों को किसी न किसी सीमा तक विदेशी सहायता पर निर्भर रहना पड़ता है। वर्तमान में एशिया के अन्य विकसित राष्ट्र अपने यहां विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को आकर्षित कर उत्तरोतर विकास के पथ पर अग्रसर हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में भी स्वतंत्रता के पश्चात किसी न किसी रूप में विदेशी सहायता ली जाती रही है।

विदेशी पूंजी एक व्यापक शब्द है, जिसके अन्तर्गत -

(1) विदेशी सहायता, जिसमें विकसित देशों की सरकारों और अन्तर्राष्ट्रीय वित्त संस्थाओं द्वारा देश के आर्थिक विकास की दर को तेज करने के लिए - (i) अनुदान (ii) रियायती पर ऋण दिये जाते हैं।

(2) व्यापारिक ऋण, जिसमें विदेशी बैंकों से लिए गए ऋण व अनिवासी भारतीयों की जमा को व्यापारिक ऋणों का हिस्सा मान लिया जाता है।

(3) विदेशी निवेश, 51%x इक्विटी तक के विदेशी निवेश के लिए स्वत: स्वीकृति के लिए 1991 में नये आर्थिक सुधारों को अपनाने के पश्चात् विदेशी निवेश को और अधिक उदार बनाया गया, विदेशी निवेश में -

(i) विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (Foreign Direct Investment) - कोई विदेशी नागरिक अथवा संगठन या कंपनी का दूसरे देश में किया गया निवेश प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI) कहलाता है, ऐसे निवेश से निवेशकों को दूसरे देश की उस कंपनी के प्रबन्धन में कुछ हिस्सा हासिल हो जाता है।

भारत में यह निवेश भारतीय रिजर्व बैंक, औद्योगिक सहायता सचिवालय (Secretarial for Industrial Approvals - SIA) एवं विदेशी निवेश प्रोत्साहन बोर्ड (Foreign Investment Promotion Board - FIPB) के माध्यम से होता है। इसके अन्य दो रास्ते हैं- अनिवासी भारतीय तथा अनिवासियों द्वारा भारतीय कम्पनियों के शेयरों की खरीद।

(ii) पोर्टफोलियो निवेश (Protfolio Investment) - इसके अन्तर्गत विदेशी कम्पनियां भारतीय कम्पनियों के ऋण-पत्र (बॉण्ड) या अंश (शेयर) खरीदकर विनियोग करती हैं। इस प्रकार के निवेश में विदेशी कम्पनियों का स्वामित्व, प्रबन्ध व नियन्त्रण न होकर लाभांश व ब्याज प्राप्त करने तक सीमित होता है। यह सब स्वदेशी होता है।

भारत के सन्दर्भ में पोर्टफोलियों निवेश का आशय विदेशियों या विदेशी संस्थागत विनियोग (F.I.I.) या भूमण्डलीय न्यासी रसीद (Global DepositoryReceipts-GDRs) या अमरीकी न्यासी रसीद (Americal Depository Receipts-ADRs) या अपटीय फण्ड एवं अन्य (Offshore Fund and Others) द्वारा घरेलू पूंजी बाजार में प्रतिभूयिों में निवेश से है।

इस प्रकार प्रत्यक्ष निवेश अपनी कम्पनी के प्रबन्ध व उन्नति में प्रत्यक्ष रूप से कार्य करते हैं परन्तु (पोर्टफोलियो) विनियोग में कम्पनी के विकास व प्रबन्ध में कोई प्रत्यक्ष योगदान नहीं होता।

विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI) पोर्टफोलियो निवेश की तुलना में अधिक तरल होते हैं। विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI) आसानी से तरलता में परिवर्तित नहीं किए जा सकते। इसलिए इनमें निवेश करने से पहले कई तथ्यों, जैसे- राजनीतिक स्थिरता, सरकार की नीतियां, आर्थिक व औद्योगिक विकास के अवसर आदि पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। दूसरी ओर, पोर्टफोलियो निवेश को आसानी से तरलता में परिवर्तित किया जा सकता है।

(iii) विदेशी सहयोग (Foreign Collaboration) - इधर कुछ वर्षों में स्वदेशी पूंजी तथा विदेशी पूंजी की संयुक्त भागीदारी को सरकार द्वारा प्रोत्साहित किया जा रहा है। विदेशी पूंजी के साथ विदेशी तकनीक का भी सहयोग प्राय: जुटा रहता है। यह विदेशी सहयोग निजी उद्योगपतियों के बीच, विदेशी पक्ष तथा सरकार एवं दो पक्षों की सरकारों के बीच हो रहा है।

विदेशी सहयोग, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश एवं पोर्टफोलियो निवेश के माध्यम से विदेशी पूंजी को आकर्षित किया जा सकता है। भारत जैसे विकासशील देश में जहां पूंजी एवं आधुनिक तकनीकी का अभाव है, विकास की दृष्टि से विदेशी पूंजी का विशिष्ट महत्व है।

प्रस्तुत शोध पत्र में भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की प्रवृत्तियों का अध्ययन कर निष्कर्ष निकाले गए हैं।

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

भारत में विभिन्न क्षेत्रों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की सीमा

क्षेत्र	सीमा	क्षेत्र	सीमा
बैंकिंग	20%	लघु उद्योग	24%
निजी बैंकिंग	74%	पेट्रोलियम	100%
गैरबैंकिंग वित्तीय कंपनियां	51%	सोना चांदी एवं गहनें	50%
बंदरगाह निर्माण	100%	दवा उद्योग	51%
विद्युत ऊर्जा	100%	नागरिक उड्डयन	49%
पर्यटन	100%	बीमा क्षेत्र	49%
दूरसंचार	74%	पेंशन क्षेत्र	26%

स्त्रोत – प्रतियोगिता दर्पण, भारतीय अर्थव्यवस्था 2012–13

विदेशी प्रत्यक्ष निवेश के रूट्स– विदेशी निवेश के निम्नलिखित रूट हैं–

1. ऑटोमेटिक रूट – इस योजना के अन्तर्गत भारतीय कम्पनियां 10 करोड़ अमरीकी डॉलर (दक्षेस देशों में 15 करोड़ अमरीकी डॉलर) का निवेश कर सकती हैं। यह शर्त है कि यह निवेश भूसम्पत्ति उन्मुख न हो, इस प्रकार के निवेश का वित्त पोषण भारतीय कम्पनी के मुद्रा–अर्जक विदेशी मुद्रा खाते से किया जा सकता है। इस प्रकार के निवेश की जानकारी बाद में रिजर्व बैंक को दे देनी चाहिए।

2. विदेशी आर्थिक क्षेत्र इकाइयां – यह इकाइयां ऑटोमेटिक रूप से 10 करोड़ अमरीकी डॉलर की सीमा के बाहर भी विदेश में कितना भी पूंजी निवेश कर सकती है। इसमें कम्पनी के मुद्रा–अर्जक विदेशी मुद्रा खाते से निवेश किया जा सकता है।

3. ए.डी.आर./जी.डी.आर. ऑटोमेटिक शेयर/अदला–बदली रूट– इस तरीके के अन्तर्गत भारतीय कम्पनियां अपने ए.डी.आर./जी.डी.आर. के नए निर्गम के बदले उतने ही महत्व वाली गतिविधि में 10 करोड़ अमरीकी डॉलर या पिछले साल का निर्यात–कमाई के दस गुने के बराबर की अदला–बदली कर सकती है। शर्त यह है कि बाद में रिजर्व बैंक को इसकी सूचना दे दी जाए।

4. ए.डी.आर./जी.डी.आर. ऑटोमेटिक रूट – इस स्कीम के तहत् भारतीय कम्पनियां ए.डी.आर./जी.डी.आर. से मिली राशि का शत–प्रतिशत उपयोग किसी सीमा के बिना ऑटोमेटिक रूप से विदेशी निवेश कर सकती हैं। शर्त यह है कि बाद में इसकी सूचना रिजर्व बैंक को दे दी जाए।

5. भागीदारी फर्मों द्वारा निवेश – भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 के अधीन कोई भागीदारी फर्म भी, जो विनिर्दिष्ट व्यावसायिक सेवा देती हो, बिना रिजर्व बैंक की पूर्वानुमति (बाद में रिपोर्ट दे दे) किसी एक वित्त वर्ष में वैसी ही गतिविधि में लगी विदेशी कम्पनी में 10 लाख अमरीकी डॉलर या इसके बराबर राशि लगा सकती है।

विदेशी प्रत्यक्ष निवेश – सीमाओं व रूट में परिवर्तन **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

भारत में विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग की प्रवृत्तियां – भारत में 1991 की औद्योगिक नीति की घोषणा के पश्चात भारत में प्रत्यक्ष निवेश व पोर्टफोलियो निवेश दोनों के ही अन्तर्प्रवाह में तेजी से वृद्धि हुई।

2015–16 के दौरान कुल एफडीआई अन्तर्प्रवाह (जिसमें साम्यता, अन्तर्प्रवाह, कमाई का पुनर्निवेश तथ अन्य पूंजी सम्मिलित है) 55.457 बिलियन अमरीकी डॉलर (रू. 3,32,243 करोड़) था। एफडीआई इक्विटी अन्तर्प्रवाह 41.042 बिलियन अमरीकी डॉलर था, जो कि पिछले वर्ष की तुलना में 28.61% अधिक था। वर्ष 2016–17 (अप्रैल–दिसम्बर) के दौरान भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश अन्तर्प्रवाह 48 बिलियन डॉलर (रू. 3,21,940 करोड़) रहा है, जो वर्ष 2015–16 की इसी अवधि की तुलना में 22% अधिक है। वैश्विक स्तर पर विदेशी प्रत्यक्ष निवेश अन्तर्प्रवाह में 13% की कमी आई है। जिसका प्रमुख कारण तेजी से बढ़ती राजनीतिक अस्थिरता तथा बदलते वातावरण में विश्वास की कमी है। भारत में 90% से अधिक विदेशी प्रत्यक्ष निवेश ऑटोमैटिक मार्ग से आ रहा है। वर्ष 2016–17 में सर्वाधिक 18% विदेशी प्रत्यक्ष निवेश सेवा क्षेत्रक में हुआ है। उसके बाद निर्माण विकास दूरसंचार, कम्प्यूटर हार्डवेयर तथा ऑटोमोबाइल्स का स्थान है।

अप्रैल 2000 से दिसम्बर 2016 की अवधि में कुल विदेशी प्रत्यक्ष निवेश अन्तर्प्रवाह 472.199 बिलियन डॉलर रहा है। इसी अवधि में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश ईक्विटी अन्तर्प्रवाह 183.897 बिलियन डॉलर रहा। अप्रैल 2000 से दिसम्बर 2016 की अवधि विश्व के शीर्ष पांच देशों से होने वाली विदेशी प्रत्यक्ष निवेश अन्तर्प्रवाह निम्नलिखित प्रकार रहा (बिलियन डॉलर)–

मॉरिशस	108.729	34%
सिंगापुर	52.994	18%
यू.के.	24.374	8%
जापान	25.215	8%
यू.एस.ए.	19.884	6%

जहां तक विभिन्न क्षेत्रकों का प्रश्न है, तो अप्रैल 2000–दिसम्बर 2016 में भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश प्राप्त करने वाले शीर्ष 5 क्षेत्रक निम्नलिखित प्रकार हैं – **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

अप्रैल 2000–दिसम्बर 2016 की अवधि में सर्वाधिक विदेशी प्रत्यक्ष निवेश महाराष्ट्र, दादरा नागर हवेली, दमन एवं दीव 100.165 बिलयन डॉलर (31%) क्षेत्र को प्राप्त हुआ है। दिल्ली–हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश के कुछ भागों को 66ण994 बिलयन डॉलर (21%), तमिलनाडु एवं पाण्डिचेरी को 22.647 बिलयन डॉलर (7%) विदेशी प्रत्यक्ष निवेश प्राप्त हुआ।

भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (मिलियन डॉलर में)

वर्ष	कुल विदेशी प्रत्यक्ष निवेश अन्तर्प्रवाह	विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा निवल निवेश
2010–11	34847	29422
2011–12	46556	16812
2012–13	34298	27582
2013–14	36396	5010
2014–15	44291	40923
2015–16	55457	(–) 3516
2016–17	48032	(–) 3378
(अप्रैल–दिसम्बर) अप्रैल 2000 से दिसम्बर 2016 तक संचयी निवेश	472199	183697

UNCTED द्वारा किए गए World Investment Prospectus Survey, 2015 के अनुसार, भारत विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को आकर्षित करने वाला महत्वपूर्ण देश बन गया है। पूरे विश्व में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश में भारत का हिस्सा जो 2000 में 0.3% था, वह 2015 में बढ़कर 3.6% हो

गया।

यद्यपि भारत के कुल विदेशी निवेश में वृद्धि हुई है, परन्तु फिर भी अन्य देशों की तुलना में काफी कम है, इसके लिए उत्तरदायी कारण निम्नलिखित हैं –

(i) पूंजी खातें में रूपए का परिवर्तनीय न होना,

(ii) अनेक क्षेत्रों में विदेशी निवेश की उच्चतम सीमा निर्धारित होना,

(iii) भूमि अधिग्रहण, पर्यावरण तथा आधारभूत संरचना से जुड़ी समस्याएं।

यद्यपि इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि विश्वव्यापी वित्तीय संकट के कारण विदेशी निवेश में कमी आयी है, किन्तु आने वाले समय में विदेशी निवेश बढ़ने की सम्भावना है।

भारत में विदेशी पोर्टफोलियो निवेश **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

निवेश ऋणात्मक रहा, इसका अर्थ है कि इस वर्ष के दौरान भारतीय बाजारों में विदेशी पूंजी की निवल निकासी इस मद में हुई। समीक्षा के अनुसार 2008 की वैश्विक मंदी के पश्चात् ऐसा पहली बार 2016 में हुआ। वर्ष 2010 से 2016 के दौरान भारत में विदेशी पोर्टफोलियो निवेश के उपर्युक्त आंकड़े नेशनल सिक्युरिटीज डिपॉजिटरी लि. (NSDL) के हवाले से आर्थिक समीक्षा में दर्शाए गए हैं।

समीक्षा में बताया गया है कि 2016 में एफपीआई की निकासी केवल भारतीय बाजारों से जुड़ी प्रक्रिया ही नहीं थी। विकसित अर्थव्यवस्थाओं में बेहतर प्रतिफल मिलने की प्रत्याशा में अधिकांश उभरती अर्थव्यवस्थाओं में बड़े पैमाने पर पोर्टफोलियो/संस्थागत निवेश की निकासी हुई।

भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश मानकों का परिवर्तन – संघीय सरकार ने 20 जून, 2016 को अनेक क्षेत्रों में ऑटोमैटिक मार्ग से 100% विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को अनुमन्य कर दिया। अब भारत में केवल नकारात्मक सूची को छोड़कर अधिकांश क्षेत्रकों में स्वचालित मार्ग से विदेशी प्रत्यक्ष निवेश अनुमन्य हो गया है।

इस हालिया परिवर्तन में विश्व में भारत सर्वाधिक खुली अर्थव्यवस्था वाला देश हो गया है। 100% विदेशी प्रत्यक्ष निवेश अब निम्नलिखित क्षेत्रकों में उपलब्ध हैं –

1. **भारत में विनिर्मित/उत्पादित खाद्य पदार्थ –** सरकारी अनुमोदन मार्ग से 100% खाद्य पदार्थों का व्यापार (ई–कॉमर्स सहित)।

2. **फार्मास्यूटीकल्स –** ग्रीनफील्ड फार्मा में स्वचालित मार्ग से 100%; ब्रॉडनफील्ड फार्मा से 74% एफडीआई स्वचालित मार्ग से तथा इससे अधिक सरकार के अनुमोदन से।

3. **प्रसारण करने वाली सेवाएं –** टेली–पोर्टस् (हब/टेलीपोर्टस् अपलिंकिंग की स्थापना; डायरेक्ट टु होम; केबिल नेटवर्क (मल्टी–सिस्टम ऑपरेटर्स MSOs) जो राष्ट्रीय या प्रान्तीय या जिला स्तर पर सेवाएं देते हैं एवं नेटवर्क के डिजिटलीकरण एवं सम्बोधनीयता के उच्चारण हेतु); हेड एण्ड स्काई ब्रॉड–कास्टिंग सर्विसेज (HITS)।

4. **नागरिक उड्डयन –** ग्रीनफील्ड एयर–पोर्टस् स्वचालित मार्ग से 100% बॉडनफील्ड एयरपोर्टस् स्वचालित मार्ग से 100% FDI, एयर ट्रांसपोर्ट सेवा/घेरलू अधिसूचित यात्री एयरलाइन एवं क्षेत्रीय वायु परिवहन सेवाएं–49%FDI स्वचालित मार्ग से तथा इससे अधिक (100%) सरकारी अनुमोदन से; अनिवासी भारतीय 100% तक FDI स्वचालित मार्ग से निवेश कर सकते हैं; विदेशी एयरलाइन्स भारतीय एयर–लाइन्सों में सरकारी अनुमति से 49% तक पूंजी लगा सकते हैं।

5. **पशुपालन –** मत्स्य संवर्धन, मत्स्यापालन एवं मधुमक्खी पालन तथा पशुपालन बिना किसी शर्त के 100%FDI स्वचालित मार्ग से।

6. 10 जनवरी 2018 को सरकार ने सिंगल ब्रांड में सौ फीसदी विदेशी निवेश को ऑटोमेटिक रूट से अनुमति देने का फैसला किया है। साथ ही खुदरा बाजार में संलग्न ऐसी कंपनियों के लिए 30 फीसदी भारत में खरीदी की शर्त भी हटा ली है। क्या यह फैसला देश में उत्पादन और रोजगार बढ़ाने में सहायक होगा ? क्या इससे मेक इन इंडिया कार्यक्रम पर विपरीत प्रभाव नहीं पड़ेगा ?

निष्कर्ष एवं सुझाव – कपड़ा क्षेत्र में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI) विगत दो साल में तीन गुना बढ़ा। वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय जल्द ही जारी करेगा एकीकृत विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI) नीति का नया संस्करण। देश में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI) 37 प्रतिशत बढ़कर 10.4 अरब डॉलर हुआ। खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र में आई 72.72 करोड डॉलर का विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI)। चीन और अमेरिका को भारत ने पीछे किया। दूसरे साल भी भारत में सबसे ज्यादा विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI) आया। अप्रैल 2000 से सितम्बर 2016 तक भारत में आया 300 अरब डॉलर का विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI)।

भारत में 2016–17 में मॉरीशस से आया सबसे अधिक (FDI) सिंगापुर को किया पीछें, जबकि 2015–16 में सिंगापुर पहले स्थान पर था। जापान को पीछे छोड़कर विदेश निवेशकों के लिए भारत बना 5वीं आकर्षक अर्थव्यवस्था। मौजूदा वित्त वर्ष की पहली छ:माही में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI) में 17% बढ़ोत्तरी हुई। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) ने भी भारत की तेज विकास दर का अनुमान लगाया है, जो भारत के विकास के लिए शुभ संकेत है।

अत: स्पष्ट है कि भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश का दायरा निरन्तर बढ़ता जा रहा है, साथ ही इसके मानकों में भी उदार प्रवृत्ति को अपनाया जा रहा है क्योंकि देश के तीव्रतम आर्थिक विकास के लिए निवेश व तकनीकी की अत्यन्त आवश्यकता है जो हमें विदेशों से प्राप्त हो सकती है, इसीलिए वर्तमान में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश पर अधिकाधिक ध्यान केन्द्रित कर विदेशी नीतियों में परिवर्तन किया जा रहा है, परन्तु इसके साथ ही साथ यह भी ध्यान रखना आवश्यक होगा कि इसके सामने कहीं हमारा घरेलू उद्योग व्यापार बौना न रह जाए। यदि हम अपने उद्योग एवं व्यवसाय की बागडोर विदेशियों के हाथ में सौंप दें, तो निश्चित रूप से भविष्य में समस्याओं का सामना करना पडेगा। अत: अधिक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के खतरे भविष्य में हमारे सामने आएंगे और यह देश के हित में भी नहीं होगा, क्योंकि विदेशी प्रत्यक्ष निवेश से पराधीनता का खतरा, स्वतन्त्र आर्थिक नीति अपनाने में कठिनाई, विदेशों पर निर्भरता, भुगतान में कठिनाई, आन्तरिक वित्तीय साधनों का अपर्याप्त विकास, राष्ट्रीय एवं बड़े उत्पादकों के लिए हानिकारक, देश का असन्तुलित एवं अव्यवस्थित विकास, वित्तीय अनिश्चितताएँ, आर्थिक शक्ति का केन्द्रीयकरण तथा लाभों का निर्यात होने लगता है। विदेशी प्रत्यक्ष निवेश योजनाबद्ध तरीके से किया जाना चाहिए ताकि प्राथमिकता प्राप्त उद्योगों, निर्यातोन्मुखी उद्योगों तथा पर्यटन क्षेत्रों में यह पूँजी लगाइ जा सके। युवाओं के रोजगार, उत्पादन, जनता की क्रयशक्ति पर सकारात्मक प्रभाव ही भारतीय अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाकर विकसित देश की श्रेणी में खड़ा कर सकता है, जबकि विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की नीतियों को देशहित में क्रियान्वित किया जाए व इसके सभी पहलूओं पर गहराई से विचार करते हुए उचित मॉडल अपनाया जाए। भारत की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, भौगोलिक तथा पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुसार ही विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जाए, क्योंकि आर्थिक विकास के साथ–

साथ सभ्यता, संस्कृति, पर्यावरणीय तथा मानवीय मूल्यों एवं हितों का संरक्षण भी अत्यन्त आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रूद्र दत्ता के.पी.एम. सुन्दरम, भारतीय अर्थव्यवस्था, एस.चन्द्र एण्ड कंपनी लिमिटेड नई दिल्ली 2011, पृष्ठ 282, 283, 292, 293
2. अग्रवाल एवं बरला, अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा पृष्ठ 559, 560
3. डॉ. शिवनारायण गुप्त, अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र, रामप्रसाद एण्ड सन्स आगरा 2009 पृष्ठ 280, 281
4. डॉ. अनुपम अग्रवाल एवं एस.के. शर्मा अर्थशास्त्र व्यष्टि एवं समष्टि एस. बी.पी.डी. पब्लिकेशन्स 2017 पृष्ठ 127, 128, 129, 131, 132, 133, 134
5. आर्थिक समीक्षा 2016–17
6. प्रतियोगिता दर्पण– भारतीय अर्थव्यवस्था वार्षिकी 2012–13
7. पत्रिका सागर 16.01.2018
8. पत्रिका सागर 22.01.2018
9. पत्रिका सागर 24.01.2018

विदेशी प्रत्यक्ष निवेश – सीमाओं व रूट में परिवर्तन

क्र.	क्षेत्र	मौजूदा सीमा व रूट	नई स्वीकृत सीमा व रूट
1	पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस रिफाइनिंग	49 प्रतिशत, एफआईपीबी	49 प्रतिशत ऑटोमैटिक एप्रूवल
2	कमोडिटी एक्सचेन्ज	49 प्रतिशत, एफआईपीबी	49 प्रतिशत ऑटोमैटिक एप्रूवल
3	पॉवर एक्सचेन्ज	49 प्रतिशत, एफआईपीबी	49 प्रतिशत ऑटोमैटिक एप्रूवल
4	स्टॉक एक्सचेन्ज, डिपॉजिटरीज	49 प्रतिशत, एफआईपीबी	49 प्रतिशत ऑटोमैटिक एप्रूवल
5	एसेट रिकन्स्ट्रक्शन कम्पनियाँ	74 प्रतिशत, एफआईपीबी	100 प्रतिशत (49 प्रतिशत ऑटोमैटिक, उसके पश्चात् 100 प्रतिशत तक एफआईपीबी)
6	क्रेडिट इन्फॉर्मेशन कम्पनियाँ	49 प्रतिशत, एफआईपीबी	74 प्रतिशत ऑटोमैटिक
7	सिंगल ब्रांड रिटेल	100 प्रतिशत, एफआईपीबी	49 प्रतिशत ऑटोमैटिक व इसके बाद 100 प्रतिशत तक एफआईपीबी
8	बेसिक व सेल्युलर फोन सेवा	74 प्रतिशत (49 प्रतिशत ऑटोमैटिक व उसके पश्चात् 74 प्रतिशत तक एफआईपीबी)	100 प्रतिशत (49 प्रतिशत ऑटोमैटिक, व उसके बाद 100 प्रतिशत तक एफआईपीबी)
9	कोरियर सेवा	100 प्रतिशत, एफआईपीबी	100 प्रतिशत ऑटोमैटिक

1.	सेवाएं (वित्तीय, बैंकिंग, बीमा, गैर–वित्तीय/व्यवसाय आउटसोर्सिंग, अनुसन्धान एवं विकास, कोरियर, तकनीकी परीक्षण एवं विश्लेषण)	50.792 (बिलयन डॉलर)	18%
2.	निर्माण, विकास (टाउनशिप, आवास, बिल्ट–अप अधो–रचना)	24.188 (बिलयन डॉलर)	8%
3.	कम्प्यूटर हार्डवेयर–सॉफ्टवेयर	21.018 (बिलयन डॉलर)	7%
4.	दूरसंचार	18.382 (बिलयन डॉलर)	7%
5.	ऑटोमोबाइल उद्योग	15.065 (बिलयन डॉलर)	5%

भारत में विदेशी पोर्टफोलियों निवेश

भारत में निवल विदेशी पोर्ट फोलियों निवेश/विदेशी संस्थागत निवेश

वर्ष	ईक्विटी	ऋण	कुल पोर्टफोलियो निवेश/ विदेशी संस्थागत निवेश
2010	1,33,266	46,408	1,79,674
2011	– 2714.3	42,067	39,352.9
2012	1,28,360	34,988	1,63,348
2013	1,13,136	– 50,849	62,286
2014	97,054	1,59,156	2,56,213
2015	17,808	45,857	63,663
2016	20,568	– 43,647	– 23,079

स्त्रोत – आर्थिक समीक्षा (2016–17) के अनुसार वर्ष 2016 में देश में विदेशी पोर्टफोलियो

****

महिला उद्यमिता एवं स्वरोजगारमूलक योजनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)

कमलराज सिंह उईके *

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था पूरी तरह से गांव और खेती पर टिकी हैं। हर जगह महिलाए ही सबसे ज्यादा कार्य में लगी रहती है फिर भी किसी को पता नहीं कि अर्थव्यवस्था में महिलाओं का क्या योगदान है? पढ़-लिखकर विकास की दौड़ आगे आ खड़ी हुई महिलाएँ अब घर की चारदिवारी से बाहर के कामकाज की दुनिया में भी शामिल हो रही है। बदलती हुई सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियों में महिलाओं को शिक्षा और रोजगार के अवसर आसानी से मिलने लगे हैं, जिसके कारण उनके लिए विकास के दरवाजे खुले है। राष्ट्र निर्माण व आर्थिक विकास में महिलाओं का योगदान वर्तमान में महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

महिलाओं में समानता की भावना विकसित करने एवं चेतना जागृत करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा वर्ष 1975 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष की घोषणा की गई। आज समाज के प्रत्येक क्षेत्र में महिलओं की भागीदारी देखी जा सकती है। फिर भी भारत जैसे पुरूष प्रधान देश में महिलाओं की आकाक्षाओं को सामाजिक बंधन के कारण साकार रूप नहीं मिल सका है। आर्थिक तंगी के कारण महिलाओं को मानसिक श्रम के अलावा शारीरिक श्रम भी करने को बाध्य होना पड़ता हैं, जिसके लिए उनकी अशिक्षा, प्रशिक्षक और दिशा, निर्देश का अभाव है।

भारत में सबसे अधिक महिलाएँ कृषि खनन जैसे प्राथमिक क्षेत्रों में काम करती हैं। कृषि के साथ अन्य आर्थिक क्षेत्रों में महिलाओं की सहभागिता बढ़ रही है। महिला श्रम मानवीय समाज का महत्वपूर्ण अंग हैं। जिसके माध्यम से समाज के सांस्कृतिक मूल्यों का निर्वहन होता है और आर्थिक संरचना की निर्माण प्रक्रिया प्रस्फुटित होती है। ऐतिहासिक विकास के साथ-साथ महिलाओं के सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थिति और जीवन शैली में आंशिक सुधार हुआ है। भारतीय समाज में महिलाओं के आर्थिक परिस्थितियों का निरूपण करने के लिए आवश्यक है कि संपूर्ण उत्पादन संरचना में महिला श्रम और उसकी सहभागिता को विवेचन किया जाए। गोरे का कथन महत्वपूर्ण है, जिसमें उन्होने लिखा हैं कि परिवार में स्त्री के छोटे दर्जे का संबंध आर्थिक कार्यो से उसके अलग रखे जाने से हैं। किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए उद्यमिता अति आवश्यक तत्व है। यह सर्वमान्य तथ्य हैं कि कोई भी देश उपलब्ध मानव संसाधनों का पूर्ण उपयोग करके ही आर्थिक विकास के लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। चूँकि मानव का आधा भाग महिलाएं होती है। इसलिए कोई राष्ट्र महिलाओं की सहभागिता के बिना आर्थिक विकास का सपना पूरा नहीं कर सकता हैं। इसलिये प्रत्येक राष्ट्र में आर्थिक विकास की गति को प्रोत्साहित करने में महिलाओं की भूमिका बढ़ती जा रही है। जहाँ तक भारत का प्रश्न हैं यहाँ पर आदिकाल से महिलाएँ उपेक्षित रही हैं उनका कार्यक्रम का दायरा घर परिवार तक ही सीमित रहा हैं सत्यता यह हैं कि महिलाओं के अपने घर परिवार तक सीमित रहने के दृष्टिकोण में परिवर्तन आया है। आज उद्यमिता के क्षेत्र में महिलाएं प्रबंध, संचालन व सहभागिता के क्षेत्र में तीव्र गति से सफलता प्राप्त कर रही हैं।

भारत की सामाजिक मान्यताओं के अनुसार महिला का स्थान एवं कार्यक्षेत्र घर की चारदीवारी तक ही सीमित है, किन्तु आदिकाल से ही वह पुरूषों से आवश्यकता पड़ने पर पीछे नहीं रही। विकसित देशों में महिलाओं पुरूषों के साथ बिना भेदभाव के कार्य करती रहती है, जबकि भारत जैसे विकासशील देश में प्रयासरत है। शिक्षा प्रशिक्षण एवं आवश्यक दिशा निर्देश जैसे-जैसे महिलाओं में विकसित हो रहा हैं। क्रमश: कृषि, पशुपालन के अतिरिक्त औद्योगिक एवं तृतीयक क्षेत्रों में भी महिला श्रमिकों की भागीदारी बढ़ी है।

भारत सरकार ने महिला उद्यमिता को परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया है कि महिला के अधिपत्य एवं नियंत्रण वाली कोई भी संस्था जिसका कम से कम पूँजी का 51 प्रतिशत लाभ महिला को प्राप्त हो तथा संस्था द्वारा उपलब्ध रोजगार का 51 प्रतिशत महिलाओं को प्राप्त हो तो इस संस्था को महिला उद्यमिता से संबंधित माना जा सकता हैं।

महिलाएँ परिवार की धुरी होती हैं, उन्हें आर्थिक स्वावलंबलन प्रदान करने और विकास में हिस्सेदारी बनाए रखने के लिए उद्यमिता के क्षेत्र में प्रवेश करना अंत्यत आवश्यक हैं उद्यमिता के क्षेत्र में महिलाओं की सहभागिता निश्चित रूप में भारत के औद्योगिक व आर्थिक विकास में सहायक सिद्ध होगी। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 1,210,854,977 हैं इसमें महिलाओं की जनसंख्या करीब 58.65 करोड़ है। म.प्र. की कुल जनसंख्या 72,626,809 हैं, जिसमें महिलाएँ 35,014,503 है। महिलओं की इस विशाल जनसंख्या को अनदेखा कर देश एवं प्रदेश के आर्थिक समृद्धि की कल्पना नहीं की जा सकती हैं। मानवीय संसाधन के इस बडे भाग को सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक हर दृष्टि से समर्थ करके ही विकास के लक्ष्यों को पाया जा सकता है। 2011 की जनगणना के अनुसार 59.24 प्रतिशत महिलाएं साक्षर है। यह आँकड़ा 1971 में 22 प्रतिशत तथा 1991 में 39 प्रतिशत था। 31 महिलाएं 2008 में भारतीय प्रशासनिक सेवा के लिये चुनी गई जबकि 2007 में यह आँकड़ा 18 प्रतिशत तक सीमित था। 2014 में हुए आम चुनाव में 12.15 प्रतिशत महिलाएं बतौर सासंद चुनी गई। अब तक चुनी गई महिला सांसदों में 66 महिला सांसद की यह सबसे बड़ी संख्या है।आज महिलाए प्रत्येक क्षेत्र में अपने को साबित कर रही है। आज महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिये एवं देश के आर्थिक विकास के लिए महिलाओं की भागीदारी बहुत आवश्यक हो गई है, सरकार महिलाओं के प्रोत्साहन के लिये समय-समय पर विशेष

*शोद्यार्थी (अर्थशास्त्र) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

योजनाए भी बनाती है।

उद्यम जीवन का एक आवश्यक एवं महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं। यह मात्र धन सृजन का एक तरीका ही नहीं है वरन् व्यक्ति विकास एवं समग्र सामाजिक, आर्थिक विकास का 'गुरूमंत्र' है। जो आत्मनिर्भरता एवं आत्म सहायता के साथ बेहतर रूप से मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति का मार्ग प्रशस्त करता हैं तथा यह मानवीय प्रेरणाओं की अभिव्यक्ति का एक सशक्त मार्ग प्रदान करना है, यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि उद्यमशीलता एक तकनीक कौशल एवं चिंतन के साथ जीवन पद्धति भी है।

'महिलाओं की सृजनात्मक ऊर्जा विभिन्न सहायता व प्रेरणात्मक योजनाओं से आर्थिक विकास की नई दिशा का दिग्दर्शन कराती है।' महिलाओं के लिए विशिष्ट प्रेरणाए व योजना महिलओं की विशिष्ट आवश्यकताओं को देखते हुए तथा महिलओं की उद्योग/स्वरोजगार द्वारा केवल महिलाओं हेतू कुछ विशिष्ट योजनायें प्रतिपादित की जाती है। प्रेरणात्मक मार्गदर्शन सहायता तथा अनुदान कार्यक्रमों से बदलाव भी आया हैं।

यह योजना केवल महिला उद्यमियों हेतु हैं। भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिड़वी) द्वारा प्रवर्तित इस योजना का संचालन म. प्र. वित्त निगम द्वारा किया जाता हैं। इसके अन्तर्गत यदि महिला उद्यमी द्वारा स्थापित की जाने वाली इकाई की लागत 10 लाख रूपये तक हैं, तो उसे अपनी ओर से केवल 10 प्रतिशत मार्जिन मनी लगानी होगी तथा निगम द्वारा चाही गई मार्जिन मनी का कोष भाग (अधिकतम 15 प्रतिशत) महिला उद्यमी को ब्याज के रूप में दिया जा सकता है।

वर्तमान में केन्द्रीय सरकार और म.प्र. सरकार द्वारा विभिन्न योजनाओं के माध्यम से महिला उद्यमिता को प्रोत्साहन दिया जा रहा है, जिसमें मुख्यत: महिला को जागरूक करना एवं स्वरोजगार के लिए प्रेरित करना है। इसी प्रकार की योजना शासन द्वारा 1 अप्रैल 2003 में सम्पूर्ण राज्य में रानी दुर्गावती स्वरोजगार के नाम से अनु.जाति एवं अनु. जनजाति के लिए प्रारम्भ की गई, जिसका उद्देश्य उन्हें स्वरोजगार के माध्यम से आर्थिक कल्याण करते हुए उनके सामाजिक एवं आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाना हैं। ऐसी ही अन्य योजनाओं के बारे में अध्ययन करना भी शोध का उद्देश्य रहेगा, जैसे- प्रियदर्शनी योजना, सेन्ट कल्याणी योजना, सिड़वी सहायता योजना, इक्विटी योजना, स्टेप योजना, राष्ट्रीय महिला कोश, पंचधारा योजना, आयुष्मति योजना, सामजिक सुरक्षा योजना, कल्पवृक्ष महिला उद्यमी निधि सीड़ केपीटल की सुविधा या अन्य प्रेरणाएं आदि। उक्त सभी योजनाएं मुख्यत: महीलाओं को उद्यमि कार्य के लिए प्रेरित करने एवं सामाजिक रूप से सुदृढ़ बनाने के लिए प्रारम्भ की गई हैं।

उद्देश्य – स्वाधीनता के 70 वर्ष बीत जाने पर भी महिला उद्यमिता का विकास वांछित तीव्रता से नहीं हुआ है इस कमी का कारण क्या हैं? अतीत में हुई कमियों को पूर्ण करने के लिए क्या किया जाना चाहिए? इस शोध में इन्हीं सब बातों पर चर्चा की गई है। राष्ट्रीय राज्य एवं ग्राम स्तर पर महिला उद्यमिता के उन्नयन तथा सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक एवं संस्थापक अवरोधों को पार करने के लिये इस क्षेत्र में निरंतर शोध की आवश्यकता हैं।

- महिला स्वरोजगार मूलक योजनाओं से लाभन्वित हितग्राहियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- महिला स्वरोजगार मूलक योजनाओं के संचालन में आने वाली समस्याओं का विश्लेषणकरना।
- महिला स्वरोजगार मूलक योजनाओं में समस्या के सुधार हेतु उचित सुझाव देना।
- रीवा जिले की कुल आबादी में निम्न आय वर्ग विस्तृत विश्लेषण करना।
- महिला स्वरोजगार मूलक योजनाओं हेतु सरकार द्वारा प्रदान किए गए अनुदानों की व्याख्या करना।
- महिला स्वरोजगार मूलक योजनाओं से सम्बन्धित वैधानिक पहलुओं को सामने लाना।
- महिलाओं की आर्थिक, सामाजिक स्थिति और समाज में उनकी हैसियत को उठाने के लिए आर्थिक आत्मनिर्भरता के साधन के रूप में विकसित करना।
- महिला उद्यमियों की क्षमता, दक्षता तथा गुणों का विकास करने, उनकी व्यवसायिक श्रृंखला को मजबूत करने हेतु सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थानों द्वारा बनाई गई योजनाओं का अध्ययन करना।
- वर्तमान समय में महिला उद्यमिता से संबंधित आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक एवं मनोवैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर अध्ययन कर आर्थिक विकास में महिला उद्यमिता के योगदान का विस्तृत विश्लेषण करना।

शोध क्षेत्र से संबंधित पूर्व में किये गये शोधों की संक्षिप्त समीक्षा– जहाँ तक मुझे ज्ञात है महिला उद्यमिता समस्या, समाधान एवं विकास की भावी समभावनाएँ विषय पर वर्तमान में कुछ शोध पत्र शोध पत्रिकाओं एवं सेमिनार की स्मारिका आदि में अवश्य प्रकाशित हुए है। किन्तु बृहद स्तर पर पी.एच.डी. कि लिए कोई शोध कार्य रीवा जिले में अब तक नहीं किया गया है। इसीलिए शोधार्थी द्वारा इस विषय को चुना गया है। ताकि देश और प्रदेश में महिला उद्यमियों की समस्याओं को दूर कर उनके लिए एक सुविधाजनक मार्ग प्रशस्त किया जा सके, जिससे कि महिला उद्यमी देश के विकास में अपना पूर्ण योगदान दे सके।

महिला उद्यमी के बढ़ते कदम (भारतीय परिवेश में) जिस व्यवसाय में महिलाओं का स्वामित्व, प्रबन्ध और नियन्त्रण होता है उसे महिला उद्यमी कहते हैं कि यदि देश की समृद्धि, संस्कृति, आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना है तो पहले उस देश की महिलाओं का अध्ययन करना चाहिए यदि महिलाए सुखी-सम्पन्न व समृद्ध हैं तो देश भी उतना ही सुखी-सम्पन्न व समृद्ध होगा। बड़ी-बड़ी कम्पनीज के मैनेजिंग डायरेक्टर के पद से लेक संस्थाओं के प्रबंध, संचालन को महिला उद्यमी व खूबी निभा रही हैं, कुछ ऐसे ही महिला उद्यमी के बारे में विशेष जानकारी निम्न हैं - (विशेष रूप से भारतीय परिवेश में)

विनीता वाली – ब्रिटानिया इण्डस्ट्रीज की मैनेजिंग डायरेक्टर और सीईआ कारोबार की दुनिया में शीर्ष पर है। इकोनोमिक्स टाइम्स की तरफ से 2009 में उन्हें विजनस वीमन ऑफ द ईराक के खिताब से भी नवाजा गया है।

चन्द्रा कोचर – जन्म 17 नवम्बर 1961 एम.बी.ए., एम.ए. (मैनेजमेन्ट स्टडी) मुम्बई, एम.डी. सी.ई.ओ. आई.सी.आई.सी.आई. बैंक, भारत। चन्द्रा कोचर को फोर्ब्स पत्रिका ने दुनिया की सौ सर्वाधिक शक्तिशाली महिलाओं में से माना है।

किरण एम शॉ – जन्म 23 मार्च 1953 (बेंगलोर) देश की एक मात्र बॉयोटेक क्वीन। विश्व मानचित्र पर बायोटेक्नोलॉजी के क्षेत्र की एकमात्र महिला हैं किरण एम शॉ का मानना है कि क्षमता व विजन हो तो महिला व पुरूष के भेद समाप्त हो जाते हैं।

शिखा वर्मा – एम.डी. सी.ई.ओ. एक्सिस बैंक, बैंक को ऊँचाईयों पर पहुँचाने में शिखा वर्मा की कड़ी मेहनत व लगन साफ दिखती हैं।

इसके साथ ही साथ हम अन्य आँकड़े देखते हैं कि शिक्षा, व्यवसाय, बैंक, विनिर्माण, चिकित्सा, पर्यावरणविद् आदि क्षेत्र में भी महिलाएँ उभरकर सामने आ रही हैं। राजस्थान में सलाना 03 से 30 लाख रूपये तक महिला सी.ए. अपना बेहतर वेतन पा रही हैं। धीरे–धीरे महिलाएँ आत्मनिर्भर हो रही हैं एवं राष्ट्र के विकास में सहयोगी बन रही हैं।

शोध के क्षेत्र में प्रस्वावित शोध का महत्व – प्रस्तुत शोध अध्ययन द्वारा म0 प्र0 के रीवा जिले के महिला उद्यमियों की प्रमुख समस्याओं, उनके कार्यो में आने वाली रूकावटों का कारण एवं उसके निदान के प्रयास प्रस्तुत करने के साथ सम्पूर्ण रीवा जिले के सामाजिक एवं आर्थिक संरचना एवं महिला उद्यमी के जीवन स्तर पर पड़ने वाले बदलाव का विश्लेषण किया जावेगा।

समान्यत: उद्यमिता, लिंग के आधार पर पुरूष एवं महिलओं में कोई भेदभाव नहीं करती हैं। फिर भी पुरूषों की तुलना में महिलाओं को उद्यमिता के क्षेत्र में अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अनेक कठिनाइयों को सहने, बाधाओं को जूझने के बाद महिलाएँ, पहले से अधिक सशक्त होकर जागरूक हुई है जिसके परिणामस्वरूप उद्यमिता के क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी हैं और सफलता की दृष्टि से महिला उद्यमियों की संख्या में निरंतर वृद्धि हुई है जो केवल महानगरों या नगरों में सीमित न होकर इसकी झलक ग्रामीण अंचलों में भी दिखाई देने लगी हैं। इससे भविष्य में महिला उद्यमियों के उज्जवल भविष्य की असीम संभावनाएँ दृष्टिगोचर हो रही हैं।

इस अध्ययन से सरकारी योजनाओं द्वारा प्राप्त हितग्राहियों एवं स्वरोजगार प्राप्त महिला उद्यमियों के विषय में जानकारी प्राप्त की जा सकेगी। महिला उद्यमिता एवं स्वरोजगारमूलक योजनाओं के माध्यम से गरीब महिलओं के लिए अवसर उपलब्ध होगे तथा नयी आर्थिक गतिविधियों में सहभागिता भी बढ़ जाएगी जिससे वे अपने आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम होगी। अब तक महिलायें कुटीर तथा लघु उद्योगों के द्वारा परिवार के सदस्यों को ही रोजगार प्रदान कर रही है। लेकिन महिला उद्यमिता के परिणामस्वरूप बदली हुई वैश्वीकरण की परिस्थितियों में उनकी क्षमता का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उपयोग किया जा सकेगा।

उपकल्पना – इस शोध पत्र में निम्न उपकल्पनाएँ ली गयी है –

1. महिलाओं की शिक्षा का विस्तार होने से उद्यमिता के प्रति जागरूकता आयी है।
2. महिलाएं अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति सजग हुई है और समाज में उद्यमिता के जरिए विशिष्ट स्थान बनाने की ललक उनमें पैदा हुई हैं।
3. महिला उद्यमि पुरूषों की तुलना में उच्च कोटि की प्रबंधकीय क्षमता वाली होती है।
4. गृह कार्य के प्रति समर्पण का उन भाव उद्योग के क्षेत्र में भी वैसा ही बना रहता है।

1. साक्षात्कार अनुसूची।
2. प्रश्नावली
3. अभिलेख अध्ययन

इसके पत्तत् प्राप्त आंकड़ों का उद्देश्य पूर्ण सारणीयन एवं विश्लेषण किया जायेगा। यथा संभव सांख्यिकीय एवं जनांनकीय स्थिरांकों की गणना की जायेगी। ताकि अध्ययन एवं विश्लेषण उद्देश्यपूर्ण एवं सार्थक हो सके।

6. प्रस्तावित शोध से संभावित निष्कर्ष – महिला उद्यमी की प्रमुख समस्या हमारा सामाजिक ढांचा एवं धार्मिक क्रियाकलाप है जिसके कारण महिलाओं को बाहर काम करने से मना किया जाता है। इसलिए महिलाओं एवं पुरुषों में भेदभाव किया जाता है। महिलाओं की शिक्षा पर भी खास ध्यान नहीं दिया जाता है, किन्तु आज सरकारी नीतियों एवं महिला संबंधी कानूनों के चलते महिलाओं की सोच में परिवर्तन आया है। महिलाएं पहले की अपेक्षा अब ज्यादा शिक्षित हो रही है। महिलाओं को सशक्तिकरण के माध्यम से उद्यमी कार्यो में संलग्न किया जा रहा है, महिला जागरुकता के कारण महिलाएं अपने अधिकारों को पहचान रही और प्रग्रति के मार्ग पर आगे बढ़ रही हैं। आज हम देखते हैं कि महिलाओं ने सामाजिक रुढ़ियों को तोड़कर समाज में स्वतंत्र होकर जीना सीख लिया है, जिसका प्रमुख कारण उनका आत्म निर्भर होना है। आज महिलाएं पुरुषों के बराबर कमा रही हैं और जीवन का निर्वहन सफलतापूर्वक कर रही हैं। इस शोध कार्य में उन महिलाओं का भी अध्ययन किया जाएगा जो देश विदेश में अपना नाम ऊंचा कर रही है, जिससे प्रेरित होकर अन्य महिलाओं को उद्यमी कार्यों में संलग्न होने के लिए प्रेरित किया जा सकेगा। महिला उद्यमियों की सहभागिता में वृद्धि करके बड़ी उन्नति के द्वारा खोले जा सकते हैं। इस शोध में सरकारी नीतियों महिला संबंधी विकास कार्यक्रमों का भी अध्ययन किया जाएगा ज्ञात हो सके कि शासन की योजनाओं का वास्तविक लाभ महिला उद्यमियों को मिल पा रही है अथवा नहीं। महिलाओं की जो उद्यमी कार्यों में संलगन हैं सामाजिक प्रबंधकीय, वित्तीय एवं संस्थागत समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया जाएगा जिससे महिला उद्यमियों का मार्गदर्शन किया जा सके। पुरुषों की भांति महिलाएं भी देश के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकें।

संदर्भ गंथ सूची :–

1. मिश्रा डी. एन. इण्टरप्रिन्योरियल डेवलपमेन्ट एण्ड प्लानिंग इण्डिया युग पब्लिकेशन।
2. कुलश्रेष्ठ रघुवीर सहाय 1990 औद्योगिक अर्थशास्त्र साहित्य भवन आगरा।
3. हसन मोजम्मिल आरजू भारतीय महिला एवं आधुनिकीकरण, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली
4. अग्रवाल, मुखर्जी 2007 सामाजिक सर्वेक्षण व शोध, विवेक प्रकाशन दिल्ली।
5. शर्मा प्रज्ञा महिला विकास और सशक्तिकरण, अविष्कार पब्लिशर्स जयपुर।
6. डॉ. दयानन्द चौरसिया 2016 'मध्यप्रदेश में स्वरोजगार मूलक योजनाओं का आर्थिक विश्लेष्णात्मक अध्ययन'(रीवा जिले के विशेष सन्दर्भ में)' अप्रकाशिक शोध प्रबंध, अ.प्र. सिंह विश्वविद्यालय रीवा।
7. डॉ. एस. डी. सिंह (2008) 'शासन द्वारा संचालित महिला रोजगार के सम्भावनाओं के प्रति महिलाओं के दृष्टिकोण'
8. डॉ. योगेन्द्र पाण्डेय (2015) 'शासकीय रोजगार योजनाओं के वित्तीय प्रबंधन का अध्ययन' (रीवा जिले के लाभान्वित हितग्राहियों के विशेष संबंध में) अप्रकाशिक शोध प्रबंध, अ.प्र. सिंह विश्वविद्यालय रीवा।
9. अग्रवाल, मुखर्जी 2007 सामाजिक सर्वेक्षण व शोध, विवके प्रकाशन दिल्ली।
10. बोहरा आशा भारतीय नारी दशा और दिशा नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
11. डॉ. अग्रवाल के.बी. एवं. उद्यमिता विकास रामप्रसाद एण्ड सन्स भोपाल। डॉ. पाठक अभय

12. डॉ. सिन्हा बी.सी. एवं औद्योगिक अर्थशास्त्र, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद सिन्हा पुष्पा 2008
13. सुधा जी. एल. व्यवसायिक प्रबंध के सिद्धांत एवं उद्यमिता।
14. प्रसाद भगवान इन्टरप्राइजेज फार वूमेन सोशल वेलफेयर।
15. देवी ललिता 1983 स्टेटस ऑफ एम्प्लॉयमेन्ट ऑफ वूमेन इन इण्डिया, बी.आर. पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
16. स्वप्निल सारस्वत महिमा विकास– एक परिदृश्य नमन प्रकाशन नई दिल्ली।
17. वर्मा. एम. के. 1992 वूमेन एन एग्रीकल्चर, कान्सेप्ट पब्लिकेशननई दिल्ली।

पत्रिकाएं –

1. उद्यमिता समाचार पत्र – उद्यमिता केन्द्र म.प्र. जहांगीराबाद भोपाल।

****

भारत में लैंगिक असमानता – एक अध्ययन

डॉ. शक्ति जैन *

प्रस्तावना – लैंगिक असमानता से तात्पर्य 'लैंगिक आधार पर महिलाओं के साथ भेदभाव होना।' समाज में परम्परागत रूप से महिलाओं को कमजोर जाति वर्ग के रूप में माना जाता है वह पुरूषों की अधीनस्थ स्थिति होती है वो घर और समाज दोनों में शोषित, अपमानित और भेदभाव से पीड़ित होती है।

सितम्बर 2018 के संयुक्त राष्ट्र महासभा की उच्च स्तरीय बैठक में एजेंडा 2030 के अन्तर्गत सतत् विकास लक्ष्यों को रखा गया, जिसे भारत सहित 193 देशों ने स्वीकार किया इन लक्ष्यों में लैंगिक समानता को भी शामिल किया गया, जो यह स्पष्ट करता है कि किसी भी देश में समाज के विकास के लिए लैंगिक समानता कितनी आवश्यक है। सम्मान और अधिकार के भाव से वंचित महिलाए समाज में व्याप्त लैंगिक असमानता के लिए एक बड़ी चुनौती है समानता को पाने के लिए किए गए सरकार के प्रयास, आधी आबादी के लिए बेहतर जिंदगी सुनिष्चित करने के प्रयास तभी सफल हो सकते हैं जब समाज की मानसिकता में परिवर्तन लाकर लैंगिक असमानता की खाई को पाटा जा सके।

बाल–लिंगानुपात में गिरावट, पक्षपातपूर्ण तरीके से लिंग चयन की परम्परा और बाल विवाह इन सभी से पता चलता है कि लैंगिक भेदभाव और लैंगिक असमानता किस हद तक भारत के लिए चुनौती बनी हुई है। भारत देश में लिंग आधारित भेदभाव बहुत व्यापक स्तर पर काम कर रहा है जन्म से लेकर मृत्यु तक, शिक्षा से लेकर रोजगार तक हर जगह लैंगिक भेदभाव दिखाई देता है, इस भेदभाव को कायम रखने में सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक पहलू बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

यू0एन0डी0पी0 के लिंग असमानता सूचकांक 2014 में 152 देशों की सूची में भारत की स्थिति 127 वें स्थान पर है। इसी तरह विश्व आर्थिक मंच के वैश्विक लिंग अंतराल सूचकांक 2014 में विश्व के 142 देशों की सूची में भारत 114 वें स्थान पर है। इसी तरह वर्ल्ड इकानामिक फोरम द्वारा 2017 के ग्लोबल जेंडर गैप इंडेक्स में भारत 144 देशों की सूची में 109 नम्बर पर आता है। ये सभी सूचकांक बताते हैं कि हमारे देश में लैंगिक भेदभाव की जडे कितनी मजबूत और गहरी है। ये सूचकांक चार प्रमुख क्षेत्रों में लैंगिक अंतर की जांच करता है। (1) आर्थिक भागीदारी और अवसर (2) शैक्षिक उपलब्धियॉ (3) स्वास्थ्य और जीवन प्रत्याषा (4) राजनीतिक सशक्तीकरण। इन सभी सूचकांकों के अन्तर्गत भारत की स्थिति इस प्रकार है – (1) आर्थिक भागीदारी और अवसर – 134 (2) शैक्षिक उपलब्धियॉ– 126 (3) स्वास्थ्य और जीवन प्रत्याषा–141 (4) राजनीतिक सशक्तीकरण–15

लिंग असमानता कई तरह प्रकट होती है और भारत में जो सूचकांक सबसे अधिक चिन्ता का विषय है वो निम्न है –

(1) कन्या भ्रूण हत्या एवं कन्या बाल हत्या
(2) बच्चों का लिंग अनुपात (0 से 6) – 919
(3) लिंग अनुपात – 943
(4) महिला साक्षरता – 65.46 प्रतिशत
(5) मातृ मृत्यु दर का अधिक होना– 1 लाख में 174 महिलाओं की मृत्यु

इनमें कन्या भ्रूणहत्या और बाल हत्या ये सभी अमानवीय कार्य है जो बहुत शर्मनाक है, ये सभी प्रथाएं भारत में बड़े पैमाने पर प्रचलित है। मैकफर्मन द्वारा किए गए एक शोध के आंकड़े प्रदर्शित करते हैं कि भारत में लगभग 1,00,000 अवैध गर्भपात हर वर्ष केवल इसलिए होते हैं क्योंकि गर्भ में पल रहा भ्रूण लड़की का है।

कुल जनसंख्या का लिंगानुपात एवं 0–6 वर्ष की आयु समूह में बच्चों लिंग अनुपात का अध्ययन निम्न तालिका द्वारा किया जा सकता है।

तालिका क्र. 1

जनगणना वर्ष	कुल जनसंख्या का लिंगानुपात	0–6 वर्ष के बच्चों का लिंग अनुपात
1961	941	976
1971	930	964
1981	934	962
1991	937	945
2001	933	927
2011	940	914

स्रोत्र – सेन्सस आफ इंडिया।

तालिका में 0–6 वर्ष के बच्चों के लिंगानुपात का गिरता हुआ सूचकांक बताता है कि यह चिन्ता का विषय है। लिंग परीक्षण के प्रतिबंधों एवं प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम (1994) के बावजूद भी गिरावट आना एक देश के लिए शर्मनाक स्थिति है। वर्तमान सरकार द्वारा 22 जनवरी 2015 को बेटी बचाओ – बेटी पढ़ाओं योजना का प्रारंभ इस गिरते हुए बाल लिंगानुपात को देखकर किया है। इस योजना के प्रारंभ में सभी राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों के 100 जिलों को शामिल किया गया है। इस अभियान के जरिये प्रधानमंत्री जी ने देश की आधी आबादी को उनका मूलभूत अधिकार दिलाने की दिशा में एक नई पहल की है। यह योजना एक महत्वपूर्ण सामाजिक योजना है जिसका उद्देश्य लोगों में बेटियों के जन्म से सम्बंधित जो रूढ़िगत धारणा है उसे तोड़ना है।

महिला साक्षरता का प्रतिशत भी बढ़ा है परन्तु पुरूषों की तुलना में बहुत कम है, जिसे निम्न तालिका द्वारा देखा जा सकता है –

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

तालिका क्र. 2

भारत में पुरूष व महिला साक्षरता दर 1951–2011

जनगणन वर्ष	जनसंख्या में साक्षरता प्रतिशत			पुरूष महिला
	पुरूष	महिलाएं	व्यक्ति	अंतर
1951	27.2	8.9	18.3	18.3
1961	40.4	15.4	28.3	25.0
1971	46.0	22.0	34.4	24.0
1981	56.4	29.8	43.6	26.6
1991	64.1	39.3	52.2	24.8
2001	75.3	53.7	64.8	21.6
2011	82.1	65.5	74.0	16.7

स्रोत्र – सेन्सस आफ इंडिया ।

इस तरह ये सभी संकेतक लिंग समानता और महिलाओं के मूलभूत अधिकारों की ओर से भारत की निराशाजनक स्थिति को प्रदर्शित करते हैं। भारत में महिलाओं के साथ भेदभाव प्रत्येक क्षेत्र में किया जाता है, चाहे वह रोजगार का क्षेत्र हो, शिक्षा का क्षेत्र हो, घरेलू क्षेत्र हो सामाजिक हो।

लैंगिक असमानता के कारण –

- भारत में लैंगिक असमानता का मूल कारण पितृसात्तत्मक व्यवस्था में निहित है, प्रसिद्ध समाजशास्त्री सिल्विया वाल्वे के अनुसार 'पितृसत्तत्मकता सामाजिक संरचना की ऐसी प्रक्रिया और व्यवस्था है जिसमें पुरूष महिला पर अपना प्रभुत्व जमाता है, उनका दमन करता है और उसका शोषण करता है' महिलाओं का शोषण भारतीय समाज की सदियों पुरानी सांस्कृतिक घटना है। महिलाओं के साथ घरेलू हिंसा की घटनाएं भी बहुत होती है। पिछले 10 वर्षो में भारत में महिलाओं के खिलाफ घरेलू हिंसा देश में सबसे अधिक हिंसक अपराध रहा है। हर पांच मिनट में घरेलू हिंसा की एक घटना दर्ज होती है।
- भारतीय समाज में लैंगिक असमानता का दुर्भाग्यपूर्ण कारण महिलाएं स्वयं भी है। प्रचलित सामाजिक – सांस्कृतिक स्थितियों के कारण उन्होंने पुरूषों के अधीन अपनी स्थिति को स्वीकार कर लिया है।
- लैंगिक असमानता का एक कारण देश में अत्यधिक गरीबी और अशिक्षा भी है। शिक्षा की कमी के कारण बहुत सी महिलायें कम वेतन पर घरेलू कार्य करने, संगठित वैश्यावृत्ति का कार्य करने, प्रवासी मजदूरी के रूप में कार्य करने के लिए मजबूर होती हैं तथा रोजगार के क्षेत्र में पुरूषों से कम वेतन देना, प्रमोशन न देना ऐसे कई तरह के भेदभाव भी देखे जाते हैं। महिलाओं को न केवल असमान वेतन या अधिक कार्य कराया जाना तथा उनके लिए कम कौशल की नौकरियां देना यह भी लिंग के आधार पर असमानता का एक प्रमुख रूप बन गया है।
- लड़की को बचपन से शिक्षित करना अभी भी एक बुरा निवेश माना जाता है। जबकि विश्व बैंक के अर्थशास्त्री प्रो0 समर्स ने एक आकलन कर बेटी शिक्षा के प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष लाभ बताये हैं उनके अनुसार 'भारत में एक सौ बालिकाओं को शिक्षा उपलब्ध कराने में 32 हजार अमेरिकी डालर खर्च आएगा जबकि इस धन के एवज में 43 शिशुओं और दो माताओं की मृत्यु रूकेगी एवं 300 जन्म रूकेंगे। इन लाभों का मूल्य 52 हजार डालर होगा इसके अतिरिक्त उत्पादकता पर जो सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा वह बोनस के रूप में होगा।'

भारत में लैंगिक असमानता व भेदभाव है साथ ही महिलाओं के प्रति बढ़ते अपराध एक बहुत ही चिन्तनीय विषय है। बलात्कार के केस ही लिए जाए तो भारत में हर एक घंटे में 22 बलात्कार के मामले दर्ज होते हैं। दैनिक भास्कर 12 अगस्त 2018 में अंकित था कि देश में पांच साल में 61 प्रतिशत दुष्कर्म बढ़े जिनमें नाबालिग से जुड़े मामले में 133 प्रतिशत की बृद्धि हुए प्रतिदिन 46 नाबालिग दुष्कर्म का शिकार हो रहीं है।

लैंगिक असमानता दूर करने व महिला सशक्तीकरण के लिए संवैधानिक प्रावधान व सरकारी प्रयास – लैंगिक असमानता को दूर करने के लिए भारतीय संविधान में अनेक सकारात्मक कदम उठाये हैं – अनुच्छेद 14 – राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक क्षेत्रों में समान अधिकार एवं अवसर पर बल, अनुच्छेद 15 – लिंग, धर्म, जाति के आधार पर भेदभाव वर्जित, अनुच्छेद – 19 विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अनुच्छेद – 39 समान कार्य के लिए समान वेतन, अनुच्छेद – 51 ऐसी प्रथा का त्याग जो स्त्रियों के विरूद्ध हो, अनुच्छेद – 243 प्रत्येक पंचायत, नगर पालिका में एक तिहाई आरक्षण महिलाओं के लिए। इसके अतिरिक्त कई कानून – समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, वेश्यावृत्ति निवारण अधिनियम 1966, सतीप्रथा निरोधक अधिनियम 1987, प्रसवपूर्व निदान तकनीकी अधिनियम 1994, घरेलू हिंसा रोकथाम अधिनियम 2005, हिन्दू मातृत्व अवकाष संशोधन आदि लागू हैं। इसके अतिरिक्त केन्द्र सरकार द्वारा महिलाओं के समग्र विकास के लिए कई योजनाए वन स्टाप सेंटर (ओ एस सी), शी–बाक्स आनलाइन शिकायत प्रबंधन योजना, उज्जवला योजना, स्वर्णिम योजना, राष्ट्रीय पोषाहार मिशन, जननी सुरक्षा योजना, वंदेमातरम योजना, बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओ, सुकन्या समृद्धि योजना आदि बहुत सी योजनाएं महिलाओं व बालिकाओं के विकास के लिए हैं।

संवैधानिक प्रावधान व अधिनियम एवं ढेरों योजनाएं तभी सार्थक होगी जब उनकी जानकारी महिलाओं को होगी तथा कानूनों का सख्त से पालन होगा। समाज को जिसमें पुरूषों को अपनी मानसिकता बदलनी होगी समाज की मानसिकता में परिवर्तन लोकर ही लैगिक असमानता की खाई को पाटा जा सकता है। समाज के लोगों के मन में पहले से बैठे हुए विचार और रूढ़िवादिता को छोड़ना होगा। महिलाओं की सोंच में परिवर्तन करना होगा, महिलाओं को शिक्षित वा आत्मनिर्भर करकर तथा प्रत्येक स्तर पर जागरूकता लाकर ही इन सभी योजनाओं का लाभ लिया जा सकता है। यदि भारत देश को अपना विकास करना है तो महिलाओं का विकास किये बिना विकास नहीं हो सकता। अत: स्वामी विवेकानंद जी का कथन कि 'जब तक महिलाओं की स्थिति नहीं सुधरेगी तब तक दुनियां में कल्याण की कोई संभावना नहीं है। यह कथन आज भी सत्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. योजना पत्रिका – जनवरी 2016, सितम्बर 2016, अगस्त 2018
2. कुरूक्षेत्र – जनवरी 2018
3. जनसंख्या वृद्धि एवं आर्थिक विकास – डॉ0 ओमप्रकाश सिंह
4. मानवाधिकार और महिलायें – म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी
5. दैनिक भास्कर समाचार पेपर
6. www.equardian.co.in
7. in one un.org/gender equality and youth.

'ग्रामीण विकास प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना का कृषि में आधुनिकीकरण पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन' (धार जिले के विशेष सन्दर्भ में)

मंजुला मण्डलोई *

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि आधारित अर्थव्यवस्था है, जिसकी 68.84 प्रतिशत जनसंख्या गांवो में निवास करती है। सड़के किसी भी गांव या देश की आधारभूत सुविधा का एक महत्वपूर्ण अंग है यदि गांव में सड़के न हो तो ग्रामीण विकास की कल्पना नहीं कर सकते है। क्योंकि सभी मौसमों में परिवहन के लिए अच्छी गुणवत्त वाली सड़कों के अभाव में पर्वतीय क्षेत्र में किसानों के अपने कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए आधुनिक साधन रासायनिक खाद, बीज, दवाईया व कृषि उपकरण– ट्रेक्टर, थ्रेसर इत्यादि का उपयोग नही कर पाते थे, जिससे कि कृषि उत्पादन बहुत कम होता था। लेकिन स्वतंत्रता के पश्चात एक ऐसी प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना केन्द्र सरकार द्वारा लागू की गई जिसका आरम्भ योजना केन्द्र सरकार द्वारा लागू की गई, जिसका आरम्भ पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी द्वारा 25 दिसम्बर 2000 को किया गया है, जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों को बारहमासी सड़कों से जोड़ना ताकि ग्रामीण विकास हो सके।

ग्रामीण सड़क सम्पर्कता गरीबी उन्मूलन का प्रमुख अवयव है। आज जहां सडके नहीं थी, वहां पक्की सड़के है, जिसके कारण कृषि क्षेत्र में उत्पाद को बढ़ाने हेतु आधुनिक साधन रासायनिक खाद, उन्नत बीज, कृषि उपकरण– ट्रेक्टर, थ्रेसर इत्यादि का उपयोग करने से कृषि उत्पादन में वृद्धि हो रही है। जिसका प्रमुख कारण सड़कों का विकास है।

शोध अध्ययन का उद्देश्य – शोध अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य यह है कि –

1. कृषि क्षेत्र में आधुनिक साधनों के उपयोग पर सड़क का कितना प्रभाव पड़ा है तथा किन आधुनिक साधनों के उपयोग पर सड़क का अधिक प्रभाव पड़ा है।

कृषि में आधुनिकीकरण पर सड़क का प्रभाव – कृषि के विकास में आधुनिकीकरण पर सड़क का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। सड़क बनने से ग्रामीणों को यातायात सुविधा मिलने से कृषि के लिए आवश्यक सामग्री का क्रय करने में मदद मिलती है।

इस प्रकार आधुनिक साधन का उपयोग करने की स्थिति की विवेचना तालिका क्रं. 1 में स्पष्ट किया गया है–

तालिका क्रमांक 1**(देखे आगे पृष्ठ पर)**

तालिका क्रमांक से स्पष्ट है कि कृषि में आधुनिक साधन के उपयोग करने की दृष्टि से प्रधानमंत्री ग्राम सड़क बनने के पूर्व 69.24 प्रतिशत न्यादर्श आधुनिक साधन का उपयोग करते थे तथा 30.76 प्रतिशत न्यादर्श आधुनिक साधन का उपयोग नहीं करते थे। जबकि सड़क बनने के पश्चात् 98.46 प्रतिशत न्यादर्श आधुनिक साधनों का उपयोग करते है तथा 1.54 प्रतिशत न्यादर्श आधुनिक साधनों का उपयोग नहीं करते है।

अत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सड़क बनने से 98.46 प्रतिशत न्यादर्श कृषि में आधुनिक साधनों का प्रयोग सर्वाधिक करते है।

इसी प्रकार कृषि में आधुनिक संसाधनों में उन्नत बीज, रासायनिक खाद, कृषि उपरकण इत्यादि शामिल है जिसकी विवेचना तालिका क्रमांक 2 में स्पष्ट है–

तालिका क्रमांक 2 **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

तालिका क्रमांक 2 से स्पष्ट है कि कृषि में आधुनिक साधन के उपयोग की दृष्टि से सड़क बनने के पूर्व हॉ में उत्तर देने वालों में से 67.22 प्रतिशत न्यादर्श का कहना है कि हम उन्नत बीज का उपयोग करते थे, 83.88 प्रतिशत न्यादर्श रासायनिक खाद का उपयोग करते थे। जबकि सड़क बनने के पश्चात् हॉ में उत्तर देने वाले न्यादर्श में से 94.14 प्रतिशत न्यादर्श उन्नत बीज का उपयोग करते है 92.96 प्रतिशत न्यादर्श रासायनिक खाद का उपयोग करते है तथा 78.90 प्रतिशत न्यादर्श आधुनिक कृषि उपकरण का उपयोग करते है। औसत दृष्टि से सड़क बनने के पूर्व 66.66प्रतिशत न्यादर्श सभी प्रकार के कृषि आधुनिक संसाधनों का उपयोग करते थे परंतु सड़क बनने के पश्चात औसत रूप से 88.72 प्रतिशत न्यादर्श सभी प्रकार के कृषि आधुनिक साधनों का उपयोग करते है।

निष्कर्ष – अत: निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि सड़क बनने के पूर्व की तुलना में सड़क बनने के पश्चात् कृषि में आधुनिक साधनों का उपयोग करने की स्थिति में औसत रूप से वृद्धि हुई है। इससे स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना का कृषि में आधुनिकीकरण पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पंत नवीन (2003) 'योजना' प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार द्वारा पटियाला हाऊस, नई दिल्ली, पृष्ठ क्र. 13–14
2. वार्षिक रिपोर्ट (2014–15) राष्ट्रीय ग्रामीण सड़क विकास एजेंसी ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृष्ठ क्र. 1–2

* शोधार्थी, माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.) भारत

तालिका क्रं. 1 में स्पष्ट किया गया है–

तालिका क्रमांक 1

कृषि में आधुनिक साधन के उपयोग करने की स्थिति

क्र.	आधुनिक साधन उपयोग करने की स्थिति	सड़क बनने के पूर्व		सड़क बनने के पश्चात्	
		आवृति	प्रतिशत	आवृति	प्रतिशत
1	हाँ	180	69.24%	256	9846%
2	नहीं	80	30.76%	4	1.54%
	कुल	260	100.00%	260	100.00%

स्त्रोत: सर्वेक्षण पर आधारित समंक

Df=1 का .05 प्रतिशत स्तर पर x^2 3.841<49.80 सार्थकता है, अत: परिणामों में निर्भरता है।

तालिका क्रमांक 2

कृषि में आधुनिक साधन के उपयोग की स्थिति

क्र.	आधुनिक साधन उपयोग करने की स्थिति	सड़क बनने के पूर्व		सड़क बनने के पश्चात्	
		आवृति	प्रतिशत	आवृति	प्रतिशत
1	उन्नत बीज	121/180	67.22%	241/256%	94.14%
2	रासायनिक खाद	151/180	89.88%	238/256%	92.96%
3	आधुनिक कृषि उपकरण	88/180	48.88%	202/256%	78.90%
	औसत	120/180	66.66%	227/256%	88.67%

स्त्रोत: सर्वेक्षण पर आधारित समंक

****

कृषक उपभोक्ता संरक्षण कानून अधिकार क्षेत्र और प्रक्रिया का आर्थिक प्रभाव

डॉ. राजमणि साकेत *

प्रस्तावना – इक्कीसवीं सदी के पूर्व अस्सी के दशक तक कृषक उपभोक्ता संरक्षण उनके अधिकारों और उनकी परेशानियों को दूर करने का सवाल सिर्फ बातों तक सीमित था। किसान लोगों को अपनी छोटी–छोटी शिकायतों के लिए वर्षों अदालतों के धक्के खाने पड़ते थे और सरकारी संस्थाओं या निगमों में तो सुनवाई का कोई प्रश्न ही नहीं था। वैसे भी ज्यादातर कृषक अशिक्षित होते हैं, उन्हें नियम कानून का ज्ञान नहीं होता है अर्थात लापरवाही के खिलाफ कृषक उपभोक्ता की कोई सुनवाई नहीं थी। लिहाजा संबंध सरकारी करिन्दों की हथेली गर्म करने के अलावा कोई चारा नहीं बचता था। इन दशकों में शहरी आबादी तो तेजी से बढ़ी परन्तु उनके मुकाबले जल सुविधाएँ बहुत कम थी। इसी दौरान कृषक एवं मध्यम वर्ग का सामाजिक–आर्थिक ढाँचा बदलने के कारण इन कृषकों की बुनियादी सेवाओं के अलावा कुछ आरामतलबी और उसके साधनों की माँग भी बढ़ी। जिसके चलते टी.वी. फ्रिज, वाशिंग मशीन, मकान बगैरह की खपत बढ़ी। लेकिव इनके उत्पादन और दुकानदार माल की बिक्री के बाद बेपरवाह रहने लगे। बिक्री के बाद की सेवा तो दूर की बात, गारन्टी की अवधि में भी ग्राहक को अपने उपकरण की मरम्मत करवाने के लिए महीनों कृषक दुकानदार और उत्पादन के चक्कर लगाने पड़ते थे, और कृषक उपभोक्ताओं को आर्थिक हानियों को सहना पड़ता था।

आखिरकार 1986 में संसद ने ऐतिहासिक कृषक उपभोक्ता संरक्षण कानून पास किया। यह कानून सभी वस्तुओं और सेवाओं पर लागू होता है। केवल वही वस्तुएँ तथा सेवाएँ इसके तहत नहीं आएंगी, जिन्हें सरकार ने विशिष्ट रुप से छूट दी हो। कृषक उपभोक्ता को हानि एवं आर्थिक क्षति होने से बचाया है।

उपभोक्ता को प्राप्त अधिकार – कृषक उपभोक्ता संरक्षण कानून निजी, सार्वजनिक या सहकारी सभी क्षेत्रों पर लागू होता है। इस अधिनियम के उपबंधों में हरजाने की व्यवस्था है। इसमें कृषक उपभोक्ता को प्राप्त अधिकार इस प्रकार है–

1. ऐसे माल या वस्तु के व्यापार के विरुद्ध संरक्षण पाने का अधिकार जो जीवन और सम्पादित के लिए खतरनाक हो।
2. अनुमति व्यापारिक व्यवहार से कृषक उपभोक्ताओं को बचाने के लिए माल की गुणवत्त, क्षमता, शुद्धता मानक और मूल्य के बारे में सूचित किए जाने का अधिकार है।
3. कृषक उपभोक्ता वस्तु या माल की गुणवत्त प्रबंधन की व्यवस्थित ढंग से नियमों का पालन करने का अधिकार है।
4. कृषक उपभोक्ता को वस्तु की गुणवत्त या निम्न कोटि की वस्तु दिए जाने पर, उपभोक्ता को उपभोक्ता फोरम में शिकायत दर्ज कराने की सुविधा संबंधी अधिकार है।
5. कृषक उपभोक्ता को अपने वस्तृ से संबंधित की गयी खरीदी की पक्की रसीद प्राप्त करने का अधिकार है।

शिकायत कहाँ दायर करें – यदि कृषक उपभोक्ता वस्तु अथवा सेवाओं का मूल्य और क्षतिपूर्ति के लिए मांगी गई रकम एक लाख रुपये से कम है, तो शिकायत उस जिला फोरम के पास दायर की जा सकती है, जिसे राज्य सरकार ने उस जिले के लिए अधिसूचित किया है। जहाँ शिकायत का कारण पैदा होता है, जहाँ कृषकों के विरोधी पक्षकार निवास करता है।

यदि माल अथवा सेवाओं का मूल्य और हरजाने के लिए मांगी गई राशि एक लाख रुपये से अधिक है लेकिन 10 लाख रुपये से कम है तो शिकायत संबंधित राज्य सरकार अथवा संघ राज्य क्षेत्र की तरफ से अधिसूचित राज्य आयोग के समक्ष दायर की जा सकती है।

यदि माल या सेवाओं का मूल्य और हरजाने की मांगी गई राशि 10 लाख रुपये से अधिक है, तो शिकायत नई दिल्ली स्थित कृषक राष्ट्रीय आयोग के समक्ष दायर की जा सकती है।

कृषक उपभोक्ता शिकायत कैसे दायर करें – कृषक उपभोक्ता अपने संरक्षण के लिए शिकायत यादर करने तथा उन्हें दूर करने की प्रक्रिया सरल और स्पष्ट है, जो इस प्रकार है जिला फोरम, कृषक भोपाल राज्य आयोग या राष्ट्रीय आयोग दिल्ली के समक्ष शिकायत दायर करने के लिए कोई शुल्क नहीं है।

शिकायतकर्ता या उसका प्राधिकृत प्रतिनिधि कृषक उपभोक्ता, व्यक्तिगत रुप से शिकायत पेश कर सकते हैं।

शिकायत उपयुक्त फोरम/आयोग के डाक से भेजी जा सकती है, कृषक उपभोक्ता शिकायत के लिए निम्न सूचना आवश्यक है –

1. कृषक उपभोक्ता अपने संरक्षण के लिए शिकायत कर्ता का नाम, ब्यौरा और पता आवश्यक होता है।
2. विरोधी पक्षकार या पक्षकारों जैसी भी स्थिति हो का ब्यौरा और पता जितना मालूम हो।
3. शिकायत से संबंधित तथ्य और उनकी जगह और कारण।
4. शिकायत में लगाए गये आरोपों के समर्थन में सहयोगी दस्तावेज, यदि कोई है।
5. वह राहत जो शिकायत कर्ता चाहता है।
6. शिकायत कर्ता पर शिकायत कर्ता अथवा उसके प्राधिकृत प्रतिनिधि के हस्ताक्षर होने चाहिए।

कृषक उपभोक्ता को उपलब्ध राहत – कृषक उपभोक्ता की तरफ से मांगी गई राहत और तथ्यों को देखते हुए फोरम से मांगी गयी राहत और तथ्यों को

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र)शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीधी (म.प्र.) भारत

देखते हुए फोरम/आयोग निम्नलिखित में से एक या अधिक राहत देने के आदेश दे सकता है।

1. माल में से कमी दूर करना।
2. माल को बदलना।
3. अदा किया गया मूल्य वापिस करना अथवा
4. कृषक उपभोक्ताओं को हुई हाकन या क्षति के लिए हर्जाना दिलाना।

कृषक उपभोक्ता अपील दायर करने की प्रक्रिया – जिला फोरम के निर्णय के विरुद्ध अपील राज्य आयोग के समक्ष 30 दिन की अवधि के भीतर की जा सकती है।

- राज्य आयोग या राष्ट्रीय आयोग के समक्ष अपील करने के लिए किसी प्रकार का कोई शुल्क नहीं है।
- अपील करने की प्रक्रिया वही है, जो शिकायत दायर करने की है।

कौन कृषक शिकायत दायर कर सकता है – कृषक उपभोक्ता संरक्षण कानून के निम्न वर्णों में आने वाले व्यक्ति शिकायत दायर कर सकते हैं –

- उपभोक्ता
- कोई भी स्वैच्छिक उपभोक्ता संगठन, ऐसे संगठन सोसायटी रजिस्ट्रेषन कानून 1860 या कम्पनी अधिनियम 1965 या उस समय लागू किया अन्य कानून के अन्तर्गत पंजीकृत होना चाहिए।
- केन्द्रीय सरकार
- राज्य सरकारें अथवा संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन।

शिकायत किसे कहेंगे ?

इस कानून के तहत शिकायत का अर्थ – शिकायत कर्ता द्वारा निम्न में से किसी एक या अधिक के बारे में लिखित रुप से लगाए गए आरोपों से है –

- किसी व्यापारी के किसी अनुचित व्यापारिक व्यवहार के उसे नुकसान हुआ है।
- माल में एक या अधिक कमियां है।
- सेवाओं में किसी प्रकार की लापरवाही होने पर।

कृषक राष्ट्रीय आयोग कृषक राज्य आयोग और जिला फोरम से यह फोरम से यह अपेक्षा की जाती है कि जहॉ तक सम्भव हो उन शिकायतों पर फैसला विरोधी पक्षकार की नोटिस मिलने की तारीक से तीन माह की अवधि के भीतर दें लेकिन जहॉ माल विश्लेषण करने या परीक्षण की आवश्यकता है वहॉ पॉच दिन के भीतर फैसला कर दिया जाए।

कृषक उपभोक्ताओं पर आर्थिक प्रभाव – प्राचीन काल में मुख्यत: चार तरह के आपराधिक मामले सामने आते थे, ये खाद्य पदार्थों में मिलावट, अधिक कीमत वसूलना, नाप तौल में गड़बड़ी करना तथा ऐसी वस्तुओं की बिक्री जो कानूनी रुप से निषिद्ध है। इन अपराधों पर की जाने वाली सजाओं का विवरण तात्कालीन साहित्य में देखने को मिलता है। इनमें मनुस्मृति कौटिल्य का अर्थशास्त्र मनुस्मृत तथा कात्यायन स्मृति उल्लेखनीय है। मनुस्मृत तथा याज्ञवल्क्य स्मृति में नकली सोना बेचने वालों तथा अशुद्ध मांस बेचने वाले व्यक्ति को जेल तथा भारी जुर्माना भरने का प्रावधान है। याज्ञवल्क्य स्मृति में अधिक कीमत वसूलना तो दूर बल्कि मांगने को भी दण्ड़नीय अपराध माना गया है।

भारत को जिस समय साम्राज्यवादी ब्रिटिश हुकूमत से आजादी मिली उस समय हम औद्योगिक दृष्टि से बहुत पीछे थे क्योंकि इसके पूर्व के लगभग 180 वर्ष तक हमारी अर्थव्यवस्था की कुंजी विदेशी हुकूमत के हाथों में थी। तब और अधिक कृषक उपभोक्ताओं को आर्थिक हानियों का सामना करना पड़ता था। 194 के पत्तत् धीरे–धीरे औद्योगिकीकरण की दर बढ़ी तो अर्थव्यवस्था में सुधार आया और इसी के साथ उद्यमी, विक्रेता और व्यवसायी का एक जागरुक वर्ग तैयार हुआ, तब से कृषक उपभोक्ता को कम आर्थिक हानि उठानी पड़ी, किन्तु कृषक उपभोक्ता की क्रय–शक्ति एक पुराने और मजबूर मार्ग पर चलती रही जिसका मूल कारण अशिक्षा था।

संविधान द्वारा प्रदत्त: सामाजिक व आर्थिक व आर्थिक न्याय के मूलभूत अधिकार को प्राप्त करने के लिए व अचेतन – अजागरुक नागरिकों के खरीददार व विक्रेता मध्य आये लंबे ऐतिहासिक अंतराल की खाई को पाटने के लिए कृषक उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 पारित हुआ।

सरकार ने कृषक उपभोक्ता संरक्षण के कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता दी। है। इस बात के लिए कई उपाय किए हैं कि देश में प्रबुद्ध उपभोक्ता को देखा जाए तो देश उपभोक्ता आन्दोलन अभी अपनी बाल अवस्था में है। सरकार द्वारा किये गये विभिन्न कानून और प्रशासनिक उपायों के साथ–साथ आवश्यकता एस बात की भी है कि देश में सशक्त कृषक उपभोक्ता संरक्षण गतिशील हो। एक सामाजिक आन्दोलन होने के नाते इसका विकास अधिकाधिक उपभोक्ता संगठनों को शामिल करके स्वैच्छिक आधार पर किया जाना अपेक्षित है।

सरकार ने उपभोक्ता संगठनों को मजबूत करने के लिए पंजीकृत उपभोक्ता संगठनों को वित्तीय देने की व्यवस्था की है जो वास्तव में कृषि के क्षेत्र में सक्रिय हो इसके लिए यह राशि 25000/– रुपये तक हो सकती है।

इन उपभोक्ता संगठनों को कृषक उपभोक्ता संरक्षण कि विभिन्न पक्षों के संबंध में शिक्षित करने हेतु सरकार ने प्रशिक्षण कार्यक्रम भी शुरु किये हैं। इन कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य उपभोक्ताओं को जागरुक करना है। इसका प्रचार प्रसार जन संचार के माध्यम से करने की व्यवस्था भी की जाती है यद्यपि आज भारतीय कृषक जन में जागरुकता बढ़ी है, लेकिन यह अभी काफी नहीं है। इसलिए कृषक उपभोक्ताओं को अधिक आर्थिक हानि उठानी पड़ती है।

संदर्भ गंथ सूची :–

1. आहूजा राम–भारतीय समाज, रावत पब्लिकेशन जयपुर एवं नई दिल्ली पृ. 611
2. मदन, जी. आर.– भारतीय सामाजिक समस्याएँ, विवेक प्रकाशन दिल्ली पृष्ठ 2121
3. द्रव्य एवं सुन्दरम्, भारतीय अर्थव्यवस्था चन्द्र प्रकाशन पृष्ठ 21
4. प्रो. एस.एन. लाल, भारतीय अर्थव्यवस्था सर्वेक्षण एवं विश्लेषण पृष्ठ 41
5. कुरुक्षेत्र पत्रिका भारत सरकार।
6. योजना पत्रिका भारत सरकार।

****

शिक्षा तथा स्वास्थ्य योजनाओं में महिलाओं की स्थिति में सुधार

जगदीश मुवेल *

प्रस्तावना – भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति वर्तमान समय में भी दयनीय है। अधिकांश क्षेत्र में महिलाओं का जीवन–स्तर एवं उनकी स्थिति निम्न है। 21वीं सदी के इस युग में महिलाओं को वह स्थान नहीं मिल पाया जो कि वास्तव में उन्हें मिलना चाहिए। इसका एक मुख्य कारण ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं में शिक्षा तथा स्वास्थ्य की कमी है। इनके जीवन स्तर में वृद्धि हेतु विशेषकर महिलाओं में शिक्षा व स्वास्थ्य के स्तर में वृद्धि करना चाहिए क्योंकि शिक्षा तथा स्वास्थ्य ही एक मात्र ऐसा सशक्त माध्यम है जो मानव का समाजिक,सांस्कृतिक नैतिक तथा आर्थिक उत्थान करता है। शिक्षा के साथ अच्छा पोषण केवल महिलाओं के स्वास्थ्य और विकास पर ही अपितु देश भर के लोगो और सरी मानव–जाति के स्वास्थ्य एवं उत्पादन क्षमता पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। जीवनकाल में किसी भी आयु/अवस्था में होने वाले कुपोषण से व्यक्ति के स्वास्थ्य , वृद्धि और विकास पर नकारात्मक पड़ सकता है।

सरकार के द्वारा स्वतंत्रता के पश्चात् से ही महिलाओं के लिए अनेक प्रकार की कल्याणवादी योजनाएँ चलायी जा रही है। ताकि वे समाज की मुख्य धारा से जुड़कर अपना विकास कर सके। महिलाओं में शिक्षा की कमी पारिवारिक समस्याएँ, रोजगार का अभावच संतुलित आहार आदि समस्याएँ होती है। महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए शासन के द्वारा अनके प्रयास किए जा रहे हैं। इसके बावजूद हमारे देश की ग्रामीण जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग चिकित्सा की मूल सुविधा से वंचित रह जाता है, जिसके कारण देश का विकास अवरूद्ध हो जाता है। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है। चिकित्सा तथा प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य की अवहेलना को स्वस्थ बनाने और उनके विकास के लिए अनके प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

शिक्षा तथा स्वास्थ्य की स्थिति – भारत एक ग्राम प्रधान राष्ट्र है। यहाँ की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गाँव में निवास करती है। मध्यप्रदेश का दक्षिणी–पश्चिमी भाग में ग्रामीणों का बाहुल्य है। इस क्षेत्र की गणना आज भी देश के अति पिछड़े क्षेत्रों में होती हैं। भारत में शिक्षा 20111 की स्थिति देखने पर पता चलता है कि कुल साक्षरता प्रतिशत 75.0 प्रतिशत है, जिनमें पुरूषों की साक्षरता दर 89.90 प्रतिशत है तथा महिलाओं की साक्षरता दर 64.6 प्रतिशत है। साक्षरता दर में महिलाओं की स्थिति पुरूषों की तुलना में काफी अंतर है। 16.3 प्रतिशत का अंतर जो कि महिलाओं की स्थिति आज भी कम है। स्वास्थ्य की बात करे तो हमारे देश में स्वास्थ्य और पोषण की स्थिति अभी भी चिंताजनक बनी हुई है, पर इसमे भी विभिन्न कारणों से महिलाओं के पोषण व स्वास्थ्य का संकट आज भी विद्यमान है। इस प्रकार महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए सबसे अधिक नाजुक समय मातृत्व का समय होता है। भारतीय समाज में शिशु–मृत्यु दर के स्तर पर भी लड़की की स्थिति अधिक चिंताजनक रहती है। बतौर विश्व स्वास्थ्य संगठन(डब्ल्यू.एच.ओ.) भारत में बच्चे को जन्म देने के दौरान हर घण्टे 5 महिलाओं की मौत हो जाती है। ' वर्ल्ड हेल्थ स्टैटिक्स 2016 'के मुताबिक भारत में मातृ मृत्यु–द 174/ 100000 है। साथ ही विश्वभर में जिन महिलाओं की मौत बच्चों के जन्म के दौरान होती है, उनमें से 17 प्रतिशत मौतें भारत में दर्ज की जाती है। मध्यप्रदेश में मातृ मृत्यु–दर 2011–12 के आंकडे देखे तो 221/100000 है।

शिक्षा तथा स्वास्थ्य में महिलाओं के विकास में परिवर्तन – किसी भी देश में परिवर्तन लाने का शिक्षा सशक्त माध्यम है। एक स्वस्थ व सभ्य राष्ट्र का निर्माण तभी संभव है जब उस राष्ट्र की महिलाएँ व बच्चे स्वस्थ, संस्कारित, शिक्षित व मानसिक रूप से सुदृढ़ हो। 2011 मे साक्षरता दर में महिलाओं का 53.60 प्रतिशत थी वहीं 2011 में 64.6 प्रतिशत हो गई । महिलाओं को शिक्षा प्रदान करने के दृष्टिकोण से देश में सकारात्मक परिवर्तन दिख रहे है। स्कूलों में बालिकाओं का नामांकन निरंतर बढ़ रहा है। इसी कारण अब गाँवों में भी महिलाओं के सामाजिक–आर्थिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन दिखाई पड़ते है। सरकार ने ग्रामीण महिलाओं के स्वास्थ्य सुधार की दिशा में अनेक कदम उठाए है। सरकार ने गरीब जननीयों को सुरक्षा प्रदान करने हेतु प्रसुति लाभ सम्बन्धी विभिन्न कार्यक्रमों को मूर्त रूप दिया है। इस संदर्भ में 'जननी सुरक्षा योजना' महत्वपूर्ण है। इस योजना के माध्यम से स्वास्थ्य केन्द्रों में प्रसव सुविधा उपलब्ध कराकर मातृ–मृत्य दर और शिशु मृत्यु दर में कमी लाने की कोशिश की जा रही है। 2001–03 में जहाँ शिशु मृत्यु दर 82 प्रति हजार थी तथा 2010–11 में घटकर 59 प्रति हजार, 2013 में 54 और 2015–16 में घटकर 51 तथा 2016–17 में 47 प्रतिशत हो गई इस प्रकार से यह कहा जा सकता है कि सरकार द्वारा जो योजनाएँ महिलाओं के विकास के लिए चलाई जा रही है उनसे महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है।

सरकार द्वारा महिला विकास हेतु उठाए गए कदम – ग्रामीण महिलाओं के उत्थान हेतु सरकार के द्वारा अनेक प्रयास किए जा रहे है। महिलाओं का विकास करने में सरकार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इस आधार पर यह जानना आवश्यक हो जाता है कि शासन द्वारा ग्रामीण महिला विकास हेतु कौन–कौन सी योजनाएँ चलायी जा रही है। शासन के द्वारा महिला विकास की दृष्टि से स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा आदि से संबंधित योजनाएँ संचालित की गई है, जिनमें शिक्षा तथा स्वास्थ्य के विकास के लिए जननी सुरक्षा योजना, लाड़ली लक्ष्मी योजना, उषा किरण योजना, बेटी बचाओं, बेटी पढ़ाओं योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, समेकित बाल विकास परियोजना, मुख्यमंत्री कन्यादान योजना, आस्था अभियान और ममता अभियान, मुख्यमंत्री सायकल योजना, गाँव की बेटी योजना।

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय,उज्जैन (म.प्र.) भारत

महिला विकास की आवश्यकता – भारत जैसे विकासोन्मुख देश के सामाजिक, आर्थिक विकास के लिए ग्रामीण महिलाओं का विकास अति आवश्यक है तथा भारतीय सामाजिक परिदृश्य का अवलोकन करे तो हम पाते है कि संवैधानिक रूप से महिला व पुरुष वर्ग को समान मौलिक अधिकार प्राप्त है किन्तु अनेक अधिकाधिक असमानताएँ व्यावहारिक रूप में व्याप्त है। लिंग के दायरे में स्त्री वर्ग को रखते हुए आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षिक, सामाजिक ,स्वास्थ्य , पोषण तथा न्याय आदि क्षेत्रों में उसे दबाया जाता है। यह वस्तुस्थिति किसी से छिपी नहीं है। महिला चाहे किसी भी ऊँचे पद पर क्यों न हो उसे प्रताड़ना झेलनी पड़ती है। महिलाओं के प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार महिलाओं के विकास में बाधक है।

अत: इस दृष्टि से यह आवश्यक हो जाता है कि महिलाओं के विकास के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा का आर्थिक विकास करना भी आवश्यक होगा। वर्तमान समय में प्रत्येक राष्ट्र का लक्ष्य आर्थिक विकास को बढ़ाने के लिए पूंजी निर्माण, राष्ट्रीय आय, प्राकृतिक संसाधनों का पर्याप्त होना आवश्यक होता है। साथ ही देश के आर्थिक विकास हेतु ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक विकास को बढ़ावा देना अति आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

ग्रामीण विकास में महिलाओं की स्थिति एवं भूमिका

डॉ. आशा दुबे *

प्रस्तावना – देश को स्वतंत्र हुए सात दशक से अधिक वर्ष हो चुके है और स्वाधीनता के इस वर्षो में देश विकास पथ पर चलते हुए काफी आगे निकल गया है। महानगरों से लेकर गांवो में स्थितियां काफी बदली है। गांव पहले से ज्यादा समृद्ध हुए है और ग्रामीण ज्यादा जागरूक हुआ है।

ग्रामीण विकास के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक तीन पहलू है जो परस्पर एक दूसरे के संबध्द है। ग्रामीण विकास के ये तीनों क्षेत्रों में महिलाओं का योगदान अभूतपूर्व है लेकिन अपने योगदान के बाद भी पुरूष प्रधान समाज में नारी को दोयम दर्जा ही दिया जाता है। शहरी क्षेत्रों में तो हालात फिर भी इतने खराब नहीं है परंतु ग्रामीण महिलाओं की स्थिति चिंता करने योग्य है। सरकार द्वारा जागरूकता फैलाने वाले कई कार्यक्रम चलाने के बावजूद ग्रामीण महिला जीवन पुरूष की तुलना में अत्यंत कठिन है। कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका होते हुए भी उन्हें बहुत सी बाधाओं का सामना करना पडता है। कृषि कार्यो में लगी महिलाओं की अपनी कोई अलग पहचान नहीं है क्योंकि अर्थव्यवस्था की बागडोर प्राय: पुरूषों के मालिकाना हक भी नहीं है। उनकी अशिक्षा अनभिज्ञता,उदासीनता और अंधविश्वास रास्ते के रोडे साबित होते है। पुरूषों की तुलना में उन्हे मजदूरी भी कम मिलती है। शिक्षा सूचना तथा मनोरंजन के अवसर भी उन्हें अपेक्षाकृत कम मिलते है।

भारत में कृषि और ग्रामीण विकास भी रणनीतियों में महिलाओं की स्थिति और भूमिका का व्यवस्थित विश्लेषण और परीक्षण महिलाओं के लिए राष्ट्रीय कार्ययोजना के साथ प्रारंभ हुआ। इसके पश्चात महिलाओं की स्थिति पर बनी कमेठी की रिपोर्ट, समाज विज्ञान संस्थाओं तथा शोधकर्ताओं में महिलाएं एवं विकास पर इनके सम्मिलित प्रयासों से छठी योजना में यह संभत हो पाया।

सन् 1982में आई.आर.डी.पी. के अघटक के रूप में डव्ल्यू.सी.आर.ए. लागू किया गया तथा ग्रामीण महिलाओं की निम्निलिखित प्रमुख समस्याओं की पहचान की गयी–

1. ग्रामीण और कृषि विकास में उनके लिए ध्यान और सेवाओं की सीमान्तता
2. उपलब्ध सहायताओं और सेवाओं में उनके प्रवेश को बाधित करने वाली कठिनाईयां जैसे– जागरूकता और कला कौशल के विकास हेतु प्रशिक्षण की कमी, सूचना की कमी तथा तोल मोल कर सकने की क्षमता की कमी
3. कम उत्पादकता तथा संकुचित पेशागत चुनाव
4. निर्णयन में निम्न स्तर की सहभागिता
5. महिलाओं की सहभागिता और उनकी सामाजिक, आर्थिक गतिविधियों को बढावा देने में वित्त और विशेषज्ञ निर्देशन की अपर्याप्तता
6. महिलाओं की सहभागिता की अपर्याप्त देखभाल
7. उन्हें कड़ी मेहनत से बचाने हेतु विज्ञान और प्रौद्योगिकी का अपर्याप्त उपयोग
8. स्वास्थ्य और पोषण की निम्न स्थिति

कृषि और सम्बध्द क्षेत्र महिलाओं को रोजगार प्रदान करने वाला सबसे बड़ा क्षेत्र महिलाओं को रोजगार प्रदान करने वाला सबसे बड़ा क्षेत्र है। यह काफी हद तक ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति को निर्धारित करता है। यह वह क्षेत्र है, जहां उत्पादक कार्यो में अवैतनिक कामगार के रूप में महिलाओं का योगदान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इन महिलाओं को बेरोजगार की स्थिति में रखने के लिए यही क्षेत्र जिम्मेदार है। कृषि और पशुपालन की विकास रणनीतियो में महिलाओं पर बहुत कम ध्यान दिया गया है, यह जानते हुये भी दोनो क्षेत्रों में सक्रिय रूप से संलग्न है। कृषक प्रशिक्षण कार्यक्रमों और कृषि विज्ञान केन्द्रो में महिलाओं को पशुपालन एवं कृषि का प्रशिक्षण दिया जाता है किंतु इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों में महिलाओं की उपस्थिति संतोषप्रद नही रही है।

विकास प्रक्रिया से महिलाओं को जोडने संबंधी कार्यक्रमों की सीमित सफलता से जाहिर है कि केवल नीति निर्देशों से अपेक्षित उद्देश्य प्राप्त नहीं किए जा सकते। राष्ट्रीय विकास में महिलाओं के योगदान के प्रति समझ की कमी के कारण कार्यक्रमों का कार्यान्वयन नहीं हो पाता। यद्यपि केन्द्र नीति निर्माण स्तर पर महिलाओं के विकास के प्रति पर्याप्त चिंता जताई जाती है , किंतु कार्यान्वयन स्तर पर द्वेषवृति अपनायी जाती है। विकास कार्यक्रमों में महिलाओं के अधिक हिस्से और उनकी अधिक भागीदारों को प्रोत्साहित करने के संबंध में भारत सरकार द्वारा जारी नीति निर्देशों के अनुसार राज्य स्तर पर अधोसंरचना प्रसार, प्रशिक्षण, सूचना समर्थन तथा देखरेख की ठोस पध्दति की व्यवस्था नहीं की जाती है। कम ध्यान और संसाधन तथा अपर्याप्त देख–रेख के कारण ग्रामीण महिलाओं के विकास संबंधित कार्यक्रम अपेक्षित लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पा रहे है लेकिन निसंदेह रूप से सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक सभी दृष्टि से ग्रामीण भारत में क्रांतिकारी परिवर्तन दिखाई पड़ रहे है। गरीबी का स्तर कम हुआ है। शिक्षा क स्तर बढ़ा है, सामाजिक बुराईया कम हुई है और सबसे बड़ा बदलाव यह आया है कि आज का ग्रामीण जागरूक हो। सूचना प्रोद्यौगिकी की बदौलत ग्रामीण देश विदेश में आ रहे बदलाव से परिचित हो रहा है और ये बदलाव उसे भी गहरे तक प्रभावित कर रहे है। परिणाम स्वरूप वो भी अपने सामाजिक एवं आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए प्रयत्नशील है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मिश्र डॉ. हरिराज, ग्रामीण नवनिर्माण के नये आयाम, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय,रॉची 1991, पेज 56
2. संपादकीय, कुरूक्षेत्र, दिसंबर 2015

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कला महाविद्यालय, पनागर (म.प्र.) भारत

लोक सेवा अधिनियम- सुशासन की ओर

डॉ. शकुन शुक्ला * मनीषा मिश्रा **

शोध सारांश – लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था में 'लोकहित' की भावना सर्वोपरि होना अपरिहार्य है, कल्याणकारी राज्य की अवधारणा में लोक हित या लोक कल्याण समाहित है, त्रेतायुग से ही राजनैतिक चिन्तन में लोक कल्याण को राज्य का लक्ष्य बताया गया है। इसके लिए 'सुशासन' अर्थात् एक ऐसी उत्कृष्ट शासन व्यवस्था जिसमें नागरिकों एवं राष्ट्र का चहुँमुखी विकास संभव हो सके। भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही हमारे संविधान निर्माताओं ने लोक-कल्याणकारी राज्य की परिकल्पना को साकार करने की बात उठायी, फलत: भारत के संविधान की प्रस्तावना और नीति निर्देशक तत्वों के अन्तर्गत यह स्पष्ट शब्दों में लिखा गया है कि 'हमारा उद्देश्य भारत को एक लोक-कल्याणकारी राज्य का स्वरूप प्रदान करना है।' संविधान के चतुर्थ खण्ड में उन नीतियों और ठोस कार्यक्रमों का विवेचन किया गया है। जिन्हें अपनाकर भारत में एक लोक-कल्याणकारी राज्य की स्थापना की जा सकेगी। स्वाधीनता से वर्तमान तक केन्द्र एवं प्रदेशों में कार्यरत विभिन्न सरकारों ने अपनी अपनी नीतियों, कार्यक्रमों, योजनाओं के माध्यम से लोक हित में अनेक निर्णय लेकर सर्वांगीण विकास की दिशा में प्रयास किए। इन सब प्रयासों के वाबजूद जनसंख्या का बड़ा हिस्सा विकास की मुख्यधारा से लगभग अछूता ही रहा। जिसका मुख्य कारण, सरकारों की जनता के प्रति जवाबदेही में कमी रही, और यह बात मुख्य रूप से सामने आयी कि विकास के पथ पर चलने के लिए 'सुशासन' सबसे पहली शर्त है। सिटीजन चार्टर, सूचना का अधिकार इसी दिशा में उठाए गए कदम है। अपने नागरिकों को सुशासन प्रदान करने के उद्देश्य से मध्यप्रदेश की सरकार द्वारा 'लोक सेवा प्रदान की गारंटी अधिनियम, 2010' की अभिनव पहल एक अभूतपूर्व एवं सराहनीय कार्य है। अधिनियम से संबंधित सभी आवश्यक पहलुओं की संक्षिप्त प्रस्तुती इस शोध पत्र का आशय है।

शब्द कुंजी – अधिनियम, लोकहित, लोक-कल्याणकारी, सुशासन, जवाबदेह ।

प्रस्तावना – राज्य की अवधारणा में लोक हित या लोक कल्याण के प्रमाण प्राचीन समय से ही पाए गए हैं, भारतीय चिन्तन पद्धति के अनुसार राज्य मनुष्य के नैतिक कल्याण का प्रयत्न करता है, साथ साथ मनुष्य की भौतिक समृद्धि के प्रति भी जागरूक होता है, 'रामचरित मानस' में रामराज्य की कल्पना लोक कल्याणकारी राज्य के समग्र रूप को उजागर करती है। इसी अवधारणा को 'सुशासन' का सबसे अच्छा स्वरूप माना गया। लोक कल्याणकारी राज्य व्यवस्था में सुनिष्चित न्यूनतम जीवन स्तर एवं विकास के अवसर प्रत्येक व्यक्ति को उपलब्ध होते हैं तथा प्रत्येक व्यक्ति अपना विकास करने के लिए स्वतन्त्र है, वर्तमान युग में सुशासन के माध्यम से लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना एक युगीन आवश्यकता बनकर दिनों-दिन अधिकाधिक लोकप्रिय बनती जा रही है। सुशासन का सिद्धान्त राज्य की उपयोगिता स्वीकार करते हुए सरकारों को लोक-कल्याण एवं व्यक्ति के विकास से सम्बन्धित व्यापक उत्तरदायित्व सौंपता है। सरकारें यह समझ गयी हैं समाज में शान्ति बनाए रखना, बाहरी आक्रमण से देश की रक्षा करना आदि तक शासन के कर्त्तव्य सीमित नहीं हैं, प्रत्येक व्यक्ति के विकास आदि भी सरकार के दायित्व हैं। सुशासित लोक-कल्याणकारी राज्य का परिवेष बहुत ही व्यापक एवं विस्तृत हैं, वस्तुत: यह एक समग्र जीवन पद्धति है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही हमारे देश के कर्णधारों ने लोक-कल्याणकारी राज्य की परिकल्पना को साकार करने की बात उठायी, उन्होंने समाजवाद और व्यक्तिवाद का समन्वय प्रस्तुत करने वाले लोक-कल्याणकारी राज्य के सिद्धान्त को क्रियान्वित करने का स्वप्न देखा था। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए संविधान के अनुच्छेदों में कई नीति-निर्देशक तत्वों का उल्लेख किया गया है।

भारत में लोक-कल्याणकारी राज्य की स्थापना हेतु नियोजन की नीति को अपनाया गया है। भारतीय संविधान की अन्रात्मा न्याय, समता, अधिकार और बन्धुत्व के आसव से अभिसिंचित है। सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय हमारे संविधान की नियामक महत्वकांक्षाओं में से एक है। निदेशक तत्वों का सार तत्व संविधान के अनुच्छेद 38 में दिया गया है – 'राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना करे, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्राणित करे, भरसक कार्यसाधक के रूप में स्थापना और संरक्षण करके लोक-कल्याण की उन्नति का प्रयास करेगा।'

सुशासन की ओर – स्वच्छ, उत्तम, पारदर्शी एवं जवाबदेह शासन अर्थात अच्छी नीतियों से निर्देशित या संचालित शासन को सुशासन कहना अधिक उपयुक्त होगा। देश में स्वतन्त्रता के पश्चात राज्यों का गठन किया गया। आम चुनावों में चयनित अलग-अलग राजनैतिक दलों की सरकारों ने समय समय पर शासन व्यवस्था संभाली तथा लोक हित में विभिन्न लोक कल्याणकारी योजनाओं के माध्यम से जन सामान्य को यह संदेश देने के प्रयास किए गए कि उनके राजनैतिक दल के शासनकाल में सुशासन एवं लोक हित योजनाओं के माध्यम से सबसे अधिक विकास हुआ है, अन्य दलों द्वारा भी अपनी लोक लुभावन योजनाओं को अधिक लाभकारी सिद्ध

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान)शासकीय महारानी लक्ष्मी बाई कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय,भोपाल (म.प्र.) भारत

करने की कोशिश की जाती रही। इन योजनाओं का लाभ लेने के लिए सरकार द्वारा विभिन्न पात्रता स्तर निर्धारित किये जाते है जन सामान्य को पात्र होने का प्रमाण देने के लिए शासन के कई विभागों एवं संस्थाओं से जारी कई प्रमाण पत्रों की आवश्यकता होती है इसके अतिरिक्त कई ऐसी सेवाएं है जहां जनसामान्य को शासकीय विभागों एवं संस्थाओं से आवश्यक सेवा प्राप्त करने के लिए अनेकों कठिनाइयों को सामना करना पड़ता और फिर भी अपेक्षित समय पर एवं वांछित दस्तावेज प्राप्त नहीं हो पाते। सरकारों द्वारा शासन की जवाबदेही निश्चित करने एवं सुशासन की दिशा में कई महत्वपूर्ण कदम उठाए जिसमें सिटीजन चार्टर एवं सूचना का अधिकार जैसे सषक्त माध्यम जनसामान्य के हाथ में आए इन अधिकारों से शासन के लगभग प्रत्येक कार्य के उचित एवं नीतिगत किए जाने की प्रक्रिया को जाचंने का अधिकार मिला, परिणाम स्वरूप हर सरकार पर दवाब है कि वह प्रशासन में पारदर्षिता लाए जिसके कारण देश में एवं कई प्रदेश सरकारें 'सुशासन' को बढावा दे रहीं है। इन प्रयासों को समयबद्धता के साथ-साथ जवाबदेही से बांधने की आवश्यकता महसूस की जाती रही।

अधिनियम – केन्द्र सरकारों एवं प्रदेश की राज्य सरकारों के कई नीति, निर्णय, कार्यक्रम, योजनाओं संचालन के मध्य मध्यप्रदेश सरकार ने अपने नागरिकों के अधिकारों को सशक्त बनाने के लिए एक अभिनव पहल से दिनांक 18 अगस्त 2010 को 'मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान गारंटी अधिनियम 2010' को मूर्तरूप दिया। यह कानून बनवाकर प्रदेश सरकार ने प्रदेश में उठाये जा रहे सुशासन के प्रयासों में महत्वपूर्ण कडी जोडी है। समय-सीमा में सेवा प्राप्त न होने अथवा आवेदन निरस्त या नामंजूर होने की दशा में प्रथम अपील एवं द्वितीय अपील का भी प्रावधान है। लोक सेवा निर्धारित समय-सीमा में प्रदान ने करने पर रूपये 500 से 5000 तक का अर्थदण्ड आरोपित करने का प्रावधान भी इस अधिनियम में किया गया है। मध्यप्रदेश देश में प्रथम राज्य है, जिसने अधिसूचित सेवाओं को समय-सीमा में प्रदान करने की कानूनी गारन्टी दी है। अन्य राज्य सरकारे एवं भारत सरकार भी इस तरह का कानून बनाने के लिए प्रदेश सरकार का अनुसरण कर रही है। मध्यप्रदेश में 2010 प्रथम चरण में नौ विभागों की 26 सेवाओं को इस अधिनियम के तहत अधिसूचित किया गया। वर्तमान में अब तक कुल 45 विभागों की 447 सेवाओं को इस अधिनियम के दायरे में लिया गया है।

अधिनियम अन्तर्गत अधिसूचित सेवाओं की समय-सीमा की सुनिश्चित प्राप्ति के लिए मध्यप्रदेश सरकार ने 25 सितम्बर 2010 को लोक सेवा प्रबंधन विभाग के अधीन राज्य लोक सेवा अभिकरण का गठन किया। अभिकरण प्रदेश में लोक सेवाओं के प्रदान की प्रक्रिया को सरल एवं जन-मित्र बनाने, सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग बढ़ाना ताकि सेवाएँ ऑनलाइन प्राप्त हो सके, 'ई-डिस्ट्रिक्ट' मिशन मोड परियोजना के लिए कार्य करना।

पंडित दीन दयाल उपाध्याय के जन्मदिवस 25 सितम्बर 2012 को राज्य लोक सेवा अभिकरण ने प्रदेशभर में 412 लोक सेवा केन्द्रों के माध्यम सेवाओं को ऑनलाइन प्रदान करने की व्यवस्था की गई। समय सीमा में सेवाओं की प्रदायगी को सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न विभागों में पदाभिहित अधिकारियों नियुक्त किए जाने के संबंध में निर्देश जारी कराये गये। अधिसूचित सेवाओं को ऑनलाइन प्रदान करने हेतु 20 हजार से भी अधिक अधिकारियों के डिजिटल सिग्नेचर बनवाए जा चुके हैं। चिन्हित सेवाओं को प्राप्त करने के लिए लोक सेवा केन्द्र पर ऑनलाइन आवेदन किए जा सकते है। आवेदक को प्रदान की जाने वाली रसीद में लिया गया शुल्क, आवेदन के निराकरण की अंतिम तारिख का उल्लेख होता, अर्थात निराकरण की पूर्व से तय समय सीमा। पूर्व निश्चित समय सीमा में यदि उक्त सेवा प्राप्त न होने की दशा में अपील का प्रावधान भी किया गया है। सेवा प्रदान करने हेतु चिन्हित पदभिहित अधिकारी/कर्मचारी यदि समय सीमा में सेवा प्रदाय करने में कोताही बरतते हैं ऐसी दशा में उन पर अर्थदण्ड का प्रावधान है। एम.पी.ऑनलाइन के माध्यम से भी कई विभागों की सेवाओं की उपलब्धता की व्यवस्था की गई। राज्य लोक सेवा अभिकरण द्वारा सभी अधिसूचित सेवाओं को बहुत सरल ढ़ंग से अपने पोर्टल पर इस प्रकार दर्शाया गया है।

वर्ष 2018 में सेवाओं हेतु प्राप्त आवेदनों की वस्तुस्थिति को निम्न तालिका के माध्यम से देखा जा सकता है।

01 जन.से 31 दिस. 2018 के मध्य प्राप्त आवेदनों के निराकरण की वस्तु स्थिति विवरण **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

आवेदनों के निराकरण में विभिन्न संस्थाओं का सफलता का प्रतिशत **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

लोक सेवाओं की प्राप्ति के लिए वर्ष 2018 में प्रदेश के नागरिकों ने विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से आवेदन किया, इन संस्थाओं को प्राप्त आवेदन एवं उनके निराकरण को उपरोक्त तालिका एवं रेखाचित्र के माध्यम से देखने से ज्ञात होता है कि सी.एम.हेल्पलाइन, राज्य सेवा अभिकरण एवं इंडिया पोर्टल के आवेदनों के निराकरण का प्रतिशत काफी अच्छा रहा है। राज्य लोक सेवा अभिकरण की अधिकारिक वेबसाइट पर जिन आवेदनों को निराकरण नहीं हो पाया, उनमें आवेदकों का गलत प्रक्रिया से लॉग इन करने से, गलत पंजीयन क्रं., अधिनियम के बाहर की सेवाओं हेतु आदि कारण प्रमुख थे। उक्त आधार पर कहा जा सकता है कि आवेदन निराकरण में सफलता का प्रतिशत बहुत अच्छा रहा।

बाधाएं एवं निष्कर्ष – इस अधिनियम का अध्ययन करने से ज्ञात होता है, कि निर्धारित समय-सीमा में सेवा प्राप्त न होने पर अपील करने का प्रावधान है। प्रथम अपील एवं द्वितीय अपील के पदभिहित अधिकारी उक्त जवाबदेही अपनी अधीनस्थों पर स्थानान्तरित कर देते है। अधिनियम के अन्तर्गत सेवा प्रदान करने वाले कर्मचारी एवं अधिकारी इन ऑनलाइन सेवाओं के लिए प्रशिक्षित नहीं हैं। अधिनियम में प्रावधान है कि आवेदन एवं संलग्नकों को हार्ड कॉपी में जमा करने के लिए वर्ष 2014 में छूट दी गई, इसके वाबजूद अधिकतर पदाभिहित इसकी मांग करते है जिसकी वजह से समय-सीमा में निराकरण नहीं हो पा रहा है। अधिनियम में बड़े अधिकारी किसी भी प्रकार की जवाबदेही की सीमा से दूर हैं। इन छोटी-छोटी कमियों को आसानी से दूर किया जा सकता है।

मध्यप्रदेश सरकार ने अपने नागरिकों के अधिकारों को सषक्त बनाने एवं प्रदेश में सुशासन की दिशा में एक अभिनव पहल की जब सरकार ने दिनांक 18 अगस्त 2010 को 'मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान गारंटी अधिनियम 2010' को मूर्तरूप दिया। यह कानून प्रदेश सरकार ने प्रदेश में उठाये जा रहे सुशासन के प्रयासों में महत्वपूर्ण कड़ी जोड़ी है। कानून के माध्यम से चिन्हित सेवाओं को प्राप्त करने के लिए प्रदेश के नागरिकों को इन सेवाओं को प्राप्त करने के लिए पूर्व की भांति कठिनाईयों का सामना नहीं करना पडेगा। उनको सेवाओं के प्रदान करने में इस कानून के माध्यम से गारंटी दी गई, इन्हें प्राप्त करना अब उनका अधिकार होगा । इनके क्रियान्वयन में कोताही बरतने वाले अधिकारियों अथवा कर्मचारियों पर

अर्थदण्ड आरोपित करने का प्रावधान भी इस अधिनियम में किया गया है। कानून के बनने से प्रदेश सरकार ने अपने नागरिकों को याचक के भाव से मुक्त कर उन्हें अधिकार के रूप में शक्ति प्रदान की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. मिश्र कामेश्वरनाथ,-(1972) महाभारत में लोककल्याण की राजकीय योजनाएँ,भारत-मनीषा,वाराणसी।
2. डॉ. बसु दुर्गा दास-(मई,2015) भारत का संविधान एक परिचय, लेक्सिस नेक्सिस,गुड़गाँव,हरियाणा।
3. काश्यप सुभाष-(2014) हमारा संविधान भारत का संविधान और संवैधानिक विधि,राष्ट्रीय पुस्तकन्यास,नई दिल्ली।
4. डॉ. जैन पुखराज-(1986) राजनीति विज्ञान के सिद्धान्त, साहित्य भवन, आगरा।
5. डॉ. शरण परमात्मा-(2011) प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार एवं संस्थाएँ, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ।
6. चतुर्वेदी राजेश्वरप्रसाद-(2014)निबन्ध-लोककल्याणकारी राज्य की अवधारणा,प्रतियोगिता दर्पण,उपकारप्रकाशन,आगरा।
7. लोक सेवा अभिकरण मध्यप्रदेश, भोपाल द्वारा प्रकाशित अधिनियम से संबंधित प्रकाशन एवं अन्य जानकारियाँ।
8. सामान्य प्रशासन विभाग, मध्यप्रदेश शासन, द्वारा प्रकाशित राजपत्र एवं अधिसूचना तथा अन्य परिपत्र।

01 जन.से 31 दिस. 2018 के मध्य प्राप्त आवेदनों के निराकरण की वस्तु स्थिति विवरण

संस्था	कुल संख्या	निराकृत	अस्वीकृत	निराकृत आवेदनों का प्रतिशत
सी.एम.हेल्पलाईन	357114	342204	14910	95.82
आदिम जाति	1	0	1	0.00
राज्य सेवा अभिकरण	2423	2346	77	96.82
एम.पी. ऑनलाइन	24821	16074	8747	64.76
इंडिया पोर्टल	3531457	3237963	293489	91.69
एन.आई.सी.	80	38	42	47.50
कुल योग	3915896	3598625	317266	91.90

स्त्रोत - राज्य लोक सेवा अभिकरण की अधिकारिक वेबसाइट।

आवेदनों के निराकरण में विभिन्न संस्थाओं का सफलता का प्रतिशत

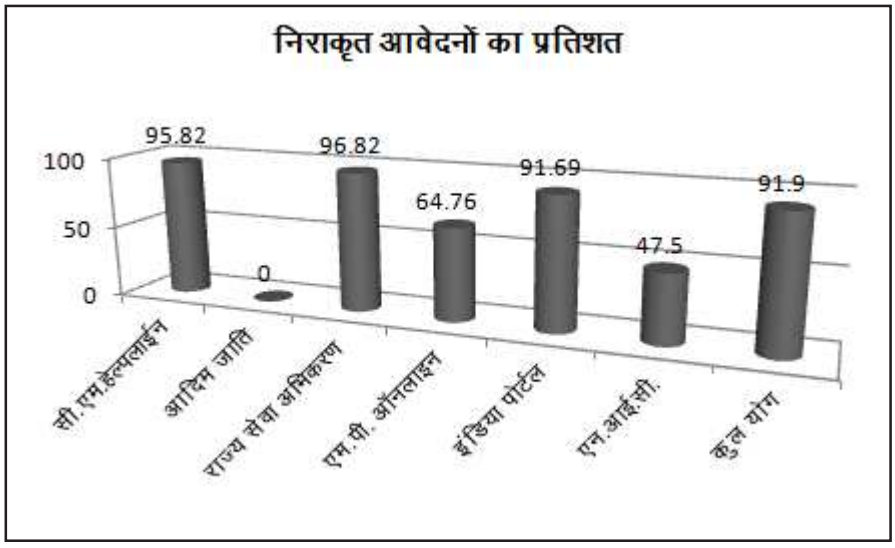

****

भारतीय लोकतंत्र की संरचना का पुख्ता आधार सामाजिक न्याय – एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

सुश्री पद्मासिनी *

प्रस्तावना – लोकतंत्र के विकास का इतिहास काफी पुराना है, यद्यपि पश्चिम में लोकतंत्र का उद्भम प्राचीन यूनानी शासकीय व्यवस्था में हुआ तब लोकतंत्र संबंधी विचार काफी विकृत थी। यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने लोकतंत्र को भीड़तंत्र तथा विकृत शासन प्रणाली बताया था, जबकि प्लेटो एक ऐसे शासक वर्ग के पक्ष में था, जिसमें तमाम किस्म के शिल्पकारों, महिलाओं, बच्चों तथा गुलामों के लिए कोई स्थान नहीं होगा। प्राचीन काल में न्यायिक नियमों की रचना ईश्वर या ईश्वरीय भक्ति से विभूषित व्यक्तियों द्धारा होती थी। आम आदमी आँख मूँद कर उनका पालन करता था। मध्यकाल में भी कुछ यही स्थिति रही। मध्यकाल में निम्न जातियों में अनेक संत पैदा हुए जिन्होंने जात-पात और ऊँच-नीच का खुलकर विरोध किया किन्तु उनका प्रभाव भक्ति के क्षेत्र को लांघ नहीं पाया। 20वीं शताब्दी को लोकतंत्र के उत्थान की शताब्दी माना जाता है। चिन्तन की स्वतंत्रता के चलते वैज्ञानिक एवं तकनीकी दशाओं में मौलिक परिवर्त्तन दिखाई दिया। फलत: उपनिवेशवाद एवं नस्लवाद के खिलाफ संघर्ष एवं अनेक मुक्ति आन्दोलन चलाया गया। इसका उद्देश्य था मानव की स्वतंत्रता एवं समानता की प्राप्ति करना। परिणामस्वरूप फ्रांस, इंग्लैण्ड, अमेरिका व रूस में क्रांतियाँ हुई। इन क्रांतियों ने पाश्चात्य समाज से सामंती चिन्तन और व्यवस्था को पूर्ण रूप से खत्म कर दिया, जिसके फलस्वरूप श्रेणीबद्ध असमानता पर आधारित न्याय के परम्परागत सिद्धांत की जगह सामाजिक न्याय की धारणा का जन्म हुआ। असल में विकासशील समाजों में पश्चिमी समाजों की तुलना में सामाजिक न्याय अधिक उग्र रूप में सामने आया है। खास तौर पर भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में सभी तबकों के लिए सामाजिक न्याय के मुद्दे पर गम्भीर बहस हुई। इस बहस से समाज के वंचित तबकों के लिए संसद एवं नौकरियों में आरक्षण अल्पसंख्यकों को अपनी सांस्कृतिक अधिकार देने और भाषा का संरक्षण करने जैसे प्रावधान पर सहमती बनी। हालांकि भीम राव अम्बेडकर और उत्पीड़ित जातियों और समुदायों के कई नेता सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष कर चुके थे। फलत: सामाजिक न्याय भारतीय लोकतंत्र में संघर्ष का नारा बन कर उभरा।

सामाजिक न्याय से आशय – सामाजिक न्याय का अर्थ एक ऐसे सामाजिक पर्यावरण का निर्माण करना है, जिसके अन्तर्गत समाज के प्रत्येक वर्ग तथा स्तर के व्यक्ति आपस में स्वस्थ्य प्रतियोगिता कर अपने आपको लोकतांत्रिक व्यवस्था का उपयोगी हिस्सा समझकर इसमें समुचित भागीदारी निभाने के योग्य बन सकें। मानव समाज में सामाजिक न्याय की अवधारणा मानव हित के लिए सर्वोपरि तथा सदियों की शासन व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। सामाजिक न्याय का अभिप्राय है, मानव-मानव के बीच में जाति, वर्ग, लिंग, जन्म स्थान, भाषा, संस्कृति, धर्म, समुदाय क्षेत्र इत्यादि के आधार पर भेद-भाव, का अंत होना चाहिए। प्रत्येक नागरिक को विकास का समुचित अवसर मिलना चाहिए। इस संदर्भ में जॉन रॉल्स ने कहा है कि 'सामाजिक न्याय इस अवधारणा पर आधारित है कि समाज को तभी समतावादी माना जा सकता है, जब वह समानता और एकजुटता के सिद्धांतों पर आधारित हो और वहाँ मानवाधिकारों का सम्मान तथा प्रत्येक व्यक्ति के सम्मान की रक्षा की जाती हो'[1] अर्थात सामाजिक न्याय का मूल मंत्र यह है कि संगठित सामाजिक जीवन से जो भी लाभ प्राप्त होते हैं वे गिने-चुने लोगों के हाथों में सिमटकर न रह जाए बल्कि सर्वसाधारण को विशेष रूप से निर्बल और निर्धन वर्गों को उनमें समुचित हिस्सा मिले ताकि वे सामान्य सुखी, सम्मानित और निश्चित जीवन शैली से जीवन-यापन कर सके।

भारतीय लोकतंत्र और सामाजिक न्याय – यद्यपि सभी प्राचीन एवं मध्यकालीन समाजों की रचना ऊँच-नीच और भेदभाव पर आधारित थी। भारतीय समाज में भेदभाव का स्वरूप जन्मगत होने के कारण अधिक कठोर था। शिक्षा और व्यवसाय चुनने की स्वतंत्रता समाज में बहुत ही सीमित लोगों को थी। समाज जातीय आधार पर असमान श्रेणियों में विभक्त था तथा समाज में असमानता, जन्मगत, श्रेणीबद्ध और अपरिवर्त्तनीयता थी। शास्त्रीय विधानों के कारण कुछ जातियों एवं वर्गों को विशेषाधिकार प्राप्त थे, जबकि अधिकांश जातियाँ निर्योग्यताओं से पीड़ित थी। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सामाजिक अन्याय और भेदभाव के उन्मूलन का प्रयास प्रारंभ हुआ। यह कार्य एक साथ दो मोर्चों पर प्रारंभ किया गया। एक ओर न्यायपूर्ण समाज की रचना के लिए आवश्यक संवैधानिक और वैधानिक पहल की गई तो दूसरी ओर गरीबी, भूख एवं बेकारी से लड़ने के लिए योजनाबद्ध रीति से सामाजिक, आर्थिक विकास संबंधी कार्यक्रम प्रारंभ किए गए।

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय समाज का अधिकांश भाग गरीबी, अशिक्षा एवं पिछड़ेपन का शिकार था। अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। अनुसूचित जातियाँ जहाँ सामाजिक दासता का दुख भोग रही थी, वहीं जनजातियाँ सभ्यता से दूर जंगली अवस्था में जी रही थीं।[2] इन जातियों की संकटपूर्ण स्थिति नवोदित लोकतंत्र के समक्ष एक बहुत बड़ी समस्या थी, जिसे देखते हुए भावी समाज की रूपरेखा निर्धारित करने वाली संविधान सभा ने सामाजिक न्याय की स्थापना को राष्ट्र का प्राथमिक लक्ष्य निरूपित किया।

संविधान एवं सामाजिक न्याय – सामाजिक न्याय भारतीय लोकतंत्र का मूल आधार है। संविधान निर्माताओं के मतानुसार सच्चे लोकतंत्र की स्थापना के लिए स्वतंत्रता और समानता की ही नहीं, वरन् सामाजिक न्याय की भी आवश्यकता है। सामाजिक न्याय के बिना स्वतंत्रता और समानता के आदर्श बिल्कुल व्यर्थ हो जाते हैं। इसलिए संविधान की प्रस्तावना में सभी नागरिकों

*शोधार्थी (राजनीतिशास्त्र) राँची विश्वविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

को राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक न्याय प्रदान करना संविधान का लक्ष्य घोषित किया गया है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय के आदर्श को अनेक रूपों में स्वीकार किया गया है। संविधान के तीसरे भाग में वर्णित मौलिक अधिकार और चौथे भाग में वर्णित राज्य के नीति-निर्देशक तत्व में सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिए विविध उपायों का उल्लेख किया गया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16, 17 तथा 18 में समानता के अधिकारों की व्याख्या की गई है। इसी कड़ी में अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के विरूद्ध भेदभाव व अत्याचार संबंधी प्रकरणों में सख्ती बरतने के उद्देश्य से अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण कानून 1989 पारित किया गया।[3]

संविधान के नीति निर्देशक सिद्धांतों में भी सामाजिक शोषण तथा कुप्रथाओं से मुक्ति का प्रावधान है। भारत में मद्य निषेध, कुटीर उद्योग का विकास तथा संरक्षण, स्त्री-पुरूषों, को समान कार्यों के लिए समान पारिश्रमिक तथा वृद्धा पेंशन एवं 14 वर्ष तक के बच्चों को शोषण-मुक्त करने, गर्भवती महिलाओं के लिए भोजन, प्रसूति गृह तथा चिकित्सा की व्यवस्था आदि का भी प्रावधान है। इसी तरह संविधान का अनुच्छेद 46 भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है। यह अनुच्छेद राज्य को निर्देशित करता है कि वह समाज के कमजोर वर्गों विशेष रूप से अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों को शिक्षा एवं आर्थिक हितों की अभिवृद्धि करेगा और सभी प्रकार के शोषण से उनकी रक्षा करेगा। परंतु दिनों-दिन बढ़ती हुई समस्याओं का निदान सरकार के सीमित साधन और केवल सरकारी प्रयास से संभव नहीं है। इस प्रकरण में दो महत्वपूर्ण बातें हैं - पहला भारत का संवैधानिक ढाँचा लोकतांत्रिक है और यह सर्वविदित है कि लोकतंत्र खरगोश की भाँति छलांग नहीं भरता, कछुए की भाँति धीमी गति से कार्य करता है तथा समाज के सभी वर्गों के हितों का समन्वय किया जाता है। दूसरी बढ़ती हुई जनसंख्या सामाजिक न्याय उपलब्ध कराने के मार्ग में बड़ी चुनौती है। सरकार तथा प्रशासन के अथक प्रयास के बावजूद संविधान की प्रस्तावना में वर्णित मानवीय गरिमा को प्राप्त न करने में बढ़ती हुई जनसंख्या भी बाधक है।

जहाँ तक आरक्षण का प्रावधान है विदित हो कि शास्त्रीय आरक्षण व्यवस्था भारतीय हिन्दू समाज में पहले से ही चतुर्वर्णीय व्यवस्था में निहित था। इन चार वर्णों का निर्धारण स्थायी था तथा काम भी स्थायी थे। ब्राह्मण का काम पढ़ना-पढ़ाना, यज्ञ करना-कराना तथा दान देना-लेना था। वह सारे दण्ड से मुक्त था तथा जिसका चाहे वह धन छीन सकता था। क्षत्रिय का काम शासन करना और हथियार धारण करना, वैश्य का काम उद्योग और व्यापार करना तथा शूद्र का काम तीनों वर्णों की सेवा करना, उनका जूठा अन्न खाना तथा उतरन पहनना था।[4] काम तथा पेशे के इस बंटवारे ने शूद्रों को साधनहीन, अनपढ़, राजनीति से दूर एवं सामाजिक दृष्टि से अछूत बना दिया, तो सवर्णों को राजसत्ता के पात्र, साधन सम्पन्न, शिक्षित और समाज का प्रतिष्ठित वर्ग बना दिया। अत: संविधान सभा के प्रारूप समिति के अध्यक्ष भीमराव अम्बेडकर ने इन अछूत एवं शोषित वर्गों के लिए देश में मौजूदा अवसरों में उनकी भागीदारी चाहते थे, उनकी इच्छा थी कि संवैधानिक संस्थाएँ दबे-कुचले लोगों के लिए अवसरों का रास्ता खोलें और लोकतंत्र में उनकी भी हिस्सेदारी बनाए। वह आर्थिक-सामाजिक गैर बराबरी जैसे विष को दूर कर राष्ट्रीय एकता चाहते थे।

इसी बात को ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान में ऐसे प्रावधानों का उल्लेख किया गया है, जिसके अन्तर्गत इन वर्गों के लिए आरक्षण एवं सुविधा उपलब्ध है। लोकसभा तथा राज्य की विद्यानसभा में अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के लिए अनुच्छेद-330 एवं अनुच्छेद-332 में स्थान आरक्षित रखे गये हैं। संविधान के अनुच्छेद-335 के अनुसार केन्द्र तथा राज्य सरकारों के अधीन सेवाओं में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को शासकीय सेवाओं में प्रतिनिधित्व देने के जो छूट प्रदान की गई है, उनमें मुख्य है- आयु सीमा में, छूट, योग्यता स्तर में छूट, नीचे की श्रेणियों में उनकी नियुक्ति और पदोन्नति का विशेष प्रबंध। अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की भांति अन्य पिछड़े वर्गों की समस्याओं का अध्ययन करने एवं उनकी दशा में सुधार लाने की दृष्टि से संविधान के अनुच्छेद 340 के अंतर्गत राष्ट्रपति ने अन्य पिछड़ा वर्ग आयोग का गठन सन् 1955 में काका कालेलकर की अध्यक्षता में किया। इसके लगभग दो दशक बाद वी.पी. सिंह की अध्यक्षता में द्वितीय पिछड़ा वर्ग आयोग (1978-80) का गठन हुआ। इन आयोगों की सिफारिशों को दृष्टिगत रखते हुए केन्द्र व राज्य की नौकरियों में अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया है।

सरकार ने अनुसूचित जातियों, जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण की व्यवस्था की है। अखिल भारतीय स्तर पर खुली प्रतियोगिता परीक्षा के माध्यम से सीधी भर्ती वाले पदों में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए क्रमश: 15 प्रतिशत 7.5 प्रतिशत और 27 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई है। खुली प्रतियोगिता को छोड़कर अन्य अखिल भारतीय आधार पर सीधी भर्ती वाले पदों में के लिए अनुसूचित 16.66 प्रतिशत, जनजातियों के लिए 7.5 प्रतिशत और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए 25.84 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था है। पदोन्नति के मामले में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को क्रमश: 15 और 7.5 प्रतिशत आरक्षण दिया गया है।5 हाल में ही पदोन्नति के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय का यह फैसला है कि सरकारी नौकरियों में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के कर्मियों को पदोन्नति में आरक्षण देने के लिए राज्य सरकारों को आँकड़ा एकत्र करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि इससे पहले सर्वोच्च न्यायालय ने एम. नागराज (2006) के प्रकरण में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के कर्मचारियों को पदोन्नति में आरक्षण का लाभ देने के लिए इन वर्ग के पिछड़ेपन और सार्वजनिक रोजगार में प्रतिनिधित्व के अपर्याप्तता दिखाने वाला मात्रात्मक आंकड़ा जुटाने जैसी शर्त्ते लगा दी थी। परन्तु दुर्भाग्य की बात यह है कि आजादी के 71 साल गुजर जाने के बाद भी अभी तक समाज के निचले तबकों को आरक्षण कोटे का पूरा लाभ नहीं मिला है। इस आरक्षण व्यवस्था का दुरूपयोग हो रहा है। इसके लिए अनुसूचित जाति एवं जनजाति उत्तरदायी नहीं है बल्कि हमारा प्रशासन है। शैक्षणिक पिछड़ापन दूर करने की योजना सरकार को बनानी और सामाजिक पिछड़ापन समाप्त करने की पहल शंकराचार्यों, राष्ट्रीय सेवक संघ तथा हिन्दू परिषद जैसे संस्थाओं की ओर से होनी चाहिए। भारत में आरक्षण का अधिकार सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ापन है। दोनों में से किसी एक को खत्म कर देने पर आरक्षण असंवैधानिक हो सकता है। यदि नीति निर्देशक सिद्धांत में वर्णित 10 साल के अन्दर 14 साल के बच्चों को अनिवार्य शिक्षा प्रदान कर दिया जाए तो आरक्षण की अनिवार्यता ही नहीं होती। विदित हो कि आरक्षण के लक्ष्य को 10 साल में पूर्ण करना या किन्तु यह अभी भी जारी है। यह प्रगति का सूचक नहीं है, वरन् घोर विफलताओं का परिणाम है।

दूसरी ओर आरक्षण की मांग आर्थिक आधार पर की जा रही है, जिससे समाज के आर्थिक रूप से अति पिछड़े हुए दलित, जनजातीय, पिछड़े वर्ग

और सवर्ण सहित समाज के हर जाति को सामाजिक न्याय मिले। ऐसे आर्थिक आधार पर आरक्षण की मांग से योग्यता का आधार समाप्त हो जाता है और आरक्षण का सिद्धांत मजबूत होता है। हमारे देश में जाति आधारित आरक्षण का प्रावधान है ताकि समाज की दबी-पिछड़ी जातियाँ समाज के सशक्त वर्गों के समकक्ष आ सकें। इसलिए देश में धर्म और जाति की सूची बनी हुई है। जब कोई अधिकारी धर्म या जाति का प्रमाण पत्र देता है, तो प्रत्यक्ष प्रमाण पत्र के चलते वह विश्वसनीय होता है, इसके विपरीत जब आय प्रमाण-पत्र दिये जाने लगेंगे तो 80 प्रतिशत से अधिक प्रमाण-पत्र अविश्वसनीय होंगे। इस देश में गरीब, अमीर हो सकता है, अमीर, गरीब हो सकता है, लेकिन अछूत न कभी ब्राह्मण हो सकता है, और न ब्राह्मण कभी अूछत। आरक्षण तो सामाजिक संतुलन और प्रतिष्ठा के लिए आवश्यक है। समाज जातीयता से ग्रसित है, इसलिए जब-तक वह खत्म नहीं होगा, आरक्षण का आर्थिक आधार कैसे हो सकता है? यदि आर्थिक कारण ही महत्वपूर्ण होता तो मनु जातिगत आधार पर अलग-अलग कानून नहीं बनाते।

अत: राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए विशेष उपबंध करने का अधिकार है, इनके बावजूद अब तक इनका आर्थिक और सामाजिक उत्थान नहीं हो पाया है। सामाजिक, आर्थिक और जातिगत जनगणना 2011 के आंकड़ों के अनुसार ग्रामीण अनुसूचित जाति के मात्र 3.95 फीसदी परिवार ही सरकारी नौकरी में है तथा ग्रामीण अनुसूचित जनजातियों की नौकरियों में भागीदारी 4.36 फीसदी है प्रत्येक 15 मिनट में एक दलित हिंसा के रिपोर्ट है। पिछले 10 वर्षों (2007-2017) के दौरान दलित हिंसा में 66 फीसदी की वृद्धि भी सामाजिक कलंक है।[6] ऐसी स्थिति में पिछड़ों के आरक्षण समाप्त करने तथा अन्य योजनाओं में कटौती करने की सिफारिशें न्याय संगत नहीं है।

निष्कर्ष - सामाजिक न्याय एक ऐसा सामाजिक मूल्य है जिसके अभाव में कोई भी समाज व्यवस्था न तो विकास कर सकती है और न ही स्थायित्व प्राप्त कर सकती है। यद्यपि विगत सात दशकों से भारत में सामाजिक न्याय के क्षेत्र में काफी कुछ किया गया है, जिससे अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों अन्य कमजोर वर्गों एवं महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है, और गाँवों से लेकर केन्द्र तक सत्ता में इन वर्गों की भागीदारी में वृद्धि हुई है। किन्तु सामाजिक न्याय में पारदर्शिता लाने के लिए अभी काफी कार्य करना बाकी है। यह सच है कि गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वाले व्यक्तियों के अनुपात में कमी आयी है, परन्तु सामाजिक, आर्थिक असमानता अभी भी विद्यमान है। अनुसूचित जातियों व जनजातियों को शासकीय सेवाओं में आरक्षण एवं अन्य सुविधाओं का लाभ मिला है, जिससे समाज में इन वर्गों के लोगों ने अच्छी शिक्षा प्राप्त कर शासकीय सेवाओं और राजनीति में सम्मानीय पदों को प्राप्त किए हैं किन्तु ऐसे लोगों की संख्या बहुत ही सीमित है, अधिकांश लोग सामाजिक न्याय से वंचित हैं। इस प्रकार सामाजिक न्याय के क्षेत्र में भारतीय लोकतंत्र अपने लक्ष्य एवं आशाओं के अनुरूप सफलता प्राप्त नहीं कर पाया है। सरकार को नीतियों के क्रियान्वयन में और उदारता व ईमानदारी का प्रदर्शन करने का साहस जुटाना चाहिए। ऐसी स्थिति में जब समाज का उपेक्षित तबका समृद्ध होगा तथा शासन-प्रशासन में सक्रिय सहभागी बनेगा तो निश्चित रूप से भारतीय लोकतंत्र की जड़ें मजबूत होंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एम. महाराजन, 2001, सोशल जस्टिस इन इंडिया, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, न्यू दिल्ली, पृष्ठ संख्या-101
2. श्रीनाथ वर्मा, मनोज कुमार सिंह (सम्पा.), 2013, पंचायत राज एवं ग्रामीण विकास, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-67
3. वही, पृष्ठ संख्या - 69
4. एस.एल. सागर, 1987, आरक्षण क्यों, सागर प्रकाशन, मैनपुरी, पृष्ठ संख्या-44
5. प्रकाश नारायण नाटाणी,2007,सामाजिक न्याय एवं युवा कल्याण योजनाऐं , सोनाली प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ संख्या-25
6. केसी त्यागी, 10 सितम्बर, 2018, लोकतांत्रिक भारत और आरक्षण, प्रभात खबर, पृष्ठ संख्या - 10

****

आरक्षण नीति - एक अध्ययन

डॉ. भावना नायक *

शोध सारांश – विंध्य के दक्षिण में प्रेसीडेंसी क्षेत्रों और रियासतों के एक बड़े क्षेत्र में पिछडे वर्गो के लिए आजादी से बहुत पहले आरक्षण की शुरूआत हुई थी।

महाराष्ट्र में कोल्हापुर के महाराजा छत्रपति सादूजी महाराज ने 1902 में पिछडें वर्ग से गरीबी दूर करने और राज्य प्रशासन ने उन्हें उनकी हिस्सेदारी देने के लिए आरक्षण का प्रारंभ किया था। कोल्हापुर राज्य में पिछडे वर्गो/ समुदायों को नौकरियों में आरक्षण देने के लिए 1902 की अधिसूचना जारी की गई थी।

यह अधिसूचना भारत में दलित वर्गो के कल्याण के लिए आरक्षण उपलब्ध कराने वाला पहला सरकारी आदेश है।

प्रस्तावना – अस्पृश्यता की प्रथा भारत के दक्षिणी भागों में अधिक प्रचलित रही। और उत्तरी भारत में अधिक फैली हुई थी। परम्परागत व्यवसायों के आधार पर कुछ जातियों को हिंदू और गैर हिंदू दोनों समुदायों में स्थान प्राप्त है। जातिगत आधार मनु के साथ इतिहास के प्रारंभिक काल से जिसकी शुरूवात होती है। ब्रिटिश औपनिवेशिक काल के दौरान 1806 के बाद व्यापक पैमाने पर सूचीकरण का काम किया गया था। 1881 और 1931 के बीच जनगणना के समय इस प्रक्रिया में तेजी आई।

1. 1882 :– हंटर आयोग की नियुक्ति हुई। महात्मा ज्योतिबाराव फूले ने नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के साथ सरकारी नौकरियों में सभी के लिए आनुपातिक आरक्षण की मांग की।

2. 1891 :– त्रावणकोर के सामंती रियासत में 1891 के आरंभ में सार्वजनिक सेवा में योग्य मूल निवासियों की अनदेखी करके विदेशियों को भर्ती करने के खिलाफ प्रदर्शन के साथ सरकारी नौकरियों में आरक्षण के लिए मांग की गई।

3. 1901 :– महाराष्ट्र के सामंती रियासत कोल्हापुर में साहु महाराज द्वारा आरक्षण शुरू किया गया। सामंती बडौदा और मैसूर की रियासतों में आरक्षण पहले से लाए थे।

4. 1908 :– अंग्रेजों द्वारा बहुत सारी जातियों और समुदायों के पक्ष में प्रशासन में जिनका थोडा बहुत हिस्सा था के लिए आरक्षण शुरू किया गया।

5. 1909 :– भारत सरकार अधिनियम 1909 में आरक्षण का प्रावधान किया गया।

6. 1919 :– मोटाम-चेम्सफोर्ड सुधारों को शुरू किया गया।

7. 1919 :– भारत सरकार अधिनियम 1919 में आरक्षण का प्रावधान किया गया।

8. 1921 :– मद्रास प्रेसीडेंसी ने जातिगत सरकारी आज्ञापत्र जारी किया, जिसमें गैर-ब्राहम्णों के लिए 44 प्रतिशत, ब्राहम्णों के लिए 16 प्रतिशत, मुस्लिम 16 प्रतिशत, भारतीय एंग्लो/ईसाइयों के लिए 16 प्रतिशत ओर अनुसूचित जातियों के लिए 8 प्रतिशत आरक्षण दिया गया था।

9. 1935 :– भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने प्रस्ताव पास किया, जो पूना समझौता कहलाता है, जिसमें दलित वर्ग के लिए अलग निर्वाचन क्षेत्र आवंटित किए गए।

10. 1935 :– भारत सरकार अधिनियम 1935 में आरक्षण का प्रावधान किया गया।

11. 1942 :– बी.आर. अम्बेडकर ने ST की उन्नति के समर्थन के लिए अखिल भारतीय दलित वर्ग महासंघ की स्थापना की। उन्होंने सरकारी सेवाओं और शिक्षा के क्षेत्र में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण की मांग।

12. 1946 :– भारत में केबिनेट मिशन अन्य कई सिफारिशों के साथ आनुपातिक प्रतिनिधित्व का प्रस्ताव दिया।

13. 1950 :– 1950 में संविधान लागू। सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछडे वर्ग की स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए कालेलकर आयोग को स्थापित किया गया। जहॉ तक अनुसूचित जातियों ओर अनुसूचित जनजातियों का संबंध है, रिपोर्ट को स्वीकार किया गया। अन्य पिछडी जाति वर्ग के लिए की गई सिफारिशों को अस्वीकार कर दिया गया।

14. 1958 :– काका कालेलकर की रिपोर्ट के अनुसार अनुसूचियों में संशोधन किया गया।

15. 1976 :– अनुसूचियों में संशोधन किया गया।

16. 1979 :– सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछडे की स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए मंडल आयोग को स्थापित किया गया है। आयोग के पास उपजाति जो अन्य पिछडे वर्ग कहलाती है का सटीक आंकडा 1930 की जनगणना के आंकडे के अनुसार 52 प्रतिशत ओबीसी आबादी के है।

17. 1980 :– आयोग ने एक रिपोर्ट पेश की और मौजूदा कोटा में बदलाव करते हुए 22 प्रतिशत से 49.5 प्रतिशत वृद्धि करने की सिफारिश की। 2006 में ओबीसी की संख्या 2297 तक पहंच गई जो मंडल आयोग द्वारा तैयार समुदाय सूची में 60 प्रतिशत में वृद्धि है।

18. 1990 :– मंडल आयोग की सिफारिशें विश्वनाथ प्रतापसिंह द्वारा सरकारी नौकरियों में लागू किया गया। छात्र संगठनों ने राष्ट्रव्यापी प्रदर्शन शुरू किया। दिल्ली विश्वविद्यालय के छात्र राजीव गोस्वामी ने आत्मदाह की कोशिश की। कई छात्रों ने अनुसरण किया।

19. 1991 :– नरसिम्हा राव सरकार ने अलग से अगडी जातियों में गरीबों के लिए 70 प्रतिशत आरक्षण शुरू किया।

20. 1992 :– इंदिरा साहनी मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने ओबीसी आरक्षण सही ठहराया।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) बी.एल.पी. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

21. 1995 :- संसद ने 77 वें संविधानिक संशोधन द्वारा अनुसूचित जाति अध्यादेश अनुसूचित जनजाति की तरक्की के लिए आरक्षण को समर्थन करते हुए 16(4) मे डाला। बाद में 85 वें संशोधन द्वारा इसमें अनुवर्ती वरिष्ठता को शामिल किया।

22. 1998 :- केन्द्र सरकार ने विभिन्न सामाजिक समुदायों की आर्थिक और शैक्षिक स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए पहली बार राष्ट्रव्यापी सर्वेक्षण किया। मंडल आयोग द्वारा और राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के ऑकडे कम है। राष्ट्रीय सर्वेक्षण ने संकेत दिया कि बहुत सारे क्षेत्रों में ओबीसी की स्थिति तुलना अगडी जाति से की जा सकती है।

23. 12 अगस्त 2005 :- उच्चतम न्यायालय ने पी.ए. इनामदार और अन्य बनाम महारासू राज्य और अन्य के मामले में 12 अगस्त 2005 को 7 जजों द्वारा सर्वसम्मति से फैसला सुनाते हुए घोषित किया कि राज्य पेशेवर कॉलेजों समेत सहायता प्राप्त कालेजों ने अपनी आरक्षण नीति और अल्पसंख्यक और गैर अल्पसंख्यक पर नही थोप सकता है।

24. 2006 :- सर्वोच्च न्यायालय के संवैधानिक पीठ में एम. नागराज ओर अन्य बनाम यूनियन बैंक ओर अन्य मामले में संवैधानिक वैधता की धरा 16 (4) (द)6 (4) बी और धारा 335 के प्रावधान को सही ठहराया गया।

25. 2006 :- केन्द्रिय सरकार के शैक्षिक संस्थानों में अन्य पिछडे वर्गो के लिए आरक्षण शुरू हुआ। कुल आरक्षण 49.5 प्रतिशत चला गया।

26. 2007 :- केन्द्रिय सरकार के शैक्षिक संस्थानों में ओबीसी आरक्षण पर सर्वोच्च न्यायालय ने स्थगन दे दिया।

27. 2008 :- भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने 10 अप्रैल 2008 को सरकारी धन से पोषित संस्थानों में 27 ओबीसी कोटा शुरू करने के लिए सरकारी कदम को सही ठहराया, न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अपनी पूर्व स्थिति को दोहराते हुए कहा कि मलाईदार परत को आरक्षण नीति के दायरे से बाहर रखा जाना चाहिए।

ओबीसी कमीशन को संवैधानिक दर्जे वाला बिल लोकसभा से पास

3 अगस्त 2018 :- राष्ट्रीय ओबीसी को संवैधनिक दर्जा देने से संबंधित संविधान संशोधन विधेयक को लोकसभा ने गुरूवार 2/3 बहुमत के साथ सर्वसम्मति से मंजूरी।

संविधान (1203 वॉ संशोधन) विधेय 2017 पारित किया 406 सदस्यों ने वोट दिया विपक्ष का एक भी वोट नहीं पड़ा।

बीजेडी के भृतहरि महताब ने संशोधन पेश किया। 84 मुकाबले 302 मतों से नकार दिया। विधेयक पर चर्चा का जवाब देते हुए सामाजिक न्याय एवं अधिकारिक मंत्री थावर चंद्र गेहलोत ने कहा कि मोदी सरकार ने पिछडा वर्ग आयोग को संवैधानिक दर्जा देने का संकल्प लिया था।

न्यायमूर्ति रंजन गोगोई की अध्यक्षता में पॉच जजों की खंडपीठ ने संवैधानिक व्यवस्था को पुनर्परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया कि संविधान के अनुच्छेद 341 और 342 के अनुसार किसी भी नागरिक का जाति का स्तर सिर्फ उसी राज्य में के अनुसार किसी भी नागरिक का जाति का स्तर सिर्फ उसी राज्य में रहता है, वह उसे लेकर दूसरे राज्य में पलायन नहीं कर सकता यानी दूसरे राज्य में उस जाति के प्रमाण-पत्र की मान्यता नही होगी। अगर किसी को जाति के आधार पर आरक्षण मिल रहा है तो उसका आधार संबंधित राज्य का प्रमाण-पत्र ही होगा।

संविधान निर्माताओं का मानना था कि जाति व्यवस्था के कारण अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति ऐतिहासिक रूप से पिछडे रहे और उन्हें भारतीय समाज में सम्मान तथा समान अवसर नहीं दिया गया और इसीलिए राष्ट्र निर्माण की गतिविधियों में उनकी हिस्सेदारी कम रही। संविधान ने सरकारी सहायता प्राप्त षिक्षण संस्थाओं की खाली सीटों तथा सरकारी/सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरियों में अजा और अजजा के लिए 15 प्रतिशत और 75 प्रतिशत का आरक्षण था। बाद में अन्य वर्गो के लिए भी आरक्षण शुरू किया गया। 50 प्रतिशत से अधिक का आरक्षण नहीं हो सकता, सर्वोच्च व्यायालय के इस फैसले से आरक्षण की अधिकतम सीमा तय हो गई। राज्य कानूनो ने 50 प्रतिशत की सीमा को पार कर दिया है और सर्वोच्च न्यायालय में इन पर मुकदमें चल रहे है।

उदाहरण के लिए जाति आधारित आरक्षण 69 प्रतिशत तमिलनाडू की करीब 87 प्रतिशत जनसंख्या पर यह लागू होगा।

2017 अक्टूबर :- राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद ने देश में अन्य पिछडा वर्गो के उप-वर्गीकरण की व्यवहार्यता का अध्ययन करने के लिए ओबीसी आयोग का गठन किया है। जिसकी रिपोर्ट के आधार पर सरकार अभी अन्य पिछडा वर्गो में आरक्षण के लाभों के समान वितरण के तरीकों पर विचार करेगी। अध्यक्ष है न्यायमूर्ति (सेवानिवृत्त) जी. रोहिणी।

दिसम्बर 2018 :- में ओबीसी उपजातियों के उप-वर्गीकरण के लिए आयोग की एक रिपोर्ट के अनुसार अन्य पिछडा वर्गो और ओबीसी के रूप में वर्गीकृत सभी उप-जातियों के 25 फीसदी जातियाँ ही ओबीसी आरक्षण का 97 प्रतिशत फायदा उठा रही है, जबकि कुल ओबीसी जातियों में 37 प्रतिशत में शून्य प्रतिनिधित्व है।

समिति द्वारा तीन बिंदू जनादेश है-

- केन्द्रिय ओबीसी सूची के तहत आने वाले विभिन्न जातियों और समुदायों के बीच 'आरक्षण के लाभों के असमान वितरण की सीमा' की जॉच करना।
- वास्तविक उप वर्गीकरण के लिए तंत्र, मापदंड और मापदंडों को पुरा करने के लिए वास्तविक ओबीसी आरक्षण 27 प्रतिशत रहेगा और इसके भीतर समिति को फिर से व्यवस्था करना होगी।
- ओबीसी की केन्द्रिय सूची के लिए किसी भी दोहराव को हटाकर आदेश लाना।
- उत्तरप्रदेश में निम्न ओबीसी लगभग आबादी का निर्माण करते है। ओबीसी उप-वर्गीकरण राज्यों, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडू, महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, तेलंगान, कर्नाटक, झारखंड, बिहार, जम्मू क्षेत्र और हरियाणा और पांडिचेरी के केन्द्र शासित प्रदेशों से पहले ही लागू किए जा चुके है। केन्द्रिय ओबीसी सूची के उप-वर्गीकरण एक ऐसा विचार है, जो लंबे समय से अतिदेय रहा है।

केन्द्रिय मंत्रिमंडल ने ओबीसी के उप वर्गीकरण के मुद्दे की जॉच के लिए संविधान के अनुच्छेद 340 के तहत एक आयोग की स्थापना के प्रस्ताव को मंजूरी दी। ओबीसी की क्रीमी लेयर 6 से बढाकर 8 लाख रूपयें की गई। इसकी रिपोर्ट में कहा गया हैं कि 97 प्रतिशत ओबीसी आरक्षण के प्रमुख लाभार्थियों में यादव, कुर्मी, जाट (भरतपुर और ढोलपुर जिलें के अलावा राजस्थान की जाट केन्द्रिय ओबीसी सूची में है। सैनी, थेवर, एझावा और वौक्कलिगा जातियाँ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. टाईम्स ऑफ इंडिया
2. सोशल जस्टिक पीडीएफ 130993
3. दैनिक भास्कर
4. भारत में आरक्षण विकीपीडिया

राजनीति के क्षेत्र में पत्रकारिता की भूमिका एवं पत्रकारिता के पक्ष में सुझाव

डॉ. जे. के. संत * डॉ. माया पारस **

प्रस्तावना – पत्रकारिता के पेशे में जितनी प्रतिष्ठा है, उतनी जिम्मेदारी भी है :–पत्रकार राष्ट्रीय विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का अदा करते है। ए. लिंकन द्वारा दी गई परिभाषा सर्वाधिक स्पष्ट और प्रचलित है– 'लोकतंत्र जनता की, जनता के द्वारा और जनता के लिए सरकार' पीटर बी.हैरिस का मानना है कि लिंकन द्वारा उपर्युक्त परिभाषा में प्रयुक्त, तीनों वाक्यांशों के निश्चित अर्थ है, जनता की सरकार का वास्तविक अर्थ है, जनता की ओर से सरकार जनता के द्वारा सरकार का अभिप्राय है। प्रतिनिधिमूलक सरकार तथा जनता के लिए सरकार का अभिप्राय है, जनहित के प्रति प्रतिबद्ध सरकार। इसी शासन प्रणाली में प्रचुर मात्रा में नागरिकों को स्वतंत्रता प्राप्त होती है, नागरिकों की स्वतन्त्रता का सरकार द्वारा अतिक्रमण न हो इसके लिए एक स्वतंत्र प्रेस का होना अनिवार्य है । स्वतंत्र प्रेस का अर्थ यह है कि समाचार– पत्रों पर सरकार या अन्य निहित स्वार्थो का आधिपत्य न हो और वे अपने विचारों को निष्पक्ष रूप से प्रकट करने के लिए स्वाधीन होने चाहिए किसी मत को,चाहे वह वर्ममान समाजिक व्यवस्था और राजनीतिक सत्ता के कितना भी विरूद्ध क्यों न हो कुचला नहीं जाना चाहिए ।

राजनीति के क्षेत्र में पत्रकारिता की भूमिका व सुझाव – समाचार पत्र राजनीतिक समाचारों को पत्र में अधिकांश जगह देते हैं, राजनीति ऊपर से नीचे तक आम जीवन में इतनी अधिक छा गयी है कि इसके बिना समाचारो की अपेक्षा भी नहीं की जा सकती, प्रश्न यह नहीं है कि राजनीति का जीवन में बहुत अधिक छा जाना उचित है या अनुचित । पत्रकारिता के लिए तो यह आवश्यक है कि जो राजनीति आज है, उसे अपने समाचार में उसके वास्तविक रूप में प्रस्तुत करें । पत्रकारिता के लिए अत्यन्त आवश्यक है कि दलबन्दी तथा गुटबन्दी से प्रभावित नहीं हो, किसी भी प्रकार के समाचार देते समय यह सतर्कता तो रखनी ही चाहिए कि समाचार रोचक तथा पठनीय हो। किसी दल विशेष या गुट विशेष कि स्तुति या निन्दा करने वाला नहीं रहे, चुनाव के समय पत्रकारों कि महत्वपूर्ण भूमिका रहती है, अगर हम निर्वाचन अधिकारियों, अन्य विभिन्न सरकारी अधिकारियों तथा कर्मचारियों से निष्पक्षता की उम्मीद करते है, पर जहां वह नहीं होती वहां उसकी आलोचना करते है, तो ये पत्रकार का दायित्व है कि हम भी निष्पक्षता की अपेक्षा को अपने स्तर पर पूरा करें, चुनाव के मौकों पर अखबार और पत्रकार की प्रतिष्ठा दांव पर लगी होती है, एक पत्रकारिता के रूप में विश्वनीयता की सबसे बड़ी परीक्षा तभी होती है और परीक्षा में सफल हो कर निकलते है, तो न केवल इससे हमारे अखबार की बल्कि पत्रकार की भी प्रतिष्ठा बढ़ती है, अंतत: एक अखवार की प्रतिष्ठा बहुत हद तक उसके पत्रकारिता की प्रतिष्ठा से बनती है । पत्रकार को राजनीति की खबर लिखते समय बहुत सावधानी बरतनी चाहिए यदि उससे कोई भूल हो जाती है तो वह नुकसानदेह साबित हो सकती है । उसका प्रमाद उसके छवि को धूमिल कर सकता है । इसके लिए विश्वसनीय सूत्रों से प्राप्त तथ्यों के आधार पर रिपोर्टर तैयार करते समय पत्रकार को अपनी ओर से ऐसा कुछ नहीं लिखना चाहिए जिससे किसी व्यक्ति या पार्टी की प्रतिष्ठा पर आंच आए या कोई निरपराधी दण्ड पा जाए। इस विषय में कई बार राजनीति उठा पठक में लोग खुद की गलती को छुपाने का प्रयास करते है, बल्कि पत्रकार उसके भ्रमात्मक या अंतर्विरोधी बयानों के आधार पर सत्यानवेषण में लगना चाहिये और उसे कोई न कोई ऐसा सूत्र हांथ लग ही जाए जिससे वास्तविकता का पता चल जाये। राजनीति में आज कल ऐसा बहुत देखने को मिलता है कि घटना के समय संबंधित साक्ष्यों को या तो गायब कर दिया जाता या घटना से संबंधित साक्ष्य देने वाले बयान देने की स्थिति में ही नहीं होते ।

भाषण रिपोर्टिंग का एक महत्पूर्ण हिस्सा है, मीडिया के हर समाचार माध्यम में कोई न कोई समाचार भाषण आधारित होता ही है, भाषण से तात्पर्य सिर्फ नेता द्वारा सार्वजनिक सभा में दिया गया वक्तव्य नही है बल्कि इसका अभिप्राय संगोष्ठी, अधिवेशन, संसद, विधान सभा आदि में कही गयी बातें या व्यक्त किए गए विचार है, रिपोर्टर के लिए जरूरी नहीं कि वह किसी व्यक्ति की बातों को उसी की शब्दावली में लिखें । उसे उन बातों को अपनी भाषा में लिखने की पूरी छूट होती है, लेकिन ऐसा करते समय उसे ध्यान रखना पड़ता है कि किसी व्यक्ति के विचार उसकी भाषा में आ कर बदल तो नहीं गये । भाषणों की रिपोर्टिंग के टेप रिकार्डर का प्रयोग बहुत अच्छा होता है,इससे यह सुविधा होती है कि रिपोर्टर सारी बातों को एक बार फिर सुन सकता है । जिससे किसी महत्वपूर्ण बात के छूटने की संभावना कम होती है या वक्त के भाव बदल जाने की सभावना कम होती है । एक रिपोर्टर को राजनैतिक गतिशील मुद्दों के बारे में विकट सोच होनी चाहिए, राजनीति से जुड़ी खबरों के बारे में स्वाभाविक बुद्धि हो रिपोर्टिंग में स्पष्ट लेखन शैली जो ध्यानआकर्षित कर सके और समय सीमा को ध्यान में रखते हुये प्रभावी ढंग से संचालित करने की क्षमता हो, आज इस भाग का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सों में है की वह सरकार के औपचारिक कामकाज के बारे में नागरिकों को सूचित करें । संभावित लापरवाही और दुरूपयोग पर एक प्रहरी के रूप में सेवा करे ।

सुझाव स्वरुप कुछ पक्तियां –

1. पत्रकारिता करने वाले मेरे दोस्त आपके विचारों में निष्पक्षता होनी चाहिए, कोई भी चीज लिखने से पहले आपके पास उसके प्रूफ होने चाहिये।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय तुलसी महाविद्यालय, अनूपपुर (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, राजनगर (म.प्र.) भारत

बिना किसी साक्ष्य के कोई भी चीज लिखने का कोई हक नहीं,
आपकी सोच किसी विषय पर एक विश्लेषक के तरह हो, यह सबसे ज्यादा जरूरी होना चाहिए।

2. पत्रकारिता लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ कहे जाने वाला,
देश दुनिया सरकार की खबरे हमें कभी न छुपाना।
सुख द्:ख में सबके साथ चलना,
जनहित में भटक जाए सरकार तो सही रास्ता दिखाना ।।
3. पत्रकारिता करने वाले मेरे दोस्त सच्चाई की उजागर में कभी गम मत करना,
घर,परिवार दोस्त, सरकार को भी सच्चाई से दूर मत करना।
मिल जाए पथ में भ्रष्टाचारी, बालात्कारी,हत्यारे आदि जैसे अपराधी,
तो भाई भतीजा- वाद में फंसकर आँख बंद मत करना ।।
4. पत्रकारिता की गहराई सच्चाई में ही होती है,
ईमानदारी सच्चाई से काम करने वाले के ही पहचान भीड़ से हटकर होती है।
देश दुनियां में खबरें तो बहुत होतीं हैं, पर बिना सच्चाई के अच्छाई नहीं होती है,
क्योंकि सत्य और झूँठ की लड़ाई में अन्तत: सच्चाई की ही जीत होती है।।
5. पत्रकारिता करना आसान नहीं होता, यह क्षेत्र चुनौतियों से भरपूर होता है,
जनता की आवाज बनने का समर्पण हो जो इस पेशे में आने की पहली शर्त होता है।
क्योंकि पत्रकारिता के क्षेत्र में खुद को काम पर फोकस रखना होता है,
इस प्रोफशेन के लिए जोश और होश के साथ काम करना होता हे ।।
6. पत्रकारिता स्वस्थ्य राजनीति का एक आधारभूत अंग हो,
जो ऊँच-नीच, जाति, धर्म से ऊपर उठकर चलता सबके संग हो।
पत्रकारिता के पेशे में जितनी प्रतिष्ठा है, उतनी ही जिम्मेदारी ,
राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक या धार्मिक हो पर निष्पक्ष सूचनाएं,
के संग हो।।
7. विषम परिस्थितियां हो या समतल तल,
महामारी आकाल या बाढ़ भूकंप का पल,
राजनीतिक उथल पुथल हो या अपराध का दलदल,
सत्ता का हो या विपक्ष का दल,
लोगों तक खबरें पहुँचाता हरपल,
धूप -सर्दी या बरसात आतंकवाद या नकसलवाद,या दुर्घटना के हालात,
सैनिक हो या पहरेदार, मूल कर्त्तव्य हो या अधिकार,
निर्भीक निडर सा जो हर हाल में देता समाचार, वही कहलाता पत्रकार।।

निष्कर्ष - लोकतांत्रिक व्यवस्था में न्यायपालिका, कार्यपालिका , व्यवस्थापिका के बाद चौथा स्तभ प्रेस को माना जाता है। हमारे देश की व्यवस्था में जब भी संकट का दौर आया ऐसे समय में प्रेस और मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। आज देश के सामने कई चुनौतियां हैं। ऐसी स्थिति में प्रेस की सजगता जरुरी है। विभिन्न चुनौतियों का सामना करने के लिये व्यवस्था से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति के साथ प्रेस भी तैयार रहें। पत्रकारों को बताने की आवश्यकता नहीं, वे सभी चीजों की जानकारी रखते है, वे देश हित व देश के नवनिर्माण में अपनी भूमिका सुनिश्चित करें। हमारे देश का मीडिया आज भी जो काम कर रहा है वह अन्य क्षेत्रों से बेहतर है। लेकिन इससे संतोष नहीं किया जा सकता क्योंकि भारतीय संदर्भ में लोकतंत्र के इस चौथे खंभे ने अपनी भूमिका से देश की आजादी में योगदान से लेकर तमाम ऐसे कार्य किए है, जिस पर खबरपालिका गर्व कर सकती है। लेकिन मीडिया का रूझान हाल के वर्षों में जिस तरह से बदला है, उस पर स्वयं विचार करना होगा। हमें स्वीकार करना चाहिए कि भारत जैसे विकासशील देश में मीडिया का दायित्व लोगों को खबर पहुंचाना ही नहीं होता है, बल्कि उन्हें विश्लेषणात्मक व विवेचनात्मक चेतना से समृद्ध करना भी होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नंदलाल, 'राजनीति विज्ञान', बी.ए. 1st Year
2. वेव साइट।
3. समाचार-पत्र।
4. स्वविवेक पर आधारित।

****

भारत में न्यायिक सक्रियता – स्थिति और संभावनाएं – एक अध्ययन

डॉ. प्रदीप कुमार चतुर्वेदी *

प्रस्तावना – शासन का प्रकार भले ही कोई सा भी हो,सरकार अपने व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्यायापालिका इन तीनों ही अंगो के माध्यम से जनकल्याण के विविध कार्यो को सम्पन्न करती है। लोकतंत्र में मुख्यत: नागरिकों की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए तथा उनके लिए एक न्यायपूर्ण व्यवस्था की स्थापना करने के लिए ही सरकार का निर्माण किया जाता है। भारत में स्वतंत्रता के पत्तत बडी आशाओं से एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना की गई है। यहॉ केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों में जनकल्याण के प्रत्येक पक्ष के प्रति संवेदनशील होने के सतत प्रयास किए गए है। संविधान में वर्णित कल्याणकारी आदर्शो एवं सिद्धांतों को क्रियान्वित करने के विषय में व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका के साथ–साथ न्यायपालिका भी सजग एवं चिन्तित रही है। इसी से भारत में न्यायपालिका की भूमिका समय की आवश्यकतानुसार सक्रिय होती रही है।

न्यायिक सक्रियता का अर्थ – कानुन एवं नियमों की व्याख्या करना एवं विभिन्न मामलों में उन्हें लागू करवाना न्यायपालिका का अधिकार एवं दायित्व माना जाता है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय की स्थापना को सर्वाधिक प्रमुख संर्वेधानिक उद्देश्यों में स्थान दिया गया है। इसी को ध्यान में रखते हुए न्यायपालिका कानूनी व्याख्याओं से आगें बढकर कानुन की सकारात्मक व्याख्या करने एवं जन साधारण के हितों की रक्षा के लिए सदैव प्रयासरत रही है। न्यायिक सक्रियता के अंतर्गत न्यायपालिका अपनी परम्परागत भूमिका, विधियों की व्याख्या करने तथा विधियों के उल्लंधनकर्ताओं को दण्डित करने से आगे बढकर जनसामान्य के हितों को पूरा करने के लिए शासन को निर्देश देने तथा शासकों की स्वेच्छाचारिता पर अंकुश लगाने के लिए सक्रिय हो जाती है। इस भूमिका में न्यायपालिका एक ओर तो न्यायिक समीक्षा के पक्ष में ओर भी मुखर हो जाती है तो दुसरी ओर सार्वजनिक संरक्षण से संबंधित मामलों में अधिक सक्रिय हो जाती है।

महत्वपूर्ण ऐतिहासिक उपलब्धि – न्यायिक सक्रियता भारतीय न्यायपालिका के लिए तथा समूची लोकतांत्रिका व्यवस्था के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक उपलब्धि है। भारत में आजादी के लिए किए गए महान संघर्ष ने आमजनो के मानस में एक न्यायपूर्ण व्यवस्था के प्रति बहुत सारी उम्मीदें जगाई थीं। कालान्तर में ये उम्मीदे पूर्ण रूप में या उसी रूप में पूरी नहीं हो सकी। यद्यपि इस दिशा में सभी सरकारों के द्वारा गम्भीर प्रयास किये गए किन्तु विभिन्न कारणों से बहुत सारे साधारण लोग उनके लाभों से वंचित ही रह गए। भारतीय न्यायपालिका में इसे संवेदनशीलता से अनुभव किया गया।

विगत तीन दशकों से भारत में न्यायिक व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन आऐं है। ये परिवर्तन मुख्यत: न्यायपालिका के व्यवहार में तथा उनके उद्देश्यों में दिखाई दिए है। व्यक्तिगत न्याय के साथ–साथ सामाजिक न्याय को भी न्यायपालिका में मुख्य रूप से स्वीकार किया गया है। अब न्यायपालिका की क्रियात्मक भूमिका सुधार अनुसंधान, प्रशासकीय प्रबंध तथा नीति निर्धारण जैसे क्षेत्रों में भी प्रमुख रूप से अनुभव की जा रही है। जो कार्य पहले मूल रूप से कार्यपालिका के ही माने जाते थे, उनके सम्पादन में भी न्यायपालिका की रूचि एवं भूमिका प्रभावी हो गई है। न्यायपालिका द्वारा अनावश्यक औपचारिकताओं,उलझनों तथा परम्पराओं की उपेक्षा करते हुए अधिक प्रभावी क्रियात्मक तथा रचनात्मक भूमिका को स्वीकार किया जाना भारतीय न्यायायिक इतिहास में एक अत्यंत महत्वपूर्ण उपलिब्ध है।[1]

लोक कल्याणकारी राज्य एवं न्यायिक सक्रियता – लोककल्याणकारी राज्य में मुख्यत: सरकार के कार्यपालिका अंग से कल्याणकारी योजनाओं के क्रियान्वयन की अपेक्षा रहती है। व्यवस्थापिका कल्याणकारी नीतियों,योजनाओं एवं बजट प्रावधानों की स्वीकृति के द्वारा अपनी भूमिका का निर्वाह करती है। इस समूची प्रक्रिया में ऐसी स्थिति निर्मित होने की सम्भावना रहती है, जिसमें कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका कार्यभार की अधिकता एवं समय की कमी के कारण अपने दायित्वों का पूर्ण रूप से निर्वहन न कर सकें। ऐसी स्थिति में संविधान की प्रस्तावना में निहित सामाजिक आर्थिक एवं राजनीति न्याय के उद्देश्य पूरे नही हो पाते हैं तथा एक प्रकार की संवैधानिक रिक्तता की स्थिति निर्मित हो जाती है। इस रिक्तता को भरने के लिए भारतीय न्यायपालिका द्वारा सक्रिय एवं सकारात्मक पहल की गई है। न्यायिक सक्रियता इसी का परिणाम है। इसके द्वारा न केवल व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका बल्कि न्यायपालिका भी लोक कल्याणकारी राज्य के उद्देश्यों को पूर्ण करने एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने में अपना सक्रिय योगदान देती है तथा न्याय को धरातल तक पहुचानें के लिए प्रयासरत रहती है।

संवैधानिक प्रावधान एवं न्यायक सक्रियता – भारतीय संविधान में मूलरूप से अथवा स्पष्ट रूप से न्यायिक सक्रियता संबंधी प्रावधान प्राय: नहीं पाए जाते है। मौलिक अधिकारों की रक्षा तथा कानुन की व्याख्या के अति संवेदनशील कार्यो के सम्पादन में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिये गए निर्णयों में न्यायिक सक्रियता की अवधारणा का विकास हुआ है।

भारतीय संविधान के द्वारा एक प्रभावी क्रियाशील एवं सकारात्मक कल्याणकारी व्यवस्था की स्थापना की गई है। न्यायिक सक्रिया के द्वारा न्यायपालिका ने स्वयं के स्व आरोपित परम्परागत प्रतिबंन्धों को शिथिल किया है। अब न्यायपालिका किसी व्यक्ति या समुह के साथ हो रहे अन्याय

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातक महाविद्यालय, हाटपीपल्या, जिला–देवास (म.प्र.) भारत

की जानकारी किसी अन्य श्रोत से भी प्राप्त कर सकती है तथा एक याचिका की भांति उसे स्वीकार करते हुए उस पर कार्यवाई कर सकती है।

लोकहितवाद – न्यायिक सक्रियता की अवधारणा के विकास में लोकहितवाद एक महत्वपूर्ण सोपान रहा है। जस्टिस वी.आर.कृष्णन अययर तथा जस्टिस पी.एन भगवती का योगदान इस के विकास के महत्वपूर्ण माना जाता है। जस्टिस भागवती के अनुसार न्यायाधीश विधि के शासन का संरक्षक होता है। प्रत्येक व्यक्ति को न्याय दिलाना उसका दायित्व होता है। यह सत्य है कि कानून का निर्माण करना न्यायपालिका का प्राथमिक कार्य नही है ।किन्तु कानून की सृजनात्मक रूप में व्याख्या करके न्यायपालिका एक कलाकार की भॉति उसे नवीन स्वरूप अवश्य प्रदान कर सकती है।

राज्य के नीति-निर्देश सिद्धांत – भारत में लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना के स्वप्न को साकार करने के लिए भारतीय संविधान में राज्य के नीति के निर्देशक सिद्धांतों की व्यवस्था की गई है। यह भारतीय संविधान की एक प्रमुख विशेषता है। राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान ही यह प्रमुखता से अनुभव किया जाने लगा था कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात राजनीतिक लोकतंत्र की स्थापना के साथ-साथ सामाजिक एवं आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना किया जाना भी अत्यंत आवश्यक होगा। इस आवश्यकता को पूर्ण करने के लिए भारतीय संविधान के भाग 4 में अनुच्छेद 36 से 51 तक राज्यनीति के निर्देशक सिद्धांतों का वर्णन वर्णन किया गया है। ये वे आधारभूत तत्व है, जो भारत में सभी सरकारों के द्वारा निर्धारित की जाने वाली एवं क्रियान्वित की जाने वाली नीतियों के संदर्भ में दिशा-निर्देशक का कार्य करते है। ये नवीन सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था के वे आधारभूत सिद्धांत है जिनका उल्लेख संविधान में किया गया है तथा इस कारण से सर्वमान्य एवं सर्वोच्च प्राथमिकता पर है।[2]

डॉ.अम्बेडकर ने इन्हें समाजवादी समाज की स्थापना की दृष्टि से अंत्यत महत्वपूर्ण बताया है। इनमें प्रमुखता से राज्य को यह निर्देश दिया गया है कि वह ऐसी नीतियॉ निर्धारित करें जिनसे सभी नागरिकों को-

- रोजगार उपलब्ध हो सके (अनु.39 ए.)
- उत्पादन के साधनों का इस प्रकार से केन्द्रीकरण न हो कि सार्वजनिक हित को किसी प्रकार की हानि पहुँचे (अनु.39 बी.)
- बेरोजगारी,वृद्धावस्था, बीमारी,अंगहीनता आदि स्थितियों में सार्वजनिक सहायता दी जा सके। (अनु.41)
- नि:शुल्क वैधानिक सहायता उपलब्ध कराई जा सके (अनु.39.ए.)
- 14 वर्ष तक के सभी बच्चे के लिए नि:शुल्क शिक्षा का प्रावधान किया जा सके (अनु.43)
- ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर उद्योगों की स्थापना की जा सके (अनु.43)
- स्थानीय स्वशासन की इकाइयों के रूप में ग्राम पंचायतों का गठन किया जा सके (अनु.40) आदि।

नीति निर्देशक सिद्धांत एवं न्यायिक सक्रियता की सम्भावनाऐं – सामान्यत:-ऐसा कहा जाता है कि नीति-निर्देशक सिद्धांत न्याय योग्य अथवा वाद योग्य नहीं है। यदि व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका अपनी नीतियों और कार्यक्रमों के निर्धारण में इन तत्वों को प्राथमिकता नहीं देती है तो किसी प्रकार वैधानिक कार्यवाई नहीं की जा सकती है।

इस संबंध में यह बात विशेष उल्लेख के साथ कही जा सकती है कि प्रत्येक व्यक्ति को न्याय दिलाने की जिस दायित्व भावना ने न्यायपालिका को सक्रिय किया है तथा जिससे न्यायिक सक्रियता को जन्म-वृद्धि एवं प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है, नीति निर्देशक सिद्धांत उसके लिए दृढ संवैधानिक आधार प्रदान करते है। यह बात सत्य है कि ये सिद्धांत वाद योग्य नही हैं किन्तु इसी आधार पर ये महत्व हीन या उपेक्षणीय नही बन जाते है। इनका उल्लेख संविधान में किया गया है। ये हमारे महान संविधान निर्माताओं की भावी सरकारों से अपेक्षाऐं है। इनका महत्व आदेश से कम नहीं है क्योंकि ये संवैधानिक निर्देश है,संविधान हमारी सर्वोच्च विधि है और संविधान में उल्लिखित कोई भी अनुच्छेद इसी विधि का भाग है, इसलिए कभी भी उपेक्षणीय या अवादयोग्य नहीं हो सकता है।

ऐसा कहा जाता है कि ब्रिटेन में मैग्ना कार्टा , फ्रांसीसी क्रांति के दौरान जारी अधिकारों का घोषणा पत्र एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान की प्रस्तावना कोई कानूनी प्रपत्र नहीं है किन्तु फिर भी इन राष्ट्रों में संविधानिक व्यवस्था के कार्यकरण को इन्होंने बहुत गहराई से प्रभावित किया है। भारत में नीति निर्देशक सिद्धान्तों की स्थिति इनसे कम महत्व की नहीं है।

निष्कर्ष – पिछले कुछ दशकों में भारतीय राजनीति में दलीय प्रतिवद्यताओं और दलीय स्वार्थो से प्रेरित होकर व्यवहार करने की प्रवृति प्रमुखता से दिखाई दे रही है। ऐसी स्थिति में जनहितों पर वितरीत प्रभाव पडना स्वाभाविक है। व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका की कार्यशैली एवं सकारात्मक कार्य क्षमता पर भी इन सब बातों का घातक प्रभाव पडता रहा है। ऐसे वातावरण में न्यायपालिका ही एक मात्र आशा की किरण दिखाई देती है। न्यायपालिका सामान्य स्थिति में नही वरन सक्रिय होकर ही इस संबंध में पहल कर सकती है इसलिए न्यायिक सक्रियता आज के युग का यथार्थ बन गई है। नीति निर्देशक तत्वों को न्यायिक सक्रियता के संवैधानिक आधार के रूप में देखा जा सकता है। ये राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत है। ये सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना की दिशा में आगे बढने के लिए संवैधानिक मार्गदर्शन है। इन निर्देशक तत्वों का क्रियान्वयन पूर्ण रूप से करने करने के लिए बहुत बडी संख्या में आर्थिक संसाधनों की आवश्यकता है। इतने साधन राज्य के पास उपलब्ध नहीं है किन्तु इस आधार यह निष्कर्ष निकाला जाना उचित नही है कि इनका क्रियान्वयन संभव नहीं है।

न्यायिक सक्रियता को आज के समय में न्यायपालिका की जनहितों के लिए प्रतिबद्धता एवं सकारात्मक पहल के रूप में देखा जा रहा है। इससे सामाजिक,आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हुआ है। सही दिशा में निरंतर आगे बढते जाना ही सफलता को सुनिश्चित करता है। यदि नीति निर्देशक तत्वों के क्रियान्वयन की दिशा में निरंतर होती जा रही प्रगति के संबंध में न्यायपालिका समय-समय पर मात्र संज्ञान लेती रहे तो इससे भारत में न्याय की स्थापना की दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण उपलब्धियां अर्जित की जा सकती है। इससे न्यायिक सक्रियता की सफलता में भी उल्लेखनीय उपलब्धिता जोडी जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रजनीपामदत्त - आज का भारत।
2. विपिनचन्द्र - स्वतंत्रता संग्राम।
3. डी.डी.बसु- कमेन्ट्री ऑन द कान्स्टीटयूशन ऑफ इण्डिया।
4. पी.बी.सावन्त - ज्यूडिशियल एक्टिविज्म - ट्रेन्डस एण्ड प्रोस्पेक्टस।

****

अर्बुदांचल में शैव मतावलम्बिय दर्शनीय स्थल

डॉ. मनोज दाधीच * संजय परिहार **

अर्बुदांचल का सामान्य परिचय – संसार के साहित्य में इतिहास का आसन बहुत ऊँचा है ज्ञान भंडार के अन्यान्य विषयों में से 'इतिहास' एक ऐसा विषय है कि इसके अभाव में मनुष्य जाति अपनी उन्नति करने में समर्थ नहीं हो सकती, सच तो यह है कि इतिहास से मानव समाज का बहुत कुछ उपकार होता है। इतिहास का महत्त्व तथा उसकी उपयोगिता बतलाने के लिए किसी विवेचन की आवश्यकता नहीं है, इसी तरह हम हमारे भारत देश की ऐतिहासिकता पर प्रकाश डालते है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। यह देश 29 राज्यों में विभाजित है। क्षेत्रफल की दृष्टि से 'राजस्थान' राज्य सभी राज्यों से बड़ा है, इतिहास की दृष्टि से देखेंगे तो हम पाएगे कि राजस्थान एक प्राचीन ऐतिहासिक राज्य रहा है। यह भू-भाग प्रागैतिहासिक काल से लेकर आज तक कई मानव सभ्यताओं के विकास व पतन की स्थली रहा है। राजस्थान राज्य में 33 जिले है, जिसमें 'सिरोही' जिला अपने इतिहास के लिए काफी प्रसिद्ध रहा है। सिरोही जिला जो 'सिरोही राज्य' था, उसे प्राचीन समय में 'अर्बुदांचल' के नाम से जाना जाता था।

'अर्बुदांचल' अपनी प्राचीनता एव ऐतिहासिकता के लिए प्रख्यात रहा है। अर्बुदांचल की उत्पति जिले के सामान्य परिचय से शुरू होती है। 'सिरोही' जिले का नाम इसके मुख्यालय सिरोही नगर के कारण पडा है। सिरोही शब्द की उत्पत्ति 'सिरणवा'[1] से मानी जाती है सिरणवा नामक पर्वत श्रेणी के नीचे इस शहर के बसने के कारण इसका नाम सिरोही होना बतलाया गया है। कर्नल जेम्स टॉड का मानना है कि इसका नाम इसकी भौगोलिक स्थिति सिर (शीर्ष) पर रोही (जंगल) होने से सिरोही पडा था।[2]

'सिरोही' तलवार को भी कहा गया है कहा जाता है कि यहाँ के वीर देवडा चौहानों की तलवार के कारण इसका नाम सिरोही पडा था।[3]

अक्षांश-देशांतर रेखाओं के अनुसार 'अर्बुदांचल' क्षेत्र राजस्थान के दक्षिण-पश्चिम भाग में उत्तरी अंक्षाश 24020 से 250 तथा पूर्वी देशांतर 72016 से 73010 मध्य स्थित है।[4]

शैव धर्म

1. श्री सारणेश्वर जी महादेव मन्दिर – वर्तमान सिरोही जाने वाले मार्ग पर राजेन्द्र मार्ग के आगे सारणेश्वर दरवाजे से लगभग 2 किमी. की दूरी पर भगवान शिव का 'सारणेश्वर मन्दिर' स्थित है। मन्दिर परिसर में प्रवेश करने पर दायीं ओर जाते मार्ग पर चौसठ जोगनियों का मन्दिर आता है। आगे चलने पर सारणेश्वर का प्रमुख 'सिंहद्वार' आता है, जिसे सिरोही के महाराव लाखा द्वारा बनवाया गया था। यह मन्दिर का प्रवेश द्वार है।

यहाँ जनाना महल व फूलबाग भी स्थित है, सारणेश्वरजी के मन्दिर का मुख्य द्वारा बांयी ओर है, जिसे 'गजद्वार' कहते है। मन्दिर के मुख्य द्वार पर ही दाहिनी और भगवान गणेशमूर्ति और बायी ओर हनुमानजी की मूर्ति स्थित हैं। हनुमानजी की मूर्ति का निर्माण सिरोही के महाराव लाखा की पटरानी 'अपूणदिवी'[5] के द्वारा स्थापित करवायी गयी थी।

मन्दिर के भीतर प्रवेश करने पर गुम्बद पाया जाता है जिस की छत पर 12 प्रस्तर मूर्तिया स्थापित है जो कि संगमरमर की बनी है। ये सभी मूर्तिया गुम्बद के चारों ओर लगी है व विभिन्न मुद्राओं में निर्मित है। एक स्त्री चोटी गूंथती है तो दूसरी आइने में अपना रूप निहार रही है तीसरी शहनाईवादन कर रही है, चौथी नृत्य मुद्रा में है, पांचवी बांसुरी बजा रही है, छठी स्वयं को ही तिलक लगा रही है फिर एक पुरूष प्रतिमा है, आंठवी स्त्री हंस को दाना चुगाने की मुद्रा में, नवीं मूर्ति में स्त्री एक पांव पर खड़ी है, दसवीं हाथ में खड़ग लिये भैरवी का रूप लिए है। ग्यारवीं स्त्री के हाथ में पुष्प है, अंतिम बारहवीं स्त्री बालक को अपने गोद में लिए प्रतीत होती है।[6]

गुम्बद के सामने एक विशाल शिवलिंग स्थित है। यह शिवलिंग सिद्धपुर के रूद्रमाल से लाया हुआ है साथ ही माता पार्वती जी की मूर्ति भी लायी गयी है। मन्दिर का निर्माण वि. स. 1298 में हुआ था।[7]

सिरोही के पूर्व नरेश रघुवीर सिंह जी बताते है कि 1298 में अलाउद्दीन-खिलजी के गुजरात के सिद्धपुर स्थित रूद्रमाल महादेव मन्दिर को नष्ट कर शिवलिंग को गाय की खाल में लपेट लाया था मगर सिरोही महाराव ने आगे नहीं जाने दिया। युद्ध में हराकर शिवलिंग को सिरोही में सारणेश्वर मन्दिर में स्थापित किया था।[8]

मन्दिर के गर्भ में सोने व चाँदी के छत्र लगे हुए है। माता पार्वती को सोने के आभूषण पहनाए हुए है। मन्दिर के पीछे एक जलकुण्ड है, मान्यता है कि इस जलकुण्ड में स्नान करने से मालवा (मान्डू) के बादशाह का चर्म रोग गिर गया था अत: उनके द्वारा मन्दिर का यह विशाल परकोटे का निर्माण करवाया गया था। वर्तमान समय में एक पर्यटक स्थल के रूप में जाना जाने लगा हैं।

2. अम्बेश्वरजी (कोलरगढ) – अम्बेश्वरजी का मन्दिर भी अतिप्राचीन है। यह एक शिव मन्दिर है। इस मन्दिर की दूरी सारणेश्वरजी मन्दिर से लगभग 4 किमी की दूरी पर स्थित है। यह मन्दिर एक पहाड़ी पर बना है, यहाँ चन्द्रावती के परमारों का ध्वस्त किला है, जिसे कोलरगढ़ कहा गया है। मन्दिर परिसर में प्रवेश करने पर एक जैन मन्दिर भी आता है जो कि आदिनाथ भगवान का मन्दिर है,इसकी स्थापना पर भी परमारो के शासनकाल के दौरान ही हुई थी।

इसका बिम्ब सम्प्रति राजा के समय का माना जाता है। परमारों की पराजय के दौरान इस मन्दिर को काफी हानि पहुँचती थी, यह काफी वीरान

* सहायक आचार्य (इतिहास विभाग) पेसेफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी (इतिहास विषय) पेसेफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

व उजड गया था मगर बाद में इसकी पुन: प्रतिष्ठा 1721 में हुई थी।[9]

मुख्य सडक से आगे बढने पर लगभग 300 सौ सिढ़ियाँ चढने पर रास्ते में एक विश्राम स्थल भी आता है तथा आगे बढने पर मुख्य मन्दिर आता है मन्दिर एक प्राकृतिक शिला के नीचे स्थित है, जिसे पर्वतीय गुफा मन्दिर कहते हैं मन्दिर के अन्दर विशाल शिवलिंग है पास ही लगते हुए पीछे की ओर पार्वती माता का मूर्ति भी स्थित है। शिवलिंग पर नाग चढाया हुआ है शिवलिंग के ऊपर चाँदी का छप्पर लगा हुआ है।

मन्दिर के बाहर नन्दी की प्रतिमा स्थापित है तथा पास में पीतल की घंटियों की कतार लगी है, जब भी यहाँ मन्दिर में पूजा होती है तो घंटियों आवाज पूरी घाटी में गूंज उठती है। मन्दिर के पास ही एक गौमुख बना है जहॉ सिरणवा पर्वत से वर्षो से पानी लगातार आ रहा है, झरने के रास्ते ऊपर पहाड़ी पर जाने पर एक तालाब व एक खण्डहर आता है तथा एक मन्दिर भी आता है, जो प्राचीन मन्दिर है, इन खण्डहरों को सूरा सरदार के महल भी कहते है जिसमें सूरासरदार धनुष कमान लिये मुद्रा में एक मूर्ति मन्दिर के दायी की दीवार में स्थित है।अम्बेश्वरजी का यह प्राचीन मन्दिर वर्तमान समय में पर्यटकों का आर्कषण का केन्द्र बनता जा रहा है।

3. अचलेश्वर महादेव मन्दिर – अर्बुदांचल क्षेत्र का यह मन्दिर अति प्राचीन एवं ऐतिहासिक मन्दिर है। अचलेश्वर मन्दिर आबूपर्वत पर स्थित अचलगढ़ में स्थित है। देलवाड़ा से लगभग 5 किमी. उत्तर-पूर्व की दूरी में अचलगढ़ का प्राचीन स्थान है, पहाड़ के नीचे की ओर समतल भूमि पर अचलेश्वर महादेवजी का अतिप्राचीन मन्दिर है। चौहानों का अधिकार होने पर इन्हें चौहानों के इष्टदेव भी माने जाते है। बताया जाता है कि ऐतिहासिक स्थल अचलगढ़ में वि.स. 81310 में अचलेश्वर मन्दिर निर्मित किया गया।

मन्दिर का जीणोद्धार कई बार हुआ है। इस मन्दिर की खास विशेषता यह है कि यहाँ शिवलिंग नहीं है, यहाँ सिर्फ भगवान शिव का अंगुठा है, जो कुदरती निकला हुआ है। इसकी विशेषता यह है कि एक ब्रह्मा खाई बनी है उस पर शिव का अंगूठा उभरा हुआ है ब्रह्म खाई एक फुट का घेरा लिए हुए है और इसकी गहराई आज तक कोई माप नहीं सका यह आज भी एक रहस्य बना हुआ है। इस अंगूठे पर चढाया जल सीधा ब्रह्मा खाई में जाता है और इस खाई में कितनी भी जल डाल दो कभी भरती नहीं है इसकी निकासी का आज तक कोई वैज्ञानिक भी पता नहीं लगा सके है।

गर्भगृह के अन्दर ही एक शिलालेख खुदा है जो वास्तुपाल तेजपाल द्धारा खुदवाया हुआ है, जो वर्तमान समय में उस पर जल गिरने से बिगड़ गया है। लेकिन फिर भी उस पर स्थित गुजरात के सोलंकी एवं आबू के परमारों का वर्णन व वास्तुपाल तेजपाल के वंश का वर्णन हम पढ सकते है।[11]

मन्दिर के गर्भगृह के बाहर पीतल की एक विशाल नन्दी प्रतिमा है जिसकी चौकी पर वि. स.168612 खुदा है। वैसे वर्तमान समय में देशी व विदेशी पर्यटक आबूपर्वत पर स्थित इस मन्दिर के दर्शन हेतु जरूर आते है।

4. अचलगढ का शिव मन्दिर (दत्तात्रेय महाराज धूणी) – आबूपर्वत के अचलगढ़ गांव में यहाँ पहाड़ी पर एक शिव मन्दिर है, साथ ही दताश्रेय महाराज की धूणी भी स्थित है। ओरिया गांव से लगभग 4 किमी. की दूरी पर गुरूशिखर पर्वत आबू का सबसे ऊँचा शिखर है, जहाँ शिव का प्राचीन मन्दिर है, मुख्य सड़क से लगभग 92 सिढ़ियां चढने पर यह मन्दिर आता है। मन्दिर एक शिला के नीचे स्थित है जहॉ वर्तमान समय में मन्दिर काफी अच्छा बन गया है। मन्दिर में एक शिवलिंग है साथ ही शिव-पार्वती दोनों की मूर्तियाँ भी स्थित है। मन्दिर परिसर में ही दताश्रेय महाराज के चरण चिन्ह बने है जिसे 'पगल्या' कहते है। मंदिर के बाहर ऊँची पहाड़ी पर एक घंटा लटका हुआ है जिसे मनोकामना पूर्ण घंटा कहते है, इस घंटे पर वि.स. 146813 खुदा हुआ लेख है।

5. अमरनाथ महादेव मन्दिर – अर्बुदांचल क्षेत्र का यह मन्दिर अति-प्राचीन है। यह मन्दिर परमारों की राजधानी 'चन्द्रावती नगरी' का मन्दिर है। व्यक्तिगत साक्षात्कार के अनुसार यह मन्दिर 19 वीं सदी में अस्तित्व में आया था इस मन्दिर का रहस्य भी एक स्वप्न से जुडा है। 19 वीं सदी के दौरान एक बुर्जुग महाराज श्री मंगलदास हुआ करते थे एक दिन उन्हे चन्द्रावती नगरी जो समयकाल के दौरान नष्ट हो चुकी थी वहॉ एक शिवमंदिर के दबे होने का स्वप्न आया, उसी दौरान महाराज ने खुदाई शुरू की जिससे यहाँ मन्दिर का होना पाया गया उनके द्धारा खुदाई थोड़ी बहुत हो सकी मगर उसी दौरान वह अपना शरीर छोड़ गए उसके पश्चात् महाराज ओकांरदास जी जो वर्तमान समय में वहॉ के पुजारी है उन्होंने यह काम अपने हाथ में लिया। इस मन्दिर की खुदाई लगभग 1982 से अस्तित्व में आयी थी जो लगातार 1986 तक चलती रही यह राजस्थान सरकार के निर्देशानुसार काम चलता रहा था।

मन्दिर की ऊँचाई लगभग 21 फीट है अर्थात् 21 फीट की खुदाई करके मन्दिर को निकाला गया था। मन्दिर परिसर में पीछे की ओर सूर्यमन्दिर भी खुदाई में निकला था। शिव-पार्वती के साथ हनुमानजी भी विराजित है। वर्तमान समय में महाराज ओकारदासजी मन्दिर में सुबह-शाम पूजा अर्चना करते है। यह मन्दिर पर्यटकों के लिए ऐतिहासिक मन्दिर है, इसके आस पास के क्षेत्रों में सरकार द्धारा खुदाई चालु है ताकि उस समय का चन्द्रावती का इतिहास बाहर आ सके।[14]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ओझा, डॉ गौरीशंकर हीरांचंद-सिरोही राज्य का इतिहास, प्रकाशक-राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर, तृतीय संस्करण 2010, पृ. 15
2. टॉड, ले कर्नल जेम्स, पश्चिमी भारत की यात्रा, ट्रेवल्स इन बेस्टन इण्डिया का हिन्दी अनुवाद अनुवादक एवं सम्पादक, गोपालनारायण बहुरा, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर (1996) पृ. 68 पादटिप्पणी लिखा है -सिर (उपरी भाग) पर है रोही (जंगल) जिसके वह सिरोही।
3. ढोंढियाल, श्री. एन. राजस्थान डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, सिरोही (1967) पृ. 1
4. मास्टर प्लान, नगरपालिका, आबूपर्वत
5. शाह, राजेन्द्र कुमार-सिरोही गौरव, प्रकाशक-अरूणोदय प्रकाशन, 25 सितम्बर 1995, पृ. सं. 30
6. व्यक्तिगत साक्षात्कार-बैरावल हितेश, पुजारी, सारणेश्वर मन्दिर
7. व्यक्तिगत सक्षात्कार बैरावल हितेश, पुजारी, सारणेश्वर मन्दिर उपर वाला)
8. भास्कर अखबार-सिरोही-आबूरोड, दिनांक 24 जनवरी 2017, पृ. सं. 16
9. व्यक्तिगत साक्षात्कार-श्री इंदर जी महाराज पुजारी अम्बेश्वरजी मन्दिर
10. पत्रिका अखबार - सिरोही आबूरोड, दिनांक 24 जनवरी 2013 पृ. सं. 11
11. व्यक्तिगत साक्षात्कार- श्री पंजी महाराज, पुजारी, अंचलेश्वर मन्दिर
12. लेख-वि. स. 1686, आषाढि मानने का कारण लेख में वि. स के साथ शक् संवत् 1582 लिखा है स्पष्ट है मूर्ति चैत्रादि वि. स. 1687 में बनी थी।
13. ओझा, डॉ गौरीशंकर हीरांचद-सिरोही राज्य का इतिहास, प्रकाशक-राजस्थानी ग्रन्थाग्रार, जोधपुर, प्रथम पुनमुद्रित, संस्करण 1997, पृ. 78
14. व्यक्तिगत साक्षात्कार श्री ओंकार दास जी महाराज, अमरनाथ महादेव मन्दिर, भैंसासिंह गांव

मुगल कालीन भारत में राज्य का स्वरूप

डॉ. सुनीता शुक्ला *

प्रस्तावना – स्वर्गीय डॉ. बेनी प्रसाद के शब्दों में 'सोलवीं शताब्दी तक यूरोप के समान भारत में भी धर्म ने राज्य को प्रभाव मुक्त कर दिया था। अतएव धर्माधिकारियों का समाज मे कोई विशेष प्रभाव और महत्व नहीं रह गया था। जब मुल्ला–मौलवियों का सामान्य जनता पर प्रभाव कम हो गया तो स्वाभाविक रूप से सम्राटों ने इनसे परामर्श लेना बन्द कर दिया। यदि उस समय भी भारत के मुगल सम्राट धर्मान्ध सिद्धांतों को राजनीति का नियामक सूत्र बनाए रखते तो उन्हें अपनी बहुसंख्यक हिन्दू प्रजा का विरोध सहन करना पड़ता। अत: अकबर के शासन काल में धर्माधिकारियों का प्रभाव स्वत: ही कम हो गया था।'[1] जब मुगल भारत में आये तो उन्होंने यहॉ की तुर्क अफगान शासनकाल मे ढली हुई कट्टर व्यवस्था को समय और परिस्थिति के अनुकूल ढाल दिया। हिन्दुओं के शासकीय आदर्श तथा उनके व्यावहारिक जीवन के आदेशों को मुगलों ने मुस्लिम आदर्शो के साथ समाविष्ट कर दिया। अत: एक तरफ तो उन्होनें खिलाफत की कल्पना को अस्वीकार किया और दूसरी ओर मुगल सम्राटों ने 'बादशाह की उपाधि धारण करके अपना खलीफा से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया।[2] भारत के बाहर रखने वाले किसी भी मुस्लिम शासक अथवा खलीफा की सर्वोच्च सत्ता को इन्होंने स्वीकार नहीं किया। 'ऐसे राज्य के संविधान में जिसमें कि ईश्वर को ही एकमात्र सत्तधीश माना जाता है, और राज्य के कानून की मानवीय अध्यादेशों की अपेक्षा देवी आदेश ही अधिक समझा जाता है–पुरोहित वर्ग अनिवार्य रूप से अदृश्य शासक बन जाता है।'[3] अबुल फजल लिखता है कि,'राजत्व ईश्वर की देन है और यह तब तक प्राप्त नहीं होता जब तक कि किसी व्यक्ति में कई सहस्त्र श्रेष्ठ गुणों का समावेश नहीं हो जाता। इस महान पद के लिए आति और धन और भीड़ का जमाव ही काफी नहीं होता।4 अकबर स्वयं भी कहता था कि सम्राटों के दर्शनमात्र को ही देवी उपासना का एक अंग माना गया है। उनको परम्पराओं से ईश्वर की प्रतिछाया (जिल्ले इलाही) कहा जाता है, और वाकई उनके दर्शन करना ईश्वर को स्मरण करने का एक तरीका है। उसके अनुसार सम्राट को अपनी प्रजा का सबसे अधिक शुभेच्छु और रक्षक होना चाहिए। उसे न्यायी, पक्षपात–रहित और उदार होना चाहिए। उसे अपनी प्रजा को अपनी सन्तान समझना चाहिए। अकबर का कहना था कि 'सभी के लिए, और विशेषकर सम्राट के लिए जो कि संसार का संरक्षक है, अत्याचार करना अनुचित है।' [5] अकबर का विश्वास था कि सम्राट को हर धर्म के प्रति सहनशील होना चाहिए और उसे अपने राज्य में सर्वसहनशीलता (सुलह कुल) की स्थापना करनी चाहिए।[6] एक आदर्श सम्राट के गुणों का उल्लेख कर अन्त में अबुल फजल लिखता है कि 'इन सब गुणों के होने पर भी अगर मनुष्यों के सभी वर्गो एवं सभी धार्मिक सम्प्रदायों को एक ही नजर से नहीं देखता, और कुछ के साथ माता का और कुछ के साथ विमाता का बर्ताव करता है, तो वह इस उच्च पद के योग्य नहीं है।' अकबर ने शाह अब्बास को लिखे अपने पत्र मे यही विचार व्यक्त किए थे। इस पत्र में वह कहता है 'धर्म के प्रत्येक रूप में देवी अनुकम्पा निहित है, और सुलहकुल(सर्वसहनशीलता) के सदाबहार पुष्प–उद्यान में स्वयं प्रवेश के लिए सर्वोच्च प्रयत्न करना चाहिए।[7]

बाबर के पूर्व दिल्ली के सुल्तान अपने ऊपर इस्लाम जगत के सर्वोच्च नेता खलीफा की श्रेष्ठता को मानते थे। परन्तु बाबर और उनके उत्तराधिकारी खलीफा को अपने से उच्च नहीं मानते थे। उन्होंने किसी बाहरी शक्ति की प्रधानता को स्वीकार नहीं किया।

निष्कर्ष–

1. सुल्तान एक ऐसा व्यक्ति था जिसके अनुग्रह का अर्थ था सुख और जिसके क्रोध के सम्मुख लोग कॉपते थे।
2. मुगल सम्राट राज्य को अपने वंश की सम्पत्ति समझते थे।
3. अकबर के सिंहासनारूढ़ होते ही मुगल बादशाह केवल धर्म के संरक्षक ही नहीं रहे बल्कि अबुल–फजल के अनुसार इस्लाम शासक का धर्म बन गया था।
4. मुगल बादशाहों ने कभी भी खलीफाओं की सर्वोच्च सत्ता स्वीकार नहीं की।
5. मुस्लिम राज्य धर्मानुकूल था।
6. सल्तनत काल में उलैमा वर्ग का अत्यधिक प्रभुत्व था, परन्तु मुगल बादशाहों ने उलैमा वर्ग को महत्व नहीं दिया और न ही नकारा।
7. भारत में मुगल सम्राट समय और परिस्थिति के अनुसार धर्म और जाति का ख्याल किये बगैर भी शासन करते रहे।
8. व्यावहारिक रूप से धर्माधिकारियों का प्रभाव नहीं रहा था, लेकिन सैद्धांतिक रूप से धर्म की उपेक्ष नहीं की गई थी।
9. राजत्व के दैवी सिद्धांत को प्रजा ने बड़े बहुमत से स्वीकार कर लिया था।
10. संक्षेप में, मुगल सम्राटों ने खलीफा को सर्वोच्च न मानकर स्वयं को ही उस युग का खलीफा मानते रहें। इस बारे में मुगल–युग दिल्ली–सल्तनत काल से बड़ा ही भिन्न था।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. डॉ. बेनी प्रसाद –हिस्ट्री ऑफ जहॉगीर, पृष्ठ 87.
2. डॉ. बी0एस0 भार्गव– मध्य युगीन भारत की समस्याऍ, संस्करण 1973, अध्याय–2 पृष्ठ 32.
3. चेम्बर्स द्धण्टियथ सेन्चुरी डिक्शनरी के पृष्ठ 1005 में महजबी राज्य की परिभाषा दी है। संस्करण –1950.
4. अकबरनामा, भाग–3, पृष्ठ 659–66.
5. आइन–ए–अकबरी, भाग–3, द्धितीय संस्करण, पृष्ठ 451.
6. डॉ. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव–मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, संस्करण 1982, पृष्ठ 7.
7. अकबरनामा, भाग –3, पृष्ठ 659–66.

* प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

बैगा जनजातियों की उपजातियाँ एवं गोत्र (मण्डला जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. ज्योति सिंह*

प्रस्तावना – 'जनजाति' शब्द की उत्पत्ति तथा अर्थ के विषय में अलग-अलग विचारधारा है। शास्त्र के अनुसार अंग्रेजी शब्द Tribe (जनजाति) की उत्पत्ति त्रिभुज शब्द से मानी जाती है जिसका अर्थ तीन अंग है रोमवासियों के लिए Tribe एक राजनैतिक संस्था के रूप में था या भारत की भांति पश्चिमी दुनिया में जनजाति शब्द का अर्थ आज के प्रचलित अर्थ से भिन्न था। ऐसा विश्वास किया जाता है कि भारत देश का नाम शक्तिशाली भरत जनजाति से लिया है। मानवशास्त्र के शब्दकोष में जनजाति को एक सामाजिक समूह माना गया है, जो प्राय: निश्चित भू-भाग में रहते है, जिनकी अपनी भाषा, सभ्यता तथा सामाजिक संगठन है। इनके कई उपसमुदाय होते हैं। इनका सामान्यत: एक मुखिया एवं संरक्षक होता है।

ब्रिटिश मानव शास्त्रियों के एक समुदाय के अनुसार-'जनजाति एक स्वतंत्र राजनीतिक और सामाजिक संगठन है तथा स्वशासी समुदाय है।'

वर्तमान में पश्चिमी लेखकों के अनुसार जनजाति शब्द का अर्थ सामान्यत: भौगोलिक दृष्टि से विलग अथवा अर्थ-विलग एवं नृवंशी समूह है, जिन्हें एक निश्चित सीमा क्षेत्र की परिधि में पहचाना जाता है तथा जिसकी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परंपराएँ तथा प्रथाएँ 'भिन्न' हैं।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में इस शब्दार्थ में, विशेष रूप से स्वतंत्रता के पश्चात् की अवधि में और भी परिवर्तन हुए है। इस समुदाय के सामाजिक स्तर के अनुसार अनेक प्रकार हैं जैसे प्राचीन जनजाति, जंगली तथा पहाड़ी जनजाति, आंतरिक जनजाति, आदिवासी जंगली तथा जिप्सी जनजाति, विचिक एवं अपराधिक जनजाति आदि।

बैगा जनजाति – बैगा आदिवासी मध्यप्रदेश के डिण्डौरी, मंडला, बालाघाट व शहडोल जिलों में पाए जाते हैं। इस दृष्टि से बैगा मध्यप्रदेश के मूल आदिवासी भी कहे जाते हैं। डिण्डौरी जिले का बैगा चक जो कि पहले मण्डला जिले में था, आज भी सघन वनों से पूर्ण है। इस क्षेत्र के बैगा आज भी अति जंगली जीवन बिता रहे हैं। बैगा की आबादी इन जिलों के जंगलों से ढ़के हुए पहाड़ी इलाकों के अंदर विशेषतया ऐसे स्थानों में सिमटी हुई है जो प्राकृतिक बनावट के विचार से दुर्गम और अलग-अलग है। उनका सर्वाधिक आबादी जिला मण्डला के दक्षिण में, मेकाल के पहाड़ी सिलसिलों के अंदर है। इन्हीं पर्वतीय क्षेत्रों के उत्तरी पूर्वी सिरे पर बैगा चक है, जिसको बैगा के देश में लगभग केन्द्रीय स्थान प्राप्त है।

बैगा के करीब-करीब सभी पड़ोसी कबीलों यथा, गोड़, कोल, प्रधान सौर। आदि में इनका स्थान सबसे ऊँचा है। इनमें से अधिकतर कबीलों के लिये बैगा पुरोहित या पुजारी की हैसियत रखते हैं। इन कबीलों में यह विश्वास है कि बैगा आलौकिक शक्तियों पर प्रभुत्व रखता है। नस्ली विचार से बैगा का संबंध कोल, मुण्डा और द्रविड़ नस्लों से भी जान पड़ता है। इस प्रकार उनका संबंध मध्यप्रदेश के अतिरिक्त बिहार, उड़ीसा और बंगाल के बहुत से काबाइली तथा गैर काबाइली लोगों से जुड़ जाता है।

'बैगा' जनजाति को मध्यप्रदेश में 'विशेष पिछड़ी जनजाति, घोषित किया गया है सन् 1976 में देश की 76 विशेष आदिम जनजाति (PrimitiveTribe) समुदायों में बैगाओं को भी सम्मिलित किया गया। इनको द्रविड़ों से उत्पन्न और छोटा नागपुर की भुईया आदिम जनजाति की शाखा माना जाता है।

संपूर्ण भारत वर्ष में सबसे ज्यादा आदिवासी मध्यप्रदेश में ही निवास करते है, तथा संपूर्ण एशिया महाद्वीप में यहाँ एक आदिम जनजाति बची है। वह है प्रकृति पुत्र 'बैगा' राजगोड़ों के समान बैगाओं के बिंझवार बैगा बड़े जमींदार है। उन्होंने राजवंशी होने की महत्त प्राप्त है। मण्डला, बालाघाट एवं डिण्डौरी जिले में अधिकांश भारिया और भूमिया बैगा निवास करते हैं। बैगा छोटा नागपुर की आदिम जनजाति भुईयाँ की मध्यप्रदेशीय शाखा है, जिसे भूमिया बैगा कहा जाने लगा। सर्वप्रथम बैगाओं ने ही छोटा नागपुर से छत्तीसगढ़ में प्रवेश किया, लेकिन बाद में यह जनजाति मण्डला, डिण्डौरी, शहडोल, अनुपपुर, उमरिया राजनांदगांव एवं बालाघाट के दुर्गम वनों में निवास करने लगी।

बैगा जनजाति की सात शाखायें हैं-भूमिया, बिंझवार, भरौतिया, नाहर या नरौटिया, भैना, कोड़वान एवं मुड़िया या मुरिया।

1. **भूमिया –** भूमिया का अर्थ होता है, भूमि का स्वामी इनका यह विश्वास है कि ईश्वर ने सबसे पहले भूमिया बैगा को ही उत्पन्न किया था तथा उनकी भूमि का स्वामी बनाया था। इस कारण वे अपने को भूमिया कहते हैं।
2. **भरौतिया –** भूमिया बैगा के बाद ही भरौतिया बैगा उपजाति का स्थान है। वास्तव में समस्त बैगा उपजाति के बीच मात्र ये ही दो उपजाति है, जो आज भी मौलिक अवस्था में है। इस उपजाति के बैगा अपनी संस्कृति को सुरक्षित रखे हुए हैं। यह उपजाति भूमिया बैगाओं से मिलती जुलती है। इस उपजाति का निवास स्थल बैहर तहसील है।
3. **नारोटिया या नाहर –** नारोटिया या नाहर अर्थात् ये बाघ को 'नाहर' शब्द से संबोधित करते है, जिसका मतलब है कि उनका नाम बाघ से नाहर हो गया है इसलिये नाहर बैगा देवताओं में सबसे अधिक बाघदेव को पूजते हैं। अर्थात् नाहर की अत्यधिक पूजा करने के कारण इनका नाम नारोटिया या 'नाहर' हो गया।
4. **मुण्डिया/ मुड़िया या मुरिया बैगा –** जो बैगा अपने आधे माथे के बालों को मुडवा लेते हैं, उसे मुड़िया बैगा कहते है। यह उपजाति समस्त उपजातियों से अलग ही दिखाई पड़ती है। इस उपजाति के अधिकांश

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, नैनपुर, जिला मण्डला (म.प्र.) भारत

लोग गोंड जनजाति के लोगों के बीच निवास करती है अत: इस उपजाति का पहनना, ओढ़ना, खान-पान, रीति-रिवाज आदि सब गोडों के समान है।

5. **भैना –** इस उपजाति के तीन भेद है दूध भैना काठ भैना एवं राय भैना। बैगा बालाघाट में बैहर तहसील वारासिवनी तहसील व लामता क्षेत्र में निवास करते है। जीवन निर्वाह हेतु भैना जंगलों से बॉस एवं लकड़ी लाकर बेचते है। घर में रहने वाली महिलाए व बच्चे बांस की चटाई, खुमरी, मोरया, टुकना, डलिया व जंगली घास के विभिन्न प्रकार के साज-सामान का निर्माण करते है। जिससे वे अपना जीवन यापन करते हैं।
6. **गोंडबैना –** यह भी बैगा की उपजाति है। बालाघाट में ये बैहर तहसील में निवास करती है। छत्तीसगढ़ राज्य में यह कवर्धा जिले में भी पायी जाती है। ये बैगा बंदर एवं गौ मांस का भी सेवन करते हैं।
7. **बिंझवार बैगा –** यह उपजाति बैगाओं की सबसे सभ्य उपजाति है। बिंझवार बैगा उत्तर पश्चिम क्षेत्र में निवास करते हैं। मिर्जापुर (विंध्याचल) से बैहर के पश्चिमी भाग तक इस तक विस्तार था।

बैगाओं की अन्य उपजातियों में अपने को अलग बताने के लिए ये अपने आप को विंध्यवाल अर्थात् विन्ध्याचल वाले या विन्ध्वार कहकर संबोधित किया करते रहे है। हिन्दी में 'ल' के स्थान पर 'र' का उच्चारण भी किया जाता है, जैसे बाल के स्थान बार। यह उपजाति अत्यंत सभ्य है। हिन्दुओं के समस्त रीति रिवाज एवं त्यौहारों को मानती है।

उद्देश्य – बैगा जनजातियों के उपजाति एवं गोत्र की जानकारी प्राप्त करना। बैगाओं की उपजाति एवं गोत्र-बैगाओं के गोत्र चिन्हों एवं निषेधों का विवरण अत्यंत रोचक है। गोत्र चिन्हों के प्रति इनमें स्नेह-प्रीति एवं आदर की भावना के साथ डर भी है।

गोत्र चिन्ह इनके इन क्षेत्रों तक सीमित रहता है, जहाँ उस समान गोत्र की बहुलता है। ये समान गोत्री किसी पशु पक्षी को अपना पूर्वज मानते हैं। वे उस पशु या पक्षी के मांस तथा पंख का प्रयोग नहीं करते और जादू-टोनों में इन पशु पक्षियों का संबंध जोड़ देते हैं, जिस नाम से वंश जाना जाता है, उसे जात कहते है और जिस नाम से उनके परिवार को संबोधित किया जाता है उसे वे गोत्र कहते है। गोत्र चिन्ह इनके उन क्षेत्रों तक सीमित रहता है। जहाँ उस समान गोत्र की बहुलता है।

प्रस्तुत अध्ययन में उत्तरदाताओं की उपजाति से संबंधित तथ्यों का विवरण निम्नलिखित तालिका में दिया जा रहा है।

बैगाओं की उपजाति संबंधी विवरण

क्रं.	उपजाति	उत्तरदाता की संख्या	प्रतिशत
1.	मरावी	242	48.4
2.	मरकाम	76	15.2
3.	धुर्वे	114	22.8
4.	बैगा	68	13.6
	योग	500	100

उक्त तालिका एवं ग्राफ से स्पष्ट है कि संपूर्ण (500) उत्तरदाता में मरावी उपजाति 48.4 प्रतिशत उत्तरदाता की थी, 22.8 प्रतिशत उत्तरदाता धुर्वे लिखते हैं, 15.2 प्रतिशत उत्तरदाता मरकाम लिखते है तथा 13.6 प्रतिशत उत्तरदाता बैगा लिखते हैं।

उत्तरदाताओं का गोत्र संबंधी विवरण **(तालिका देखे आगे पृष्ठ पर)**

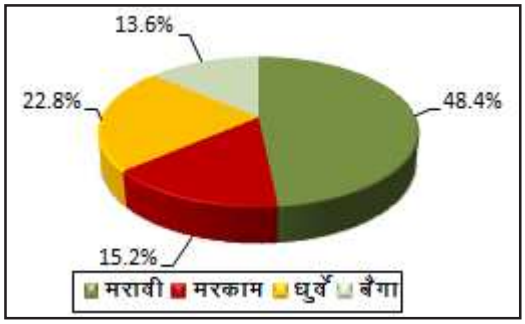

तालिका से स्पष्ट होता है कि संपूर्ण (500) उत्तरदाता में से सबसे अधिक कुडकुड़िया गोत्र 6.2 प्रतिशत, मोंधिया 4.2 प्रतिशत, खमरिया 3.8 प्रतिशत, कुडपनिया 3.6 प्रतिशत है। 3 प्रतिशत कौआडोंगरिया और कचनरिया गोत्र पाए। अमड़िया 2.6 प्रतिशत है। 2.4 प्रतिशत रजगढ़िया, बलरिया, उपड़िया है। सुरखिया, डोकरघटिया 2.2 प्रतिशत है। 2 प्रतिशत भड़िया, कुर्का, बनिया गोत्र पाए गए। लखनपुरिया 1.8 प्रतिशत, 1.6 प्रतिशत बिलठरिया, अमठिया, खड़खड़िया गोत्र पाये गये। रमगड़िया, छेदइया, पथरकटिया, कंजिया, हंसपुरिया, टिकरिया, मुड़िया, सेंगरा, डोंगरा 1.4 प्रतिशत पाए गए। कुडपनिया, धमनिया, गोहदरिया, रूगदरिया घुघरिया, गेंगरा 1.2 प्रतिशत मिले। कुरखा, डाभिया, मोहतड़िया, खमतड़िया, मोहदनिया, निमरिया, डिबरिया 1 प्रतिशत तथा किसिया, चिकढिया, कुबदड़िया, मलढरिया, रेहा 0.8 प्रतिशत मिले। लुटरिया, किवरिया, खमरठिया, धनसिया, बलगढ़िया, पनगरिया, तिलझरिया, गोठरिया, पड़िया, कुगदड़िया, कांसिया, भुरकुड़िया, पचलिया 0.6 प्रतिशत तथा कुइदरिया, कुकरिया, बइछिया, मुखतरिया, बधरिया, भइभड़िया, कजलुढिया, नुगनिया, बहरगुईया, बस्तरिया, कंजनिया, मलठरिया,चलनिया, बसदरिया, कजलढ़िया, कन्हरिया, 0.4 प्रतिशत पाए गये। सबसे कम भगठिया, घुघरिया, कुल्हड़िया, मवईया, अमठरिया, जगरठिया, गुड़लिया, कोकरिया, कुठड़िया, बधिया, गुछड़िया,पनढिया, कुगटरिया, पिपड़दरिया, मगड़िया, पिपरधरिया, घुरकुड़िया, कुबदड़िया, सड़िया, बिलहरिया, कुकरिया,उड़दरिया का प्रतिशत 0.2 पाए गए।

निष्कर्ष-बैगा जनजाति एवं गोंड जनजाति में उपजाति लगभग एक जैसी है जैसे मरकाम, मरावी, धुर्वे होते हैं, इस कारण आजकल बैगा समाज में 'बैगा' नाम से उपजाति उपयोग करने लगे हैं। उत्तरदाताओं का कहना है कि बैगा लिखने से ही हमारी पहचान है तथा मरावी, मरकाम, धुर्वे उपजाति लिखने से हमे भी गोंड़ समझ लिया जाता है।

शोध क्षेत्र के चयनित 11 ग्रामों के 500 उत्तरदाताओं में 97 प्रकार के गोत्र पाए गए जिसमें सबसे अधिक कुड़कुड़िया 6.2 प्रतिशत और सबसे कम मगढिया, घोघरिया, कुल्हड़िया, मवईया, अमठरिया, जगरढिया, गुड़लिया, कोकरिया, कुठड़िया, बोधिया, गुछड़िया, पनढ़िया, कुगटरिया, पिपड़दरिया, मगड़िया, पिपरधरिया, धुरकुड़िया, कुबदड़िया, सड़िया, बिलहरिया, कुकरिया, उड़दरिया 0.2 प्रतिशत पाए गए हैं।

शोध प्रविधि- साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन के माध्यम से तथ्यों का संकलन किया गया है। साथ ही द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त तथ्यों के आधार पर।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उप्रेती, डॉ. हरिशचन्द्र, (1997) 'भारतीय जनजातियाँ', चतुर्थ संस्करण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृ. सं. 2।

2. उप्रेती, डॉ. हरिशचन्द्र,(2002) 'भारतीय जनजातियाँ संरचना एवं विकास', द्वितीय संस्करण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी,पृ. सं.3
3. दुबे, डॉ. उमेश कुमार, (2013) 'बैगा जनजाति–विकास के नवीन आयाम', विनायक पब्लिकेशन, पृ. सं. 4
4. सिद्दिकी, डॉ. एम.के.ए.,(1984) 'भारत के आदिवासी', प्रथम संस्करण, भारतीय मानव विज्ञान सर्वेक्षण भारत सरकार, पृ. सं. 50
5. विश्वास, नरेश,(2007) 'बेंवर स्वराज', प्रथम संस्करण, निर्माण वैकल्पिक विकास एवं सहभागी शोध संस्थान सिझोरा, पृ. सं. 1
6. चौरसिया, डॉ. विजय, (2009)'प्रकृति पुत्र बैगा', द्वितीय संशोधित, म.प्र हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृ. सं. 2

उत्तरदाताओं का गोत्र संबंधी विवरण

क्र.	बैगाओं का गोत्र	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत	क्र.	बैगाओं का गोत्र	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1	जगरढिया	01	0.2	50.	कुगदड़िया	03	0.6
2	अमठरिया	01	0.2	51.	पड़िया	03	0.6
3	मवईया	01	0.2	52.	कुबदड़िया	04	0.8
4	कुल्हड़िया	01	0.2	53.	मलठरिया	04	0.8
5	घुघरिया	01	0.2	54.	रेहा	04	0.8
6	भगठिया	01	0.2	55.	किसिया	04	0.8
7	उड़दरिया	01	0.2	56.	चिकढिया	04	0.8
8	कुकरिया	01	0.2	57.	डाभिया	05	1
9	बिलहरिया	01	0.2	58.	कुरखा	05	1
10	सड़िया	01	0.2	59.	डिबरिया	05	1
11	कुबदड़िया	01	0.2	60.	सिमरिया	05	1
12	घुरकुड़िया	01	0.2	61.	मोहदनिया	05	1
13	पिपरधरिया	01	0.2	62.	खमतड़िया	05	1
14	मगड़िया	01	0.2	63.	मोहतड़िया	05	1
15	पिपड़दरिया	01	0.2	64.	रूगदरिया	06	1.2
16	कुगटरिया	01	0.2	65.	घुघरिया	06	1.2
17	पनढिया	01	0.2	66.	गेंगरा	06	1.2
18	गुछड़िया	01	0.2	67.	कुड़पनिया	06	1.2
19	बधिया	01	0.2	68.	धमनिया	06	1.2
20	कुठड़िया	01	0.2	69.	गोहदरिया	06	1.2
21	कोकरिया	01	0.2	70.	पथरकटिया	07	1.4
22	गुड़लिया	01	0.2	71.	कंजिया	07	1.4
23	बस्तरिया	02	0.4	72.	हंसपुरिया	07	1.4
24	कंजनिया	02	0.4	73.	टिकरिया	07	1.4
25	मलठरिया	02	0.4	74.	मुड़िया	07	1.4
26	चलनिया	02	0.4	75.	सेंगरा	07	1.4
27	बसदरिया	02	0.4	76.	डोंगरा	07	1.4
28	कजलढ़िया	02	0.4	77.	रमगढ़िया	07	1.4
29	कन्हरिया	02	0.4	78.	छेद्इया	07	1.4
30	कुड़दरिया	02	0.4	79.	अमढिया	08	1.6
31	कुकरिया	02	0.4	80.	बिलठरिया	08	1.6
32	बड़छिया	02	0.4	81.	खड़खड़िया	08	1.6
33	मुखतरिया	02	0.4	82.	लखनपुरिया	09	1.8
34	बघरिया	02	0.4	83.	भड़िया	10	2
35	भड़भड़िया	02	0.4	84.	कुर्का	10	2
36	कजलढ़िया	02	0.4	85.	धनिया	10	2
37	नुगनिया	02	0.4	86.	सुरखिया	11	2.2

क्र.	बैगाओं का गोत्र	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत	क्र.	बैगाओं का गोत्र	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
38	बहरगुईया	02	0.4	87.	डोकरघटिया	11	2.2
39	पचलिया	03	0.6	88.	रजगढ़िया	12	2.4
40	गोठरिया	03	0.6	89.	बलरिया	12	2.4
41	तिलझरिया	03	0.6	90.	उपड़िया	12	2.4
42	पनगरिया	03	0.3	91.	अमड़िया	13	2.6
43	बलगढ़िया	03	0.6	92.	कौआडोंगरिया	15	3
44	धनसिया	03	0.6	93.	कचनरिया	15	3
45	खमरठिया	03	0.6	94.	कुड़पनिया	18	3.6
46	किवरिया	03	0.6	95.	खमरिया	19	3.8
47	लुटरिया	03	0.6	96.	मोंधिया	21	4.2
48	भुरकुड़िया	03	0.6	97.	कुड़कुड़िया	31	6.2
49	कांसिया	03	0.6		योग	500	100

****

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम, 1989

अन्ना तिरकी *

शोध सारांश – अनुसूचित जाति/जनजाति सदियों से शोषित पीड़ित व असुरक्षित रही। सम्मान, स्वाभिमान, उत्थान एवं उनके हितों की रक्षा के लिए भारतीय संविधान के विभिन्न प्रावधानों के अलावा इन जातियों पर अत्याचार को रोकने लिऐ 16 अगस्त, 1989 को उर्पयुक्त अधिनियम बनाए गए जिससे अनुसूचित जाति/जनजाति के सामाजिक, आर्थिक व अन्य अधिकारों की विशेष सुरक्षा प्रदान की है।

अनुसूचित जाति का अर्थ – अनुसूचित जाति का आशय उन उन लोगों से है, जो संविधान की धारा 341(1) तथा 2 के अन्तर्गत अनुसूचित जाति की श्रेणी में रखे गए हैं। अनुसूचित जाति संवैधानिक अवधारणा है। 1936 में ब्रिटिश सरकार ने कुछ जातियों को अनुसूचित जनजातियों और प्रजातीय समूहों को अनुसूचित जाति के रूप में जानने का प्रयास किया।

भारतीय संविधान में इनकी अलग पहचान इनकी सामाजिक अयोग्यताओं और आर्थिक पिछड़ेपन को दूर कर इन्हें विशेष आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक सुरक्षा प्रदान करने की दृष्टि से की गई है। सदियों से गरीबी, अशिक्षा और अभाव की शिकार ये जातियां बहिष्कृत और नागरिक अधिकारों से वंचित हैं। आज भी गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने को विवश है। इन लोगों के पास आजीविका के साधन तथा भूमि और अन्य संसाधन कम हैं। ये जातियां शोषित, पीड़ित, अभाव, गरीबी, अत्याचारपूर्ण जीवन जी रही हैं।

जनजाति की परिभाषा – पिंडेस्टेन ।'हम जनजातियों को व्यक्तियों के एक समूह के रूप में परिभाषित कर सकते हैं, जो कि एक समान भाषा बोलता है, एक समान भू–भाग में निवास करता हो तथा जिनकी संस्कृति एक विशेष समरूपता रखती हैं।'

जनजाति की विशेषताएं –

1. जनजाति परिवारों व परिवारों के एक समूह का नाम है।
2. ये जंगल, पहाड़, मैदान आदि किसी विशिष्ट क्षेत्र में फैले हुए होते हैं।
3. एक प्रकार की भाषा या बोली बोलते हैं।
4. विवाह, व्यवसाय, भोजन या अन्य वस्तुओं के संबंध में निश्चित नियमों का पालन करते हैं।
5. यह अन्तर्विवाही समूह होता है। विवाह समूह के अंतर्गत किए जाते हैं।
6. जनजाति एक राजनैतिक इकाई भी होती है क्योंकि जनजातीय संगठन वंशानुगत प्रमुख के द्वारा मान्यता प्राप्त होता है।

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम व प्रावधानों और इससे संबंधित दण्ड और मुआवजे को सरल व स्पष्ट तरीके से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया।

एस.सी एस.टी. जनजातियों के सदस्यों पर अत्याचार व अपराध करने के निवारण हेतु सदस्यों पर अत्याचार व अपराध करने के निवारण हेतु विशेष न्यायालयों तथा ऐसे अपराधों से पीड़ित व्यक्तियों को राहत देने, उनके पुनर्वास तथा इससे संबंधित विषयों का उपलब्ध करने के लिए संसद के द्वारा भारत गणराज्य के 44वें वर्ष में 11 सितम्बर, 1989 को पारित किया गया। इस अधिनियम में 05 अध्याय तथा 23 धाराएं हैं।

एस.सी./एस.टी. वर्ग के सम्मान, स्वाभिमान और उत्थान एवं उनके हितों की रक्षा के लिए भारतीय संविधान में किए गए विभिन्न प्रावधानों के साथ अधिनियम लागू किया गया।

प्रथम अध्याय । अधिनियम का प्रारंभिक परिचय, जिसमें अधिनियम का नाम व परिभाषा का उल्लेख है।

द्वितीय अध्याय । अत्याचार और अपराध का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया गया है। कर्तव्यों की उपेक्षा के लिए दण्ड पश्चातवर्ती दोषसिद्ध, अपराधों के बारे में उपधारणा को स्पष्ट किया गया है।

तृतीय अध्याय । अध्याय निष्कासन से संबंधित है।

चतुर्थ अध्याय । विशेष न्यायालय की स्थापना विशेष लोक अभियोजन के प्रावधान का उल्लेख किया गया है।

पंचम अध्याय । अधिनियम के प्रभावी क्रियांवयन सुनिश्चित करने, सरकार के कर्तव्यों का उल्लेख किया गया है।

द्वितीय अध्याय । अनुसूचित जाति और जनजाति के विरूद्ध किए जाने वाले अत्याचार के अपराध के स्वरूप व दण्ड का उल्लेख किया गया है।

A - ऐसे अपराध जिनमें 6 महिने से लेकर 5 साल तक की सजा और जुर्माने का प्रावधान है।

धारा 3 (1) i - अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के व्यक्ति को अखाद्य, घृणाजनक अथवा गंदे पदार्थ पीने या खाने के लिए बाध्य करना।

धारा 3 (1) ii – । अनुसूचित जाति या जनजाति के किसी सदस्य को अपमानित अथवा परेशान करने की दृष्टि से उसके परिवार या पड़ोस में मलमूत्र, कूड़ा–करकट, पशुओं के शव या कंकाल अथवा कोई अन्य गंदे पदार्थ फेंकना।

धारा 3 (1) iii - अनुसूचित जाति/जनजाति के किसी सदस्य के शरीर से बलपूर्वक कपड़े उतारना या उसे नंगा करके, उसके चेहरे या शरीर के किसी हिस्से को पोतकर घुमाना या मानव की गरिमा के विरूद्ध ऐसा ही कोई अन्य कार्य करना।

मुआवजा : उपरोक्त धाराओं 3 (1) i, ii, iii में प्रत्येक पीड़ित को अपराध के स्वरूप और गंभीरता को देखते हुए 60,000 रुपये या उससे अधिक

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय , धार (म.प्र.) भारत

और पीड़ित व्यक्ति द्वारा अनादर, अपमान, क्षति तथा मानहानि कहने के अनुपात में भी होगा।

धारा 3 (1) iv व धारा 3 (1) v – किसी सदस्य के स्वामित्व वाली अथवा किसी सक्षम अधिकारी द्वारा आवंटित भूमि पर कब्जा करना या उस आवंटित भूमि को गलत तरीके से अपने अधिकार में लेकर उस पर खेती करना, उसकी भूमि या परिसर पर अथवा किसी भी भूमि, परिसर पर अथवा किसी भी भूमि, परिसर, जल स्रोत पर उसके नैसर्गिक अधिकारों का हनन करना।

मुआवजा – अपराध के स्वरूप और गंभीरता को देखते हुए कम से कम 60,000 रू. या उसके अधिक भूमि/परिसर/जल की आपूर्ति जहाँ आवश्यक हो, सरकारी खर्च पर पुन: वापस की जायेगी।

धारा 3 (1) vi – किसी को बेगार, बलात् श्रम या बंधुआ मजदूरी के लिए मजबूर करना।

मुआवजा – पीड़ित व्यक्ति को कम से कम 60,000 रू., प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज होने पर 25 प्रतिशत और 75 प्रतिशत निचली अदालत में दोषसिद्ध होने पर।

धारा 3 (1) vii % अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य को मताधिकार का प्रयोग करने से रोकना अथवा किसी के पक्ष में जबरन मतदान करने के लिए मजबूर करना।

मुआवजा – प्रत्येक पीड़ित व्यक्ति को 50,000 रू. तक जो अपराध के स्वरूप और गंभीरता पर निर्भर है।

धारा 3 (1) viii – किसी के खिलाफ झूठी, द्वेषपूर्ण या तंग करने वाली कानूनी कारवाई करना।

मुआवजा – 60,000 रू. या वास्तविक विधिक व्यय और क्षति की प्रतिपूर्ति या अभियुक्त के विचारण (न्यायिक सुनवाई) की समाप्ति के पश्चात् जो भी कम हो।

धारा 3 (1) ix – सरकारी तंत्र को ऐसी सूचना देना जिससे अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को आर्थिक नुकसान अथवा मानसिक पीड़ा भुगतनी पड़े।

मुआवजा – 60,000 रू. या वास्तविक विधिक ठ और क्षति की प्रतिपूर्ति या अभियुक्त के विचारण की समाप्ति के पश्चात् जो भी कम हो।

धारा 3 (1) x– अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य के सार्वजनिक रूप से अपमानित करना, दु:खी करना या नीचा दिखाना।

मुआवजा – अपराध के स्वरूप पर निर्भर करते हुए प्रत्येक पीड़ित व्यक्ति को 60,000 रू. तक, 25 प्रतिशत उस समय जब आरोप–पत्र न्यायालय को भेजा जाए और शेष दोष सिद्ध होने पर।

धारा 3 (1) xi – किसी अनुसूचित जाति/जनजाति की महिला पर हमला करना, अपमानित करना अथवा उसे लज्जित करना।

धारा 3 (1) xii – किसी अनुसूचित जाति/जनजाति की महिला का यौन शोषण करना।

मुआवजा – धारा 3 (1) xi एवं xii – में अपराध की प्रत्येक पीड़ित व्यक्ति को 1,20,000 रू., चिकित्सा जाँच के पश्चात् 50 प्रतिशत किया जाए और शेष 50 प्रतिशत का विचारण की समाप्ति पर भुगतान किया जाए।

धारा 3 (1)xiii– किसी अनुसूचित जाति/जनजाति द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले जलस्रोत को प्रदूषित करना।

मुआवजा – 2,50,000 रू. तब जब पानी को गंदा कर दिया जाए तो उसे साफ करने सहित या सामान्य सुविधा को पुन: बहाल करने की पूरी लागत।

धारा 3 (1) xiv – अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्यों को किसी सार्वजनिक स्थान पर प्रवेश न करने देने पर इरादे से रास्ता रोकना।

मुआवजा – 2,50,000 रू. तक या मार्ग के अधिकार को पुन: बहाल करने की पूरी लागत और जो नुकसान हुआ है, यदि कोई हो, उसका पूरा प्रतिकर। 50 प्रतिशत जब आरोप–पत्र न्यायालय को भेजा जाए और 50 प्रतिशत निचले न्यायालय में दोष सिद्ध होने पर।

धारा 3 (1) xv अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्यों को गाँव या शहर स्थित उनका निवास स्थान छोड़ने के लिए मजबूर करना।

मुआवजा – स्थल बहाल करना। ठहरने का अधिकार और प्रत्येक पीड़ित को 60,000 रू. का प्रतिकार तथा सरकार के खर्च पर मकान का पुनर्निर्माण, यदि नष्ट किया गया हो।

(2) ऐसे अपराध जिनमें 6 महीने से लेकर सात साल तक की सजा और जुर्माने का प्रावधान है–

धारा 3 (2) i और ii – अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के खिलाफ चल रहे मुकदमों में जानबूझकर ऐसी झूठी गवाहियॉ देना जिनसे अनुसूचित जाति/अनुसूजित जनजााति के सदस्यों को सजा मिल जाए।

मुआवजा – कम से कम 2,50,000 रूपये या उठाए गए नुकसान या हानि का पूरा प्रतिकर। 50 प्रतिशत का भुगतान जब आरोप–पत्र न्यायालय में भेजा जाए और 50 प्रतिशत निचले अदालत द्वारा दोष सिद्ध होने पर।

धारा 3 (2) iii – अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की संपत्ति (घर, धार्मिक स्थल या गोदाम के अलावा) को आग और विस्फोटक सामग्री द्वारा जानबूझकर नुकसान पहुॅचाना या ऐसा करने का प्रयास करना।

धारा 3 (2) iv – जानबूझकर सबूतों को नष्ट करना अथवा किसी मामले में गलत सूचना देना।

मुआवजा : धारा 3 (2) iii, 3 (2) vi के अन्तर्गत अपराध के स्वरूप और गम्भीरता को देखते हुए प्रत्येक पीड़ित व्यक्ति को या उसके आश्रित को कम से कम 1,20,000 रूपये यदि अनुसूची में विशिष्ट, अन्यथा प्रावधान किया हुआ हो तो इस राशि में अन्तर होगा।

धारा 3 (2) vii % सेवक (सरकारी कर्मचारी) द्वारा उत्पीड़न करना।
(कम से कम 1 साल की सजा)

धारा 4 – ऐसे लोक सेवक (अनुसूचित जाति/अनुसूजित जनजाति के लोक सेवक को छोड़कर) जो अनुसूचित जाति/अनुसूजित जनजाति के प्रति कानुनी कर्त्तव्यों का निर्वाह नहीं करते।

मुआवजा : धारा 3 (2) vii एवं धारा 4 में उठाई गई हानि या नुकसान का पूरा प्रतिकर। 50 प्रतिशत का भुगतान जब आरोप–पत्र न्यायालय में भेजा जाए और 50 प्रतिशत का भूगतान जब निचले न्यायालय में दोष सिद्ध हो जाए, किया जायेगा।

(3) ऐसे अपराध जिनमें आजीवन कारावास की सजा और जुर्माने का प्रावधान है–

धारा 3 (2) i – अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्यों के खिलाफ चल रहे मुकदमों में जान–बूझकर झूठी गवाही देना ताकि उस व्यक्ति को सजा मिल जाए।

मुआवजा – 2,50,000 रू. अथवा नुकसान की पूरी भरपाई जो भी अधिक हो। 50 प्रतिशत का भुगतान न्यायालय में आरोप–पत्र दाखिल किए जाने के बाद और 50 प्रतिशत न्यायालय द्वारा सजा सुनाने पर।

धारा 3 (2) iv : किसी अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्य के निवास या सामान रखने के स्थान को जानबूझकर आग या विस्फोटक सामग्री

द्वारा नुकसान पहुँचाना।

मुआवजा – कम से कम 1,20,000 रू. तक

धारा 3 (2) – भारतीय दण्ड संहिता–1860 (45) तक तहत किसी व्यक्ति या उसकी जायदाद के खिलाफ किए गए अपराध के लिए 10 साल या उससे अधिक कारावास का प्रावधान है।

मुआवजा – कम से कम 1,20,000 रू. तक।

धारा 4 : कर्त्तव्यों की उपेक्षा के लिए दंड – कोई भी लोक सेवक, जो अनुसूजित जाति या अनुसूजित जनजाति का सदस्य नहीं है, इस अधिनियम के अधीन उसके द्वारा पालन किए जाने के लिए अपेक्षित अपने कर्त्तवयों की जानबूझकर उपेक्षा करेगा, एक वर्ष तक की कारावास की सजा हो सकेगी, दंडनीय होगा।

धारा 5 : पश्चात्वर्ती दोषसिद्ध के लिए बर्धित दंड – कोई व्यक्ति, जो इस अध्याय के अधीन किसी अपराध के लिए पहले ही दोषसिद्ध हो चुका है, दूसरे अपराध या उसके पश्चात्वर्ती किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है। वह कारावास से जिसकी अवधि एक वर्ष के कम की नहीं होगी।

धारा 6 : भारतीय दण्ड संहिता के कतिपय उपबंधों का लागू होना – इस अधिनियम के अन्य उपबन्धों के अधीन रहते हुए, भारतीय दंड संहिता (1960 का 45) की धारा 34, अध्याय 3, अध्याय 4, अध्याय 5, अध्याय 5 क, धारा 149 और अध्याय 23 के उपबंध जहॉ तक हो सकें इस अधिनियम के लिए उसी प्रकार लागू होंगे जिस प्रकार वे भारतीय दंड संहिता के प्रयोजनों के लिए लागू होते हैं।

धारा 7 : कतिपय व्यक्तियों की संपत्ति का समपहरण –

(1) इस संहिता में किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध होने पर उस व्यक्ति की संपत्ति स्थावर या जंगम या दोनों जिनका उस अपराध को करने में प्रयोग किया है, सरकार को समपहृत हो जाएगी।

(2) जहॉ कोई व्यक्ति इस अध्याय के अधीन किसी अपराध का अभियुक्त है, चहॉ उसका विचारण करने वाला विशेष न्यायालय ऐसा आदेश करने के लिए स्वतंत्र होगा कि उसकी सभी या कोई संपत्ति, स्थावर या जंगम या दोनों, ऐसे विचारण की अवधि के दौरान, कुर्क की जागबी और जहॉ ऐसे विचारण का परिणाम दोषसिद्धि है, वहॉ इस प्रकार कुर्क की गई संपत्ति उस सीमा तक समपहरण के दायित्वाधीन होगी तहॉ तक वह इस अध्याय के अधीन अधिरोपित किसी जुर्माने की वसूली के प्रयोजन के लिए अपेक्षित हैं।

धारा 8 : अपराधों के बारे में उपधारणा – इस अध्याय के अधीन किसी अपराध के लिए अभियोजन में, यदि यह साबित हो जाता है कि–

(क) अभियुक्त ने इस अध्याय के अधीन अपराध करने के अभियुक्त व्यक्ति की, या युक्तियुक्त रूप से संदेहास्पद व्यक्ति की कोई वित्तीय सहायता की है जो विशेष न्यायालय, जब जक कि तत्प्रतिकूल साबिन न किया जाए, यह उपधारणा करेगा कि ऐसा व्यक्ति ने उस अपराध का दुष्प्रेरण किया है।

(ख) इस संहिता के तहत कोई अपराध हो और यह साबित हो जाता है, अपराध भूमि या किसी अन्य विषय के बारे में विवाद का फल है, तो यह उपधारणा की जाएगी, यह अपराध सामान्य या सामान्य उद्देष्य का अग्रसर करने के लिए किया जाता है।

धारा 9 : शक्तियों का प्रदान किया जाना –

(1) संहिता में या इस अधिनियम के किसी अन्य उपबन्ध में किसी बात के होते हुए भी, यदि राज्य सरकार ऐसा करना आवश्यक या समीचीन समझती है, तो वह

(क) इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध के निवारण के लिए, उससे निपटने के लिए, या

(ख) इस अधिनियम के अधीन किसी मामले या मामलों के वर्ग या समूह के लिए, किसी जिले या उसके किसी भाग में, राज्य सरकार के किसी अधिकारी को राजपत्र में अधिसूचना द्वारा ऐसे जिले या उसके भाग में संहिता के अधीन पुलिस अधिकारी द्वारा प्रयोक्तव्य शक्तियॉ या, यथास्थिति, ऐसे मामले या मामलों के वर्ग या समूह के लिए, और विशिष्टतया किसी विशेष न्यायालय के समक्ष व्यक्तियों की गिरफ्तारी, अन्वेषण पर अभियोजन की शक्तियॉ प्रदान कर सकेगी।

(2) पुलिस के सभी अधिकारी और सरकार के अन्य सभी अधिकारी इस अधिनियम के या उसके अधीन बनाए गए किसी नियम, स्कीम या आदेश के उपबंधों के निष्पादन में उपधारा (1) में निर्दिष्ट अधिकारी की सहायता करेंगें।

(3) संहिता के उपबंध, जहॉ तक हो सके, उपधारा (1) के अधीन किसी अधिकारी द्वारा शक्तियों के प्रयोग के संबंध में लागू होंगे।

अध्याय तीन : निष्कासन

धारा 10. ऐसे व्यक्ति को हटाया जाना जिसके द्वारा अपराध किए जाने की संभावना है।

धारा 11. किसी व्यक्ति द्वारा संबंधित क्षेत्र से हटने में असफल रहने व वहां से हटने के बाद उसमें प्रवेश करने की प्रक्रिया।

धारा 12. ऐसे व्यक्तियों के विरूद्ध धारा 10 के अधीन आदेश किया गया है, माप और फोटो आदि लेना।

धारा 13 : धरा 10 के अधीन आदेश के अनुपालन के लिए शासित – वह व्यक्ति, जो धरा 10 के अधीन किये गये विशेष न्यायालय के आदेश का उल्लंघन करेगा, कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी, और जुर्माने से, दंडनीय होगा।

अध्याय 4 : विशेष न्यायालय

धारा 14 विशेष न्यायालय – राज्य सरकार, शीघ्र विचारण का उपबंध करने के प्रयोजन के लिए, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति की सहमति से, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस अधिनियम के अधीन अपराधों का विचारण करने के लिए प्रत्येक जिले के एक सेशन न्यायालय को विशेष न्यायालय के रूप में विनिर्दिष्ट करेगी।

धारा 15 विशेष लोक अभियोजक – राज्य सरकार प्रत्येक विशेष न्यायालय के लिए अधिसूचना द्वारा एक लोक अभियोजक विनिर्दिष्ट करेगी या किसी ऐसे अधिवक्ता जो जिसने कम से कम सात वर्ष तक अधिवक्ता के रूप विधि व्यवसाय किया हो।

अध्याय 5–प्रकीर्ण

धारा 16 राज्य सरकार की सामूहिक जुर्माना आरोपित करने की शक्ति – सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम (1955 का 22) की धारा 10क के उपबंध जहां तक हो सके, इस अधिनियम के अधीन सामूहिक जुर्माना अधिरोपित करने और उसे वसूल करने के प्रायोजनों के लिए उससे संबंध सभी अन्य विषयों के लिए लागू होगें।

धारा 17 विधि और व्यवस्था तंत्र द्वारा निवारक कार्यवाही –

1. यदि जिला मजिस्ट्रेट या उपखण्ड मजिस्ट्रेट या किसी अन्य कार्यपालक मजिस्ट्रेट किसी पुलिस अधिकारी जो पुलिस अधीक्षक की पंक्ति से नीचे का न हो तो ऐसी जांच के लिए नियुक्त किया जा सकता है।
2. राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा एक या अधिक स्कीमें व

रीति विनिर्दिष्ट करते हुए बना सकेगी, जिसका उपधारा 1 में निर्दिष्ट अधिकारी अत्याचारों के निवारण के लिए तथा अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्यों में सुरक्षा की भावना पुन: लाने के लिए स्कीमों में विनिर्दिष्ट समुचित कार्यवाही करेंगें।

धारा 18 अधिनियम के अधीन अपराध करने वाले व्यक्तियों को संहिता की धारा 438 का लागू नहीं होना – अत: इस अधिनियम पर प्रक्रिया संहिता धारा 438 के अग्रिम जमानत के प्रावधान लागू नहीं होंगें।

धारा 19 – इस अधिनियम के अधीन अपराध के लिए दोषी व्यक्तियों के लिए संहिता की धारा 360 या अपराधी परिवीक्षा अधिनियम के उपबंध का लागू न होना – दंड संहिता की धारा 360 के उपबंध और अपराधी परिवीक्षा 1958 के उपबंध 18 वर्ष से अधिक आयु के ऐसे व्यक्ति के संबंध में लागू नहीं होगें।

धारा 20 – अधिनियम का अन्य विधियों पर अध्यारोही होना – इस अधिनियम के तहत तत्समय प्रवृत किसी अन्य विधि या किसी प्रथा या किसी अन्य विधि के आधार पर प्रभाव रखने वाली किसी लिखत में उससे असंगत किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होगें ।

धारा 21 – अधिनियम का प्रभावी क्रियांवयन सुनिश्चित करने का सरकार का कर्तव्य

1. राज्य सरकार ऐसे नियमों के अधीन रहते हुए जो केन्द्रीय सरकार, इस निमित्त बनाए, इस अधिनियम के प्रभावी क्रियांवयन के लिए उपाय करेगी।
2. विशिष्टा और पूर्वगामी उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उसेसे उपायों के अंतर्गत निम्नलिखित हो सकेगा –

i. ऐसे व्यक्तियों को, जिन पर अत्याचार हुआ है, न्याय प्राप्त करने में समर्थ बनाने के लिए पर्याप्त सुविधाओं की, जिनके अंतर्गत विधिक सहायता भी है, व्यवस्था,

ii. इस अधिनियम के अधीन अपराध के अन्वेषण और विचारण के दौरान साक्षियों, जिनके अंतर्गत अत्याचार से पीड़ित व्यक्ति भी हैं, यात्रा और भरणपोषण के व्यय की व्यवस्था।

iii. अत्याचारों से पीड़ित व्यक्तियों के आर्थिक और सामाजिक पुनरूद्धार की व्यवस्था।

iv. इस अधिनियम के उपबंधों के उल्लंघन के लिए अभियोजन प्रारंभ करने या उनका पर्यवेक्षण करने के लिए अधिकारियों की नियुक्ति।

v. ऐसे समुचित स्तरों पर, जो राज्य सरकार, ऐसे उपायों की रचना या उनके क्रियांवयन के लिए उस सरकार की सहायता के लिए ठीक समझे, समितियों की स्थापना करना।

vi. इस अधिनियम के उपबंधों के बेहतर क्रियांवयन करने के लिए उपायों को सुझाव देने की दृष्टि से इस अधिनियम के अधिनियम के उपबंधों के कार्यकरण का समय–समय पर सर्वेक्षण करने की व्यवस्था।

vii. उन क्षेत्रों की पहचान जहाँ अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्यों पर अत्याचार होने की संभावना हो और ऐसे उपाय करना जिससे ऐसे सदस्यों की सुरक्षा अभिनिश्चित की जा सके।

3. केन्द्रीय सरकार, ऐसे उपाय करेगी जो उपधारा (1) के अधीन राज्य सरकारों द्वारा उपायें में समन्वयन करने के लिए आवश्यक हो।
4. केन्द्रीय सरकार, प्रत्येक वर्ष संसद् के प्रत्येक सदन के पटल पर इस धारा के उपबंधों के अनुसरण में स्वयं उसके द्वारा और राज्य सरकारों द्वारा किये उपायों के संबंध में एक रिपोर्ट रखेगी।

धारा 22. सद्भावपूर्वक की गई कार्यवाही के लिए सरंक्षण – इस अधिनियम के अधीन सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के लिए कोई वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही केन्द्रीय सरकार के विरूद्ध या राज्य सरकार या सरकार के किसी अधिकारी या प्राधिकारी या किसी अन्य व्यक्ति के विरूद्ध नहीं होगी।

धारा 23. नियम बनाने की शक्ति –

(1) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के नियम, बना सकेगी।

(2) इस अधिनियम के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष जब वह सत्र में हो, **कुल तीस दिन की अवधि** के लिए रखा जाएगा। दोनों सदनों से यह पारित होने पर माननीय राष्ट्रपति द्वारा हस्ताक्षरित होने के पश्चात् यह नियम स्थायी रूप से प्रभावशील रहेगा।

निष्कर्ष – अनुसूचित जाति/जनजाति अत्याचार निरोधक अधिनियम, 1989 के तहत अनुसूचित जाति/जनजाति को सामाजिक, आर्थिक क्षेत्र में विकास व सुरक्षा प्रदान कर राष्ट्र की मुख्य धारा में जोड़ना और सम्माननीय व सुरक्षित जीवन प्रदान करना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सामान्य अध्ययन प्रतियोगिता – डॉ. एल.एस. गजपाल
2. ——— ———— – डॉ. ए.पी. श्रीवास्तव (पृष्ठ क्र. 333 से 339)
3. समाज शास्त्र – डॉ. डी.एस. बघेल (पृष्ठ क्र. 220 से 223)
4. समाज शास्त्र – डॉ. गुप्ता व शर्मा (पृष्ठ क्र. 219 से 223)
5. समाज शास्त्र – डॉ. ए.पी. श्रीवास्तव (पृष्ठ क्र. 115 से 119)

****

आधुनिक भारत में महिलाओं के स्वतंत्रता एवं समानता के मसीहा – डॉ. अम्बेडकर

डॉ. संजय जोशी *

शोध सारांश – डॉ. अम्बेडकर अपने गुरू एवं आराध्य भगवान बुद्ध की तरह ही नारी संगठन के बहुत हिमायती थे। उनका विश्वास था कि यदि एक बार नारी की समझ में आ जाये और वह निश्चय कर लें तो समाज की बुराई को दूर करने और समाज को सुधारने में वह बहुत बड़ा कार्य कर सकती है। समाज में नारी की स्थिति को ऊँचा उठाने की प्रेरणा अम्बेडकर को बुद्ध से प्राप्त हुई। बुद्ध ने अपने समय में पुरूषो एवं महिलाओं दोनों के लिए ही समान रुप से धर्ममय जीवन जीने एवं आत्म विकास के रास्ते खोले थे। उन्होंने स्त्रियों को भी धर्म की दीक्षा, सन्यास एवं परिव्रजत्व की अनुमति प्रदान कर समकक्ष अधिकार प्रदान किये। समाज में नारी पुरूष के समान स्वतंत्र एवं अधिकार सम्पन्न हो इसके लिये अम्बेडकर ने अविस्मरणीय एवं असाधारण कार्य किया। उनके नेतृत्व में बने संविधान में लिंग के आधार पर पुरूष और स्त्री के बीच सामाजिक भेदों को समाप्त किया गया। अम्बेडकर का यह मानना था कि संविधान में नारी की स्वतंत्रता का पक्ष रखने से ही धरातल पर नारी को वास्तविक रूप से स्वतंत्रता प्राप्त नहीं हो सकेगी। इसलिएउन्होंने विवाह और सम्पत्ति में भी नारी के अधिकार हेतु कानूनों में क्रांतिकारी परिवर्तन कर इसे व्यवहारिक, सामाजिक विधान का रूप प्रदान किया।

प्रस्तावना – भीमराव एक युगदृष्टा थे। भारतीय समाज की पुनर्रचना संबंधी उनकी परिकल्पना स्वप्नवादी चिंतकों की भाँति कल्पना पर आधारित नहीं थी। वे एक व्यावहारिक एवं यथार्थवादी चिंतक थे। उन्होंने एक ऐसे सामाजिक प्रारूप की रचना की जिसमें व्यक्ति एवं समूह को समाज में एक छोर से दूसरे छोर तक गमनागमन की पूरी स्वतंत्रता हो, सभी को शिक्षा, आत्म विकास एवं रोजगार के समान अवसर उपलब्ध हों और सभी को विचार अभिव्यक्त करने एवं विकास करने की पूर्ण स्वतंत्रता हो।

डॉ. अम्बेडकर का कहना था कि शास्त्रों के आलौकिक आधार के कारण भारत में समाज रचना के नियमों की प्रकृति ईश्वरीय थी, जिसके कारण भारतीय समाज में समायानुकुल परिवर्तन लाना संभव नहीं हो सका। परिणास्वरूप सभ्य एवं समृद्ध होने पर भी भारतीय समाज समय की दौड़ में दुनिया के अन्य समाजों से पिछड़ गया। इसलिए उनका मानना था कि सामाजिक रचना के नियम लौकिक होने चाहिए, जिससे कि समय के अनुसार समाज में परिवर्तन लाया जा सके।[1]

अम्बेडकर का कहना था कि सामाजिक असमानता न्यूनाधिक सभी समाजों में होती है किन्तु धर्मशास्त्रों के माध्यम से हिन्दू विधान को ईश्वरीय विधान निरूपित करते हुए शास्त्रकारों ने इसे स्थायी बना दिया, जो आगे चलकर भारतीय समाज के पतन का कारण बना।

नारी समाज का अर्द्ध–भाग होकर एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। समाज के इतने बडे पक्ष की अवहेलना एवं उपेक्षा कर कोई भी समाज एवं राष्ट्र विकास एवं कल्याण के पथ पर अग्रसर नहीं हो सकता इन्हीं तथ्यों एवं भावनाओं को समझते हुए महान समाज वैज्ञानिक डॉ.भीमराव अम्बेडकर ने भी अपने समय में ही नारी को वह सम्मान एवं स्वतंत्रता दिलाने हेतु अथक प्रयास एवं विचार प्रस्तुत किये एवं संसद में कानून मंत्री के रूप में सन् 1951 में हिन्दु, कोड़ बिल प्रस्तुत करने का प्रयास किया जिसमें स्त्री की स्वतंत्रता एवं समानता के पक्षों को रखकर स्त्री जाति का सम्मान करने का पावन प्रयास किया।

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार 'किसी भी समाज ने जिसमें सामाजिक चेतना है, उसने असमानता को कभी इस आधार पर नहीं माना कि एक बार जो निश्चित हो गया वह सदैव के लिए निश्चित हो गया। ऐसा दृष्टिकोण सभी प्रकार की नैतिकता का विरोधी है नैतिक सिद्धांत यह है कि जो कुछ भी दोषपूर्ण ढंग से हुआ है, कभी भी निश्चित न समझा जाए और उसे फिर से निश्चित किया जाए कोई भी व्यक्ति स्थायी, अप्रगतिशील, दृढ़ता तथा सदैव अपरिवर्तनशील रहने वाले संबंध नही चाहता। सामाजिक दृढ़ता की आवश्यकता है किन्तु परिवर्तन की कीमत के आधार पर नहीं जब कि परिवर्तन अनिवार्य हो'।[2]

अम्बेडकर ने समाज के विभिन्न वर्गो के बीच सामजंस्य पर बल तो दिया किंतु वे मानते थे कि ऐसा स्वाभाविक रूप से होना चाहिए न कि शोषण या दबाव के आधार पर। उनका कहना था कि कोई व्यक्ति केवल कोरा सामंजस्य नहीं चाहता। सामंजस्य की आवश्यकता है लेकिन सामाजिक न्याय की कीमत पर नहीं।

भीमराव रामजी अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 को मध्यप्रदेश के इंदौर जिले की फौजी छावनी के एक छोटे से कस्बे महू में हुआ। उनका पैदाइशी नाम भीम था। उनकी माँ उन्हें प्यार से भीमा कहकर पुकारती थी। उनके पिता का नाम रामजी मालो जी सकपाल था। वे ब्रिटिश सेना में सूबेदार के पद पर कार्यरत थे। अम्बेडकर के दादा मालोजी सकपाल भी ब्रिटिश सेना के सेवानिवृत सिपाही थे। भीम का परिवार मूलत: कोंकण क्षेत्र के रत्नागिरि जिले के दापोली तालुक के अम्बावडे गाँव का रहने वाला था जिसकी वजह से प्रारम्भ में भीम का उपनाम आम्बावाडेकर था।

सामाजिक चिन्तन – व्यक्ति अपने युग और समाज की देन होता है। युग और समाज की सीमाओं में जीना उसकी नियति होती है। दूसरे शब्दों में समाज और युग की सीमाओं के पार जा पाना सामान्य व्यक्ति के बस में नहीं होता किंतु प्रत्येक समाज और युग में कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो आँख मूँदकर समाज के साथ नहीं चलते, वे स्थापित व्यवस्था में भागीदार बन उससे लाभ उठाने के स्थान पर उसमें निहित विरोधाभास, शोषण व अन्याय के विरूद्ध संघर्ष का आव्हान करते हैं तथा सम्बद्ध वैचारिकी (आईडियोलाजी) एवं मूल्यों के वाहक बनने के स्थान पर उसमें क्रांतिकारी

*एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र एवं समाज कार्य) स्वामी विवेकानंद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

परिवर्तन के सूत्रधार बनते हैं।

डॉ.भीमराव रामजी अम्बेडकर आधुनिक युग के उन विरले पुरूषों में थे जिन्होंने युग व समाज की स्थापित व्यवस्था एवं वैचारिकी की न तो अधीनता स्वीकार की और न ही उनसे समझौता किया। वे परम्परात्मक समाज की अन्याय और शोषणकारी शक्तियों के विरूद्ध जीवनपर्यन्त संघर्ष करते रहे। संविधान के माध्यम से 26 जनवरी 1950 को संविधान की मसौदा समिति के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने भारत में अन्याय और शोषण से रहित एक बेहतर युग एवं बेहतर समाज की आधारशिला रखी। साथ ही, हिन्दू कोड बिल का निर्माण कर परम्परागत हिन्दू समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त किया।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया गया है कि वर्तमान समय में नारियों को शोषण एवं अन्याय से मुक्त कराने में डॉ. आम्बेडकर के विचार एवं लेख किस प्रकार सहायक हैं। शोध के कुछ प्रमुख उद्देश्य निम्नानुसार है :-

1. डॉ. अम्बेडकर द्वारा लिखित ग्रंथो एवं पुस्तकों में से नारी उत्थान हेतु उनके विचारों को जानकर समाज को अवगत कराना।
2. डॉ. आम्बेडकर द्वारा स्त्रियों को समानता एवं स्वतत्रंता प्रदान करने में संविधान निर्माता एवं कानून मंत्री के रूप में उनके योगदान को जानना।

अध्ययन पद्धति – प्रस्तुत शोध पत्र वर्णनात्मक पद्धति का होकर द्वितीयक स्त्रोतों से प्राप्त समंकों एवं तथ्यों पर आधारित है। शोध से संबंधित महत्वपूर्ण तथ्य डॉ. अम्बेडकर द्वारा लिखित पुस्तकों, जर्नल्स, राष्ट्रीय समाचार पत्रों में प्रकाशित डॉ. अम्बेडकर से संदर्भित महत्वपूर्ण आलेखों एवं नेट पर उपलब्ध आम्बेडकर के विचारों को संग्रहित कर तैयार किया गया है।

नारी उत्थान – विभिन्न युगों में भारतीय नारी को प्राप्त अधिकारों की मीमांसा के आधार पर डॉ. आम्बेडकर ने स्पष्ट किया कि जब समाज में नारी को स्वतंत्रता प्राप्त थी ओर उसे पुरूषों के समान आत्म विकास के अवसर प्राप्त थे, तब भारतीय समाज प्रगति पर था, किन्तु जब नारी के अधिकारों की उपेक्षा हुई समाज की प्रगति अवरूद्ध हो गई।

स्मृतिकाल विशेष रूप से मनु के पूर्व तक भारतीय समाज में नारी की स्थिति अच्छी थी। स्त्रियों को वेद की की शिक्षा पदान की जाती थी। उन्हें गुरूकुलों में प्रवेश मिलता था। स्त्रियाँ न केवल वेद मंत्रों का उच्चारण करती थी बल्कि वेद की विभिन्न शाखाओं के अध्ययन में पारंगत एवं उनकी मीमांसा में पटु भी थी। स्त्रियाँ शिक्षक थी एवं कन्याओं को पढ़ाती थी। विशेष रूप से धर्म, दर्शन एवं अध्यात्म के ज्ञान में स्त्रियाँ बहुत निपुण थी। जनक एवं सुलभा तथा याज्ञवल्क्य एवं गार्गी आदि के मध्य संवादों से स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल में अनेक ऐसे अवसर आये जबकि स्त्रियों ने पुरूषों के साथ खुली बहस में भाग लिया।

यह कहना कठिन है कि प्राचीन राज्य-प्रशासन तंत्र में महिलाओं की क्या भागीदारी थी किन्तु इस बात में कोई संदेह नहीं है कि प्राचीनकाल में देश के बौद्धिक एवं सामाजिक जीवन में महिलाओं की स्थिति बहुत अच्छी थी। अथर्ववेद के एक उदाहरण से स्पष्ट होता है कि स्त्रियाँ भी पुरूषों की भांति उपनयन की अधिकारी थी और सामान्यता ब्रह्मचर्य की समाप्ति के पश्चात ही उनका विवाह होता था। प्राचीनकाल में अनेक स्त्रियों का उल्लेख मिलता है जो विदुषी थी, उन्होंने वेदों की ऋचाओं की रचना की थी।

बुद्ध ने समाज में नारी की स्थिति को उठाने के लिए बहुत प्रयास किया। समाज में शिक्षा व आत्मविकास के अवसर का जहाँ तक प्रश्न है बुद्ध ने नारी एवं पुरूष में भेद नहीं किया। वे बुद्धि एवं चरित्र में नारी को पुरूष से कम नहीं मानते थे। पुरूषों की भाँति स्त्रियों को धर्म की दीक्षा,सन्यास अथवा परिव्रजत्व की अनुमति प्रदान कर बुद्ध ने नारी को पुरूषों के समकक्ष धार्मिक अधिकार प्रदान किए। धर्म के प्रचार एवं प्रसार के लिए उन्होंने भिक्षुसंघों की भाँति भिक्षुणी संघों की भी स्थापना की।

बुद्ध का कहना था कि का इस बात का कोई आधार नहीं है कि पुत्र जन्म से पुत्री से अधिक योग्य होता है। कन्या पुत्र से अधिक बुद्धिमान और गुणी हो सकती है। इसलिए कन्या के जन्म पर माता-पिता को दु:खी नहीं होना चाहिए। बुद्ध स्त्री को सृष्टि की सर्वोच्च कृति मानते थे क्योंकि वही बोधि सत्व एवं विश्व सम्राटों को जन्म देती है। बुद्ध के अनुसार नारी उन सात रत्नों में एक है जो व्यक्ति को चक्रवर्ती बनाते हैं। बुद्ध का कहना था कि जो व्यक्ति,परिवार या समाज स्त्री को स्वतंत्रता एवं अधिकार प्रदान नहीं करता उसका विनाश हो जाता है।

जैसा पूर्व में स्पष्ट किया गया है कि प्राचीनकाल में स्त्रियों का विवाह वयस्क होने के बाद होता था। उन्हें तलाक के अधिकार भी प्राप्त थे। पति को सामान्य स्थिति में अपनी पत्नी को तलाक देने अथवा दूसरी पत्नी से विवाह करने का अधिकार नहीं था। कौटिल्य ने पुरूषों की भांति स्त्री को भी तलाक का अधिकार प्रदान किया। तलाकशुदा स्त्री अपने पति से भरण-पोषण प्राप्त करने की पात्रता रखती थी। तलाकशुदा, अथवा विधवा स्त्री पुनर्विवाह भी कर सकती थी। कौटिल्य ने विवाहिता स्त्री को आर्थिक भरण पोषण के लिए अपने पति की सम्पत्ति में पर्याप्त अधिकार प्रदान किया। संक्षेप में मनु के पूर्व भारतीय समाज में स्त्री स्वतंत्र थी। वह पुरूष की दासी नहीं बल्कि सहभागी थी।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्राचीनकाल में एक समय ऐसा था जबकि भारतीय समाज में स्त्रियों का बहुत आदर किया जाता था। उन्हें शिक्षा, आत्म विकास, विवाह, तलाक एवं सम्पत्ति संबंधी आवश्यक अधिकार भी प्राप्त थे,किंतु बाद में उनकी दशा बहुत खराब हुई। वे पुरूषो की जीवन संगिनी नही बल्कि दासी बन गई। ऐसा क्यों हुआ ? इसके लिए उत्तरादायी कौन है ?

डॉ. अम्बेडकर का कहना है कि भारतीय समाज में नारी के पतन के लिए मनु उत्तरदायी है। मनु ने वर्गीय हित एवं स्वार्थ से प्रेरित होकर मानव धर्मशास्त्र के रूप में एक ऐसे सामाजिक विधान की रचना की जो समाज में स्त्रियों के पतन का कारण बना।[3]

नारी के उत्थान में डॉ. अम्बेडकर की भूमिका – डॉ. अम्बेडकर की मान्यता थी कि नारी की प्रगति के बिना समाज की प्रगति संभव नही है। समाज में नारी की स्थिति को अम्बेडकर समाज की प्रगति का मापदण्ड मानते थे। उनका कहना था कि 'मैं किसी समाज की प्रगति इस आधार पर मापता हूँ कि उस समाज में नारी ने किस सीमा तक प्रगति की है'। [4]

डॉ. अम्बेडकर नारी संगठन के बहुत हिमायती थे। उनका विश्वास था कि यदि एक बार नारी की समझ में आ जाए और वह निश्चय कर ले तो समाज की बुराईयों को दूर करने और समाज को सुधारने में वह बहुत महत्वूपर्ण कार्य कर सकती है। इसलिए दलितों की मुक्ति के लिए काम आरंभ करने के समय से ही आम्बेडकर स्त्रियों को पुरूषों के साथ ले कर चले। [5]

दलित महिलाओं को संबोधित करते हुए डॉ. आम्बेडकर ने कहा कि आप स्वच्छता से रहना सीखें। सभी प्रकार के दुराचारों से दूर रहें। आपको अपने बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा देना चाहिए और उनके मस्तिष्क में यह बैठाना चाहिए कि उन्हें महान बनना है। आपको चाहिए कि आप अपने बच्चों के दिमाग से सभी प्रकार के हीन भावों को दूर करें। संक्षेप में डॉ. अम्बेडकर का सोचना था कि दलित महिलाओं को चाहिए कि वे अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा प्रदान करें। पति हो या भाई अथवा बेटा यदि शराब पीता है

तो उसे शराब न पीने दें। स्त्रियों को भी पुरूषों की भाँति शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। 20 जुलाई 1942 को अखिल भारतीय दलित महिला अधिवेशन को संबोधित करते हुए डॉ. आम्बेडकर ने दलित महिला को सलाह दी कि वे विवाह की जल्दी में न पड़े। विवाह एक दायित्व है। अपने बच्चों पर विवाह तब तक न थोपें जब तक वे विवाह संबंधी आर्थिक जिम्मेदारियों को वहन करने में समर्थ न हो जाएँ। जो विवाह करे वे यह भी ध्यान रखें कि अधिक संतान पैदा करना एक अपराध है। माता-पिता का यह दायित्व है कि वे अपनी संतान को अपने से अच्छा आरंभ दे। इन सबमें बड़ी बात यह है कि जो लड़की शादी करती है, वह अपने पति के समकक्ष खड़ी हो।

नारी संबंधी सामाजिक विधान – पूर्व विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि नारी के पतन से समाज का पतन होता है और नारी की उन्नति से समाज की उन्नति होती है। भारत में जब नारी की स्थिति उन्नत थी तब भारतीय समाज भी उन्नति के शिखर पर था, किन्तु जब नारी आत्मोन्नति व आत्मविकास के अवसर से वंचित हो घर की चारदीवारी में कैद हो गई तो भारतीय समाज भी अंधकार के गर्त में डूब गया। रूढ़िग्रस्त जर्जर भारतीय समाज को सुधारने के लिए सर्वप्रथम नारी की दशा को सुधारना आवश्यक था। इसलिए राजा राममोहन राय, हरविलास शारदा, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर आदि ने भारतीय नारी की दिशा में सुधार हेतु सती प्रथा निषेध, एवं विधवा पुनर्विवाह को कानूनी मान्यता प्रदान किए जाते हेतु कार्य किया। स्वतंत्रता उपरान्त नारी को परम्परात्मक निर्योग्यताओं से मुक्त करने एवं उन्हे पुरूषों के बराबर कानूनी अधिकार दिलाने में डॉ. अम्बेडकर ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। परम्परात्मक भारतीय समाज में नारी अनेक निर्योग्यताओं से ग्रस्त थी। उसे शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था वह वयस्क होते हुए भी अपनी इच्छानुसार अपनी जाति या सम्प्रदाय से बाहर के किसी व्यक्ति से विवाह नहीं कर सकती थीं। पुरूष तो एक से अधिक विवाह कर सकता था। वह अपनी पत्नी अथवा पत्नियों को त्याग भी सकता था। उन पर अत्याचार कर सकता था, किन्तु पत्नी अपने पति को त्याग नहीं सकती थी और न पुनर्विवाह कर सकती थी। कोई स्त्री न तो किसी की दत्तक संतान बन सकती थी और न ही किसी को गोद ले सकती थी। स्त्री को अपने पिता, पति अथवा पुत्र की सम्पत्ति पर भी कोई अधिकार नहीं था। तात्पर्य यह है कि नारी समाज में पूर्णतया असहाय और अबला थी।

समाज में नारी पुरूष के समान स्वतंत्र एवं अधिकार सम्पन्न हो इसके लिए आम्बेडकर ने अविस्मरणीय कार्य किया। उनके नेतृत्व में बने संविधान में लिंग के आधार पर पुरूष और स्त्री के बीच सामाजिक भेदो को समाप्त किया गया। संविधान ने स्त्री व पुरूष में कोई भेद न मानते हुए दोनों को समान माना है व समान अवसर व समान अधिकार प्रदान किए हैं। संविधान के माध्यम से बच्चों व स्त्रियों की बिक्री तथा उनसे बेगार लेने को प्रतिबन्धित किए जाने से सिद्धान्त: नारी की सामाजिक स्थिति में सुधार तो अवश्य आया किन्तु स्वतंत्रता एवं समानता की संवैधानिक प्रत्याभूति मात्र सदियों से उपेक्षित नारी को परम्परात्मक दासता से मुक्ति मिल जायेगी, इस पर आम्बेडकर को संदेह था। उनका सोचना था कि विवाह और सम्पत्ति पर अधिकार संबधी प्रचलित कानूनों में क्रांतिकारी परिवर्तन लाए बिना नारी की मुक्ति सम्भव नहीं है। अपने इस विश्वास को मूर्त रूप देने की दृष्टि से उन्होंने एक व्यापक सामाजिक विधान की रूपरेखा निर्मित की, जिसे हिन्दू कोड बिल के नाम से जाना जाता है। हिन्दू कोड बिल में कन्या के विवाह की तात्कालीन निर्धारित न्यूनतम आयु में वृद्धि, एक विवाह का अनिवार्य किया जाना, अन्तर्जातीय विवाह को मान्यता, स्त्रियाँ को पुरूषों के समान तलाक का अधिकार, तलाकशुदा स्त्री को अपने पति से भरण-पोषण प्राप्त करने का अधिकार, विधवा पुनर्विवाह को मान्यता, स्त्री को पुत्री, पत्नी एवं माँ के रूप में पारिवारिक सम्पत्ति पर अधिकार, स्त्री को गोद लिए जाने एवं गोद लेने के अधिकार आदि का प्रावधान था।

कानून मंत्री के रूप में हिन्दू कोड बिल को डॉ. आम्बेडकर ने संसद के सम्मुख सर्वप्रथम 5 फरवरी 1951 को प्रस्तुत किया, किन्तु बिल पर चर्चा पूरी नहीं हो सकी। बिल के पक्ष में डॉ. अम्बेडकर जो उस समय कानून मंत्री थे, ने एक बयान जारी किया। इनका कहना था कि 'हिन्दू कोड बिल इस देश में विधानसभा द्धारा हाथ में लिया गया सबसे महत्वपूर्ण समाज सुधार है। कोई भी कानून जो इस देश में पारित हुआ अथवा जो संभवत पारित होगा महत्व की दृष्टि से, हिन्दू कोड बिल की तुलना में कहीं नहीं ठहरता। वर्ग-वर्ग, लिंग-लिंग के बीच असमानता की उपेक्षा करके जो हिन्दू समाज का मूलाधार है, आर्थिक समस्याओं के संबंध में कानून बनाया जाना हमारे संविधान का उपहास ओर गोबर के ढेर पर महल बनाए जाने के समान है। हिन्दू कोड बिल का इतना महत्व है, जिसे में उसके साथ जोड़ता हूँ। इसी बिल की खातिर मतभेद होते हुए भी मैं मंत्री मण्डल में बना रहा। अतएव यदि मैंने कोई गलती की है, तो इस आशा से कि कोई शुभ परिणाम निकले'। [6]

संसद और संसद के बाहर रुढ़िवादी तत्वों के विरोध के कारण हिन्दू कोड बिल मूल रुप से पारित नहीं हो सका। उसे स्थगित करना पड़ा। हिन्दू कोड बिल के प्रति तत्कालीन प्रधानमंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू एवं कांग्रेसियों के उदासीन एवं नकारात्मक रूख तथा कतिपय अन्य नीतिगत विषयों पर असहमति के कारण डॉ. आम्बेडकर ने 27 सितम्बर 1951 को कानून मंत्री के पद से नेहरू मंत्रीमण्डल से त्याग पत्र दे दिया। आगे चलकर अलग अलग अधिनियमों के रूप में हिन्दू कोड बिल संसद में पारित कर दिया गया। जिससे हिन्दू (बौद्ध, जैन, सिख सहित) नारी की द्रुत सामाजिक प्रगति का मार्ग प्रशस्त हुआ। भारत में हिन्दू नारी की विमुक्ति में डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर का यह योगदान चिरस्मरणीय रहेगा। [7]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुप्ता, विश्वप्रकाश एवं गुप्ता, मोहिनी, 2000, भीमराव अम्बेडकर व्यक्ति और विचार, नई दिल्ली : राधा पब्लिकेशन, पृष्ठ 73
2. गुप्ता, राजेश, 1994, डॉ. अम्बेडकर और सामाजिक न्याय, दिल्ली : मानक पब्लिकेशन, पृष्ठ 97
3. सिंह, रामगोपाल, 2006 डॉ. अम्बेडकर और सामाजिक न्याय एवं परिवर्तन, नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ 142
4. श्रीवास्तव, ए. पी., 2004 भारत में सामाजिक परिवर्तन एवं समस्या, जयपुर : दिव्या प्रकाशन, पृष्ठ 79
5. कीर, धनंजय, 1965, महात्मा ज्योतिराव फूले फादर ऑफ सोशल रिवोल्यूशन, दिल्ली: एशिया पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ 104
6. Burra, Neera, April 20, 1988, Religion was inly a means to an end for Ambedkar : The Times of India, P.3
7. सिंह, रामगोपाल एवं नागर, विष्णुदत्त, 2014, डॉ. अम्बेडकर : सामाजिक-आर्थिक विचार दर्शन, भोपाल : मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादगी, पृष्ठ 144-150

जनजातियों में मृत्यु संस्कार और मेनहिर (मध्य बस्तर नारायणपुर के जनजातियों के विशेष संदर्भ में)

डॉ. बसंत नाग * डॉ. के. आर. ध्रुर्वे **

प्रस्तावना – जनजातीय संस्कृति मूलत: आदिम संस्कृति है, जिन पर लोक संस्कृति का विशालतम रूप खड़ा है। जनजाति में संस्कारों की लम्बी श्रृंखला है, प्राचीनकाल से मनुष्य विभिन्न संस्कारों से अपना कर जीवन क्रम निर्धारित किया। प्रत्येक व्यक्ति को जन्म से मृत्यु तक अनेक संस्कारों के द्वारा शरीर एवं आत्मा को सुसंस्कृत करने का विद्यमान है। 'संस्कारित इति संस्कार' संस्कार को सांस्कृति शुद्धिकरण की प्रक्रिया माना जाता है। रामजी उपाध्याय के अनुसार 'भारतीय संस्कृति में मानवों का जन्म उससे जुड़े हुए संस्कार मनुष्य को देवतत्व की ओर ले जाने और मानव की उत्कर्ष की सोपान कहे जाते हैं। इस दृष्टि से संस्कार का महत्व भारतीय मानस के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

संस्कार शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा की सम उपसर्ग 'कृत' धातु के 'धन' प्रत्तय से माना गया है। राजबली पाण्डे का मत है कि संस्कार शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में हुआ है। ये प्राय: धार्मिक विश्वासों एवं सामाजिक आधारों पर निर्धारित होने थे, जो सहज रूप में मान्य थे। मानवीय विकास की प्रक्रियाओं ने उन्हें भी संस्कृति बनाया । शिव शेखर मिश्र मानते हैं कि संस्कारों के द्वारा मनुष्य की आंतरिक वृत्तियों का विकास होता है और वे मनुष्य के आंतरिक विकास का प्रतीक है, जिनके द्वारा मनुष्य को अपने सामूहिक जीवन में निपतपद प्राप्त होता है, इस प्रकार संस्कार द्वारा व्यक्ति और समाज दोनों का विकास होता है। रमेश चन्द्र शास्त्रीय का मत है कि 'मानव जीवन को पवित्र तथा उन्नत बनाने के लिए जिन रीतियों की व्यवस्था की गई है, उन्हें शास्त्रकारों ने संस्कार कहा हैं।'

मनुष्य का जीवन इन संस्कारों से बंधा हुआ है। जन्म, विवाह, मृत्यु के बीच मनुष्य द्वारा प्राप्त किया गया मान्यता प्राप्त स्वीकृति उतना ही महत्वपूर्ण है, सामाजिक कार्य है। मनुष्य चाहे किसी जाति सम्प्रदाय के हो संस्कार सम्पादित करते हैं। संस्कार किसी व्यक्ति समाज और जाति की निजी पहचान को अभिव्यक्त करता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, सामाजिक जीवन में विभिन्न संस्कारों क्रियाओं का निर्वहन किया जाता है। अत: गोंड जनजातिय में मूलत: तीन प्रकार के संस्कार परिलक्षित होते हैं – जन्म संस्कार, विवाह संस्कार, विवाह संस्कार। मध्य बस्तर नारायणपुर तहसील में निवासरत गोंड़ जनजाति में इन संस्कारों को पूर्ण करने में विशेष पद्धति एवं परम्पराओं का पालन किया जाता है। जनजातिय रीति–रिवाज, प्रथाओं एवं परम्पराओं तथा मान्यताओं को संस्कारों के द्वारा पूर्ण किया जाता हैं। नारायणपुर के जनजातियों में प्रचलित मृत्यु संस्कार जो अपने क्षेत्र के अनुसार विशेष तरह से है ।

मृत्यु संस्कार –

मृत्यु संस्कार संपन्न करने का ढंग – अध्ययनगत गोंड़ जनजाति के मृत्यु संस्कार से संबंधित रीति–रिवाज को उत्तरदाताओं से तथ्यों को समझने का प्रयास किया गया है, जिसमें व्यक्ति की मृत्यु के उपरांत की जाने वाली क्रिया को अंत्येष्टि संस्कार कहा जाता है। इस संस्कार को बाल्मिकी रामायण में प्रेत कर्म एवं दाह कर्म कहा गया है। यह मृत्यु से लेकर तेरह दिनों तक सम्पादित किया जाता है। राज बालि पाण्डे के अनुसार–मनुष्य अंत्येष्टि संस्कार के साथ अपने ऐतिहासिक जीवन का अंतिम अध्याय समाप्त करता है। अपने जीवन काल में हिन्दु अपने प्रगति के लिए भिन्न–भिन्न स्तरों पर विविध क्रियाओं को तथा विविध विधानों द्वारा जीवन की सुसंस्कृत करता है। इस संस्कार से उसके प्रस्थान करने पर उनके सुख कल्याण के लिए मृत्यु संस्कार किया जाता है।

मृत्यु संस्कार प्राचीन काल से संस्कृति का विशिष्ट अंग रहा है, यह संस्कार मृत व्यक्ति के परिवार रिश्तेदार एवं सामाजिक रीति–रीवाजों के अनुरूपर सम्पादित करते हैं। इनके शव को भूमि में गाढ़ने और जलाने दोनों ही प्रथाएं प्रचलित है। इनका मानना है कि व्यक्ति का जीवन मृत्यु के साथ समाप्त नहीं होता, इसी कारण दाह संस्कार के समय मृत की आत्मा की शांति के लिए अनेक कृत्य करते है। इनमें आकस्मिक मृत्यु जैसे चेचक या माता की बीमारी व गर्भवती महिला के एवं अविवाहित व्यक्ति की अचानक मृत्यु हुई तो उसे दफनाया जाता है। वह चाहे स्त्री हो या पुरूष उसे कमर के बल लिटा देते हैं और उसका सिर पूर्व की ओर रखते हैं। ऐसा इसलिए किया जाता है हम पूर्व दिशा से आए है, पूर्व ऊँचा है, पश्चिम को नीचे मानते हैं। कुटुम्ब के महिला पुरूष दोनों अंतिम क्रिया कर्म में सम्मिलित होते हैं, जो साधारण कारणों से मरते हैं, उन्हें जंगल के काफी अंदर ले जाते हैं, बाघ द्वारा मारे गए व्यक्ति का अंतिम क्रिया–कर्म उनके मरने के स्थान पर ही करते हैं। आम तौर से मृतक को महुआ पेड़ पर रखी जाती है, दफनाने के बाद कुटुम्ब के सदस्य रिश्तेदार अतिथिगण एवं ग्राम के सदस्य स्नान करते हैं, तत्पश्चात् कुटुम्ब एवं मेहमान की शुद्धि सुखी मछली जो तेल में रखकर हनाल गायता द्वारा मछली छुकर तेल लगाते हैं एवं मछली एवं शराब को स्पर्श कर लोगों को तिलक लगाते हैं, जिसमें बिसर नेग में लोग उनके उत्तराधिकारी को चढ़ावा यथा शक्ति देते हैं। जब कोई बूढ़ा व समाज के प्रतिष्ठित व्यक्ति मरता है, तब अधिक रस्में की जाती है। शव को दफनाने के लिए ले जाते समय श्मशान स्थल तक नाचते, गाते ले जाया जाता है। शव को एक अक्को मामा रिश्तेदार हातुर, ढोल (मृतक, ढोल) बजाता है, जिससे खबर सारे रिश्तेदारों में फैल जाता है और वे वहीं आते हैं। फिर नृत्य करते हुए उनकी बेटियां सूपा, ढोल बजाती हुई शव के आगे चलती है। चेलिक और मोटियारिन के सामाजिक

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) भानुप्रतापदेव शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कांकेर (छ.ग.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) भानुप्रतापदेव शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कांकेर (छ.ग.) भारत

कर्तव्यों में से एक शव ढोले के साधन के साथ चलना और अंतिम क्रिया-कर्म में उपस्थित रहना होता है। इस संबंध में गाये जाने वाले गीत इस प्रकार है –

चोले दादा रो रो ले। आओ भाईयों आआ
आई आई आई आई।आई आई आई आई।
ओरू बोरू राजाबरी। यह राजा कौन है?
बाबा यिसे राजाब रा। यहा हमारा राजा है।
डोरी डिप्टे दांतोर रा। राजा पताल लोक से गुजर रहा है।
डोरी डिप्टे गाजुर ता। पताल लोक में शोर मचा है।
मांझापुर टै चिमुरा। मध्य विश्व में चुप्पी छाई है।
पारों डिप्टे चिमुरा। उपरी विश्व में चुप्पी छाई है।
राजान यिसे ओस बेटरा। चलो राजा को घर ले चले।
बड़ा डिडोरा आरता रा। बारह बार लोगो को बुलाया गया है।
वारात दादी वरात रा। आओ भाई आओ।
हजार मुली गुर तोरा। एक हजार लोग आएं है।
अदु बाहु कोदा रा ? यह घोड़ा बागरी मारो है।
तानांग कालकु न कोदा रा। इस घोड़े मे आठ पैर है।
ताना तकना इतेक रा? हम इसके सिर के बारे में क्या कहें?
नालुग तल्ला ना कोदारा। इसके चार सिर है।
सोने ताए खरऊ रा। इसके सुनहरे चुते हैं।
पर के मुने माने रा। आदमी आगे और पीछे है।
ओदांग ओदांग फुलुत रा। आदी आगे और पीछे है।
कोदो छूटे माता रा। घोड़ा दौड़ने लगता है।
आहु बादु माहाल रा? यह कौन सा महल है?
मामाल पार , बैराग रा। महल के उपर झंडा है।
चारीन को तुज ते बैराग रा। इसके चारो कोने पर झंडा है।
नाओ खंड ता माहाल रा। इस महल के नौ भाग है।
महाल लोपा झुलना रा। अन्दर एक झूला है।
सोने ताए झूलना रा। झूला सोने का बना है।
हिरा ताए गददी रा। सिंहासन हीरे का है।
सोपे कवित रा। इसे सिंहासन दो।
माहाल सोपे कवित रा। इसे महल दो।
जोहर भेतु केवित रा। इसे जोहर से सलाम करो।
दात दे दादी दातुरा। आई, आई, आई, आई।

यह गीत में 'बागरी मारो' स्पष्ट है, अर्थी जिसे चार व्यक्तियों द्वारा कंधा देते हैं। आदमी और पुलिस जो साथ चल रहे हैं। वास्तव में चेलिक है, महल से मन्तव्य कब और उसे ऊपर बने मकबरे का है, जो महत्वपूर्ण व्यक्ति के लिए बनाया जाता है, झंडे, कपड़े के वे टुकड़े है, जो ऊपर झुके वृक्षों पर लटकाए है या मकबरे पर बांधे है। सिंहासन से तात्पर्य उन डंडियों और पत्तें से है, जिन पर शव को कब्र में लिटाया जाएगा।

इनमें मान्यता है कि मृतक की आत्मा घर के बाहर है और उसे वापस लाना आवश्यक है यह विश्वास उनकी रीति-रिवाज एवं परम्पराओं के आधार है वे पास के नदी या तालाब से कोई जलीय जीव-जंतु जीवित पकड़कर 'कलस' के अंदर रखकर नाचते गाते घर लाते हैं तथा वे उस जीव को मृत व्यक्ति की 'आत्मा' मानकर पूजा एवं अनुष्ठान की जाती है एवं इसे अपने पूर्वजों के मंदिर में रखते हैं, इस तरह आत्मा (जीव)पूर्वजों में दो बार मिलती है, पहले अपने परिवार में और इसके बाद पूरे वंश के पूर्वज में।

मृतक स्मारक – बस्तर संभाग के सभी क्षेत्रों में निवास करने वाले गोंड़ जनजाति के लोग अपने बड़े बुर्जुगों की मृत्यु के पश्चात् मृतक व्यक्ति के स्मृति में उसकी प्रसन्नता के लिए मठ या 'मेनहिर' बनाते हैं। यह परम्परा पाषण युगीन संस्कृति के सभ्यता रखती है, मेनहिर या मठ का निर्माण मृतक क्रिया कर्म के दशगात्र के समय तक बनायी जाती है, मृतक व्यक्ति के स्मृति में बनाये गये स्मारक या तो पत्थरों से चबूतरे नुमा या सीधी पत्थर को चित्रांकित कर गढ़या जाता है। कहीं-कहीं चबूतरे के चारो ओर लकड़ी के खम्बे गड़ाकर झोपड़ी बनाई जाती है, जिसमें खद्दर या खपरें का छावनी बनाने की परम्परा रही है, किंतु वर्तमान समय में अधिकांश जनजाति समाज के लोग मृतक की समाधि का निर्माण ईट एवं सीमेंट के माध्यम से चबुतरा के रूप में या मंदिर नुमा आकृति में करते हैं। चबुतरा में मृतक व्यक्ति की प्रतिमा बनाकर स्थापित करते हैं, जिसकी समय-समय पर पूजा की जाती है, जिस मृतक को समाधि का निर्माण किया जाता है, वह गांव का मुखिया, सिरहा, गुनिया की होती है।

जनजातियों के गांव गोत्र भूमि या शमशान भूमि भी होती है, इस भूमि को पूर्वजों से संबंधित होने के कारण पवित्र माना जाता है तथा एक पीढ़ी के पश्चात् उस शमशान भूमि में दूसरी बार मृतक की आत्मा (जीव) को परिवार की पूर्वजों से वंश पूर्वजों (या देवलोक) में स्थापित करने के लिए धार्मिक आयोजन के साथ मेनहिर या पत्थर गड़ाने की परम्परा है, जिसे 'उससाना कल' या कोटोकाल कहते हैं। इस कार्य को सम्पादित करने में अक्कोमामा (समधन) पक्ष के लोगों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है, वे हातुर ढ़ोल बजाते हैं, और युवक-युवतियां नृत्य करते हैं साथ ही अक्को मामा पक्ष का निर्धारित एक व्यक्ति कुल्हाड़ी कंधे में रखकर पत्थर के सामने नृत्य करता है एवं यहां उपस्थित समुदाय के युवक-युवतियों एवं रिश्तेदार नाचते गाते हुए पत्थर को स्थापित करते हैं, जिसे 'तोरण मारना' भी कहते हैं। यह पत्थर भी कोई विशेष्ज्ञ स्थान से लाया जाता है, जिसमें काउदो वंश के लिए देवड़ोंगरी नाम की पहाड़ी से आते है। वह अपने साथ हिचामी वंश के गायता काउदों वंश के अक्कोमामा है, और परम्परानुसार अक्कोमामा ही कोई व्यक्ति के पत्थर को स्थापित कर सकता है। गाईता पत्थर के सामने एक चौक बनाया शराब दाल व चावल चढ़ाए, फिर उसने पत्थर से आस-पास की धरती खोदी। पहले उसे जमीन से निकाल नहीं पाए तत्पश्चात् निष्कर्ष निकाला की मृत्य व्यक्ति की आत्मा रूष्ट है, उसे खुश करने के लिए काले मुर्गे की बलि दी। जब पत्थर बाहर आ गया तो उन्होंने इसी कार्य के लिए निर्मित तक बिना पाए के लकड़ी के तख्त पर इसे रखा और नए कपड़े से ढ़क दिया। तत्पश्चात् उसे काउदो वंश की भूमि पर लाया गया पर लाते समय ध्यान रखा गया कि पत्थर गांव से न होकर गुजरे।

पत्थर लाते समय मृतक की बहन, बेटियों को दल रास्ता रोक लिया और नेग मांग की गई उन्हें नेग खरीदने के लिए पैसा दिया गया तथा इस पत्थर को स्नान कराया और एक गप्पा टोकरी में चांवल से भरी हुई थी, महिला के पत्थर समान एवं एक बर्तन पुरूष के समान, सब उपस्थितजनों ने पत्थर पर हल्दी और तेल से टीके लगाए। इस प्रकार मृतक की आत्माएं हनाल कोट लाई गई।

बाजार की रस्म – मृत्यु संस्कार में बाजार रस्म भी महत्वपूर्ण होता है, वे बाजार या 'हाट' से चांवल, चना, मुर्रा एवं सब्जियों के साथ शराब भी खरीदते हैं तथा जिससे मृत आत्मा को भोग दिया जाता है, तत्पश्चात बाजार स्थल को ढाई फेरे लगाते हुए चना, मुर्रा एवं पैसों को बिखरते हैं और पुन: घर वापस आते हैं और उस मृतक से प्रार्थना करते हैं कि चलो हमारे साथ घर

आओं, फिर घर पहुंचकर पूर्वजों के कमरे जाते हैं और ऐसी मान्यता है कि आत्मा उनका अनुसरण करती हुई उनके पीछे चली आती है।

गोंड़ जनजाति की मृत्यू संस्कार विभिन्न देवी–देवताओं का अनुष्ठान करते हुए पहले पूर्वजों के साथ उनकी आत्मा घर में स्थापित करते हैं, तत्पश्चात् उन्हें वश भूमि में आत्मा को पुन: परिवार से ले जाकर स्थापित किया जाता है, जिससे अपने मान्यतानुसार उनकी आत्मा देव लोक में समाहित माना जाता है।

विशिष्ट शब्द एवं उनके अर्थ –

अक्कोमामा – पत्नि के मायके वाला पक्ष, ननिहाल
हनाल गायता – मृत्यु संस्कार संपादित करने वाला व्यक्ति, पुरोहित
हातुर – विशिष्ट शेक वाद्य यंत्र (मृतक ढ़ोल)
चेलिक, मोटियारिन – युवक, युवतियां
तोरण मारणा – आत्मा को परमात्मा में विलिन करने की भावना (देवलोक)
हिचामी वंश – गोत्र (जनजाति गोत्र)
काउन्दो वंश – जनजाति गोत्र
हनाल कोट – शमशान गोत्र
गप्पा टोकरी – बड़ा टोकरी चौकोर आकार की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. उपाध्याय रामजी, भारतीय संस्कृति का उत्थान 1966 पृ. 15
2. मिश्र, शिव शेखर, मानसे उल्लास एक सांस्कृतिक अध्ययन पृ. 9
3. अर्ल शोकने भद्रते, राज पुत्र महाशश, प्रेत्यकृत्यामि सर्वाणि कारयामासे धर्मवित् बाल्मिकी रामायण, 2 – 77 पृ. 20
4. पाण्डेय राजबली, हिन्दू संस्कार, पृ. 96
5. ऐल्विन, वेरियर, मुरिया एवं उनका घोटुल, पृष्ठ–203
6. Hoijer, Beals - An Introduction the Macmillan Co New Yoirj - 352

****

सम्मान हत्या का समाजशास्त्रीय अध्ययन

रीमा विकल *

प्रस्तावना – भारतीय समाज द्वारा समाज के हर सदस्य से कुछ अपेक्षाएँ की जाती है तथा उन अपेक्षाओं के अनुरूप व्यक्ति को कार्य करना होता है तथा उस कार्य की भूमिका को निभाते हुए व्यक्ति समाज में एक विशेष प्रकार की प्रस्थिति अर्जित करता है और व अपने परिवारजनों भावी पीढियों से ये अपेक्षा करता है कि वे उसकी उस प्रस्थिति को आगे ले जाऐं गे तथा अपनी परम्परा को बनाएं रखेंगे जैसे हर जाति या समाज चाहता है कि उसकी जाति के सदस्य जाति या धर्म के अन्तर्गत ही विवाह करें, वही उपजाति (गोत्र) के सदस्य से अपेक्षा रखी जाती है कि वे अपने सपिण्ड या रक्त समूह के अर्न्तगत विवाह न करें।

सम्मान हत्या की स्थिति तब उत्पन्न होती है, जब उस धर्म या जाति समुदाय के सदस्य उनकी आशाओं के विपरीत कार्य करते है, जो कि उनके सम्मान के खिलाफ है।

सामान्य अर्थ में सम्मान हत्या से तात्पर्य ऐसी हत्या से है जो खोए हुए सम्मान को पुन: प्राप्त करने से मानी जाती है, जिसे सम्बन्धित व्यक्ति की हत्या करके प्राप्त किया जा सकें। हमारे समाज में सम्मान हत्या को अन्य अपराधों की तुलना में कम ही आँका गया है या ये मान लीजिए कि शून्य अपराध ही माना जाता है। बल्कि सम्मान हत्या को प्रत्यक्ष रूप देकर हत्यारों को अधिक सम्मान मिलता है।

उद्देश्य– मेरी विषय समस्या सम्मान हत्या है। जिसमें मेरा उद्देश्य है सम्मान हत्या की समस्या का अध्ययन करना जो पिछले कुछ वर्षो में हमारे समाज में कोढ़ की तरह फैलती जा रही है।

क्षेत्र अध्ययन– गांव (क,ख,ग) जो कि जिला मुजफ्फरनगर से 25 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इस गांव की जनसंख्या 3000 है तथा गांव में मुख्यत: हिन्दू धर्म के लोग रहते है। इस गांव में 6 जातियाँ है।

अध्ययन विधि – मैंने इस अध्ययन के लिये साक्षत्कार अवलोकन विधि का प्रयोग किया जिसमें मैंने कुछ व्यक्तियों से साक्षात्कार किया।

समय – मैंने अपने अध्ययन के लिये 15 दिन का समय लिया तथा विभिन्न वर्गो के व्यक्तियों से कुछ प्रश्न किए।

- सम्मान हत्याएं कहाँ तक सही है।
- क्या सम्मान हत्या करने से सम्मान को पुन: प्राप्त किया जा सकता है।
- क्या सम्मान हत्या के आरोपियों को सजा मिलनी चाहिए।

सम्मान हत्या के प्रकार– सम्मान हत्या दो प्रकार की होती है।

1. प्रत्यक्ष सम्मान हत्या
2. अप्रत्यक्ष सम्मान हत्या

1. **प्रत्यक्ष सम्मान हत्या –** प्रत्यक्ष सम्मान हत्या में तात्पर्य ऐसी हत्या से है जो सीधे उस व्यक्ति की की जाती है जो वह कार्य करता है। जिसे हमारा समाज असम्मानित मानता है, जिसके प्रमुख उद्देश्य है –
   (i) बिरादरी के बाहर शादी करने वालों की हत्या।
   (ii) परिवारजनों की अनुमति के बिना शादी करना।
   (iii) गुंडा मवाली बन जाने पर की गई हत्या।
   (iv) दहेज के लिए की गई वधु की हत्या।
   (v) शक के कारणवश की गई हत्सा अदि।
2. **अप्रत्यक्ष सम्मान हत्या –** जो हमारे समाज द्वारा अस्वीकार्य कार्य करने वाले व्यक्तियों के साथ–साथ उससे सम्बन्धित अन्य व्यक्तियों की की जाती है, जिसके प्रमुख उदाहरण है –
   (i) कन्या भ्रुण हत्या।
   (ii) सम्पूर्ण परिवार की सामुहिक हत्या।
   (iii) रंजिश वश की जाने वाली हत्या।

सम्मान हत्या के कारण – सम्मान हत्या के निम्नलिखित कारण है –

(i) भारतीय संस्कृति में व्याप्त कुरीतियाँ।
(ii) जातीयता की भावना।
(iii) अशिक्षा।
(vi) खाप पंचायतें।
(v) धार्मिक व्यवस्थाऐं।
(vi) धर्म गुरूओं का निजी स्वार्थ।
(vii) समाज में व्याप्त खोखली धारणाऐं।
(viii) स्त्रियों की स्थिति व सोच का अन्तर।
(ix) हत्यारोपी को जन–सहयोग।

सम्मान हत्या के नकारात्मक प्रमाण–

(i) बढ़ती आत्महत्याएं।
(ii) साम्प्रदायिक भेदभावों को बढावा।
(iii) कन्या भ्रुण हत्या।
(vi) दहेज को बढावा।
(v) धर्म गुरूओं का बढता व्यापार।
(vi) कानून के नियमों का उल्लघंन।
(vii) प्रतिभागों का दमन।
(viii) असुरक्षा की भावना।
(ix) स्त्रियों की स्वतन्त्रता पर प्रश्न चिन्ह।

साक्षात्कार अवलोकन विधि द्वारा मैंने अपने अध्ययन के दौरान जिन–जिन व्यक्तियों से साक्षात्कार किया उनके विवरण तथा प्रतिक्रियाएं –

आयु के सन्दर्भ में – जिन व्यक्तियों से साक्षात्कार किया उनमें 18–25 वर्ष की आयु वाले व्यक्तियों ने सम्मान हत्या को आधा सही तथा इसे गलत

* शोधार्थी, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.) भारत

भी बताया जबकि 25–35 वर्ष की आयु में मैंने 10 व्यक्तियों से साक्षात्कार किया जिसमें 8 व्यक्तियों ने अपने अहम को लेकर ज्यादातर इस प्रकार की हत्याओं को सही बताया। 35–50 वर्ष की आयु वाले 12 व्यक्तियों में से 5 व्यक्तियों ने इस तरह का कार्य करने वाले बिना हत्या करें उसका हुक्का पानी बंद कराने की सलाह दी जबकि 3 ने सम्बन्धित व्यक्ति को गाँव या जाति से निष्कासित करने की सलाह दी।

आयु के आधार पर व्यक्तियों का वर्गीकरण

Table - I

Sr. No.	Age(year)	Respondent No.	%
1	18-25	8	17.78
2	25.35	10	22.22
3	35-50	12	26.67
4	50 after	15	33.33
	Total	**45**	**100**

जाति के सन्दर्भ में – गुर्जर तथा जाट समुदाय में सबसे अधिक उग्र विचार मिले सम्मान हत्या या ऑनर किलिंग को सही बताया उनका मानना था कि ऑनर किलिंग से वो सम्मान प्राप्त कर लेंगे जिसकी क्षति हुई है तथा भविष्य में इस प्रकार की घटना की पुनरावृत्ति भी नहीं होगी। वहीं में दूसरे समुदाय या जाति की लडकी तो ले सकते है परन्तु किसी भी कीमत पर अलग जाति या समुदाय मे अपनी लड़की नहीं देंगे। अर्थात इनकें यहां लडकियों पर अधिक बंदिशें पाई गई। हरीजन तथा बाल्मिकी खुश थे अपने से उच्च समुदाय से विवाह सम्बन्ध बनाने में वो प्रसन्न थे।

जाति के आधार पर व्यक्तियों का वर्गीकरण

Table - II

Sr. No.	Cast	Respondent No.	%
1	Gurjar	11	24.44
2	Jaat	9	20
3	Paal	8	17.78
4	Pandit	6	13.33
5	Harijan	7	15.56
6	Balmiki	4	8.89
	Total	**45**	**100**

शिक्षा और सम्मान हत्या – शिक्षा से सम्बन्धित व्यक्तियों में निम्न विचार पाए गए।

1. कम शिक्षित व्यक्तियों ने सम्मान हत्या को सही तथा भावी की पीढ़ी के लिए एक सबक की तरह लिया।
2. उच्च शिक्षित व्यक्तियों ने इसे अपराधिक श्रेणी में रखते हुये स्वतन्त्रता का हनन और देश की तरक्की में बाधा बताया।
3. अशिक्षित या कम पढ़े लिखें में सम्मान हत्या को लेकर उग्र विचार मिले जबकि उच्च शिक्षित व्यक्ति अपेक्षाकृत उदार पाये गये।

शिक्षा के आधार पर व्यक्तियों का वर्गीकरण

Sr. No.	Education	Respondent No.	%
1	अशिक्षित – 10^{th}	15	33.33
2	12^{th}- B.A.	17	37.78
3	स्नात्कोत्तर एवं अधिक	9	20
4	अन्य	4	8.89
	Total	**45**	**100**

व्यवसाय – अध्ययन के दौरान विभिन्न व्यवसाय में सम्बन्धित व्यक्तियों से साक्षात्कार किया गया जिनमें कृषि से सम्बन्धित व्यक्तियों में अधिक उग्र विचार मिले सम्मान हत्या के सन्दर्भ में।

व्यवसाय के आधार पर व्यक्तियों का वर्गीकरण

Sr. No.	Occupation	Respondent No.	%
1	कृषि	14	31.11
2	मजदूर	10	22.22
3	नौकरी प्राइवेट	7	15.56
4	नौकरी सरकारी	4	8.89
5	अन्य	10	22.22
	Total	**45**	**100**

निष्कर्ष – मैंने अपने अध्ययन के दौरान सम्मान हत्या के बारे में जिन–जिन व्यक्तियों के विचार सुने त तो सब अलग–अलग धर्म, जाति, व्यवसाय व आयु के थे। मैंने अवलोकन में पाया कि उन सभी व्यक्तियों के विचार दो परस्पर विरोधी विचारधाराओं से थे। कुछ व्यक्तियों का मत था कि सम्मान हत्या हमारे देश के लिए कलंक के सम्मान है। जो कि हमारी सभ्य संस्कृति से बिल्कुल अलग है। वहीं दूसरी ओर कुछ व्यक्ति सम्मान हत्या को अन्य अपराधों की तुलना में कम ही मानते है। बल्कि सम्मान हत्या को प्रत्यक्ष रूप देकर हत्यारों को अधिक सम्मान मिलता है। मैंने पाया कि सम्मान हत्या –

1. पुरूषों के मुकाबले स्त्रियों में अधिक पाई गई।
2. नगर की अपेक्षा गाँवों में अधिक पाई गई।
3. उच्चधनी वर्ग की अपेक्षा मध्यम वर्ग में अधिक पाई गई।
4. 25 वर्ष से अधिक आयु वाले व्यक्ति इसे सही मानते थे, जबकि 25 वर्ष से कम की आयु वाले वर्ग के व्यक्ति इसे अपराध तथा एक शर्मनाक घटना मानते थे।
5. सम्मान हत्या प्रेम–प्रसंग से सम्बन्धित मामलों मे अधिक पाई गई जबकि अन्य विषयों से सम्बन्धित मामलों में कम पाई गई।

सम्मान हत्या के सन्दर्भ में यह बिल्कुल स्पष्ट है कि हम दो परस्पर विरोधी व्यवस्थाओं में जी रहे है। एक और तथाकथित भारतीय संस्कृति है तो दूसरी और भारतीय संविधान भारतीय संस्कृति एक अपरिभाषित चीज है। अत: जिसे जो बात सिद्ध करनी होती है, वह उसी को भारतीय संस्कृति से जोड़कर उसका रक्षक बन जाता है। भारतीय संस्कृति पर अध्ययन करने के बाद इस निर्णय पर आसानी से पहुंचा जा सकता है कि भारतीय में स्त्री के स्वतन्त्रता की घोर निंदा की गई है, और भारतीय संस्कृति के दिवाने ऐसे लोग तंगदिली व दूर की नजर खराब होने की वजह से जब किसी लडके या लडकी को एक साथ देखते है, चाहे वह कैफे मे हो या पार्क, बस, सडक या फिर अनजाने रूप में बातचीत ही क्यों न हो। उनके दिमाग में उबाल शुरू हो जाता है और दिमागी गंदगी के इसी उबाल को धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिये तो हर नीचता को कर गुजरते है, जिसे हमारे समाज में सम्मान हत्या कहते है।

सम्मान हत्याओं के खिलाफ हमारे समाज के लोग भी कार्य नहीं करते है। एक ओर बड़े–बड़े विद्धानों, शिक्षाधारियों ने सम्मान हत्या पर अंकुश लगाने के लिए अनेक कानून बनाए मगर क्या उन नियमों या कानून का पालन किया जा रहा है। आज हमारे संविधान को बने 69 साल हो गए परन्तु वर्तमान में भी इसे हमने खुले दिल से स्वीकार नहीं किया है। अगर करते तो सम्मान हत्या जैसा कलंक हमारे समाज में नही होती आज नए कानून व नियम बनाने के लिए संविधान में संसोधन करने की आवश्यकता नही है बल्कि जो नियम कानून हमारे संविधान में है, मात्र उन्हें अपनाने से

हमारे समाज से सम्मान हत्या जैसा अपराध हमेशा के लिये मिट जाएगा जिसके साथ–साथ विभिन्न सुधारात्मक संस्थाओं को भी इस कार्य के लिए आगे आना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 Ethich - Honour Crimes.
2 Web links and newspapers.
3 National Crime Records Bureau.

****

भारतीय समाज में वृद्धजनों की समस्याएं

डॉ. सिद्धिश्री सिंह *

शोध सारांश – भारतीय समाज में वृद्धों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, वृद्धों के बिना समाज की प्रगति की कल्पना नहीं की जा सकती। सामाजिक जीवन में वृद्धों का विशेष योगदान माना जाता है, और भारतीय समाजों में वृद्धों को मार्गदर्शक कहा जाता है, लेकिन वर्तमान में व्यक्तिवादी, दृष्टिकोणों में समाज में एकल परिवारों को जन्म दिया है, जिससे वृद्धों के साथ ही व्यवहार व उचित देखभाल नहीं हो पाती है, प्रस्तुत शोध पत्र का विषय काफी गम्भीर एवं जीवंत है। वृद्धजनों की समस्या भी एक व्यक्तिगत समस्या नहीं है, यह एक जन विषय है, तथा अन्य सामाजिक समस्याओं की भांति एक सामाजिक समस्या है। सामाजिक समस्या को बहुत से व्यक्तियों को प्रभावित करने वाली एक ऐसी दशा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो उनके सामाजिक प्रतिमानों के विरूद्ध है। वृद्धावस्था में बहुत कम व्यक्ति ऐसे होते हैं, जो इस बीमारी के दुष्प्रभावों से बचे रहते है। सामाजिक समस्या को सामाजिक आदर्श का विचलन माना गया है, जो सामूहिक प्रयत्न से ठीक हो सकता है।

प्राचीन अथवा शास्त्रीय परम्परा के अनुसार भारतीय समाज वर्णश्रम, पुरूषार्थ, धर्म की अवधारण, ऋणों से मुक्ति तथा कर्म और पुनजन्म जैसी व्यवस्थाओं, संस्थाओं और विश्वासों पर आधारित रहा है। भारतीय समाज में लोक–परलोक की तुलना में परलोक को भौतिक और अध्यात्मिक सुखों की तुलना में अध्यात्मिक सुखों को, पाप और पुण्य की तुलना में पुण्य को अधिकारों की अपेक्षा कर्तव्यों को, भोग की अपेक्षा त्याग को तथा संचय की अपेक्षा और विशेषताओं ने ऐसे विचार और संस्कार विकसित किए थे जिनमें माता–पिता और बुजुर्गो की सेवा प्रमुख सामाजिक–नैतिक कर्तव्य के साथ–साथ ईश्वरीय सेवा, पुण्य और मोक्ष का साधन तथा धार्मिक आध्यात्मिक उपलब्धि मानी जाती थी। ये व्यवस्थाएं परिवार नातेदारी और उत्तराधिकार जैसी व्यवस्थाओं और संस्थाओं को भी संतुलित और नियंत्रित करने में अपना योगदान करती थी।

प्रस्तावना – वृद्धावस्था को जीवन का वर्जनीय अवांछित अप्रिय और समस्याग्रस्त भाग माना जाता है। परन्तु यह कटु सत्य है कि किसी भी व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन चक्र में एंव मृत्यु के पूर्व अवस्था अनिवार्य रूप से आती है। वास्तव में मनुष्य वृद्ध होने और वृद्धावस्था को जीने के लिए प्राकृतिक रूप से बाध्य है।

वस्तुत: वृद्धावस्था को लेकर डर या भय का अनुभव एक आधुनिक प्रक्रिया है। पहले वृद्धावस्था को सहज व स्वाभाविक प्रक्रिया माना जाता था। जीवन में सबसे अधिक आदर व सम्मान की अवस्था वृद्धावस्था ही होती थी। बुढ़ापे को अनुभव की खान समझा जाता था। वृद्धों के जीवन में समस्याओं का सूत्रपात तभी हुआ जब उन्हें महत्वहीन समझा जाने लगा। वृद्धावस्था की निर्मम और कठोर तस्वीर एंथोनी पावेल के इस कथन से और भी स्पष्ट होकर सामने आती है, कि 'वृद्धावस्था उस अपराध का अत्याधिक कठोर दंड है, जिस अपराध को आपने किया ही नही है।'

पुरातन स्थिति – भारत में संयुक्त परिवार व्यवस्था होने, माता–पिता को भगवान और प्रथम गुरू का दर्जा प्राप्त होने तथा समाज में स्थापित उच्चादर्शो और मूल्यों के पालन की अनिवार्यता ओर प्रतिबद्धता आदि कारणों से कुछ दशक पहले वृद्धजनों की कोई समस्या नहीं थी, तथा प्रत्येक संतान अपने माता–पिता के भरण–पोषण और सुरक्षा को अपना नैतिक दायित्व और अनिवार्य कर्तव्य समझता था, संयुक्त परिवार का मुखिया आयु और नातेदारी में सबसे बड़ा सदस्य होता था, जिसके निर्देशों के अनुसार कार्य करना सभी पारिवारिक सदस्यों का दायित्व था। परिवार में यह आवश्यक था कि वह अपने से अधिक आयु के सदस्यों को सम्मान दे तथा उनके निर्देशों के अनुसार कार्य करें।

नवीनतम स्थिति – भारतीय समाज जैसे भिन्न–भिन्न संस्कृतियों के सम्पर्क में आता गया समाज के मूल्यों और विचारों में परिवर्तन होता गया, जिससे प्राचीन सामाजिक संस्थाओं और व्यवहार प्रतिमानों में भी परिवर्तन होता गया। इसके फलस्वरूप परिवार विवाह, नातेदारी और उत्तराधिकार संबंधी व्यवहार भी बदलने लगे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय समाज में व्यापक परिवर्तन हुए पिछले दो दशको में परिवर्तन के तूफान ने तो भारतीय समाज की दशा और दिशा ही बदल दी है। कुछ परिवर्तनों ने जहां भारतीय समाज को लाभांवित किया है, वहीं कई समस्याओं को जन्म भी दिया है। इनमें वृद्धजनों की समस्या उनका भरण–पोषण और कल्याण एक प्रमुख समस्या है।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले जीवन अवधि कम होने से 1951 की जनजणना में 60 वर्ष से अधिक लोगों की संख्या 10 प्रतिशत से भी कम थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सुविधाओं में विस्तार होने से जीवन अवधि बढ़ जाने के कारण वृद्धजनों की संख्या में तेजी से वृद्धि होने लगी। 2001 की जनगणना में चिकित्सा सुविधा और अल्प प्रजनन शक्ति वृद्धो को हमारे दिया है, कि फ्रांस में जनसंख्या को 7 से 14 प्रतिशत दो गुना होने में 120 वर्ष ग्रहण किया था, जबकि भारत ने यह 25 वर्ष में दुगना हो गया था। इसलिए जहां वृद्ध निवास कर रहे हैं, निश्चित रूप से परिवार के साथ नही है जो तीव्रता से विखंडित हो रहा है। 1981 की जनगणना द्वारा प्रति भारतीय गृहस्थी में लोगों की औसत संख्या 5.5 थी 1991 में इसमें 5.1 प्रतिशत तक की कमी आयी थी, आज यह 4 प्रतिशत है। हाल में भारतीय वृद्धों का

* अतिथि विद्वान (समाज शास्त्र) पं.एस.एम. शुक्ल, विश्वविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

11 प्रतिशत अकेले संबंधियों के बिना रह रहा है, 2025 तक 60 वर्ष से ऊपर के 25 प्रतिशत और 75 वर्ष से ऊपर के 40 प्रतिशत तक अकेले रहेगें।

वृद्धलोग मानसिंक रूप में अपने को अकेला और दूसरों पर निर्भर समझते है। शरीरिक शक्ति में कमी के कारण आर्थिक उत्पादन में उनका योगदान कम हो जाता है। जिससे आर्थिक अभावों का सामना करना पड़ता है। बीमारी या असमर्थता की स्थिति में उनका जीवन स्वयं उनके लिए बोझ बन जाता है। जिन बच्चों के पालन पोषण परवरिश और विकास में अपनी सारी कमाई, शक्ति ऊर्जा पूरे समर्पण के साथ लगा देते है। तब वृद्धावस्था की एक एक सांस उनके लिए व उनका जीवन समाज के लिए एक समस्या बन जाती है।

वृद्धजनों की प्रमुख समस्याएं – भारतीय समाज में सभी वृद्धजनों की समस्याएं एक जैसी नही है, लिंग, शिक्षा आयु, वर्ग रोजगार, पृष्ठभूमि आदि के आधार पर वृद्धजनों की समस्याओं में भिन्नता है फिर भी कुछ ऐसी समस्याएं है जो कभी वृद्धजनों में समान रूप से पायी जाती है, स्वास्थ्य की समस्या, भरण पोषण की समस्या, मनोवैज्ञानिक असुरंक्षा की समस्या परिस्थिति और भूमिका में संघर्ष की समस्या मनोरंजन की समस्या आदि प्रमुख है।

वृद्धजनों की समस्या के प्रमुख कारण– किसी समस्या का कोई एक कारण नही होता है। प्रत्येक समस्या के पीछे अनेक कारण होते हैं। भारत की राजनैतिक आर्थिक और वैचारिक व्यवस्था में परिवर्तन से हुए सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तन संयुक्त परिवार व्यवस्था में अनेक परिवर्तन संयुक्त परिवार की जगह केन्द्रक परिवारों की संख्या में वृद्धि परिवार में वैयक्तिक और प्राथमिक संबंध होने के बाद भी अवैयक्तिक और द्वितीयक संबंधों की प्रवृत्ति तीव्र गतिशीलता नई जगह, स्थान की कमी, स्वतंत्र जीवन जीने की लालसा व अर्थाभाव के कारण माता पिता को साथ न रखना वृद्धों का अपने व्यवहार के परम्परागत नियमों व जीवन शैली में किसी तरह का परिवर्तन न करना युवा पीढ़ी को अपने जीवन और जीवन शैली में किसी का हस्ताक्षेप पसन्द न करना चाहे माता–पिता ही क्यो न हो, सामुदायिक जीवन का अभाव, व्यक्तिवादी और भौतिकवादी मूल्यों का बढ़ता प्रभाव जीवन जीने का पष्चिमी ढ़ंग संस्कार शून्यता व नैतिक मूल्यों का घटता प्रभाव, परम्पराओं की प्रभाव शून्यता व आधुनिकता का बढ़ता जोर प्राथमिक समूहों के स्थान पर द्वितीयक समूहों का औपचारिक स्वरूप, अधिकारों के प्रति जागरूकता व कर्तव्य शिथिलता, नियंत्रण के अनौपचारिक साधनों के स्थान पर औपचारिक साधनो का प्रभाव सुरंक्षा के पारम्परिक स्त्रोतों की शिथिलता टूटते परम्परागत पारिवारिक प्रतिमान एवं नियम स्त्रियों के वैयक्तिक कार्य, अत्याधिक, विशेषज्ञता वैज्ञानिक और मशीनों नवाचारों का बाहुल्य तथा क्रांतिकारी अविष्कारों से समाज में हुए संरचनात्मक प्रकार्यात्मक, संगठनात्मक परिवर्तन तथा कुसमायोजन आदि कारणों से परिवार के घनिष्ठ पारस्पिरिक संबंध प्रभावित हो रहे है, जो वृद्धजनों की समस्या के मूल में है।

वृद्धजनों की समस्या के समाधान के सुझाव –

1. नूतन/आधुनिकता के साथ पुरातन/प्राचीनता की रक्षा की जाए।
2. पारिवारिक मूल्यों एवं आदर्शो की रक्षा की जाए। समाप्त होते पारिवारिक मूल्यों/ आदर्शो की पुनर्स्थापना की जाए।
3. वैज्ञानिक समाज के साथ संस्कारवान समाज के पुनर्निमाण के लिए व्यक्ति/समाज/ सरकार के स्तर पर प्रयास किया जाए।
4. भौतिकवादी तकनीकी समाज के सुखो–सुविधाओं के स्थायी उपभोग के लिए बुजुर्गो के सामाजिक –अनुभवों की नितांत आवश्यकता का एहसास युवा पीढ़ी को कराया जाए।
5. बुजुर्गो के प्रतिश्रद्धा/भावात्मक लगाव की भावना की पूनर्स्थापना के प्रयास पूरी निष्ठा और ईमानदारी से किया जाए। बच्चों को इसकी शिक्षा और संस्कार जन्म से ही दिया जाए।
6. व्यावसायिक/आधुनिक शिक्षा के साथ साथ नैतिक शिक्षा और बच्चों में नैतिक भावना का पुनरोदय व्यक्ति/समाज/ सरकार की अनिवार्यता हो।
7. पारिवारिक मूल्यों का आदर्शो की शिक्षा तथा उनकी पुनर्स्थापना शिक्षा का प्रमुख भाग हों। सभी व्यावसायिक कार्यो/प्रतियोगी परीक्षाओं में इसकी अनिवार्यता हो।
8. बालक को जैवकीय प्राणी से सामाजिक–बौद्धिक प्राणि बनाने में माता–पिता तथा बुजुर्गो के योगदान का पूरा ज्ञान नई पीढ़ी को कराया जाए तथा ऐसे माता पिता व बुजुर्गो की सेवा उनका मौलिक कर्तव्य और अनिवार्य नैतिक दायित्व बतलाया जाए।
9. आवश्यकता पड़ने पर वृद्धाश्रम की नहीं अपितु आदर्ष वृद्धग्राम की स्थापना क्षेत्रीय आधार पर की जाए, जहां पारिवारिक वातावरण, भावात्मक अनुभूति/ लगाव के साथ साथ सभी आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध हो और जिनमें बीच आवश्यकतापूर्ति के सहयोगात्मक संबंध हो। आत्मनिर्भर इकाई बनाया जाए। इसमें वृद्ध अनाथ बच्चों व विधवाओं की सेवा आवश्यकता/ क्षमतानुसार ली जाए।
10. इन वृद्धग्रामों में नौकरशाही के स्थान पर निष्ठावान, नैतिक, ईमानदारी, सेवकों की सेवा ली जाए। ऐसे सेवकों को इसके बदले समाज में पूर्ण सम्मान के साथ जीवन जीने की पूरी सुविधाएं और साधन उपलब्ध कराए जाए।
11. नयी पीढ़ी की भावनाओं और विचारों को समझने और उससे तालमेल बिठाने में वृद्धजनो से सहयोग के प्रयास किए जाए, वृद्धो को अपने अहं त्यागने, अपने व्यवहार के परम्परागत नियमों और विचारों में थोड़ा बहुत परिवर्तन कर शिक्षित और प्रगतिशील युवाओं के विचारों को समझने और सामंजस्य स्थापित करने के लिए प्ररित किया जाए। सही अर्थो में वृद्धावस्था की आदर्श तस्वीर ये हो सकती है, शीतल छांव में बैठकर बीचे अच्छे दिनों को फिर से जीना और बुरी यादों का विस्मस्त कर देना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Aging in India by Moner Alam Academic Foundation (ISBN-81-7188-535-7.
2. जाखड़ बी.एस. – वृद्धावस्था एवं बदलते सामाजिक मूल्य।
3. मुखर्जी रविन्दनाथ – भारतीय सामाजिक समस्याएं।
4. बघेल डॉ.डी.एस. – सामाजिक अनुसंधान।
5. मिश्रा डॉ. सरस्वती – वृद्धों की सामाजिक एवं आर्थिक समस्याए, अप्रकाशित शोध प्रबंध।
6. युगनिर्माण योजना – मथुरा संस्थान द्वारा प्रकाशित अप्रैल 1978

****

स्मॉग – हवा में घुलता जहर स्मोक और फॉग का जहरीला कॉकटेल एक समस्या

प्रो. शोभना परमार *

प्रस्तावना – देश की राजधानी दिल्ली में वायु प्रदूषण अपनी भयानक स्थिति में पहुंच गया। विरोध में लोग सड़कों पर निकल गए है, हम कैसी सांस ले रहे है? दिल्ली में फैला स्मॉग देश भर में चर्चा का विषय बना हुआ है। हालात इस हद तक बत्तर हो चुके है कि नासा ने बयान जारी कर कहा है कि स्मॉग के चलते दिल्ली में सेटेलाईट से तस्वीरें लेना भी मुष्किल हो चुका है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट में खुलासा किया था कि दुनिया में हर साल करीब 55 लाख लोग जहरीली हवा में सांस लेने के चलते अपनी जान गंवा देते है। औद्योगिकीकरण के बढ़ने से स्मॉग बहुत बढ़ा कारण बना है। बुरी बात यह है कि ज्यादातर लोगों को मालूम ही नहीं कि स्मॉग कितना खतरनाक हो सकता है। स्मॉग इसकी भयानकता को इस बात से समझा जा सकता है कि वर्ष 2013 के आंकड़ों के अनुसार स्मॉग और इससे बीमारी के चलते चीन में 16 लाख लोग मारे गये। जबकि भारत में यह आंकड़ा 13 लाख पहुँच गया था। डब्ल्यू.एच.ओ. के अनुसार वैश्विक स्तर पर मृतकों का आंकड़ा वर्ष 2050 तक डेढ़ गुणा ज्यादा हो जाएगा।

जर्नल नेचर में प्रकाशित इस रिपोर्ट के मुताबिका स्मॉग का सबसे ज्यादा असर दक्षिण एशियाई, दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में पड़ा है। स्मॉग का प्रभाव गर्मीयों के मौसम में ज्यादा घातक साबित हो गई। विश्व के सर्वाधिक 20 शहरों में आधे से अधिक भारतीय शहर है। पिछले दिनों दिल्ली में लागू आर्ड इन ईवन पॉलिसी के दौरान सामने आए कई सर्वेक्षण बताते है कि वायु प्रदूषण से देश में होने वाली मौतों के औसत में दिल्ली में 12 फीसदी अधिक मौते होती है। अमेरिका की मेल यूनिवर्सिटी के अध्ययन के मुताबिक ताजा एनवायर्मेट फारमॅमेटा इंडेक्स (ई.पी.आई.) में 178 देशों में भारत का 155 वां स्थान है।

हवा में 78 प्रतिशत नाईट्रोजन एवं 21 प्रतिशत आक्सीजन होती है। इसके अलावा 12 अन्य पदार्थों के लिए केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने मानक तय किए है। इसमें मुख्य पार्टिकुलेटर मेटर है। इसके दुष्प्रभाव सीधे फेफड़ों के कैन्सर और स्टोक से जुड़े है। इसके अलावा नाईट्रोजन आक्साईड, हाइड्रोकार्बन, कार्बन मोनोआक्साईड हानिकारक तत्व है, जो शरीर के अंगो को सीधे प्रभावित करते है। विश्व बैंक के मुताबिक वायु प्रदूषण जनित दिक्कतों के कारण साल 2013 में देश में 13 लाख लोगों की मौत हो चुकी है। यह आंकड़ा हर साल बढ़ते क्रम में आ रहा हैं

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने स्पष्ट किया है कि देश में कहीं भी अब शुद्ध हवा मिल पाना मुश्किल है। वाहन औद्योगिक अवशिष्ट, ईधन, घरेलू कचना, वाहन बढ़ने के चलते हवा शुद्ध नहीं रह गई है।

उम्र घट रही – भारतीय उष्णदेशीय मौसम विज्ञान संस्थान के अनुसार वायु प्रदूषण के कारण भारतीयों की औसत उम्र 3–4 साल घट रही है। नई दिल्ली निवासियों को 6 साल कम हो गई है। वयस्कों के मुकाबले बच्चों को ज्यादा खतरा हो गया है।

1. **19.1 फीसदी हवा में जहर उद्योग/निर्माण –** वैश्विक स्तर पर बढ़ते औद्योगिकीकरण ने अपने चिमनियों से निकलने वाली जहरीली गैसो जैसे कार्बन डाई ऑक्साईड, धूल के कण, वाष्प कणिकाए, धुंआ, कांस्ट्रक्शन और निर्माण कार्य ने धुल की मात्रा बढ़ाने में बड़ी भूमिका निभा रहा है।
2. **14.8 फीसदी प्रदूषित – परिवहन –** एक अनुमान के अनुसार दिल्ली शहर में 70 लाख से अधिक वाहन रोजाना आवाजाही करते है। इसमें पुरानी डीजल गाड़ी को रोड़ से नहीं हटाया गया। इसकी वजह है कि परिवहन से होने वाला वायु प्रदूषण स्मॉग पैदा करता है।
3. **11.1 कृषि संबंधित वस्तुओं –** कृषि में रासायनिक उर्वरकों का बढ़ता प्रकोप फसलों में विभिन्न कीटनाशकों की मात्रा तेजी से बढ़ रही है। इस रासायनिक कीटनाशकों के छिड़काव के दौरान शुद्ध वायुमण्डल को खराब करती है। अनेक कीटनाशकों का रसायनों का स्थाई प्रभाव स्वास्थ्य पर अधिक खतरनाक साबित हो रहा है।
4. **30.6 फीसदी विद्युत उपकरणों के जरिए धुंध –** इलेक्ट्रिक की आपूर्ति कोयला प्राकृतिक गैर खनिज एवं रेडियोधर्मी पदार्थ द्वारा की जाती है। जिली घरो में कोयले गैस का ईधन के रूप में प्रयोग होता है। इसकी चिमनियों से निकलने वाली विभिन्न गैस कोयले की राख के कारण स्मॉग की बड़ी वजह है। भारत में 54 फीसदी बिजली उत्पादन कोयला आधारित है।
5. **घरेलू कार्य से बढ़ता तापमान 8.2 फीसदी –** डब्लयू.एच.ओ. के मुताबिक 2.9 अरब लोग घरो में रहते है। जहाँ खाना बनाने में मुख्य रूप से आग का प्रयोग करते है। आधुनिक घरो में रेफीजरेटर, एअर कंडीशनरो से निकलेवाली गैस स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

ऐसे बनता है, हेल्थ का दुश्मन :

1. स्मॉग की वजह से बाल तेजी से झड़ सकते है। खांसी, ब्रॉकाईटिस जैसे खतरनाक बीमारियाँ पकड़ सकती है।
2. इसकी वजह से दिल की बीमारी, त्वचा संबंधी रोग, ब्लड कैंसर, फैफड़ो में इन्फेक्शन, अस्थमा आदि बीमारी का खतरा मण्डराने लगता है।
3. आँखो में लालिमा और नाक कान गले में इंफेक्शन भी हो सकता है।

स्मॉग रोकने के उपाय – वायु प्रदुषण रोकने के लिए सिर्फ सरकारी स्तर पर किये जाने वाले प्रयास काफी नहीं है। इसके लिए समाधान जैसे पौधारोपण, वाहनों के कम इस्तेमाल पर ध्यान देना होगा। डीजल के बजाए पेट्रोल, सी.एन.जी. गाड़ी चलाए। सार्वजनिक यातायात का प्रयोग करें। ई कचरा सामान्य कचरे के साथ ना दे। सूखा कचरा जलने से रोके। खेतों के अवशेष भी जलने से बचाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पर्यावरण समस्या और समाधान – डॉ. राजकुमार शर्मा।
2. पर्यावरण विज्ञान – के.एल. तिवारी
3. इंटरनेट
4. दैनिक भास्कर

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) बी.एल.पी. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

जाँजगीर-चॉम्पा जिले में खाद्य पदार्थों की उपलब्धता एवं आहार प्रतिरूप

डॉ. कपूरचंद गुप्ता*

प्रस्तावना – वर्तमान समय में बढ़ती हुई जनसंख्या के फलस्वरूप देश में कृषि भूमि कम पड़ रहा है। आवश्यक मात्रा में खाद्य पदार्थो की उपलब्धता नहीं हो रही है। यह स्थिति जाँजगीर चॉम्पा जिले में भी है। जनसंख्या के अनुरूप अवश्यक मात्रा में खाद्य पदार्थ है या नहीं तथा प्रति व्यक्ति उपलब्ध खाद्य पदार्थो की उपलब्धता मानक कैलोरी से आधिक्य व न्यूनता तथा अन्य आवश्यक पोषक तत्वों की अधिकता व न्यूनता का मापन आहार संतुलन प्रपत्र से होता है।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय – जाँजगीर चॉम्पा जिला के पूर्व में रायगढ़ पश्चिम में बिलासपुर, उत्तर में कोरबा तथा दक्षिण में रायपुर जिला स्थित है। जिसका कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 3681.45 वर्ग किमी. है। यह जिला बिलासपुर संभाग के अंतर्गत आता है। जिसमें 5 तहसीले (जाँजगीर पामगढ़, चाम्पा, सक्ती, डभरा) तथा 9 बिकासखण्ड (अकलतरा, पामगढ़, बम्हनीडीह, बलौदा, डभरा, मालखरौदा, जैजैपुर, नवागढ़ तथा सक्ती है।)

यह कृषि प्रधान जिला है। 2001 की जनगणनानुसार जिले की कुल जनसंख्या 1316140 थी जिसमें पुरूष जनसंख्या 658377 तथा महिला जनसंख्या 657763 थी। जो 2011 की जनगणनानुसार 1619707 है जिसमें 659388 पुरूष तथा 658043.महिला जनसंख्या है। लिंगानुपात 986 है तथा घनत्व 420 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. हैं।

विधि तंत्र – आहार संतुलन प्रपत्र में गुणात्मक तथा मात्रात्मक दृष्टि से पर्याप्त भोजन का निर्धारण पोषण विज्ञान के आधार पर किया जाता है। पोषण का स्तर प्रति वयस्क इकाई खाद्य पदार्थो की उपलब्धता के आधार पर ज्ञात किया जाता है। अध्ययन क्षेत्र में पी.व्ही. सुखात्में द्वारा सुझाये गए विधि का प्रयोग मुख्य रूप से आहार संतुलन प्रपत्र तैयार करने में किया गया है। प्रतिवयस्क इकाई प्रतिदिन खाद्य उपभोग गणना में 1991 की ग्रामीण जनसंख्या को लिया गया है।

परिकल्पना –

1. खाद्य पदार्थों की उपलब्धता एवं आहार प्रति रूप में धनिष्ठ संबंध होता है।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. भूमि उपयोग और इसमें परिवर्तन की प्रवृत्ति का अध्ययन करना।
2. भूमि उपयोगी की वर्तमान आवश्यकता हेतु सुझाव देना।

अध्ययन का उद्देश्य – जिले में खाद्यपदार्थो की उपलब्धता एवं आहार प्रतिरूप का आंकलन करना तथा आवश्यक सुझाव देना।

इस अध्ययन में भी जाँजगीर जिले में खाद्य पदार्थो की उपलब्धता एवं पोषण स्तर की गणना करने में इस विधि का प्रयोग किया गया है। जिले के सभी 9 विकासखण्डों के लिए अलग-अलग 'आहार संतुलन प्रपत्र' बनाकर प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन खाद्य पदार्थो की उपलब्धता एवं पोषण कुपोषण का अध्ययन तैयार करने के लिए निम्न प्रक्रियाओं से गुजरना आवश्यक है-

1. त्रिवर्षीय औसत 1998-2001 में उत्पादित कृषि फसलें जैसे-चावल, गेहूं, मक्का, कोदो, कुटकी, अरहर, उड़द, मूंग, कुल्थी, चना, अन्य दलहन, मूँगफली, तिल, अलसी, सरसों, अन्य तिलहन, आलू, प्याज, मिर्च, धनियॉ (फलों व सब्जियां एवं पशु पत्पादक के ऑकड़े उपलब्ध नहीं हैं, को छोड़कर) को सम्मिलित किया गया है। ये खाद्य फसलें खरीफ व रबी मौसम में उत्पादित किए गए हैं।
2. इन खाद्य फसलों का प्रति हेक्टेयर उपज दर के आधार पर कुल उत्पादन का किलोग्राम में लिया गया है।
3. खाद्य पदार्थो के कुल उत्पादन का 12.5% बीज, चारा व विनिष्ट के रूप में नष्ट हो जाता है। यह दर खाद्य फसलों के अनुसार भिन्न-भिन्न है। इस गणना में अनाज, दलहन, तिलहन एवं प्याज के कुल उत्पादन में 12.5% की दर से घटाया गया है।
4. ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय क्षेत्रों की ओर अल्प मात्रा में निर्यात होता है। इस गणना में मुख्य अनाजों का 8% दलहन व तिलहन का 6% तथा आलू, प्याज, मिर्च, धनिया एवं गुड़ उत्पादन का 3% की दर से निर्यात के रूप में घटाया गया है।
5. खाद्य पदार्थो में सारत्व पर भिन्न-भिन्न होता है। प्रो. अली मोहम्मद (1978) द्वारा सुझाए गए सारत्व दर के अनुसार अध्ययन क्षेत्र में खाद्य पदार्थो की शुध्द उपलब्धता ज्ञात किया गया है। जैसे-सारत्व दर चावल 66.66% मक्का 89% ज्वार, कादो-कुटकी 90%,आटा 100% एवं दलहन में 95: सारत्व होता है। तिलहन एवं अन्य खाद्य पदार्थो में सारत्व दर शत प्रतिशत मानकर शुध्द उपलब्धता ज्ञात किया गया है।
6. अध्ययन क्षेत्र में प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन खाद्य उपभोग गणना में 1991 की ग्रामीण स्त्री-पुरूष जनसंख्या को लिया गया है। आयु एवं कार्य के आधार पर वयस्क इकाई में भिन्नता होती है। ग्रामीण स्त्री-पुरूष जनसंख्या को (परिशिष्ट क्रमांक VI के अनुसार) वयस्क इकाई में परिवर्तित कर उपयोग किया गया है।
7. प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन खाद्य उपभोग की मात्रा ज्ञात होने के पश्चात् विभिन्न खाद्य पदार्थो का पौष्टिक मान राष्ट्रीय पोषण संस्थान हैदराबाद द्वारा सुझाए गए पौष्टिक मान के अनुसार मुख्य तत्व, खनिज तथा विटामिन उपभोग प्रतिदिन प्रति वयस्क इकाई गणना किया गया है। तत्पश्चात् कैलोरी, प्रोटीन व अन्य पोषक तत्वों, खनिजों

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, डभरा जिला – जाँजगीर चॉम्पा (छ.ग.) भारत

एवं विटामिनों आदि की अधिकता व न्यूनता प्रति वयस्क इकाई अनुशंसित मात्रा के संदर्भ में ज्ञात कर खाद्य पदार्थो की उपलब्धता एवं पोषण स्तर का अध्ययन किया गया है।

तालिका – 1 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

जिले में अनाज उपलब्धता प्रतिरूप – इस जिले में अनाजों के अंतर्गत धान, गेहूँ, कोदो–कुटकी की फसलें ही सम्मिलित की गई है। क्योंकि यहॉ की कृषि चावल प्रधान ही है और यहॉ के लोगों का मुख्य आहार चावल ही है। यहॉ इसकी प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन उपलब्धता 352.66 ग्राम है जबकि प्रति वयस्क प्रतिदिन औसत अनाज उपलब्धता 378.50 ग्राम है जो अनुशंसित मात्रा से कम है। यहॉ प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन अनाजों की सर्वाधिक उपलब्धता पामगढ़ (634.34 ग्राम) विकासखंड तथा अत्यधिक न्यून उपलब्धता बलौदा विकासखंड में (134.67 ग्राम) है। अनाज उपलब्धता प्रतिरूप की असमानतायें मानचित्र से स्पष्ट है।

(क) अनाज उपलब्धता का उच्च क्षेत्र (>400 ग्राम) – जिले के हसदो–मांड मैदान के पश्चिमी व पूर्वी भागों में अनाज उपलब्धता उच्च है। इसके उन्तर्गत पामगढ़ (634 ग्राम), जांजगीर (585), अकलतरा (474), बम्हनीडीह (441), जैजैपुर (422), डभरा (415) विकासखण्ड सम्मिलित है। इन विकासखण्डों में अनाजों के अन्तर्गत धान का क्षेत्र अधिक है। उर्वरा मिट्टी व सिंचाई सुविधाओं की उपलब्धता के फलस्वरूप उत्पादन अपेक्षाकृत अधिक है। अत: प्रति वयस्क इकाई अनाजों की औसत उपलब्धता उच्च है।

(क)अनाज उपलब्धता का उच्च क्षेत्र (>400 ग्राम)– इसके अन्तर्गत प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन 400 ग्राम से कम अनाज उपलब्धता वाले विकासखण्ड सम्मिलित है। मालखरौदा (357), बलौदा (338), सक्ती (324) विकासखण्ड सम्मिलित है। इन क्षेत्रों में अनाज क्षेत्र, जनसंख्या व उत्पादकता मध्यम से निम्न है, फलस्वरूप अनाज उपलब्धता निम्न है।

जिले के दो मैदानी विकासखण्डों जैसे – पामगढ़ (58.48%), व जाँजगीर (58.48%), में अनाज उपलब्धता अनुशंसित मात्रा से काफी अधिक है। पामगढ़ में अनाज क्षेत्र व जनसंख्या अपेक्षाकृत मध्यम तथा उत्पादकता उच्च है, जबकि जाँजगीर में अनाज क्षेत्र, जनसंख्या व उत्पादकता तीनों उच्च है फलस्वरूप प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन अनाज उपलब्धता की अधिकता उच्चतम है।

अकलतरा व बम्हनीडीह में अनाज उपलब्धता की अधिकता अनुशंसित मात्रा से 10–20% से अधिक है। अकलतरा में अनाज क्षेत्र व जनसंख्या मध्यम तथा उत्पादकता उच्च है। <10% अनाज उपलब्धता की अधिकता के अन्तर्गत जैजैपुर (5.59%) डभरा (3.73%), विकासखण्ड सम्मिलित हैं। सक्ती (18.89%), बलौदा (15.45%), एवं मालखरौदा (10.48%), में अनाज उपलब्धता में न्यूनता है।

दलहन उपलब्धता प्रतिरूप – ग्रामीण व्यक्तियों के भोजन में दाल प्रोटीन का एक मात्र महत्वपूर्व साधन है। ग्रामीण व्यक्तियों के भोजन में दाल दलहन सम्मिलित रहता है। जिले में ग्रामीण जनसंख्या कैलोरी (ऊर्जा) के अभाव के साथ–साथ प्रोटीन के अभाव को भी सहन कर रहा है। जिले में दलहन का कुल शुध्द उत्पादन 3869 टन है तथा प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन दालों की औसत उपलब्धता 63.976 ग्राम है, जो अनुशंसित मात्रा 70 ग्राम से कम है। इसका वितरण प्रतिरूप निम्नानुसार है

(1) दलहन उपलब्धता का उच्च क्षेत्र (>70 ग्राम) – जिले में इसके अन्तर्गत प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन 70 ग्राम से अधिक दाल उपलब्धता वाले विकासखण्ड सम्मिलित हैं। जिसमें पामगढ़ (95), जाँजगीर (76), अकलतरा (73) सम्मिलित हैं।

(2) दलहन उपलब्धता का मध्यम क्षेत्र (40–70 ग्राम) – इसके अन्तर्गत प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन औसत दाल उपलब्धता 40–70 ग्राम वाले विकासखण्ड सम्मिलित हैं। जैसे – बम्हनीडीह (64) एवं बलौदा (52) ये दो दक्षिण मध्यवर्ती मैदानी विकासखण्ड है। जहां डोरसा, भाठा व डोरसा मटासी मिट्टी की अधिकता है। यहां दलहन फसलों का क्षेत्र विस्तार अपेक्षाकृत मध्यम से उच्च तथा उत्पादन मध्यम है। फलस्वरूप प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन दलहन उपलब्धता मध्यम है, जो अनुशंसिकता मात्रा के कम है।

(3) दलहन उपलब्धता का निम्न क्षेत्र (>40 ग्राम) प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन 40 ग्राम से कम दाल उपलब्धता वाले विकासखण्ड जैसे–जैजैपुर, सक्ती, डभरा एवं मालखरौदा सम्मिलित हैं। इन विकासखण्डों में दलहन उपलब्धता 7 ग्राम से लेकर 37 ग्राम तक है।

तिलहन उपलब्धता प्रतिरूप – तिलहन ऊर्जा का एक सशक्त स्रोत है, अतिरिक्त यह प्रोटीन का उत्तम साधन भी है। जिले में अलसी, सरसों, तिल एवं मूंगफली आदि महत्वपूर्ण तिलहनों का उत्पादन होता है। यहां तिलहन फसलों का क्षेत्र विस्तार कुल फसलीय क्षेत्रफल का 3.59% है। जो बहुत ही कम है। अनुशंसित मात्रा का 60–90% तक तिलहन उपलब्धता में न्यूवता जिले के 7 विकासखण्डों है। केवल डभरा और बलौदा विकासखंडों में थोड़ी–बहुत मात्रा में कुछ अधिक तिलहन उपलब्धता है।

अन्य खाद्य पदार्थ उपलब्धता प्रतिरूप – जिले में अनाज, दलहन एवं तिलहन के पश्चात् अन्य खाद्य पदार्थो की उपलब्धता भी पोषण स्तर में अपना अलग ही महत्व रखता है। इसके अन्तर्गत आलू, प्याज, मिर्च धनिया एवं गुड़ को सम्मिलित किया गया है तथा प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन उपलब्धता 14.43 ग्राम है। यहां प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन आलू 7.798 ग्राम, प्याज 0.132 ग्राम, मिर्च 0.320 ग्राम, धनिया 0.191 ग्राम एवं गुड़ 5.989 ग्राम उपलब्ध होती है। 20–40 ग्राम तक अन्य खाद्य पदार्थो की उपलब्धता के अन्तर्गत विकासखण्ड डभरा (34.641 ग्राम) है।

20 ग्राम से कम अन्य खाद्य पदार्थो की उपलब्धता के अन्तर्गत बम्हनीडीह, मालखरौदा, जैजैपुर, पामगढ़, जाँजगीर, शक्ति, अकलतरा एवं बलौदा विकासखण्ड सम्मिलित हैं। इन विकासखण्डों में अन्य खाद्य पदार्थो की उपलब्धता प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन 0.802 ग्राम से 19.150 ग्राम तक है। वह इसलिए कि संबंधित फसल का क्षेत्र विस्तार निम्न तथा उत्पादन निम्न से उच्च तक है। फलत: अन्य खाद्य पदार्थो की उपलब्धता प्रति वयस्क इकाई प्रतिदिन निम्न है।

निष्कर्ष – जिले में प्रति वयस्क प्रतिदिन अनाजो की औसत उपलब्धता 443.33 ग्राम है जो अनुशंसित मात्रा (400 ग्राम) से अधिक है, यहॉ इसका सबसे अधिक अनुपात पामगढ़ (633–90 ग्राम) तथा सबसे कम सक्ती में 324 ग्राम है। पामगढ़ तथा जाँजगीर में क्रमश: 58.48% तथा 46.24% की अधिकता है।

सुझाव – जिले में कृषि में आधुनिक पद्धति का उपयोग कर खाद्य पदार्थो की उपलब्धता को बढ़ाया जा सकता है। धान उत्पादन क्षेत्रों में रबी मौसम मे दलहन एवं मुद्रादायिनी फसलों का उत्पादन आवश्यक है। इसके अन्य खाद्य पदार्थो का उत्पादन भी किया जाना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सुधानारायण (1990) – आहार विज्ञान, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ. 4.

2. आर्य सत्यदेव, (1985) – आहार एवं पोषाहार राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
3. Sukhatma, P.V. (1956) - The food and Nutrition Situation in India, Indian Journal of Agricultural Economics Bombay, P.323
4. Turnor, D.F. (1959) - Handbook of Diet Thearpy, 3rd edition, Shicago University, Press, P.208
5. मतावले, के आर, (2000) – बिलासपुर जिले में कृषि विकास, पोषण स्तर, एवं जनसंख्या के विविध आयाम, अप्रका. पी–एच. डी. शोध प्रबंध, गुरू घा, वि, वि, बिलासपुर, छ.ग., पृ. 314–17

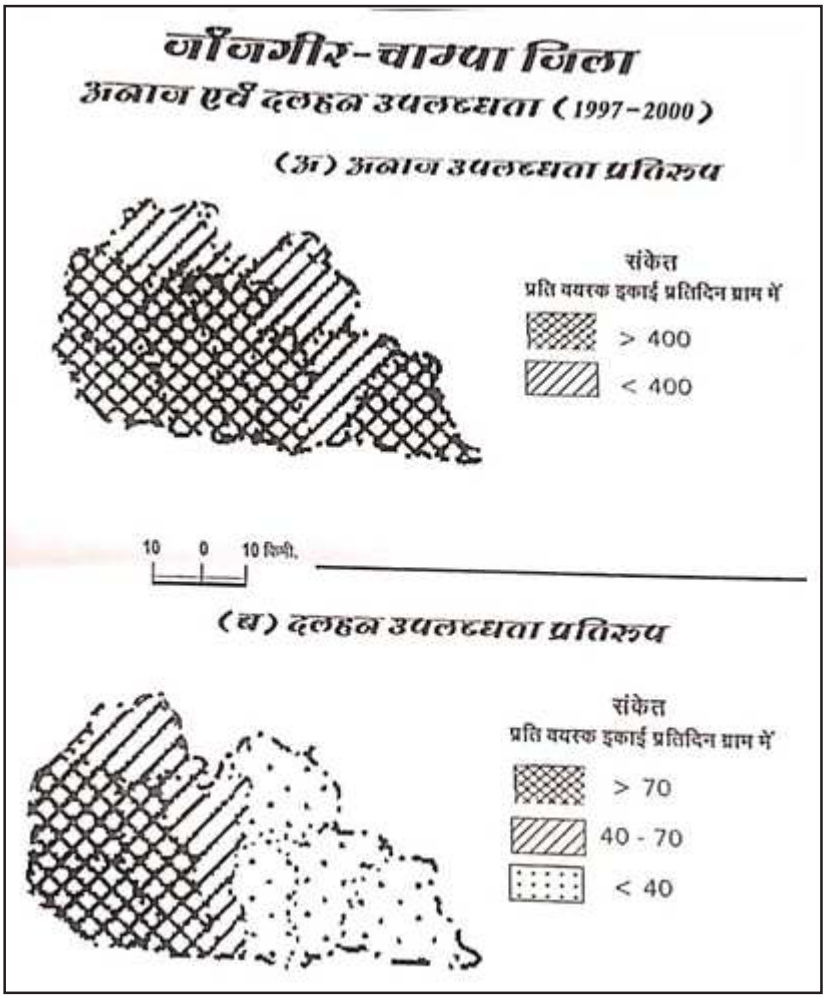

तलिका 1 : जिला–जॉजगीर–चाम्पाः आहार संतुलन प्रपत्र 1998–01

C=(P+I+J, -E-J_2-S-F-W-M) RN=1/Population × 365

		अनाज		दलहन		तिलहन		अन्य खाद्य पदार्थ													
विकास खण्ड	कुल उत्पादन कि.ग्रा.	शुध्द उत्पादन कि.ग्रा	खाद्य भाग ग्राम	शुध्द उत्पादन कि.ग्रा	खाद्य भाग ग्राम	शुध्द उत्पादन कि.ग्रा	खाद्य भाग ग्राम	शुध्द उत्पादन कि.ग्रा	खाद्य भाग ग्राम	प्रोटीन ग्रा.	वसा ग्रा.	खनिज लवण ग्रा.	कार्बोहाइड्रेट ग्रा	ऊर्जा कि.कै.	कैल्सियम मि.ग्रा.	फास्फोरस मि.ग्रा.	लोहा मि.ग्रा.	विटा. 'ए' आई.यू.	थायमिन मि.ग्रा.	राईबोफ्लेविन मि.ग्रा.	नियासीन मि.ग्रा.	विटामिन
1. जांजगीर	67488288	33346930	584.983	43081188	75.574	238929	4.191	247452	4.34	63.48	5.40	5.77	501.22	2310.92	151.31	1250.95	24.06	121.66	0.80	0.52	14.76	0.67
2. अकलतरा	33174413	16092927	473.920	24785688	72.990	202191	5.954	90270	2.657	55.05	5.38	4.99	413.57	1925.99	136.32	1055.93	20.21	111.54	0.69	0.44	12.24	0.32
3. बलौदा	23823040	11372352	338.209	17472778	51.862	313784	9.332	26976	0.802	39.76	5.61	3.58	295.84	1397.14	101.30	755.99	14.27	72.72	0.47	0.32	8.37	0.05
4. पामगढ	42526271	20471172	633.909	30751226	95.223	156386	4.843	251513	7.788	71.68	5.88	6.38	551.69	2549.86	167.82	1368.09	26.35	132.61	0.85	0.56	15.55	1.59
5. बम्हनीडीह	25670508	12061123	441.162	17541311	64.163	197029	7.206	523557	19.150	49.79	5.25	4.53	389.04	1806.71	123.40	955.22	18.54	92.01	0.57	0.38	10.92	3.41
6. सक्ती	21188908	10822106	324.431	528630	15.849	81746	2.450	144639	4.336	27.58	2.46	2.50	263.91	1189.81	55.79	595.21	11.39	32.18	0.29	0.28	6.83	0.90
7माल खरौदा	23004006	11788318	356.620	229682	6.947	162565	4.918	398642	12.059	27.32	3.78	2.57	288.13	1297.82	60.99	633.78	12.33	20.45	0.29	0.22	7.76	1.94
8. जैजैपुर	31229005	15421575	422.353	13564445	37.149	206668	5.659	393674	10.781	40.66	4.75	3.78	355.36	1629.19	100.89	840.60	16.12	56.21	0.47	0.32	9.85	2.03
9. डभरा	32523484	16011577	414.905	353528	9.161	466705	12.092	1336865	34.641	34.05	6.87	3.35	342.26	1569.03	75.91	774.35		29.04	0.45	0.29	10.53	5.89
जिला	30062820	14388080	443.33	15891506	47.66	2025903	6.291	3413588	10.78	45.48	5.04	4.15	286.78	1741.83	108.19	837.12	17.58	74.26	0.54	0.37	10.75	1.86

नोट – अन्य खाद्य पदार्थो के अन्तर्गत आलू, प्याज, मिर्च, धनिया एवं गुड़ को सम्मिलित किया गया है।

मध्यप्रदेश की बैतूल जिले की कोरकू जनजाति का भौगोलिक विवेचन

मृदुला रानी मंडल *

प्रस्तावना – हमारा देश तीव्र गति से विकास की ओर अग्रसर है वहीं जंगलों में ऐसे मानव समूह निवास करते हैं, जिन्होंने बाह्य सभ्यता से कुछ तत्वों को ग्रहण करने के पत्तत भी अपनी मौलिक विशेषताओं को नष्ट नहीं होने दिया। ये जनजातियां छोटे छोटे अलग जनसमूहों मे एक निश्चित भौगौलिक क्षेत्र में निवास करते थे। इन्हीं पिछडे जन समूहों को अनुसूचित जनजाति कहा गया है। जिसमें कोरकू जनजाति को क्रमांक 27 पर रखा गया है।

मध्यप्रदेश मे कोरकू जनजाति बैतूल, होशंगाबाद, खंडवा एवं छिंदवाडा जिले में बहुतायत है। अत: अध्ययन हेतु जनजातिय बाहुल्य क्षेत्र बैतूल जिले को चुना गया है जो कि कोरकू जनजाति की दृष्टि से प्रदेश में द्वितीय स्थान पर हैं।

कोरकू अध्ययन की आवश्यकता – प्रदेश की अधिकांश जनजाति का अध्ययन विभिन्न भूगोलवेत्ताओं द्वारा किया गया है परंतु कोरकू जनजाति महत्वपूर्ण होते हुए भी इसके प्रत्येक पहलू पर व्यापक अध्ययन नहीं किया गया है। अतएव कोरकू पर अध्ययन की महत्ती आवश्यकता है। अध्ययन के माध्यम से जनजाति की सामाजिक आर्थिक स्थिति का अवलोकन करना है।

तालिका क.1

प्रदेश में कोरकू जनसंख्या का जिलेवार लिंगीय वर्गीकरण

क्र.	जिले का नाम	पुरूष	स्त्री	कुल
1	खण्डवा	105226	101583	206809
2	बैतूल	70340	684581	38798
3	देवास	33881	31905	65786
4	हरदा	39031	36964	76055
5	होशंगाबाद	10911	10321	21232
6	सीहोर	9201	8874	10875
7	खरगौन	1542	1445	2987
	कुल	270192	259550	522542

(ग्राफ देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र.1 में बैतूल जिले की कोरकू जनजाति की लिंगीय वर्गीकरण को दिखाया गया है। अत: कोरकू संख्या अधिक होने के कारण अध्ययन हेतु उपर्युक्त क्षेत्र को चुना गया है।

तालिका क.2

प्रदेश मे कोरकू जनजाति का जनसंख्यात्मक विवरण(2001)

क्र	वर्ष	पुरूष	महिला	कुल	प्रतिशत कुल कोरकू जनजाति
1	1961	79237	77888	157125	2.34%
2	1971	105554	107460	212994	2.54%
3	1981	33944	32837	66787	0.56%
4	1991	229980	222169	452149	2.94%
5	2001	285594	273750	559344	4.57%

स्त्रोत – जिला सांख्यिकी पुस्तिका।

(ग्राफ देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि कोरकू जनजाति 4.57 प्रतिशत है जो 1961 से 2001 तक बढ़ा है। 1971 से 1981 में कोरकू संख्या घटी है। पुन: 1991 और 2001 में क्रमश: बढ़ा है।

अध्ययन क्षेत्र – जिला बैतूल जनजाति संस्कृति का अनूठा केन्द्र रहा है। जिले में निवासरत प्रमुख जनजाति में गोंड, कोरकू, मवासी एवं निहाल की बाहुल्यता है।

आदिवासी बाहुल्य जिला बैतूल दक्षिण में सतपुड़ा की पर्वत श्रृंखलाओं में समुद्र सतह से 365 मी. ऊंचाई पर बसा है। जिले का भौगोलिक विस्तार $21^0 22'$ से $22^0 23'$ उत्तरी अक्षांश एवं $77^0 10'$ से $78^0 33'$ दक्षिणी देशांतर के मध्य स्थित है। चयनित विकास घोड़ा डोंगरी बैतूल जिले के उत्तर पूर्व मे स्थित भारत शासन द्वारा आदिवासी क्षेत्र घोषित किया गया है। जिले प्रशासनिक दृष्टि से 8 तहसील एवं 10 विकासखण्ड और 3 सामुदायिक विकासखण्ड है। 2001 की जनगणनानुसार बैतूल में कोंरकू जनसंख्या 1,38,798। जिनमें कोरकू पुरुष 70340 और महिला 68458 है। कोरकू जनसंख्या की दृष्टि से बैतूल प्रदेश में द्वितीय स्थान रखता है।

शोध पत्र का उद्देश्य – समस्याओं को केन्द्रित करते हुए शोध कार्य के लिए निम्नलिखित उद्देश्यों का निर्माण किया गया है।

- बंजारीढाल गांव में रहने वाली कोरकू जनजाति के सामाजिक आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
- जनजाति के पारंपरिक एवं आधुनिक स्थिति का अध्ययन करना।
- जनजाति जीवन स्तर का अध्ययन करना।
- कोरकू समूह में प्रतीकवाद एवं उपयोगी दैनिक उपकरणों का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोधपत्र में अध्ययन के उद्देश्यों को पूर्ण करने हेतु समंको का संकलन प्राथमिक स्त्रोतों सें प्राप्त किये गए है, अवलोकन की सहायता से बैतूल जिले के घोडाडोंगरी विकासखण्ड स्थित बंजारीढाल गॉव के कोरकू परिवारों का चयन निदर्शन पद्धति का प्रयोग कर अध्ययन किया गया है। उनकी आर्थिक स्थिति, घरों के प्रकार, घरों में प्रयुक्त बर्तन, व्यवसाय आदि का अध्ययन किया गया है। 43 कोरकू परिवारों के मुखिया उत्तरदाताओं सें प्रश्न पूछकर उनकी सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति संबंधी जानकारी प्राप्त की गई है। इनका अवलोकन कर सारणीयन के माध्यम से प्रस्तुतीकरण

* शोधार्थी (भूगोल) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

व विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन हेतु द्वितीयक समंकों के संकलन हेतु आदिम जाति अनुसंधान एवं विकास संस्थान, श्यामला हिल्स भोपाल, आदिवासी लोककला अकादमी म.प्र. सांस्कृतिक परिषद, जिला सांख्यिकी पुस्तिका, पत्र-पत्रिकाओं तथा इंटरनेट का सहारा लिया गया है।

कोरकू जनजाति की सामाजिक स्थिति – ग्राम सर्वेक्षण के आधार पर कोरकू जनजाति की सामाजिक स्थिति के कई पहलूओं का अध्ययन किया गया है, जिन्हें तालिका के माध्यम से दर्शाया गया है। जो निम्न है –

भाषा – भाषा की दृष्टि से कोरकूओं की शास्त्रीय भाषा नहीं है, पर बोली है। डॉ. यशवंत श्रीधर मेहेदेड़े के अनुसार 'कोरकू बोली आस्ट्रिक भाषा परिवार के अंतर्गत आती है'।

वेषभूषा – कोरकू पुरूष वेशभूषा
बंडा (कमीज)
धोती (निचले भाग का वस्त्र)
फेंटा (सिर पर बांधा जाता है)
कोरकू महिला वेशभूषा
लुगड़ा (ओढनी)
अंगा (चोली)
छाया (लंहगा)

भोजन – जनजाति का भोजन खेती से पैदा होने वाले मोटे अनाज और वन्य वनस्पति पर आधारित है। भोजन शाकाहारी एवं मांसाहारी दोनो प्रकार का होता है।

त्यौहार – हिन्दू धर्म को मानने वाले कोरकू जिरोति, पोला, देव दशहरा, दीवाली, होली आदि मनाते है।

देवी-देवता – देवी-देवताओं के अस्तित्व पर विश्वास करने वाले कोरकू महादेव, रावण, खड़ादेव, सूर्य-चंद्रमा और पूर्वजों की पूजा करते है।

गुदना व जादू टोना – कोरकू स्त्रियाँ कुँवारेपन में ही सौंदर्य बढाने के लिये विभिन्न अंगों पर गुदना गुदवाती है। यह जनजाति जादू-टोना और भूतप्रेत पर विश्वास करते है।

प्रयुक्त उपकरण – कोरकू बांस, कांठ, मिट्टी धातु से निर्मित दैनिक उपयोगी उपकरणों का प्रयोग करते है।

प्रतीकवाद – कोरकू जनजाति में प्रतीकवाद का बडा महत्व है। वे अपने घरों को विभिन्न प्रतीक चिन्हों से सजाते है।

नृत्य – कोरकू विभिन्न अवसरों पर नृत्य करते है चाचरी, डंडानाच, चिल्लुड़ी नाच, गादली नाच, आदि नृत्य इनके द्वारा विशेष अवसरों पर किया जाता है।

तालिका क्र. 3

कोरकू जनजाति की सामाजिक स्थिति (ग्राम-बंजारीढाल)

क्र.	मद	आधुनिक	प्रतिशत	पारंपरिक	प्रतिशत
1	वेशभूषा	14	32.55%	29	67.44%
2	दैनिक उपयोगी उपकरण	34	79.06%	9	20.93%
3	आभूषण	3	6.97%	40	93.02%
4	चिकित्सा	7	16.27%	36	83.72%
			100		100

(ग्राफ देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि 67.4 प्रतिशत जनजाति पारंपारिक वस्त्रों का प्रयोग करते है और 32.55 प्रतिशत आधुनिक वस्त्रों का उपकरणों का 20.93 प्रतिशत पांरपरिक घरेलू उपकरणों का प्रयोग करते है तालिका से स्पष्ट है कि कुछ कोरकू आधुनिकता को अपना रहे है और कुछ आज भी पारंपरिकता को अपनाए हुए है।

तालिका क्र. 4

जनजाति के निर्देशित घरों के प्रकार (ग्राम-बंजारीढाल)

क्र.	घर के प्रकार	आवृत्ति	प्रतिशत
1	झोपड़ी	38	88.37
2	पक्का घर	1	2.32
3	कच्चा घर	4	9.30

(ग्राफ देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र.3 से स्पष्ट है कि 88.37 प्रतिशत कोरकू झोपड़ी में रहते है और 9.30 प्रतिशत जनजाति कच्चे घर में रहते है। इनके मकान दोनों तरफ श्रंखलाबद्ध घनी बसावट वाले होते है।

तालिका क्र. 5

कोरकू परिवार के सदस्यों की संख्या (ग्राम-बंजारीढाल)

क्र.	परिवार के सदस्यों की संख्या	आवृति	प्रतिशत
1	छोटा परिवार (1 से 5 सदस्य)	6	13.95%
2	मध्यम परिवार (6 से 9 सदस्य)	9	18.60%
3	संयुक्त बडा परिवार (10 से 14 सदस्य)	29	67.44%

(ग्राफ देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि कोरकू संयुक्त परिवार में रहना पसंद करते है 67.44 प्रतिशत जनजाति कोरकू संयुक्त परिवार में रहते है। 18.60 प्रतिशत मध्यम परिवार एवं 13.95 प्रतिशत छोटे परिवार में रहते है।

कोरकू जनजाति की आर्थिक स्थिति – कोरकू की आर्थिक व्यवस्था का मूल आधार जंगल संबंधी कार्य एवं कृषि है, इसके अतिरिक्त अन्य कार्यो में भी संलग्न है।

कृषि – अधिकतर कोरकू परिवारों के पास थोडी बहुत मात्रा में कृषि योग्य जमीन है। इनके प्रमुख अनाज धान, ज्वार, कोदो कुटकी, गेंहु, चना इत्यादि है।

कृषक मजदूर – अधिकांश कोरकू परिवारों के सदस्य आय उपार्जन हेतु संभ्रात व्यक्तियों के खेतों में कृषक मजदूर के रूप में कार्य करते है।

पशुपालन – कोरकू गाय, भैंस, मुर्गी, बैल, इत्यादि पालते है। खेती हेतु बैंलो का उपयोग करते है।

जंगल संबंधी आर्थिक क्रियाए- कोरकू द्धारा वन संबंधी आर्थिक क्रियाओं में तेंदु पत्ते एवं महुआ का संकलन करना बांस काटना, लकडी एकत्रित करना महत्वपूर्ण कार्य है।

वन सामग्री संकलन – गोंद, शहद, बेर, इत्यादि का संकलन है।

मछली पकडना तथा शिकार करना – कोरकू मछली पकडने व शिकार करने का कार्य स्थायी रूप से नहीं करते वरन् शौकिया करते है, मछली पकडने के लिये कुफरी नामक उपकरण का प्रयोग करते है।

तालिका क्र. 6

कोरकू जनजाति की आर्थिक गतिविधियॉ (ग्राम-बंजारीढाल)

क्र.	व्यवसाय	आवृति	प्रतिशत
1	कुल कृषक मजदूर	23	53.48%
2	कुल मजदूर	7	16.27%
3	शिकार	1	2.32%

क्र.	व्यवसाय	आवृति	प्रतिशत
4	मछली पकडना	2	0.46%
5	वनोपज संग्रहण	10	23.25%
		43	100

(ग्राफ देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र. 4 से स्पष्ट है कि 53.48 प्रतिशत कोरकू कृषि मजदूरी में संलग्न है। 16.27 प्रतिशत मजदूरी, 2.32 प्रतिशत शिकार, 0.46 प्रतिशत मछली पकडते है, मछली पकडने हेतु कुफरी नामक उपकरण का उपयोग करते है। 23.25 प्रतिशत जनजाति वनोपज संग्रहण करते है।

निष्कर्ष – कोरकू जनजाति पिछडी अवस्था में है, बावजूद इसके यह जनजाति धीरे-धीरे आधुनिकता की ओर अग्रसर हो रहे है। कोरकू जनजाति अब मिट्टी के बर्तन के स्थान पर एल्युमिनियम, स्टील, पीतल आदि बर्तनों का उपयोग करने लगे है। कोरकू वेशभूषा में भी आधुनिकता की झलक दिखाई देती है। यह जनजाति आज भी झोपडी में रहना पंसद करते है। अपनी पारंपरिकता को अपनाये हुए ये विकास की धारा से जुडता जा रहा है।

सुझाव – कोरकू जनजाति सभ्य समाज में शामिल होने के बावजूद आज भी पिछडी अवस्था में है। इस शोध के माध्यम से इस जनजाति और समाज व सरकार का ध्यान आकर्षित करना है। जिससें कोरकू को उन्नत बनाया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जोशी, डॉ. हरी प्रसाद (1984), 'कोरकू जनजाति', मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
2. शांडिल्य, महेशचन्द्र (1988) 'कोरकू', मध्यप्रदेश लोक कला, भोपाल।
3. विघार्थी, पी.एल. (1973), 'भारत में आदिवासी समाज', हरियाणा हिंदी ग्रथ अकादमी, नई दिल्ली।
4. पाटील, डॉ. अशोक (1933), 'कोरकू जनजीवन', भारतीय प्रकाशन, नागपुर, महाराष्ट्र, पेज 03।

ग्राफ – 1

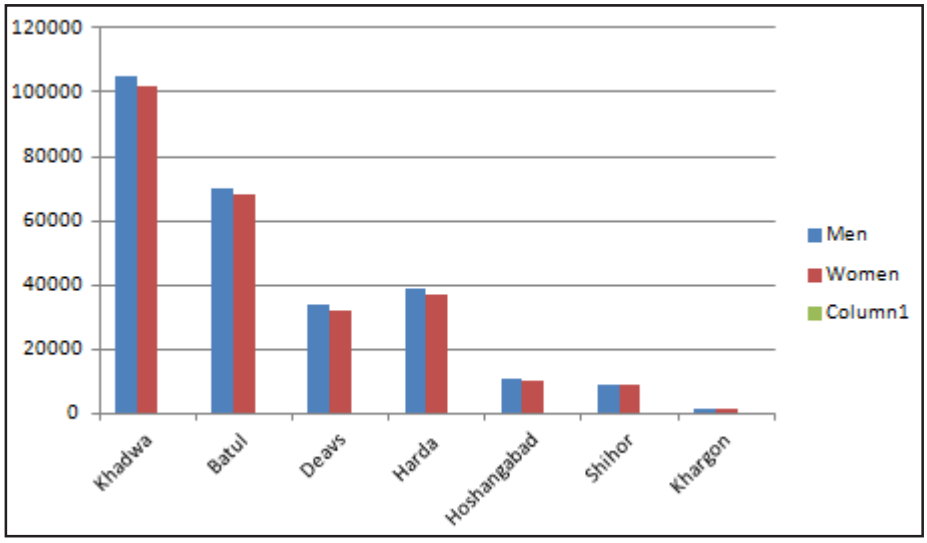

ग्राफ – 2

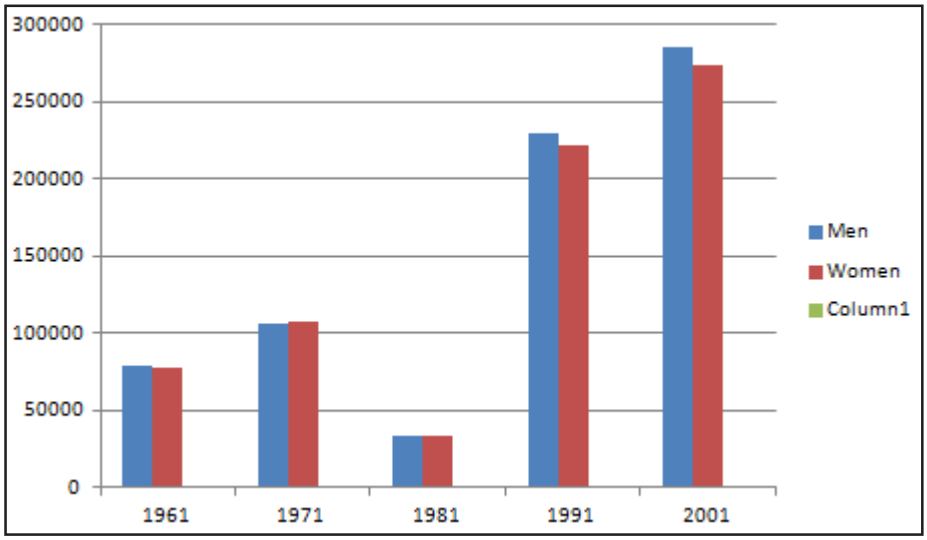

ग्राफ – 3

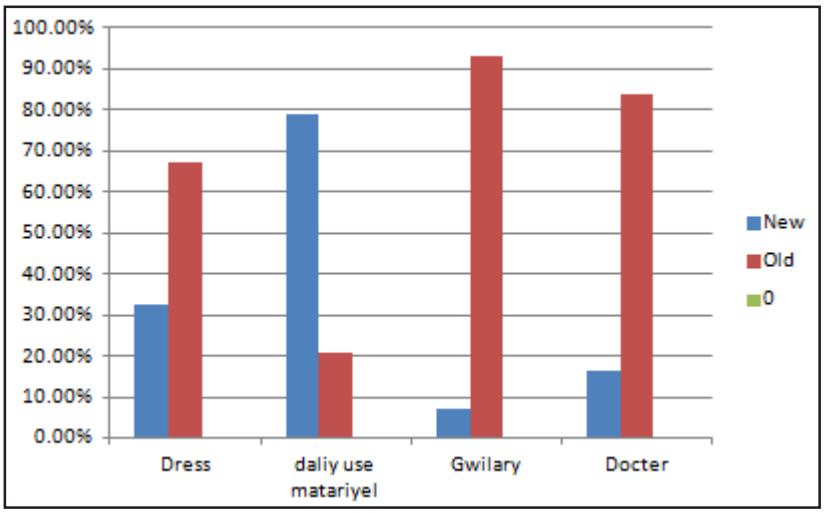

ग्राफ – 4

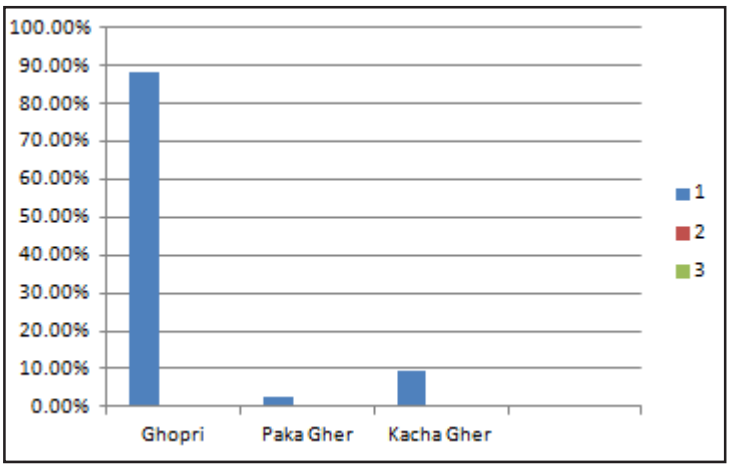

ग्राफ – 5

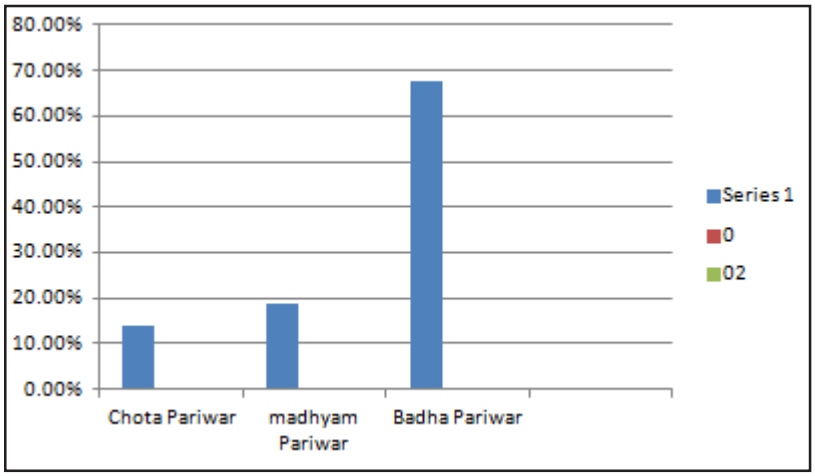

****

थारू जनजाति में सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन की उभरती हुई नवीन प्रवृतियाँ

हरद्वारी लाल * डॉ. अनिता रूडोला **

प्रस्तावना – मानव इसलिए मानव है क्योंकि उसके पास संस्कृति है। संस्कृति के अभाव में मानव को पशुओं से श्रेष्ठ नहीं माना जा सकता। संस्कृति मानव की श्रेष्ठ धरोहर है, जिसकी सहायता से मानव पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ता जा रहा है, प्रकृति की ओर उन्मुख होता जा रहा है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है, इसी परिवर्तन के कारण आधुनिक मानव अपने समाजीकरण की वर्तमान अवस्था को प्राप्त कर सका हैं। परंतु यही परिवर्तन मानव को उसकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक विरासत से विभक्त करने के लिए उत्तरदायी कारक भी समझे जाते हैं। भारत में आर्थिक विकास का गुणवत्तापूर्ण प्रभाव सामान्य मानव जीवन के साथ ही भारत की जनजातियों के जीवन पर भी स्पष्ट रुप से देखा जा सकता है। ऐसी ही एक थारू जनजाति जो हिमालय के दक्षिण में अवस्थित तराई क्षेत्र के सीमावर्ती भागों में अपनी सांस्कृतिक और सामाजिक विरासत को सहेज कर रखती आयी है। वर्तमान समय में थारू जनजाति में भी सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन स्पष्ट रुप से देखे जा सकते हैं। यूं तो थारू जनजाति सदियों से तराई क्षेत्र में रहती आ रही है किंतु इस जनजाति के मूल क्षेत्र के बारे में ऐसी जनश्रुति है कि यह जनजाति 15वीं शताब्दी में राजस्थान के थार क्षेत्र में निवास करती थी। किंतु पंद्रहवीं शताब्दी में मुगल साम्राज्य के विस्तार के कारण इस जनजाति को अपना मूल क्षेत्र त्याग कर हिमालय की तलहटी में आकर बसना पड़ा। धीरे धीरे यह जनजाति समाज की मुख्यधारा से कट गई और अन्य जातियों से पिछड़ गई। स्वतन्त्रता के पश्चात 1961 में भारत सरकार द्वारा इन्हें अनुसूचित जनजाति का दर्जा दिया गया। इनमें सामाजिक आर्थिक विकास के लिए कई सरकारी योजनाएँ प्रारंभ की गई, जिसका प्रभाव इनके जीवन पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। अत: वर्तमान समय में इस जनजाति में सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन को रेखांकित करना इस आलेख का प्रमुख उद्देश्य है।

थारू जनजाति – अवध गजेटियर के अनुसार 'थारू' शब्द का शाब्दिक अर्थ है 'ठहरे हुए' अर्थात जो लोग तराई के जंगलों में आकर ठहर गए, वे थारू कहलाए। एक मान्यता के अनुसार, थारू अपने को राजस्थान की मेवाड़ रियासत के सिसोदिया राजपूत वंश के वंशज मानते हैं। इनके अनुसार मुगल बादशाह अकबर द्वारा मेवाड़ पर बार बार चढ़ाई करने के कारण मेवाड़ राजघरानों की स्त्रियाँ अपने नौकरों के साथ मेवाड़ छोड़कर हिमालय की तलहटी में जाकर बस गई। कालांतर में इन्हीं राजपूत स्त्रियों ने अपने नौकरों से वैवाहिक संबंध स्थापित कर संतान उत्पन्न की। यही संताने कालांतर में थारू कहलायी हैं। मेवाड़ के राजपूत शासक स्वयं को राणा कहलवाना पसंद करते हैं। संभवत: यही कारण है कि थारू जनजाति में राणा समुदाय विशेष महत्व रखता है। आज भी थारू जनजाति में महिलाओं को रानी कहा जाता है। थारू जनजाति में महिलाओं का विशेष महत्व है। महिलाएँ स्वयं को पुरुषों से श्रेष्ठ समझती है, तथा सभी महत्वपूर्ण कार्यों में महिलाओं की राय को ही प्राथमिकता दी जाती है।

थारू अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में आते हैं। समाज के अति पिछड़े लोगों में आने की वजह से 1961 में इन्हें अनुसूचित जनजाति का दर्जा दिया गया, जिसके बाद इन्हें सरकारी नौकरियों और शैक्षणिक संस्थाओं में आरक्षण दिया गया। बावजूद इसके इस समाज के लोग कुछ जनजातियों के मुकाबले पिछड़ गए। जहां एक तरफ भूटिया और जौनसारी जनजातियाँ जागरूकता दिखाते हुए आरक्षण का लाभ लेकर सरकारी नौकरियों में उच्च पदों पर है, वहीं दूसरी तरफ थारू जनजाति के लोगों में ऐसी जागरूकता अभी प्रारंभिक अवस्था में ही देखने को मिलती है।

थारू जनजाति क्षेत्र का सीमांकन – थारू जनजाति का निवास मुख्यत: भारत–नेपाल सीमा के सहारे हिमालय की तलहटी में अवस्थित तराई क्षेत्रों में है भारत में यह जनजाति मुख्य रूप से उत्तराखंड के नैनीताल एवं उधमसिंह नगर, उत्तर प्रदेश के पीलीभीत, लखीमपुर खीरी, बहराइच, बलरामपुर, श्रावस्ती, महाराजगंज और सिद्धार्थ नगर आदि तथा बिहार के पश्चिमी चंपारण जनपद में पाई जाती है। यह सभी क्षेत्र हिमालय की तलहटी में अवस्थित है। जहाँ हिमालय से बहकर आने वाली नदियों द्वारा प्रतिवर्ष बाढ़ आती है। कोसी, गोमती, झूकना, शारदा, घाघरा, राप्ती और गंडक आदि इस क्षेत्र में बहने वाली प्रमुख नदियाँ है।

इस क्षेत्र की जलवायु विषम है यहां अधिकतम तापमान 45 डिग्री से. तथा न्यूनतम तापमान 15 डिग्री से. तक होता है। इसमें औसत वर्षा की उपलब्धता 120 सेमी है, जिसके कारण यहां उष्ण और आर्द्र जलवायु पाई जाती है। जिससे यहां घने जंगलों का विस्तार पाया जाता है। ऐसी विषम जलवायु में विभिन्न प्रकार के कीटों, मच्छरों से यह क्षेत्र अत्यधिक प्रभावित है। यही कारण है कि यह क्षेत्र देश के मलेरिया, दिमागी बुखार जैसी बीमारियों से सबसे अधिक प्रभावित क्षेत्रों के रूप में चिह्नित किया जाता है।इस क्षेत्र में मुख्य रूप से बलुई दोमट मिट्टी(जलोढ़ मिट्टी) पाई जाती है जो यहां प्रतिवर्ष नदियों में आने वाली वाली बाढ़ों द्वारा बिछाई जाती है। यह मिट्टी देश की सबसे उपजाऊ मिट्टी में सम्मिलित की जाती है। थारू जनजाति इस मिट्टी में गन्ना, धान और शाक सब्जियाँ उगाती है।

थारू जनजाति की सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना – थारू जनजाति अन्य जनजातियों के समान ही अपनी एक विशेष सामाजिक व्यवस्था एवं संस्कृति के कारण संपूर्ण भारतवर्ष में अपना एक अलग महत्व रखती हैं। थारू जनजाति को यह सामाजिक और सांस्कृतिक विरासत अपने पूर्वजों से प्राप्त हुई है, जिन्होंने 16वीं शताब्दी में लगातार मुगल आक्रमणों से परेशान होकर राजस्थान के मेवाड़ क्षेत्र को त्यागकर हिमालय की तलहटी में अवस्थित

*शोधार्थी (भूगोल) परिसर पौड़ी गढ़वाल, हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल (केन्द्रीय) विश्वविद्यालय, श्रीनगर (उत्तराखण्ड) भारत
** सह आचार्य (भूगोल) परिसर पौड़ी गढ़वाल, हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल (केन्द्रीय) विश्वविद्यालय, श्रीनगर (उत्तराखण्ड) भारत

तराई मैदान को अपना अधिवास बनाया। यही कारण है कि थारू जनजाति की संस्कृति में स्थानीय विशेषताओं के साथ-साथ राजस्थान के राजपूत राजवंशों की सांस्कृतिक विशेषताओं की झलक स्पष्ट रूप देखने को मिलती है। थारू जनजाति की सामाजिक और सांस्कृतिक विशेषताओं को निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है –

थारू जनजाति की जातीय संरचना – थारू जनजाति जातीय आधार पर विभिन्न वर्गों में विभाजित है, इनमें राणा, कठेरिया डंगरिया, महतो, चौधरी, काजी, पावे, पटवारी एवं पछिमध जातियाँ प्रमुख है। इनमें राणा सर्वोच्च थारू होते हैं। यह स्वयं को राणा प्रताप का वंशज मानते हैं। कठेरिया महतो, राणा से निम्न जाति मानी जाती है। डंगरिया जाति नेपाल के डंग क्षेत्र में निवास करने के कारण डगरिया कहलाती है। वही पछिमहा जाति वह कहलाती है, जो पूर्व में पश्चिम से पूर्व की ओर स्थापित हुई। जिस कारण स्थानीय लोग इन्हें पछिमहा कहकर पुकारते हैं। बिहार के पश्चिम चम्पारण की महतो जाति आर्थिक रूप से विपन्न तथा काजी एवं पटवारी आर्थिक रूप से सम्पन्न जाति है।

पारिवारिक संरचना – थारू जनजाति मूल रूप से पितृ प्रधान है। थारू दंपति से उत्पन्न संतान को पिता का ही उपनाम दिया जाता है। समाज में अधिकतर व्यक्तिगत संपत्तियाँ पुरुषों के नाम पर पंजीकृत है। परिवार का मुखिया पुरुष ही होता है, यद्यपि परिवार के महत्वपूर्ण निर्णयों में महिलाओं के मत को भी प्रमुखता दी जाती है।

थारू जनजाति में महिलाओं की स्थिति – थारू समाज पितृसत्तात्मक है, परंतु फिर भी थारू जनजाति में महिलाओं का स्थान बहुत उंचा है। थारू महिलाएँ स्वयं को पुरुषों से श्रेष्ठ समझती है। यहां तक कि थारू महिलाएँ पुरुषों को अपनी रसोई में आने तक नहीं देती है। थारू महिलाएँ पुरुषों के साथ भोजन नहीं करती है। यह दर्शाता है कि थारू जनजाति में महिलाओं का दर्जा पुरुषों से कितना उंचा है। थारू महिलाएँ स्वयं को रानी कहलवाना पसंद करती है। समाज में महिला अधिकारों को पूर्ण मान्यता दी जाती है। कृषि पशुपालन एवं अन्य आर्थिक क्रियाओं में महिलाओं की भागीदारी उल्लेखनीय है। परिवार के महत्वपूर्ण निर्णयों में महिलाओं के विचारों को प्रमुखता दी जाती है। कन्याओं को अपना वर चुनने तथा विवाह विच्छेद का पूर्ण अधिकार होता है। विवाह में महिलाओं को अपनी राय प्रकट करने की छूट होती है। शिक्षा के क्षेत्र में भी बालिकाओं को बालकों के समान बराबर अवसर प्रदान किए जाते हैं। यही कारण है कि थारू जनजाति में स्त्री शिक्षा की दर उत्कृष्ट है। राजनीतिक क्षेत्र में भी थारु महिलाओं की स्थिति अपेक्षाकृत सुदृढ़ है। क्षेत्रीय राजनीति के साथ-साथ प्रादेशिक राजनीति में थारू महिलाओं की सक्रिय भागीदारी है। संपत्ति के बंटवारे में भी थारू महिलाओं को पर्याप्त अधिकार मिले हुए हैं।

धार्मिक संरचना – थारू जनजाति हिंदू है। यह हिंदुओं के सभी त्यौहार दीपावली, दशहरा, होली, गंगा स्नान, तीज आदि प्रमुखता से मनाते हैं। दशहरा थारू जनजाति में विशेष रूप से तथा बड़े धूमधाम से मनाया जाता है। यह लोग पुरोहित के रूप में ब्राह्मण को नहीं बुलाते हैं। थारू जनजाति में देवी-देवताओं भूत-प्रेतों तथा अन्य आत्माओं में आज भी विश्वास करती है। इन्हें प्रसन्न करने हेतु थारू जनजाति सूअर तथा बकरे की बलि चढाते है। थारू जनजाति में सर्वाधिक पूजा भूमसेन की होती है। इनका थान गांव के सुदूर उत्तर पूर्व दिशा में पीपल के पेड़ के नीचे होता है। यह प्राय: सभी त्यौहारों पर भूमसेन की विशेष पूजा अर्चना करते हैं। कालिका, पीतला, ज्वाला, पार्वती, दुर्गा, पूर्वा एवं हुलाका सात देवियाँ है जिन्हें थारू जनजाति में पूजा जाता है। इनके अतिरिक्त भैरव का भी थारू जनजाति में विशेष धार्मिक महत्व है।

संस्कृति एवं संस्कार – थारू जनजाति कई शताब्दियों से अन्य समाजों से विलगीत रही है। जिसके कारण थारू जनजाति की एक विशेष सांस्कृतिक व्यवस्था निर्मित हो गई, परंतु जैसे-जैसे आधुनिक समय में थारू जनजाति का सामाजिकीकरण हो रहा है, वैसे-वैसे थारू जनजाति की संस्कृति संरचना में आधुनिकता तथा अन्य समाजों की विशेषताओं का मिश्रण स्पष्ट दिखाई देने लगा है। वर्तमान में थारू जनजाति हिंदू संस्कारों को बड़ी श्रद्धा से संपन्न करने लगी है। शिशु के जन्म पर पुरोहित को बुलाकर नामकरण संस्कार करवाना, यज्ञोपवीत धारण करना, वैवाहिक संस्कार और अंतिम संस्कार में तो हिंदू संस्कारों की झलक स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। शिशु जन्म में थारू लोग ब्राह्मण को बुलाकर सदेय प्रसुता को स्नान करवाकर, गौमूत्र छिड़ककर पवित्र करवाते हैं। तत्पश्चात शिशु और माता पिता को बिठा कर पूजा करवाई जाती है। पांचवे दिन पचोल रूप में किसी कन्या के द्वारा बच्चों को आंगा पहनाया जाता है। 11वें दिन पुन: माता व शिशु को स्नान करवाकर गोमूत्र छिड़ककर पवित्र किया जाता है। तत्पश्चात माता अपने दैनिक क्रियाकलाप में लग जाती है।

थारूओ में विवाह संस्कार कुछ परंपरागत रस्मों के साथ संपन्न करवाया जाता है। जिसमें चुल्हा वैठाण, भूमियों पूजन, सर देना, तेल चढ़ाना, पहरावा, कन्यादान और भवर आदि प्रमुख है। विवाह पश्चात वधू को वर पक्ष के साथ विदा कर दिया जाता है। मृतक संस्कार थारुओं में हिंदू परंपरा के अनुसार करते हैं, लेकिन कुछ प्रदान परंपराएं जनजातीय हैं। मृत व्यक्ति को सर्वप्रथम नहला कर उसे हल्दी का लेप लगाकर, आंगन में अंतिम दर्शनों हेतु कुछ समय रखते हैं। वहीं सधवा मृतक महिला के शव को सोलह सिंगार कर सजाया जाता है।

भाषा व लिपि – थारू जनजाति की मूल भाषा थारू है। किंतु इनकी भाषा में स्थानीय बोलियों का प्रभाव विशेष रूप से पड़ा है। थारू जनजाति अवधी, नेपाली, डोंगरी आदि स्थानीय बोलियाँ भी बोलती है। ये सभी भाषाएँ लगभग हिंदी के समान है। थारू जनजाति की बोलियों में राजस्थानी भाषा का भी व्यापक प्रभाव देखने को मिलता है। थारूओ की अपनी एक विशिष्ट लिपि थी जिसमें थारू लोग पढ़ते लिखते और संवाद करते थे। आज भी थारू लिपि पर आधारित पांडुलिपियां थारू जनजाति गांवों में बुजुर्गों के पास मौजूद है।

थारू लोगों की वेशभूषा

थारू पुरुषों का पहनावा मुख्य रूप से धोती कुर्ता और टोपी है। किंतु विशेष अवसरों पर पुरुष सफेद पगड़ी, माँगिया (ढीला कुर्ता) सुथनी(पजामा) अलगा(मफलर) फाँटा(कमर पट्टी) और लाल पातुका (रुमाल) आदि पहनते हैं। थारू महिलाएँ लहंगा, अंगिया, चुन्नी, ओढनी और मखमली जैकेट पहनती है। लहंगे पर एक मोटी डोरी लगी रहती है। सिर पर यह चट्टा(कजरा) लगाती है। स्त्रियाँ चोटी से लेकर पैरों तक चांदी के आभूषण पहनती है। विवाह के अवसर पर स्त्रियाँ चांदी के नक्काशी का घुंघट डालती है। चांदी की सिकड़ी में लगी बिंदी, पैरों में बकडा, हाथ में खटूआ, पशीबंद, चडी, पहुंची, चोशी, नाक में नथूनी, कानों में मुंदरी, गले में कथल (सिक्कों की माला) हसूली, हरूवा, संकार आदि पहनती है। विवाहित स्त्रियाँ या पैरों में बिछूवे, भुजा मे जोशन, कलाई में चूड़ियां आदि पहनती है।

थारू जनजाति का खान पान

थारुओं का परंपरागत पेयपदार्थ 'जांड' है, जो कि चावल में जड़ी बूटियों और मसालों को डालकर बनाया(जमीन में गाड़कर)जाता है। थारु लोग सुबह के नाश्ते को कलेवा, दिन के भोजन को भिगनी तथा रात्रि के भोजन

को बेरी कहते हैं। थारू लोग मांस वह मछलियों के विशेष शौकीन है। मांस के लिए यह लोग जंगली जानवरों जैसे सूअर, हिरण, कछुआ तथा जंगली मुर्गियों का शिकार करते हैं। साथ ही पशु पालन भी इनका प्रमुख व्यवसाय है। मछली पकड़ने का कार्य थारू आसपास की नदियों, तालाबों और धान के खेतों में करते हैं। मछली पकड़ने का कार्य सामान्यत: महिलाएँ ही करती है। महिलाएँ महुआ के पेड़ों की छाल को सुखाकर पीस लेती है। फिर इसे धान के खेतों में जमे पानी में डाल देती है, जिससे मछलियाँ बेहोश होकर पानी के ऊपर तैरने लगती है और महिलाएँ इन्हें आसानी से पकड़ लेती है। थारू लोग मदिरा के शौकीन होते है, थारू लोग चावल के मांड से बीयर बनाते हैं जिसे पूरे परिवार के साथ शौक से पिया जाता है।

थारू जनजाति में सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन – किसी भी समाज की सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचना सदैव एक समान नहीं रहती है। समय के साथ-साथ इसमें परिवर्तन होता रहता है। जैसे-जैसे किसी समाज का अन्य समाज के लोगों से संपर्क होता है, वैसे-वैसे सामाजीकरण और संस्कृतीकरण की प्रक्रिया अधिक तीव्र गति से होने लगती है। यही सिद्धांत थारू जनजाति के संदर्भ में भी लागू होता है। आधुनिक समय में थारू जनजाति की सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचना में क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहा है। थारू जनजाति के लोग अब शिक्षा ग्रहण कर जागरूक हो रहे हैं, वे सभी सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं का तर्क के आधार पर मूल्यांकन कर रहे हैं। थारू जनजाति की नई पीढ़ी पुराने रीति-रिवाजों और अंधविश्वासों से आगे बढ़ गई है। यही कारण है कि विगत कुछ वर्षो से थारू जनजाति में व्यापक सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन हुए हैं।

विगत कुछ वर्षो में थारू जनजाति ने अपनी विलगता को त्याग कर अन्य जातियों के साथ संपर्क स्थापित किया है। अब थारू अपने पारिवारिक कार्यक्रम और उत्सवों में अन्य जातियों को भी आमंत्रित करने लगे हैं, तथा स्वयं भी अन्य जातियों के कार्यक्रमों और उत्सवों में शरीक होने लगे हैं। जिससे थारू जनजाति में संस्कृतिकरण की प्रक्रिया शुरू हो गई है। यही कारण है कि थारू लोग अब अन्य जातियों के सामाजिक और सांस्कृतिक विशेषताओं को अपनाने लगे हैं। जैसे पूर्व में थारू लोग हिंदुओं के सोलह संस्कारों से अनभिज्ञ थे, किंतु अब थारूओं के संपन्न परिवारों में हिंदू संस्कारों को सहर्ष स्वीकार किया जाता है। थारुओं में शिशु के नामकरण संस्कार, यज्ञोपवीत संस्कार, वैवाहिक संस्कार और मृतक संस्कार आम व्यक्ति भी संपन्न करने लगा है।

थारू लोगों की भाषा और लिपि में व्यापक परिवर्तन देखने को मिलता है, जहां पूर्व में थारू लोगों की भाषा में थारू भाषा और लिपि ही प्रमुखता रखती थी वहीं अब स्थानीय भाषाओं (नेपाली, डोगरी आदि) का महत्व बहुत बढ़ गया है। थारू भाषा और लिपि अब केवल गांव के वृद्ध लोग ही समझ पाते हैं। थारू लिपि तो अब थारू लोगों की संस्कृति से लुप्त प्राय ही हो गई है। थारू लेखकों द्धारा लिखी गई थारू पांडुलिपियों को उनके मरने के पश्चात उनकी चिता के साथ ही जला दिया जाता है। यही कारण है कि थारू लिपि शीघ्रता से विलुप्त होती जा रही है। थारू लोगों में शिक्षा के स्तर में सुधार होने के कारण थारू लोगों की भाषा में अंग्रेजी और हिंदी का महत्व लगातार बढ़ रहा है। थारू जनजाति में खान-पान की प्रवृति में भी व्यापक प्रभाव देखा जा सकता है। थारू जनजाति का भोजन अत्यंत साधारण होता है। थारू लोग अपने भोजन में मांस मछली और धान का विशेष प्रयोग करते हैं। परंतु अन्य समुदायों के साथ संपर्क और शिक्षा के प्रसार से थारू जनजाति में खान-पान में व्यापक परिवर्तन देखा जा सकता है। नई पीढ़ी जो नगरों में बस गई है, उनमें खानपान में धान के साथ-साथ गेहूं, दालें तथा विभिन्न प्रकार की सब्जियों का उपयोग होने लगा है। बहुत से थारू लोग जो पूर्व में मदिरा का सेवन करते थे उन्होंने विभिन्न धार्मिक गुरुओं के संपर्क में आने से मदिरा का सेवन छोड़ दिया है। यही नहीं बहुत से थारू लोगों ने मांसाहार की जगह शाकाहार को अपने जीवन में स्वीकार कर लिया है। इसमें विभिन्न धार्मिक गुरुओं की विशेष भूमिका है। इनमें राधा स्वामी सत्संग की भूमिका विशेष महत्वपूर्ण है। विगत कुछ दशकों से थारू लोगों के कल्याण के लिए बहुत से धार्मिक संगठन आगे आए हैं, जिनमें ईसाई मिशनरी, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, राधा स्वामी सत्संग जैसी संस्थाएं महत्वपूर्ण है। इन संस्थाओं ने थारू लोगों के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में बहुत से क्रांतिकारी परिवर्तन किए हैं। जिसमें थारू जनजाति में व्याप्त कुरुतियाँ अंधविश्वास आदि के प्रति जन चेतना जागृत करना मास व मदिरा के सेवन से दूर रहना एवं अपराधों से दूर रहना आदि महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष – स्वयं को राजस्थान के महाराणा प्रताप का वंशज बताने वाले थारु कई शताब्दियों तक विलगता के युग जिए। इन लोगों ने न केवल अपना अलग समाज बनाया अपितु अपनी एक अलग संस्कृति भी विकसित की। जिसके कारण बाहरी लोगों से थारू जनजाति का संपर्क टूट गया जिसके परिणाम स्वरूप थारू लोग निवास की प्रक्रिया से बाहर हो गए। जैसे-जैसे थारू लोगों में शिक्षा का प्रसार हुआ था वैसे-वैसे थारू लोगों की सामाजिक एवं संस्कृतिक व्यवस्था में एक क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिल रहा है। यह परिवर्तन थारू लोगों की धार्मिक दृष्टिकोण, भाषा व बोली, खानपान आदि में विशेष रूप से देखा जा सकता है। परंतु इसका एक नकारात्मक पक्ष यह भी है कि, इन सब के कारण कहीं थारू जनजाति की अपनी एक विशिष्ट पहचान विलुप्त न हो जाए। जैसा कि हमने पूर्व में कई जनजातियों के संदर्भ में देखा है। अत: यह आवश्यक है कि इस जनजाति की सामाजीकीकरण की प्रक्रिया में बाहरी तत्वों का हस्तक्षेप न्यूनतम किया जाए तथा थारू जनजाति क्षेत्रों में थारू जनजाति शोध केंद्रों की स्थापना की जाए। जो निरंतर थारू जनजाति के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन में हो रहे परिवर्तनों का निष्पक्ष मूल्यांकन करें एवं थारू जनजाति के विकास हेतु समावेशी नीतियों का निर्माण करने हेतु उपयुक्त सुझाव दें। साथ ही साथ थारू जनजाति की संस्कृति को विश्व पटल पर लायें जिससे उनका संवर्धन एवं संरक्षण किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नेस फील्ड, जे0सी0 (1885) एडिस्क्रिप्सन ऑफ मैनर्स, इण्डस्ट्रीज एण्ड रिलीजन, ऑफ दि थारू एण्ड बोक्सा ट्राइन ऑफ अपर इण्डिया, कोलकाता पृष्ठ-115
2. कुक, विलयम (1886) ट्राइब्स एण्उ कास्ट्स ऑफ द नाथ-वेस्ट प्रोविन्सेस एण्उ अवध कोस्मो पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृष्ठ-381
3. नार्थ वेस्टर्न प्रोविन्सज गजेटियर, 1881 पृष्ठ - 354
4. मजूमदार, डी0 एन0 (1944) दि फोरच्यून्स ऑफ ट्राइब्स यूनीवर्सल, लखनऊ पृष्ठ-70
5. सक्सेना, ए. एण्ड कपूर, के.डी. 'ए स्टडी ऑफ कल्चर, कान्टेक्ट एडर्जस्टमेण्ट पैटर्न ऑफ थारू', इण्डियन जर्नल ऑफ क्लिीनिकल साइकोलॉजी, वोल्यूम., नई दिल्ली, पृष्ठ-131

संजय सरोवर बांध में मत्स्य पालन विकास व संभावनायें (सिवनी जिले के संदर्भ में)

नीतू उइके *

प्रस्तावना – मछली जीव पर्यावरण पर आश्रित जलचर जीव है तथा जलीय पर्यावरण के संतुलित रखने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जिस पानी में मछली नहीं हो तो निश्चित ही उस पानी की जल जैविक स्थिति सामान्य नहीं है। विभिन्न जलस्त्रोतो में चाहे तीव्र अथवा मंद गति से प्रवाहित होने वाली नदिया हो चाहें प्राकृतिक झीलें, तालाब: बांध या बडे जलाशय संभी पर्यावरण का आदि सूक्ष्म अध्ययन किया जाए तो निष्कर्ष निकलता है कि पानी और मछली दोनों एक दूसरे से काफी जुडे हुए है। पर्यावरण को संतुलित रखने में मछली की विशेष उपयोगिता हैं।

संजय सरोवर बांध जबलपुर–नागपुर राष्ट्रीय राजमार्ग N.H.7 छपारा तहसील से 16 कि.मी. पूर्व में भीमगढ गांव के समीप स्थित था, यह बांध कृषि सिंचाई के साथ–साथ मत्स्य उप्पादन में भी अपनी अहम् भूमिका निभाता है।

अध्ययन क्षेत्र – सिवनी जिला मध्यप्रदेश के दक्षिण पार्श्व पर सतपुडा के पठार पर स्थित है, उत्तर में चौड़ा एवं दक्षिण में संक्रीणता लिये हुए है। समुद्र तल से इसकी ऊंचाई 617 मी. है। यह जिला $21^{0}36'$ से $22^{0}57'$ उत्तरी अक्षांश एवं $79^{0}19'$ से $80^{0}17'$ पूर्वी देशांश के बीच स्थित है। इसका क्षेत्रफल 8758 वर्ग किलोमीटर है।

(चित्र देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

उद्देश्य –

1. सिवनी जिले में मत्स्य पालन विकास का अध्ययन करना।
2. मत्स्यपालन विकास में संजय सरोवर बांध के योगदान का अध्ययन करना।
3. जिले में मत्स्य पालन विकास की सम्भावना का अध्ययन करना।
4. मत्स्य पालन विकास में जाने वाली समस्याओं का अध्ययन कर सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत प्रपत्र द्वित्तीयक समंको पर आधरित है, जिसमें संजय सरोवर डिवीजन केवलारी से लिया गया है।

संजय सरोवर बांध द्वारा वार्षिक मत्स्य उत्पादन

वर्ष	उत्पादन (मीट्रिक टन)
2003.04	627.00
2004.05	1254.85
2005.06	416.50
2006.07	1359.00
2007.08	1350.00
2008.09	2000.00
2009.10	3151.50

स्त्रोत – संजय सरोवर डिवीजन केवलारी जिला सिवनी ।

प्रस्तुत तालिका में संजय सरोवर बांध से मत्स्य पालन 2003–04 में 627.00 मीट्रिक टन व 2004–05 में 1254.85 मीट्रिक टन का उत्पादन हुआ, वही 2005–06 में 416 मीट्रिक टन कमी देखी गयी वही 2006–07 में 1359.00 मीट्रिक टन वृद्धि हुई तत्पश्चात् 2007–08 में उत्पादन में कमी देखी जो 1350 मीट्रिक टन थी वही 2008–09 में 2000.00 मीट्रिक टन व 2009–10 में 2508 मीट्रिक टन उत्पादन वृद्धि देखी गयी।

मत्स्य विकास संभावनाए–

1. मत्स्य पालन में वृहत् उद्योग की असीम संभावनाएं।
2. मत्स्य पालन सस्ता और सुलभ व अधिक आय वाले रोजगार है।
3. मत्स्य पालन के साथ–साथ कृषि के अन्य आयामों का समावेश।
4. बांध का समुचित प्रबंधन हेतु मत्स्य पालन सहकारिता समितियों का गठन।
5. महिलाओं द्वारा स्वसहायता समूहों का गठन कर मत्स्य पालन रोजगार को बढ़ाने की संभावना।

समस्याएं –

1. मछुआरों में प्रशिक्षण की कमी।
2. बाजारों में मछली पहुंचाने हेतु परिवहन की समस्या।
3. मत्स्य बीज संचय में कमी।
4. आधुनिक मत्स्य पालन पद्धतियों के प्रयोग में कमी।
5. मत्स्य कृषकों में जागरूकता एवं जानकारी का अभाव।

सुझाव –

1. मछुआरों के लिए प्रशिक्षण केन्द्र खोलने की आवश्यकता।
2. मत्स्य व्यवसाय के लिए यंत्रीकरण नौकाओं की आवश्यकता
3. मत्स्य पालन के अधिक व्यवसाय के लिए बांध की मिटटी की जांच की आवश्यकता।
4. मत्स्य पालन विकास के लिए बांध में खाद का उचित प्रयोग।

निष्कर्ष – भारतीय अर्थव्यवस्था में मत्स्य पालन एक महत्वपूर्ण व्यवसाय है, जिसमें रोजगार की अपार संभवनाएं है, बढ़ती जनसंख्या और घटती खेती से बेरोजगारी की समस्या में कमी के लिए मत्स्य पालन का व्यवसाय सस्ता व सुलभ आय की प्राप्ति होती है। मत्स्यपालन 2003–04 में 627 मीट्रिक टन से 2006–07 में 1359.00 मीट्रिक टन वृद्धि हुई वही 2009–10 में 3151.00 मीट्रिक टन उत्पादन की वृद्धि हुई। वही धीरे–धीरे छोटे–छोटे तालाबों में व नहरों में मत्स्य पालन किया जाता व धीरे–धीरे तीव्र विकास कर रहा है। सिवनी जिला में मत्स्य पालन अधिक होने से यहां से प्राप्त मछलियां जबलपुर, नागपुर व छोटे–छोटे अन्य शहरों में इसका निर्यात किया जाता

*शोधार्थी (भूगोल) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. संजय सरोवर परियोजना जिला सिवनी - केवलारी।
2. इन्टरनेट (मत्स्य पालन wikipedia)
3. आर.सी.तिवारी, बी.एन.सिंह कृषि भूगोल, प्रवालिका पब्लिकेशन इलाहाबाद।
4. कृष्णा आर. (2014) 'पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी' के.बी.सी. नैनो पब्लिकेशन, दिल्ली.110007।
5. सिंह, डॉ. यू.बी. (2004), 'कृषि भूगोल' राजीव प्रकाशन, मेरठ।

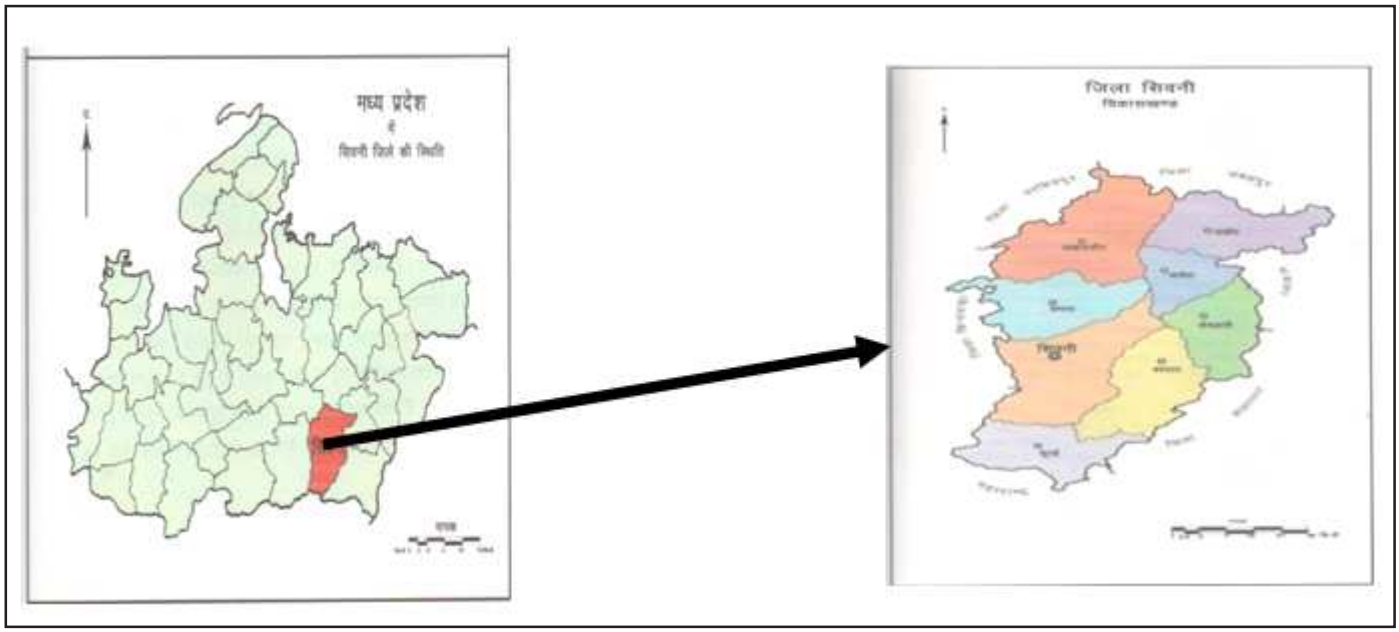

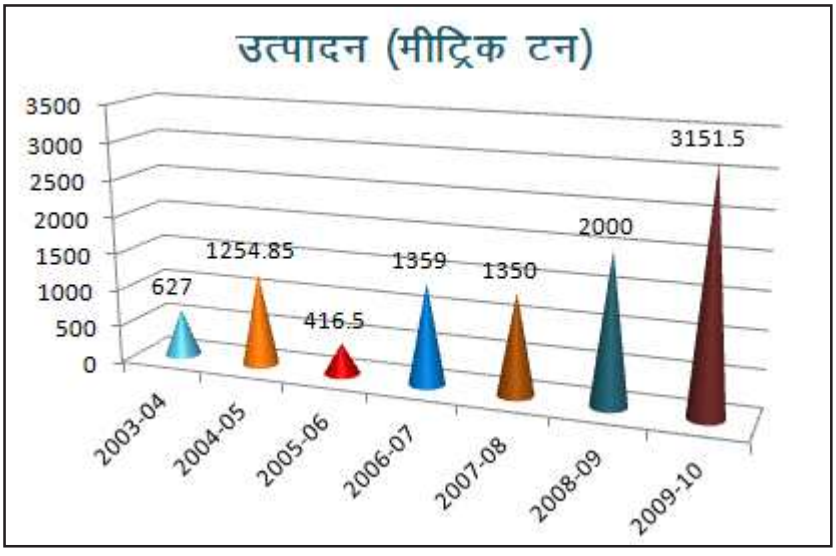

****

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण चिंतन एवं मानव स्वास्थ्य

डॉ. राम सिंह धुर्वे *

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति मूलत: अरण्यक संस्कृति रही है। प्रकृति की आराधना तथा पर्यावरण का संरक्षण करना पुरातन भारतीय चिंतन है। प्रकृति के साथ सह–अस्तित्व की भावना से युक्त जीवन व्यतीत करने वाले वैदिक ऋषियों ने प्राकृतिक शक्तियों–वसुंधरा, सूर्य, वायु, जल आदि की भावपूर्ण स्तुति की है। अथर्ववेद में कहा गया है कि 'माता भूमि: पुत्रोअहं पृथिव्या:' अर्थात् वसुंधरा जननी है, हम सब उसके पुत्र हैं। ऋग्वेद में सबसे अधिक मनुष्य तथा उसके पर्यावरण को महत्व दिया गया है। ऋग्वेद में देवताओं को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है–जल, वायु और भूमि। भूमि अर्थात् सर्वव्यापी मातृभूमि या माँ जो मनुष्य के कल्याण के लिए सभी प्रकार की चीजें देती हैं। वन मनुष्य के जीवन के लिए अत्यंत उपयोगी है, जिनका उपयोग वह आदिकाल से करता आ रहा है। ऋषियों मुनियों को वृक्षों और वनों के महत्व की अनुभूति थी जिसके कारण उन्होंने उसे धर्म में सम्मिलित करके मनुष्य द्वारा उनके संरक्षण पर बल दिया।

कुछ पौधों को औषधि कहकर उन्हें बीमारियों के उपचार हेतु काम में लिया गया। पौधों को देवी देवताओं से भी संबंधित किया गया, जिससे उपयोगी पौधों तथा वृक्षों का संरक्षण हो सके। तुलसी को भगवान राम, शिव, विष्णु, लक्ष्मी तथा जगन्नाथ से जोड़कर उसे महाऔषधि बताया गया। अशोक वृक्ष को बुध, इंद्र, आदित्य, और विष्णु के रूप में अभिहित किया गया। पीपल को विष्णु, लक्ष्मी, दुर्गा आदि के रूप में मानकर औषधि के रूप में उसको प्रयुक्त किया गया। इसी तरह आम को गोवर्धन, लक्ष्मी ताकि बुध के रूप में स्वीकार करके इसके पत्तें को पूजा में रखने का प्रावधान और हवन में समिधा के रूप में इसका प्रयोग किया गया। कदम वृक्ष को कृष्ण से और बेल को शिव, महेश्वर, दुर्गा, सूर्य और लक्ष्मी से जोड़ा गया। पौधों और वृक्षों की धार्मिक रूप से पवित्रता और उसकी उपयोगिता को देखकर उसके संरक्षण पर भी महत्व दिया गया। प्राचीन काल में समाज यह भलीभाँति जानता था कि पौधों को काटना और वनों को नष्ट करना मनुष्य के जीवन के लिए अत्यंत हानिकारक है क्योंकि इनके अभाव में बीमारियाँ फैलती हैं और पर्यावरण प्रदूषित होता है। भगवान श्रीकृष्ण ने स्वयं गीता में कहा है– 'अश्वत्थ: सर्व वृक्षा वृक्षाणां' अर्थात् पेड़ों में स्वयं पीपल का वृक्ष हूँ। भारत में पीपल–बरगद–तुलसी, गंगा–जमुना जैसी पुण्यसलिला के बारे में जो जन मान्यता और स्वीकार्यरता है। भारतीय पौराणिक ग्रंथों, ज्योतिष ग्रंथों व आयुर्वेदिक ग्रंथों के अनुसार ग्रहों व नक्षत्रों से संबंधित पौधों का रोपण व पूजन करने से मानव का कल्याण होता है।

पर्यावरण किसे कहते हैं?– हमारे चारों ओर जो भी वस्तुएँ, परिस्थितियाँ विद्यमान हैं, वे मानव क्रियाकलापों को प्रभावित करती है और उसके लिए एक दायरा सुनिश्चित करती हैं, इसी दायरे को पर्यावरण कहते हैं। यह दायरा आवास, गाँव से लेकर संपूर्ण सौर मण्डल हो सकता है। पर्यावरण अनेक छोटे तंत्रों से लेकर अनेक विशाल तंत्रों का जटिल सम्मिश्रण है। आज पर्यावरण का अर्थ इतना व्यापक हो चुका है कि इसमें संपूर्ण पृथ्वी, उसका वातावरण और इस धरती पर विद्यमान हर वस्तु को पर्यावरण का हिस्सा मान लिया गया है। पर्यावरण एक महाविज्ञान है, जिसके अंतर्गत प्राणी–विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान जैसे अनेक विज्ञान एक शाखा के रूप में विद्यमान हैं। सत्यम शिवम् सुन्दरम के सत्यमार्ग पर चलते हुए सर्वे भवंतु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया' की जीवनचर्या अपनाते हुए संपूर्ण जीवन जीने के बाह्य संसाधनों तथा शारीरिक, मानसिक विकास के लिए सामंजस्यात्मक आच्छादन ही पर्यावरण है। पर्यावरण उन सभी प्राकृतिक संसाधनों की समग्रता का नाम है, जो धरती माता ने मानव जाति के लिए वरदान के रूप में दिए हैं।

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण का महत्व – फल–फूलों के भार से झुके हुए पेड़ विनम्र होने का उपदेश देते हैं, जो हमारे सभ्यता व संस्कृति का मूलभूत आधार है। रसखान, तुलसीदास जी आदि अनेक कवियों ने अपने काव्यों में पेड़ों का वर्णन किया है। इसी प्रकार पवित्र नदियाँ हमारे लिए पूज्यनीय रही हैं। इन पवित्र नदियों पर ही देश की संस्कृति व आर्थिक ढ़ाँचा टिका हुआ है। आयुर्वेद के अधिष्ठाता धनवंतरि ने प्रकृति से प्राप्त जड़ी–बूटियों को समस्त असाध्य रोगों के निदान के लिए रामबाण औषधि समझा था। आंग्ल कवि वर्डसवर्थ ने 'प्रकृति की गोद में ही जीवन का परम सुख' समझा था। रूसो ने 'बैक टू दि नेचर' का शंखनाद किया था। प्रकृति के साथ सुसंबद्धता, मध्यकालीन भारत तथा मुगलकाल में भी एक प्रमुख लक्ष्य रहा है तथा मुगलकाल में कला व स्थापत्य कला का अद्वितीय विकास प्रकृति के साथ इस तारतम्यता को प्रदर्शित करता है कि उक्त काल में मुस्लिम तथा हिन्दु कला व परंपराओं के तत्वों का सुखद मिश्रण था।

स्वास्थ्य क्या है? – स्वास्थ्य का सीधा संबंध क्रियाशीलता से है। जो व्यक्ति शरीर और मन से पूरी तरह क्रियाशील है, उसे ही पूर्ण स्वस्थ कहा जा सकता है। कोई रोग हो जाने पर क्रियाशीलता में कमी आती है इसीलिए स्वास्थ्य भी प्रभावित होता है। प्रचलित चिकित्सा पद्धतियों में स्वास्थ्य की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं दी गई है। ऐलोपैथी और होम्योपैथी के चिकित्सक किसी भी प्रकार के रोग के अभाव को ही स्वास्थ्य मानते हैं। वे रोग को या उसके अभाव को तो माप सकते हैं परन्तु स्वास्थ्य को मापने का उनके पास कोई पैमाना नहीं है। रोग के अभाव को मापने के लिए उन्होंने कुछ पैमाने बना रखे हैं जैसे हृदय की धड़कन, रक्तचाप, लम्बाई या उम्र के अनुसार वजन, खून में हीमोग्लाबिन की मात्रा आदि। इनमें से एक भी अनुभव द्वारा निर्धारित सीमाओं से कम या अधिक होने पर वे व्यक्ति को रोगी घोषित कर देते हैं

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, नैनपुर, जिला – मण्डला (म.प्र.) भारत

और अपने हिसाब से उसकी चिकित्सा भी शुरू कर देते हैं।

आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रंथ सुश्रुत संहिता में ऋति ने लिखा है–समदोषा: समाग्निश्च समधातुमलक्रिय:। प्रसन्नात्मेन्द्रियमन: स्वस्थ इत्यभिधीयते।। अर्थात् जिसके तीनों दोष (वात, पित्त एवं कफ) समान हों, जठराग्नि सम (न अधिक तीव्र, न अति मन्द) हो, शरीर को धारण करने वाली सात धातुएँ (रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और वीर्य) उचित अनुपात में हों, मल–मूत्र की क्रियाएं भली प्रकार होती हों और दसों इंद्रियाँ (आँख, कान, नाक, त्वचा, रसना, हाथ, पैर, जिव्हा, गुदा और उपस्थ) मन और सबकी स्वामी आत्मा भी प्रसन्न हो, तो ऐसे व्यक्ति को स्वस्थ कहा जाता है।

पर्यावरण चिन्तन – भारतीय संस्कृति में पर्यावरण चिंतन उतनी ही प्राचीन है जितना यहाँ मानव जाति का ज्ञात इतिहास है। भारतीय संस्कृति के अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि यहाँ पर्यावरण संरक्षण का भाव अति पुराकाल में भी मौजूद था पर उसका स्वरूप भिन्न था। उस काल में कोई राष्ट्रीय वन नीति या पर्यावरण पर काम करने वाली संस्थाएँ नहीं थी। पर्यावरण का संरक्षण हमारे नियमित क्रियाकलापों से ही जुड़ा हुआ था। इसी कारण से वेदों से लेकर कालिदास, पंत, प्रसाद आदि तक सभी काव्य में इसका व्यापक वर्णन किया गया है। हिन्दु दर्शन की मूल इकाई जीव में मनुष्य में पंच तत्वों का समावेश माना गया है। देह पाँच तत्वों जल, अग्नि, आकाश, पृथ्वी और वायु से मिलकर बना है जो पर्यावरण के महत्वपूर्ण घटक हैं। समुद्र मंथन से वृक्ष जाति के प्रतिनिधि के रूप में कल्पवृक्ष का निकलना, देवताओं द्वारा उसे अपने संरक्षण में लेना, इसी तरह कामधेनु और ऐरावत हाथी का संरक्षण इसके उदाहरण हैं। कृष्ण की गोवर्धन पर्वत की पूजा की शुरूआत का लौकिक पक्ष यही है कि सामान्य मिट्टी, पर्वत, वृक्ष एवं वनस्पति का आदर करना सीखें। श्रीकृष्ण ने स्वयं को ऋतुस्वरूप, वृक्ष स्वरूप, नदी स्वरूप एवं पर्वत स्वरूप कहकर इनके महत्व को रेखांकित किया है।

सिंधु सभ्यता की मोहरों पर पशुओं एवं वृक्षों का अंकर, सम्राटों द्वारा अपने राजचिन्ह के रूप में वृक्षों एवं पशुओं को स्थान देना, गुप्त सम्राटों द्वारा बाज को पूज्य मानना, मार्गों में वृक्ष लगवाना, कुएँ खुदवाना आदि तत्कालीन प्रयास पर्यावरण प्रेम को ही प्रदर्शित करते हैं। भारत की बहुत बड़ी आबादी आज अपनी संस्कृति को पूज्य और विश्वासनीय मानता है। हमारे देश में अनेक तीर्थ स्थानों को पवित्र तथा त्योहारों को मनाने की परम्परा आज भी कायम है।

कालिदास, सूरदास, रसखान, तुलसीदास, कबीरदास ने किसी संस्था से शिक्षा प्राप्त नहीं की लेकिन अपनी रचनाओं में प्रकृति को इस तरह चित्रित किया कि इसके विनाश की बाता सोची भी नहीं जा सकती। कालिदास ने पर्यावरण संरक्षण के विचार को मेघदूत तथा अभिज्ञान शाकुन्तलम में दर्शाया। रामायण तथा अन्य धार्मिक ग्रंथों, उपनिषदों में वन, नदी, जीव–जन्तु, पशु–पक्षियों की बहुत प्रशंसा की गयी। ये कृतियाँ जितनी तत्कालीन समाज में लोकप्रिय रही होंगी, ठीक कहीं उससे भी अधिक आज की व्यवस्था के अनुरूप और न्यायसंगत हैं।

पर्यावरण संरक्षण तथा शास्त्र–रामायण, महाभारत, गीता, वायुपुराण, स्कन्दपुराण, भविष्यपुराण, वराहपुराण, ब्रहमपुराण, मार्कण्डेय पुराण, मत्स्य पुराण, गरूण पुराण, श्री विष्णु पुराण, भागवत पुराण, श्रीदेवी भागवत पुराण, वेद, उपनिषद तथा कुरान, बाईबिल, श्री गुरूग्रंथ साहिब तथा अन्य धार्मिक ग्रंथ सभी पेड़–पौधे, जीव–जन्तुओं पर दया करने की सीख देते हैं। मानसिक शान्ति, शारीरिक सुख, इन सबकी पूर्ति के साधन प्राकृतिक सम्पदा ही है। गेहूँ, जौ, तिल, चना, चन्दन, लाल पुष्प, केसर, खस, कमल, ताम्बूल, श्वेतपुष्प, बाँस, मिट्टी, फल, तुलसी, हल्दी, पीत–पुष्प, शहद इलायची, सौंफ, उड़द, काले–पुष्प, सरसों के फूल, मूलेठी देवदारू, बिल्व वृक्ष की छाल, आम, पलाश, खैर, पीपल, गूलर, दूब, कुश आदि। उपरोक्त सभी को संरक्षित रखने के उद्देश्य से इन्हें किसी दिन, त्योहार, देवी–देवताओं की पूजा अर्चना से जोड़ा गया है।

औषधि के रूप में फलों तथा जड़ी–बूटियों की रक्षा करने की बात कही गयी है और इन्हें घरों के निकटस्थ लगाकर पर्यावरण को स्वच्छ रखने की सलाह दी गयी है। जैसे अंगूर, केला, अनार, सेव, जामुन, प्याज, लहसुन, गाजर, मूली, नीबू, अदरक, आँवला, तुलसी, दालचीनी, धनिया, पुदीना, संतरा, पीपल, बबूल, ब्रहमीबूटी, कालीमिर्च, लौंग, हरड़, बहेरा आदि अनेक बूटियों का प्रयोग करने से मनुष्य निरोग रह सकता है। प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति में शुद्ध वायु, पानी, मिट्टी इन चीजों को मुख्य आधार मानकर चिकित्सा की जाती है और असाध्य रोगों का इलाज इनसे कर दिया गया है। ज्ञान तथा नैतिक शिक्षा पर आधारित पंचतंत्र की कथाए, जातक कथाए अनेक ग्रंथ जीव–जन्तुओं की उपमा से भरे पड़े हैं। इनमें से कई देवी–देवताओं के वाहन के रूप में प्रस्तुत किया गया है। माँ दुर्गा का वाहन शेर, श्री शिव का वाहन बैल, श्री इंद्र का वाहन एरावत हाथी, श्री गणेश का वाहन चूहा, सर्प, हंस, हनुमान जी आदि ऐसे ही प्रतीक हैं।

तुलसी का पौधा स्वयं विष्णुप्रिया के रूप में पूज्यनीय है। सन्तान प्राप्ति के लिए बरगद की पूजा की जाती है। चन्दन की लकड़ी अपनी शीतलता के लिए अतुलनीय है। हवन यज्ञ में आम, चन्दन, पीपल, देवदार, बेल, नीबू, धतूरा इनके फल टहनियों, छाल से आहुति दी जाती है। भगवान श्री राम ने दण्डक वन, श्रीकृष्ण ने वृन्दावन का निर्माण कराया। भगवान शंकर की पूजा अर्चना के लिए बेल–पत्तियों की परम आवश्यकता होती है। मत्स्य पुराण के अनुसार दस कुँओं के बराबर एक बावड़ी, दस बावड़ियों के बराबर एक तालाब, दस तालाबों के बराबर एक पुत्र, दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष होता है। शास्त्रों में यह भी बतलाया गया है कि सौ पुत्रों से उतना सुख नहीं मिलता है, जितना एक वृक्ष लगाने से होता है। सुभासितावली में कहा गया है लंबे फलों ने मृगों को, पुष्पों ने भ्रमरों को, फलों ने पक्षियों को, छाया ने गर्मी से पीड़ितों को, सुगन्ध ने वायु को सदा आनन्दित किया है। आचार्य चाणक्य ने भी साम्राज्य की स्वच्छता का आधार पर्यावरण को मानते थे और पशुओं से सीख लेने का आग्रह भी किये हैं। सिंह से एक, बगुले से एक, मुर्गे से चार, कुत्ते से छः, गदहे से तीन गुण अवश्य ग्रहण करने चाहिए।

हमारी संस्कृति अद्धितीय, समृद्धशाली और सुगठित है। पर्यावरण संरक्षण में नियम बद्ध और वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी का सूत्र प्रदान करती है। पर्यावरण एक व्यापक शब्द है यह उस संपूर्ण शक्तियों परिस्थितियों एवं वस्तुओं का योग है, जो मानव को परावृत करती है तथा उसके क्रियाकलापों को अनुशासित करती है। मानव संपूर्ण जीव–जगत का केंद्र बिन्दु है। आनुवांशिकता उसकी अंतर्निहित क्षमताओं को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक स्थानांतरित करती है। जबकि पर्यावरण इन क्षमताओं को भू–स्तर पर लाता हैं इस प्रकार मानव तथा अन्य जीव पृथ्वी तथा पर्यावरण के अविभाज्य अंग हैं और पृथ्वी को एक अविभाज्य पूर्ण इकाई का स्वरूप प्रदान करते हैं। पर्यावरणीय समस्याएँ–हम प्रकृति के प्रति अमानवीय व्यवहार करते हैं। पर्यावरण के प्रति उदासीन और संवेदन शून्य हो चुके हैं। हमको शुद्ध जल, सांस लेने के लिए शुद्ध हवा नहीं मिल पा रहा है। उद्योग धुँआ और जहरीले रसायन उगल रहे हैं और प्राणवायु को प्रदूषित कर रहे हैं। शहरों की ओर

पलायन के कारण शहरों पर बोझ बढ़ रहा है। हरियाली गायब हो चुकी है। धरती का तापमान निरंतर बढ़ रहा है, जिससे अनेक जीवों की प्रजातियाँ लुप्त हो रहीं हैं। वन्य प्राणियों के प्रति प्रेम तथा आदर की भावना के बाद भी आज अनेक प्रजातियाँ विलुप्त होती जा रही हैं।

ऊर्जा की अंधाधुंध खपत व वनों की बेशुमार कटाई, अनायास बढ़ती हुई जनसंख्या, तेजी से फैलते हुए प्रदूषण और उसके बीच संसाधनों का निर्मम शोषण तथा फसलों की लालच ने पृथ्वी की गर्भ को चीरकर रासायनिक खाद से भरने को मजबूर कर दिया।

सुझाव/निष्कर्ष–पर्यावरण की रक्षा के लिए मृदा, जलवायु और प्रदूषण की रोकथाम अनिवार्य है। हमें प्रकृति से जुड़ना होगा। अथर्ववेद में पृथ्वी सूक्त में वैदिक राष्ट्रवाद को पूर्ण अभिव्यक्ति मिली है। इसमें कहा गया है कि जिस देश में जो लोग रहते हैं, उनके लिए वह देश मातृभूमि के तुल्य वंदनीय है। वर्तमान पर्यावरण संकट की चेतावनियों को देखते हुए भारतीय संस्कृति के पर्यावरण संरक्षण संबंधी वैदिक चिंतन को पुन: जीवित करना होगा।

प्रकृति ने मनुष्य को अनूठी प्रतिभा, क्षमता, सृजनशीलता, तर्कशक्ति देकर विवेकशील, चिंतनशीत और बुद्धिमान प्राणी बनाया है। अत: मनुष्य का दायित्व है कि वह प्राकृतिक संसाधनों में संतुलित चक्र को बनाए रखते हुए स्वस्थ वातावरण का निर्माण करें। आज जरूरत है इस बात की है कि मानव अपनी शक्ति को देशहित में सुदृढ़ बनाए और नैतिक मूल्यों को समझें तथा नैतिक अनुशासन से नियमबद्ध हो तभी उसकी भौतिकवादी प्रवृत्ति पर अंकुश लग सकता है।

यजुर्वेद में कहा गया है–

सुमित्रिया न आप औषधय: संतु दुर्भित्रियास्तस्मै।
संतु योस्मान द्दष्टि यं च वयं द्विष्म:।।

अत: जब पर्यावरण के प्रति मानव में मित्रता का भाव रहेगा तभी वह पर्यावरण सुरक्षित रख सकेगा। मानव को चाहिए कि वह अपने आसपास की प्राकृतिक संपदाओं को मित्र समझकर उसका उपयोग करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. महाकवि कालिदास की शकुन्तला और पर्यावरण (आलेख) उर्मिला श्रीवास्तव, ग्रन्थ, 'पर्यावरण–प्रभुत्वम् संस्कृत–साहित्य एवं पर्यावरण, पृ.क्र. 335.
2. अथर्ववेद में पर्यावरण की अवधारणा (आलेख) छाया ठाकुर, ग्रन्थ, 'पर्यावरण–प्रभुत्वम: संस्कृत साहित्य एवं पर्यावरण', पृ 44.
3. वैदिक साहित्य में पर्यावरण चिन्तन (आलेख), 'पर्यावरण प्रभुत्वम्', डॉ. श्याम सनेही लाल शर्मा, पृ.137
4. पौराणिक साहित्य में पर्यावरण चिंतन (आलेख) श्रीकृष्ण शर्मा, पृ.276.
5. https://www.geographyandyou.com/bhugolauraap/impact-of-climate-change-on-human-health/
6. https://hindi.indiawaterportal.org/node/48414
5. https://punjabkesari.com/editorial/vedic-thought-will-save-the-environment-from-crisis/

****

मुरार विकासखण्ड के नगरीय एवं ग्रामीण बालक एवं बालिकाओं के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन

कंचन दुबे * डॉ. अंजू गुप्ता ** डॉ. मंजू दुबे ***

प्रस्तावना – 'भारत जैसे विकासशील देश में कुपोषण तथा अपर्याप्त पोषण का प्रतिशत विकसित देशों की अपेक्षा अधिक है।'[1] 'अच्छे पोषण के अभाव में स्वस्थ रहना संभव नहीं है, इसलिए स्वास्थ्य तथा पोषण के बीच गहरा सम्बन्ध है। यद्यपि स्वास्थ्य एवं पोषण समानार्थक नहीं हैं।'[2] स्वस्थ ही सफलता की कुंजी है। 'उत्तम रीति से जीवन व्यतीत करने के लिए स्वस्थ रहना आवश्यक है।' जब तक कोई व्यक्ति पूर्ण रूप से स्वस्थ नहीं होता, वह अपने जीवन का सम्पूर्ण उपयोग नहीं कर सकता है। अत: स्वस्थ्य रहना व्यक्तिगत हित के साथ–साथ समुदाय के हित में भी जरूरी है।'[3] उत्तम स्वास्थ्य का होना उत्तम पोषण पर ही निर्भर करता है। किसी स्थान विशेष की शिशु जनसंख्या का पोषण स्तर ज्ञात कर उसमें पोषण जनित हीनता ज्ञात की जा सकती है, जिसे दूर करने के लिए व्यक्तिगत, सामूहिक व शासकीय स्तर पर प्रयास किये जा सकते हैं। देश के प्रत्येक प्रांत, संभाग, जिले की शिशु जनसंख्या के पोषण स्तर का मूल्यांकन करना आज की आवश्यकता बन चुका है। शोधार्थी ने बूंद बूंद घट भरे की कहावत से प्रेरित होकर देश की एक बूंद के समान मुरार विकासखण्ड की शिशु जनसंख्या के पोषण स्तर का अध्ययन करने का निर्णय लेते हुए अपने शोध का विषय – 'मुरार विकासखण्ड के नगरीय एवं ग्रामीण बालक एवं बालिकाओं में पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन' चुना है।

उद्देश्य –

1. मुरार विकासखण्ड की शिशु जनसंख्या के पोषण स्तर का अध्ययन करना।
2. मुरार विकासखण्ड के नगरीय एवं ग्रामीण शिशु जनसंख्या के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. मुरार विकासखण्ड के बालक एवं बालिकाओं के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – मुरार विकासखण्ड की शिशु जनसंख्या के पोषण स्तर का अध्ययन करने के लिए एक से छ: वर्ष की 50 नगरीय एवं 50 ग्रामीण कुल 100 शिशु जनंसख्या का दैव निदर्शन विधि से चयन किया गया है। प्राथमिक तथ्यों के संकलन के लिये साक्षात्कार, अनुसूची निर्मित की गई है तथा पोषण स्तर ज्ञात करने के लिए प्रो. मंगला कानगो के लक्षण परीक्षण चार्ट का उपयोग करते हुए लक्षण परीक्षण किया है। संकलित प्राथमिक तथ्यों का वर्गीकरण कर तार्किक व्याख्या की गई है। तत्पश्चात् प्राप्त वैज्ञानिक निष्कर्ष प्रस्तुत किये गये हैं।

वर्गीकरण एवं विश्लेषण – शोधार्थी द्वारा संकलित प्राथमिक तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण अग्रानुसार प्रस्तुत है–

तालिका क्रमांक – 1

मुरार विकासखण्ड की शिशु जनसंख्या का पोषण स्तर

पोषण स्तर	संख्या	प्रतिशत
उच्च	59	59.0
मध्यम	31	31.0
निम्न	10	10.0
योग	100	100

शोधार्थी द्वारा संकलित(2018)

तालिका क्रमांक – 1 में मुरार विकासखण्ड की सर्वेक्षित 100 शिशु जनसंख्या का पोषण स्तर प्रदर्शित किया गया है। तालिका दर्शाती है कि 59(59.0%) शिशु जनसंख्या का पोषण स्तर उच्च, 31(31.0%) शिशु जनसंख्या का पोषण स्तर मध्यम तथा 10(10.0%) शिशु जनसंख्या का पोषण स्तर निम्न पाया गया है। इस प्रकार उच्च पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या 59.0% सर्वाधिक पाई गई है तथा निम्न पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या 10.0% न्यूनतम पाई गई है।

तालिका क्रमांक – 2 **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

तालिका क्रमांक – 2 में मुरार विकासखण्ड की सर्वेक्षित शिशु जनसंख्या का लिंगानुसार पोषण स्तर प्रदर्शित किया गया है। तालिका दर्शाती है कि सर्वेक्षित शिशु जनसंख्या में 46 बालक तथा 54 बालिकाए पाई गई हैं अर्थात् बालिकाओं की संख्या बालकों की तुलना में अधिक है। बालकों के पोषण स्तर का अध्ययन करने पर 28(60.86%) बालकों का पोषण स्तर उच्च, 14(30.43%) का मध्यम तथा 04(8.69%) का निम्न है। उच्च पोषण स्तर के बालकों का प्रतिशत (60.86%) सर्वाधिक तथा निम्न पाषेण स्तर के बालकों का प्रतिशत 8.69% न्यूनतम है। 31(57.40%) बालिकाओं का पोषण स्तर उच्च, 17(31.48%) का मध्यम तथा 06(11.11%) का निम्न पाया गया है। उच्च पोषण स्तर की बालिकाओं का प्रतिशत 57.40% सर्वाधिक तथा निम्न पोषण स्तर की बालिकाओं का प्रतिशत 11.11% न्यूनतम पाया गया है। बालक तथा बालिकाओं दोनों में ही उच्च पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या सर्वाधिक पाई गई है तथा न्यूनतम शिशु जनसंख्या निम्न पोषण स्तर की पाई गई है।

तालिका क्रमांक – 3 **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

तालिका क्रमांक – 3 में मुरार विकासखण्ड की सर्वेक्षित शिशु जनसंख्या का आवास के अनुसार पोषण स्तर प्रदर्शित किया गया है। तालिका दर्शाती

* शोधार्थी (भूगोल) शासकीय क.रा.क. महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (भूगोल) एवं प्रभारी प्राचार्य, शासकीय वृंदासहाय महाविद्यालय, डबरा (म.प्र.) भारत
*** संकायाध्यक्ष (गृहविज्ञान) एवं प्रभारी प्राचार्य, शासकीय क. रा. क. महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

है कि सर्वेक्षित 100 शिशु जनसंख्या में 50 नगरीय तथा 50 ग्रामीण शिशु जनसंख्या है। नगरीय शिशु जनसंख्या में 24(48.0%) शिशु जनसंख्या का पोषण स्तर उच्च, 21(42.0%) का मध्यम तथा 05(10.0%) का निम्न है। उच्च पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या सर्वाधिक (48.0%) है तथा निम्न पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या (10.0%) न्यूनतम पाई गई है। ग्रामीण शिशु जनसंख्या में 35(70.0%) शिशु जनसंख्या उच्च पोषण स्तर की, 10(20.0%) मध्यम पोषण स्तर की तथा 5(10.0%) निम्न पोषण स्तर की पाई गई है। यहाँ भी उच्च पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या सर्वाधिक 70.0% पाई गई है तथा निम्न पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या न्यूनतम 10.0% पाई गई है।

नगरीय एवं ग्रामीण दोनों क्षेत्रों की शिशु जनसंख्या का तुलनात्मक अध्ययन करने पर दोनों में उच्च पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या सर्वाधिक तथा निम्न पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या न्यूनतम एवं एक समान पाई गई है। उच्च पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या नगरीय क्षेत्र की तुलना में ग्रामीण क्षेत्र में अधिक पाई गई है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष निम्नानुसार है–

1. मुरार विकासखण्ड की 59.0% शिशु जनसंख्या का पोषण स्तर उच्च, 31.0% का मध्यम तथा 10.0% का निम्न पाया गया है।
2. बालक एवं बालिकाओं दोनों ही श्रेणियों में उच्च पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या सर्वाधिक तथा निम्न पोषण स्तर की न्यूनतम पाई गई है। उच्च पोषण स्तर के बालक एवं बालिकाओं की तुलना करने पर 3.46% बालक बालिकाओं की तुलना में कम पाए गए हैं। मध्यम एवं निम्न पोषण स्तर की तुलना करने पर क्रमशः 1.05% तथा 2.42% बालिकाएं बालकों की तुलना में अधिक पाई गई हैं।
3. नगरीय एवं ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों में उच्च पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या सर्वाधिक पाई गई है तथा निम्न पोषण स्तर की शिशु जनसंख्या न्यूनतम पाई गई है। नगरीय एवं ग्रामीण शिशु जनसंख्या के पोषण स्तर का तुलनात्मक विश्लेषण करने पर उच्च पोषण स्तर की ग्रामीण शिशु जनसंख्या, नगरीय शिशु जनसंख्या की तुलना में 22% अधिक पाई गई है। मध्यम पोषण स्तर की तुलना करने पर नगरीय शिशु जनसंख्या ग्रामीण शिशु जनसंख्या की तुलना में 22.0% अधिक पाई गई है, जबकि निम्न पोषण स्तर के अंतर्गत दोनों ही क्षेत्रों की शिशु जनसंख्या का प्रतिशत एक समान 10.0% पाया गया है। अतः प्रतिशत अंतर शून्य पाया गया है।

सीमायें – प्रस्तुत शोध कार्य की निम्नलिखित सीमाए हैं–

1. शोध कार्य पोषण स्तर ज्ञात करने तक सीमित है।
2. निदर्शन का समग्र एक से छः वर्ष की शिशु जनसंख्या तक सीमित है।
3. निदर्शन का क्षेत्र मुरार विकासखण्ड के नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों तक सीमित है।
4. निदर्शन का आकार 100 शिशु जनंसख्या तथा प्रकार दैव निदर्शन तक सीमित है।
5. यंत्रों का उपयोग साक्षात्कार, अनुसूची, निरीक्षण तथा लक्षण परीक्षण तक सीमित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कानगो, एम. (2008), 'आहार एवं पोषण', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ क्र. 181
2. स्नेहलता (2006), 'पोषण स्तर', डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली – 110002, पृष्ठ क्र. 07
3. पल्टा, अरूणा (2004), 'आहार एवं पोषण', शिवा प्रकाशन, इन्दौर, पृष्ठ क्र.15
4. खनूजा, रीना (2014), 'आहार एवं पोषण विज्ञान', अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
5. कुमारी मिथलेश (2012), 'उच्चतर पोषण' यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नयी दिल्ली, पृष्ठ क्र. 47

तालिका क्रमांक – 2

मुरार विकासखण्ड की शिशु जनसंख्या का लिंगानुसार पोषण स्तर

लिंग →	बालक		बालिकाएं		प्रतिशत अंतर
पोषण स्तर	सं.	प्र.	सं.	प्र.	
उच्च	28	60.86	31	57.40	3.46
मध्यम	14	30.43	17	31.48	1.05
निम्न	04	08.69	06	11.11	2.42
योग	46	100.00	54	100.0	6.93

शोधार्थी द्वारा संकलित (2018)

तालिका क्रमांक – 3

मुरार विकासखण्ड की शिशु जनसंख्या का आवास के अनुसार पोषण स्तर (2018)

आवास →	नगरीय		ग्रामीण		प्रतिशत अंतर
पोषण स्तर	सं.	प्र.	सं.	प्र.	
उच्च	24	48.0	35	70.0	22
मध्यम	21	42.0	10	20.0	22
निम्न	05	10.0	05	10.0	00
योग	50	100.0	50	100.0	44

शोधार्थी द्वारा संकलित (2018)

****

मूल्य केन्द्रित प्रतिनिधि कहानियों की विकास यात्रा

दिनेश कुमार अहिरवार *

प्रस्तावना – बीसवीं शताब्दी के आरंभ में हिन्दी गद्य में जो विभिन्न विधाएं अस्तित्व में आईं उनमें कहानी भी एक विधा है, किन्तु किसी भी बोली या भाषा में पहले कहानी कब जन्मी होगी इसका उत्तर योजना भाषा और साहित्य के इतिहास बोध से अधिक अनुमान का विषय है। प्राय: मान्यता यह है कि सृष्टि मनुष्य ने जब भी बोलना सीखा होगी तभी से उसने कहानी कहना और सुनना सीखा होगा। आपबीती या अपनी अनुभूति और सुख–दु:ख को दूसरों को सुनाने और परबीती सुनने की स्वाभाविक लालसा, उत्कंठा से कहानी का जन्म हुआ होगा।[1] हिन्दी के वरिष्ठ कथाकार राजेन्द्र यादव के अनुसार– कहानी का विकास किसी एक देश में सम्पूर्णत: हुआ भी नहीं है। वह अनेक देशों में, एक साथ, या अलग–अलग युगों में सामान्तर ही हुआ है।[2] कथा रस के कारण वह सबसे प्राचीन अर्थात् आदि विधा मानी जाती है।

कहानी में कहने की विशेषता बराबर महत्वपूर्ण रही है। लोक और शिष्ट दोनों रूपों में उसका संबंध वाचिक परम्परा से अधिक रहा।[3] यह रोचक बात है कि हमारी भाषा के मुहावरे में कविता लिखी जाती है और कहानी कही जाती है।

कहानी गद्यात्मक विधा है और हिन्दी में गद्य साहित्य का श्रीगणेश भारतेन्द्रु युग (सन् 1868 ई.) से माना जाता है। इसे हिन्दी कहानी का प्रयोग काल कहा जा सकता है क्योंकि भारतेन्द्रु कृत 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' राधाचरण गोस्वामी की 'यमलोक की यात्रा' जैसी रचनाओं में निबंध में कथा और कथा में निबंध के लक्षण देखने को मिलते हैं। हिन्दी कहानी का विधिवत् आरंभ बीसवीं शताब्दी के प्रथम वर्ष से माना जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इस अवधि (सन् 1893 से 1918ई.) को हिन्दी गद्य साहित्य के प्रसार का द्वितीय उत्थान कहा है। इस अवधि से वैसी कहानियां प्रकाश में आने लगीं। जिस प्रकार पश्चिमी जगत में लिखी जा रही थीं। कहानी का प्रथम चरण (सन् 1900 से 1920 ई.) इस दशक में रूपान्तरित, अनुदित और मौलिक कहानियां सरस्वती, सुदर्शन और गृहलक्ष्मी आदि पत्रिकाओं में प्रकाषित हो रहीं थीं। प्रथम चरण की कहानियों में तीन प्रवृत्तियां दिखाई देती है, पहली, कल्पना और भावुकता से परिपूर्ण व्यक्ति के अंतर्मन को खोलने, उसके द्वन्द्व को व्यक्त करने और नकारात्मक हृदय परिवर्तन की कहानियां।

कहानी का द्वितीय चरण (1920 से 1940ई.) इस अवधि में प्रसाद और प्रेमचंद कहानी में यदो प्रमुख प्रवृत्तियों' के शीर्ष नायक बन चुके थे।

कहानी का तीसरा चरण (1940 से 1960ई.) आर्थिक आधार और नैतिक मूल्यों के बगैर राजनीतिक स्वतंत्रता विस्तार है। कहानी का यह चरण इस पृष्ठभूमि और तत्कालीन सार्वभौम सच्चाइयों के बीच ही उगा था। इस अवधि में कहानी और नई कहानियां नाम से कहानी केन्द्रित अनेक पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित हुई। नयी कहानी को व्यक्ति के माध्यम से परिवेश और परिवेश के जरिए व्यक्ति को तलाषने या दोनों को सापेक्षता में तलाशने का रचनात्मक प्रयास कहा गया।

सन् 70 पहुँचते–पहुँचते हिन्दी कहानी ने साहित्य के अन्य रूपों की तुलना में केन्द्रीय स्थान बना लिया। आठवें दशक के कहानीकारों ने अनुभव किया कि जीवन के, परिवेश से अपनी निजता जोड़े रहना सरल नहीं है। इसलिए नयी पीढ़ी के कथाकारों ने परम्परा के नये बोध को समझा, और अपनी रचनात्मक जरूरतों के अनुकूल ढाल कर ग्रहण किया। उसमें नये मानव मूल्य–संघर्षो की नयी तड़प और सूझ पैदा की।

आठवें दशक की कहानियों में ढांचा पश्चिमी कहानियों की अनुकृति और प्रतिकृति नहीं है। कहानी का एक भारतीय खांचा उभर कर सामने आया है, जिसमें तीनों काल एक साथ प्रवाहित होते रहते हैं। नयी कहानी के आगे के समसामयिक कहानीकार जीवन के नये संदर्भो–संबंधों के बदलाव को वर्णनात्मकता के झाड़ से बटोर कर नहीं दिखलाता, बल्कि संबंधों को प्रतीकों, बिम्बों में सतर्कता से परिभाषित करता है।

हिन्दी कहानी में मानव मूल्यों का रक्षण करते हुए जीवन जीने की विषयवस्तु पर अनेक कहानियां लिखी गई हैं किन्तु बीसवीं सदी के अंतिम दशक के मूल्यों पर केन्द्रित कथ्य के अनेक कोणों से प्रकाशित किया गया है तथा संघर्ष के मध्य जीने की चेतना को बनाए रखा है।

इस दृष्टि से कथाकार–मिथिलेश्वर, संजीव, धीरेन्द्र अस्थाना, अब्दुल बिस्मिल्लाह, विवेकानन्द, बलराम, योगेश, स्वयंप्रकाश, शिवमूर्ति, नवीन मिश्र, रामधारी सिंह दिवाकर, मंजूर एहतेशाम, प्रियंवद, अखिलेश, सृंजय, पुन्नीसिंह, पंकज विष्ट, स्वदेश दीपक, वीरेन्द्र सक्सेना, अमर गोस्वामी, ओमप्रकाश बाल्मीकि एवं गोविन्द मिश्र की मूल्य केन्द्रित कहानियों की पड़ताल प्रस्तुत शोध में की गई है।

नयी पीढ़ी के इन समकालीन कहानीकारों की कहानियों में यह तथ्य उभरकर सामने स्पष्ट हुआ है कि प्रस्तुत कहानियां किसी आन्दोलन विशेष से जुड़ी हुई नहीं हैं। वैसी भी 1979 के 'सक्रिय कहानी' आन्दोलन के बाद हिन्दी कहानी में न कोई आन्दोलन प्रस्तावित हुआ और न चला।[4] इसका आशय था कि विचारधाराओं की अप्रासंगिकता, सामूहिक सरोकारों के प्रति उदासीनता और समाज या समूह के स्थान पर व्यक्ति की प्रतिष्ठा करना। इन कथाकारों में कुछ ऐसे भी हैं जिनका रूझान बामपंथी विचारों की तरफ है। कहानीकार सृंजन ने अपनी कहानी 'कामरेड काकोर्ट' में सामंतवादी शोषण का विरोध किया है लेकिन इसमें पार्टी या संगठन की किसी तरह की आलोचना नहीं की है। ये कथाकार गांव या शहरों के हैं, इसलिए इनकी कहानियां ग्रामीण पृष्ठभूमि पर आधारित हैं। वे अपनी कहानियों में ग्रामीण

* शोधार्थी, महाराजा छत्रसल बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

जीवन की समस्याओं को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करते हैं।

कहानीकार मिथिलेश्वर, बलराम, शिवमूर्ति आदि इसी श्रेणी में आते हैं। उन्होंने अपनी कहानियों में ग्रामीण जीवन की ज्वलंत समस्याओं को यथार्थ रूप में चित्रित किया है। इनकी बाहरी सहानुभूति गांव के सामान्य शेषित जन के प्रति है और शोषणकर्ताओं के प्रति विरोध की भावना है।[5] ये समस्त कथाकार मध्यवर्गीय हैं, इसलिए उनकी कहानियां भी मध्यमवर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं। मध्यम वर्ग की सोच, उनकी समस्याए कहानियों के प्रमुख विषय हैं। कथाकार धीरेन्द्र अस्थाना की कहानियां उसी पृष्ठभूमि पर उकेरी गई हैं। मध्यम वर्ग की सबसे विकराल समस्या है, अर्थ व्यवस्था को लेकर। इस वर्ग के लोग अपने जीवन भर आर्थिक संघर्ष से जूझते रहते हैं। इस वर्ग का युवा नौकरी की तलाश में भटकता रहता है। सारे प्रयत्नों के बाद उसे यदि नौकरी मिलती भी है तो ऐसी कि अपना जीवन सुचारू रूप से निर्वाह नहीं कर पाता। इसके दूरगामी परिणाम उसके बच्चों पर पड़ते हैं। मध्यम वर्गीय व्यक्ति प्राय: सुशिक्षित होता है इसलिए वह अपनी आर्थिक दशा के बदलाव के लिए संघर्षरत रहता है।

धीरेन्द्र अस्थाना की वृत्ति पत्रकारिता से जुड़ी है इसलिए उन्होंने अपनी कहानियों में पत्रकार के जीवन की सच्चाई से रूबरू कराया है।

विवाह, प्रेम और काम की समस्या आधुनिक मध्यमवर्ग की समस्या है, क्योंकि वह वर्ग मूल्यों के द्वंद्व से ग्रस्त है। इस समय के प्राय: सभी कहानीकारों ने इन समस्याओं पर अपनी कलम चलाई है।

अकहानी आंदोलन के शिथिल पड़ते-पड़ते कमलेश्वर समाँतर कहानी (1972) का आंदोलन लेकर सामने आ गए। 1977 में जनवादी विचारमंच की स्थापना हुई और जनवादी कहानी की चर्चा होने लगी कमलेश्वर ने मध्यम वर्गीय ग्रामीण जीवन पर कई कहानियां लिखीं जिनमें उनकी चर्चित कहानियों में यजमुनी'-इस कहानी में एक सामान्य भारतीय कृषक परिवार के प्रेम, घृणा, आस्था, विश्वास, आशा-निआशा, हर्ष-विषाद, सम्पत्ति-विपत्ति और उत्थान-पतन का मार्मिक एवं सजीव चित्रण है। जीउत परिवार की रोजी-रोटी का जरिया एक मात्र उसकी जमुनी नाम की भैस हैं, उसके बीमार हो जाने पर वह कृषक परिवार पूरी रात जगाकर उसके स्वस्थ होने के प्रयत्न करता है, जब जमुनी स्वस्थ हो गयी तो-जीउत का घर उल्लास और उत्साह से गहगह कर उठता है। नहीं लगता कि उन्होंने सारी रात जगाकर काटी है। किसी के भी चेहरे पर रतजगे की थकान और आलस नहीं। घर की जाती हुई खुषियां लौट आई हैं।[6]

मिथिलेश्वर की एक अन्य चर्चित कहानी 'चल खुसरो घर आपने' में एक विधवा माँ के दो बेटे-शहर में नौकरी करते हैं लेकिन उन्हें अपनी बूढ़ी माँ का उनके घरों में रहना नागवार लगता है वे किसी प्रकार उन्हें गांव भेजना चाहते हैं। उन वृद्धा की मुनरी नाम की सेविका उनकी खाने-पीने से लेकर दु:ख बीमारी की समस्त जिम्मेदारी सहर्ष अपने सिर ले लेती है। मुनरी ने उनके बेटों को आश्वस्त किया था। माँ ने भी मन तय कर लिया था कि इस बार बेमाँगा-दरमाहा मुनरी को ही देंगी। अपने खर्चे से जो बचेगा सब उसे सौंप देंगीं। अपने सपूतों को बचाकर कुछ न रखेंगी।[7]

अकहानी आन्दोलन के माध्यम से जितेन्द्र भाटिया, दामोदर सदय, सुदीप हेतु भारद्वाज, असगर बजाहत, धीरेन्द्र अस्थाना, उदयप्रकाश आदि अनेक कहानीकार उभर कर सामने आए और इनमें से कुछ वर्तमान कालावधि में कहानी रचना में रत रहे।[8] इन्हीं के साथ कहानी रचना में प्रवृत्त होने वाले गोविन्द मिश्र ने संख्या की दृष्टि से इन कहानीकारों से वे कहानियां नहीं लिखी हैं। उनकी खुद के खिलाफ (1981), खाक इतिहास (1984), पगला बाबा (1987), आसमान कितना नीला (1992), हवावाज (1998) आदि कहानियां अपने समय के मध्यमवर्गीय जीवन का वस्तुपरक चित्रण करती हैं एवं मूल्यों का निर्वहन भी करती है- आज एक बच्चा था..... जैसे उनका अपना... प्रभु ने तो गृहस्थी से दूर रखा, फिर भी उनका। कैसा फूल सा हाथ उठाते ही मन टूटने लगा। जिसने अभी ठीक से आंखें भी नहीं खोलीं, कुछ देख नहीं पाया... कैसा अनाथ सा घूमता रहा होगा, प्रभु उस पर से तुमने अपना संरक्षण उठा लिया.... इतना निष्ठुर हो सकता है तू? बच्चों को कष्ट मत दे विस्वनाथ। हमें दे.... हम हैं अभी।[9]

कहानीकारों की इन पीढ़ियों के बाद कहानीकारों की एक नयी पीढ़ी उभर कर सामने आई जो इसी कालावधि की पीढ़ी है। इनमें स्थापित कहानीकारों में प्रमुख निम्नवत हैं-

मिथिलेश्वर - जिनकी कहानियों के संग्रह- गांव के लोग (1981), विग्रह बाबू (1982), तिरिया जनम (1982), हरिहर काका तथा अन्य कहानियां (1983), माही की महक धरती गांव की (1987), एक के अनेक (1987), एक थे प्रो. वी. लाल (1993), भोर होने से पहले (1999), चल खुसरो घर आपने (2000), जमुनी (2001) आदि।

संजीव - संजीव के कहानी संग्रहों में - तीस साल का सफरनामा (1981), भूमिका तथा अन्य कहानियां (1987), प्रेत मुक्ति (1991), दुनिया की सबसे हसीन औरत (1993), प्रेरणास्त्रोत तथा अन्य कहानियां (1995), ब्लैकहोल (1997), खोज (1999) आदि।

धीरेन्द्र अस्थाना- लोग हासिये पर (1980), आदमीखोर (1997), मुहिम (1984), खुल जा सिमसिम, विचित्र देश की प्रेमकथा (1988) आदि।

अब्दुल बिस्मिल्लाह- कितने-कितने सवाल (1984), रैन बसेरा (1989), अतिथि देवो भव: (1990), रफ-रफ मेल (2000) आदि।

विवेकानंद- शिवलिंगम तथा अन्य कहानियां (1987)।

बलराम - कलम हुए हाथ (1980), मालिक के मित्र (1984), अनचाहे सफर (1988)।

योगेश कुमार- परामर्श (1986), मिथ्या चक्र (1987)।

स्वयं प्रकाश - मात्रा और भार (1974), सूरज कब निकलेगा (1980)।

शिवमूर्ति - केसर-कस्तूरी (1991)।

नवीन मिश्र- मणियां और जख्म (1987), मैंने कुछ नहीं देखा (1992), किया जाता है बाइज्जत बरी (2002)।

रामधारीसिंह दिवाकर- अलग-अलग परिचय (1981), धरातल (1997), माटी पानी (1999)।

मंजूर एहतेशाम- रमजान में एक मौत (1982), तसबीह (1988), तमाशा अन्य कहानियां (2001)।

बटरोही - सड़क का भूगोल (1985), थोकदार किसी को नहीं सुनता (1988), आगे-पीछे (1989), अनाथ मुहल्ले के ठुलदा (1990), हिडिवा के गांव में (2000)।

प्रियंवद - एक अपवित्र पेड़ (1995), खरगोश (1999), फाल्गुन की एक उपकथा (2003)।

अखिलेश- मुक्ति (1989), शापग्रस्त (1997)।

संजय- कामरेड का कोट (1993), गंगा (2001)।

पंकज विष्ट - बच्चे गवाह नहीं हो सकते (1986)।

स्वदेश दीपक - बाल भगवान (1986)।

द्रोणवीर कोहली - बारह बरस बीते (1981), जमापूंजी (2002)।

अमर गोस्वामी - कल का भरोसा (2004)।

ओमप्रकाश वालमीकि – सलाम (2000), घुसपैठिये (2003)।10

इस पीढ़ी के कहानीकारों में अधिकांश गांव से आये हैं, इसलिए उनकी कहानियों की पृष्ठभूमि में ग्रामीण समस्याओं का चित्रण हुआ है। कहानीकार मिथिलेश्वर, बलराम, शिवमूर्ति ने समकालीन ग्रामीण–समाज का यथार्थ रूप ने चित्रण किया है। इनका उद्देश्य ग्रामीण शोषित वर्ग की समस्याओं पर केन्द्रित है। उन्होंने शोषितों के प्रति शोषणकर्त्ताओं के लिए विरोध व्यक्त किया है। चूंकि वे कहानीकार मध्यमवर्ग से आते हैं इसलिए उन्होंने मध्यमवर्गीय सोच को अपनी कहानी में प्राथमिकता दी है। धीरेन्द्र अस्थाना चूंकि पत्रकारिता से जुड़े हुए हैं इसलिए उन्होंने पत्रकारों के संघर्ष उनके जीवन की समस्याएं व्यक्त की हैं। कथाकार प्रियंवद का विचार है कि माँ केवल माँ ही नहीं होती, स्त्री भी होती है, इसी तरह पिता केवल पिता नहीं होता बल्कि पुरुष होता है। उन्होंने अपनी कहानियों में इस तरह की अभिव्यक्ति दी है। कथाकार पुन्नीसिंह जी ने सहरिया आदिवासियों की समस्याओं को उनके प्रति होने वाले अत्याचारों एवं अन्याय के प्रति अपनी कलम चलायी है। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने दलितों के जीवन के यथार्थ को उनके प्रति होने वाले अन्याय को आक्रोश भाव से चित्रित किया है। उनकी कहानी सलाम में जब हरीश से उसके ससुर रांघड़ परिवार में सलाम के लिए जाने को कहते हैं तो वह स्पष्ट रूप से कह देता है कि– 'मुझे न ऐसे कपड़े चाहिए, न बर्तन, मैं अपरिचितों के दरवाजे सलाम पर नहीं जाऊंगा।'[11]

इस अवधि की लेखिकाओं की कहानियों में वस्तुगत विविधता है, यद्यपि उनकी कहानियों की धुरी स्त्री–पुरुष–संबंधों के द्वंद्व और विविध आयाम हैं। लेखकों की तुलना में लेखिकाओं ने अपनी कहानियों में शिल्पगत प्रयोग कम ही किए हैं। इसलिए उनके पास कहने को बहुत कुछ है और उन्हें अपने कथ्य को प्रभावशीलता में आस्था है।

गहराई से देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि पिछले पच्चीस वर्षों में हिन्दी कहानी को बहुत समृद्धि मिली है। इस समयावधि में कहानीकार की चेतना में उसका व्यक्तिगत अनुभव छाया रहा है और वह उसी व्यक्तिगत अनुभव की अभिव्यक्ति देता रहा है। व्यक्तिगत अनुभव की केन्द्रीयता उस पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था की देन है, जिसमें व्यक्ति केन्द्रीय महत्व की चीज बन गया है और समाज हाशिए पर रह गया है। इसीलिए इस काल की कहानियों के पात्र, चाहे वे स्त्री हों या पुरुष, अपनी अस्मिता, स्वायत्तता और विशिष्टता के लिए अत्यधिक बेचैन दिखाई देते हैं– स्त्री पात्र, विशेष रूप से। कई कहानियों में इसके उदाहरण देखने को मिल जाते हैं। इस काल के कहानीकारों के सरोकार भी क्रमशः छोटे होते जा रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी कथा साहित्य, डॉ. सत्येन्द्र शर्मा, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 2065, पृ. 01
2. कहानी – स्वरूप और संवेदना, राजेन्द्र यादव, पृ. 4
3. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2016, पृ. 144
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं. डॉ. नागेन्द्र, डॉ. हरदयाल मयूर बुक्स, नयी दिल्ली, 2018, पृ. 752
5. वही, पृ. 752
6. जमुनी, मिथिलेश्वर, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2010, पृ. 102
7. चल खुसरो घर आपने, मिथिलेश्वर, पृ. 55
8. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पूर्वोक्त, पृ. 749
9. पगला बाबा, गोविन्द मिश्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, 1996, पृ. 264
10. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पूर्वोक्त, पृ. 752
11. सलाम, ओमप्रकाश वाल्मीकि, राधाकृष्ण, नयी दिल्ली, 2016, पृ. 16

****

दलित आत्मकथाओं द्वारा दलितों की सामाजिक स्थिति का अध्ययन

डॉ. आई. के. बेक * मनीष कुमार महरा **

प्रस्तावना – हिन्दी के प्रमुख दलित आत्मकथाकारों ने अपने जीवन की वे सारी घटनाएं प्रस्तुत की है, अपनी आत्मकथाओं में जिनका संबंध भारतीय समाज में वैचारिक विकास के साथ जुड़ा है। यह सत्य है कि मनुष्य अपने जीवन से ही सीखता है। जब तक ठोकर नहीं लगती, राह पर चलना नहीं आता। लेकिन हिन्दी के प्रमुख दलित आत्मकथाकारों को अपनी राह खुद बनाना था और उन पर चलने के लिए संघर्ष भी खुद ही करना था। इन आत्मकथाकारों ने बहुत कष्ट सहे हैं। वैसे भी एक दलित समाज के व्यक्ति को अपने जीवन में सफल होने के लिए बहुत संघर्ष करना पड़ता है।

हिन्दी में आत्मकथा लिखने का सबसे पहला श्रेय स्वामी दयानंद सरस्वती को जाता है। उन्होंने सन् 1875 में 'पूना प्रवचन' के नाम से 200 पृष्ठों में अपने जीवन के आत्मविचार प्रस्तुत किए हैं। बाद में आत्मकथा लिखने की यह धारा निरंतर चल पड़ी और आधुनिक काल में भारतेन्दु युग से लेकर द्विवेदी युग एवं छायावाद से आगे निकलकर वर्तमान में भी निरंतर चल रही है। मोहनदास नैमिशराय को हम हिन्दी दलित आत्मकथा के पहले पथ प्रदर्शक मानते हैं। बाद में ओमप्रकाश वाल्मीकि व सूरजपाल चौहान, माताप्रसाद आदि आत्मकथाकारों की दलित आत्मकथाएं हिन्दी साहित्य में उभर कर आ गई है। आत्मकथाकार आपनी आत्मकथा में भोगे हुए उन दहकते हुए अनुभवों को समाज के सामने रखता है, जिसमें से प्रेरणा एवं परिवर्तन पाकर भारतीय समाज एक आदर्श समाज की अपनी छबी को दुनिया के सामने प्रस्थापित कर सकें।

दलित साहित्य का 'विस्फोट' सबसे पहले मराठी में हुआ है। यह सर्वस्वीकृति है। दलित साहित्य की शुरूवात मराठी में ही होनी थी, इसका कारण यह है कि यहां फूले, शाहु, अंबेडकर की जन्म और कार्यभूमि है। इन महापुरूषों के विचार यहां के शास्त्रों में है। शास्त्रों के आधार पर यहां कुछ ऐसे नियम बताए हैं कि इन नियमों को तोड़ने के बाद पाप होता है। ईश्वर का कोप होता है। ऐसे यहां के लोगों के मन मे बिंबित किया गया था। यहां का दलित, बहिष्कृत समाज इन नियमों को घबराता था। ये सब इस कारण होता था कि लोग अशिक्षित थे। अशिक्षा के कारण उनमें काफी अंधश्रद्धाएं थी। फुले, अंबेडकर ने इस समाज का बारीकी से अभ्यास किया। मानसिकता की जड़ तक पहुंचे और सबसे पहला काम इन महापुरूषों ने समाज को शिक्षित करने का किया। फुले ने पुने में स्त्रियों के लिए पहली पाठशाला शुरू की और सावित्री बाई ने स्त्रियों को जागृति के पाठ पढ़ाए। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने 'पढ़ो, संगठित हो और संघर्ष करोय की त्रिसूत्री के आधार पर जागृति की। इसका परिणाम यह हुआ कि दलित समुदाय पढ़ने लिखने लगता है, तब उन्हे दुनिया समझने लगती है। सवर्ण मानसिकता के हतकंडे समझ में आने लगते हैं। पढ़ लिखने के बाद वे आत्मशोध करने लगते हैं। अब उन्हें अहसास होने लगता है कि हम भी 'मनुष्य' हैं। यहां से इस समाज में सोचने अर्थात् 'चिंतन' की प्रक्रिया शुरू होती है। चिंतन करते समय उनके यह ध्यान में आया कि इस समाज व्यवस्था ने काफी सीमाएं निर्धारित की हैं। इन सीमाओं को तोड़ने का इनका मन करता है, पर इनके सामने प्रश्न 'भूख' अर्थात रोटी का था। दलित समाज के कुछ लोगों में पढ़ने के कारण जागृति आती है और कहीं न कहीं नौकरी में जाने लगते हैं। यह सब कुछ करते समय समाज जागृति का काम भी अपनी–अपनी पद्धति से करने लगते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि महाराष्ट्र में 1960 के दरम्यान 'दलित–पत्थर' की स्थापना होती है। यह संगठन काफी आक्रमक भूमिका लेकर दलितों के लिए काम करने लगता है। इसमें काम करने वाले जितने भी नेता, कार्यकर्ता थे वे अपनी पद्धति से जागृति लाने का प्रयास कर रहे थे। उनमें से कुछ भाषणों के आधार पर जागृति करने लगे थे तो कुछ लेखन के माध्यम से अपनी मन की बात कह रहे थे। यही लेखन दलित साहित्य है। यही से मराठी दलित साहित्य की निर्मिती होती है। गांव के बाहर के नारकीय जींदगी जीने के जो अनुभव है वे अब विधा के चौखट में व्यक्त करने लगते हैं और भारतीय साहित्य में प्रलयकारी अनुभवों का दस्तावेज 'दलित आत्मकथा' के नाम से प्रकाशित होता है। भारतीय साहित्य का यह एक नया अनुभव था। इस साहित्य में काफी चर्चा होने लगती है। अब भारतीय साहित्य यह अपेक्षा कर रहा था कि इसका अनुवाद अलग–अलग भाषाओं में होने चाहिए। इसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दी में दलित आत्मकथाओं के अनुवाद छपने लगे। यह अनुवाद पढ़कर हिन्दी भाषिक प्रदेशों में भी लगने लगा कि हम भी अपने अनुभवों को लिखित स्वरूप में व्यक्त कर सकते हैं। हिन्दी में लगभग 1980 के दरम्यान दलित साहित्य की निर्मिती होती है। उनमें आत्मकथा भी छपने लगती है। आत्मकथा 'तिरस्कृत' में लेखक ने दलित वर्ग के सामने शिक्षा के महत्व को उजागर किया है। नारकीय जीवन से छुटकारा पाने के लिए शिक्षा आवश्यक है। यही एक मात्र रास्ता है। यह हमें खुद सूरजपाल चौहान जी के शिक्षा ग्रहण से पता चलता है। शिक्षा ग्रहण का मसला केवल कानूनी प्रावधानों से हल नहीं किया जा सकता। उसे आजमाना होगा, शिक्षित होना पड़ेगा। संघर्ष से कठिनाइयों को दूर करना होगा। विषमता ग्रस्त समाज में कोई भी स्थिति दलितों के लिए औचित्यपूर्ण नहीं है, उस स्थिति को हमें ही हमारे लिए उचित बनानी पड़ेगी।

मोहनदास नैमिशराय जी की आत्मकथा 'अपने–अपने पिंजरेय में बताते हैं कि जाटव या चमार जाति के लोग मेरठ शहर के आसपास ज्यादा रहते थे। उनमें शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ रही थी। वह संघर्ष कर रहे थे।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बुढार, जिला – शहडोल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (हिन्दी) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बुढार, जिला – शहडोल (म.प्र.) भारत

इस संघर्ष और शिक्षण के कारण उनकी आवाज संसद तथा विधानसभाओं तक पहुंचने लगी। यहां से भी लोग राजनीति में प्रवेश करने लगे थे। जिससे लोग संगठित भी होने लगे। कुछ संगठन भी कार्यरत हुए। लेखक भी स्नातक की उपाधि लेने के बाद कुछ नया करना चाहते थे। आगे बढ़ना चाहते थे। दलित समाज में भी नए शैक्षिक स्तर उभर रहे थे। मेरठ में दो–तीन अखबार भी दलितों के निकल रहे थे। मोहनदास नैमिशराय जी ने सोचा कि वह अपना एक नया हिन्दी साप्ताहिक शुरू करें। जिसका नामाविधान किया गया– 'समता शक्ति' संघर्ष व क्रांति की मसाल किए हुए लेखकों से परिचय बढ़ा। विभिन्न किताबों का पठन शुरू रहा। कुछ किताबें वामपंथ और नक्सलाईट मूवमेंट से भी जुड़ी हुई थी। इन किताबों के हर दूसरे–तीसरे पृष्ठ पर लिखा गया था– ' लाल मसाल परिवर्तन के लिए संघर्ष करो, आगे बढ़ो, क्रान्तिकारी बदलाव के लिए एकता जरूरी है, आदि–आदि नारे होते। जो पाठकों को क्रान्ति के सम्मोहन में बांधते।

कोई भी सफलता सहजता से मिलती नहीं, उसके साथ संघर्ष जुड़ जाता है। दुनिया के प्रत्येक प्रसिद्ध व्यक्ति को संघर्ष की कसौटी पर कसा गया है। दुनिया का आम व्यक्ति और दलित में जमीन आसमान का अंतर है। अभाव, अज्ञान, भूख, अंधश्रद्धा के चलते सफलता हासिल करना साधारण कार्य नहीं। डॉ. तुलसीराम जी का संघर्ष और उनके साथ उनकी जाति तथा अन्य हरिजनों का संघर्ष 'मुर्दहिया' में वर्णित है। एक व्यक्ति, एक जाति और एक समूह का संघर्ष सारे दलितों की संघर्ष गाथा का बखान करता है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि का जीवन संघर्षमय रहा, गरीबी इतनी थी कि मरे हुए जानवरों की खाल भी उतारनी पड़ी। ओमप्रकाश वाल्मीकि जी इस घृणितकार्य को करना नहीं चाहते थे, परन्तु करना पड़ा, जिससे कुछ पैसे प्राप्त हों और घर का खर्च चल सके। इस प्रकार के कार्य बाल्यावस्था में ओमप्रकाश जी को करने पड़े, जो बाल्य जीवन का संघर्ष नहीं तो और क्या है। यह संघर्ष भुखमरी में कुछ पैसे प्राप्त करने के लिए किया गया संघर्ष है। मजबूरीवश ओमप्रकाश वाल्मीकि जी को यह कार्य करना पड़ा।

दलितों का जीवन संघर्ष, उनके बाल्यकाल से ही प्रारम्भ हो जाता है। संघर्ष का स्वरुप तो एक ही होता है, परन्तु उसके प्रकार भिन्न –भिन्न होते है। उदाहरण के तौर पर पेट की आग बुझाने के लिए संघर्ष करना, मकान के लिए संघर्ष करना और अन्ततः शिक्षा प्राप्ती के लिए भी संघर्ष करना। इन सभी संघर्षो में रोटी एवं भूख का संघर्ष इन का सभी में इन का एक महत्वपूर्ण स्थान है। दलित वर्ग के पेट मे, जब तक रोटी नहीं होगी तब तक वस्त्र, घर, शिक्षा का कोई महत्व नही होगा। कैसे दलित वर्ग भूख से लड़ता है, और जीवित रहने के लिए, पेट की आग बुझाने के लिए उसे 'गोबरहा' अन्न भी खाने के लिए मजबूर होना पड़ता है। माता प्रसाद जी इस मार्मिक दृश्य को अपनी आत्मकथा 'झोपड़ी से राजभवन' मे लिपिबद्ध करते है, और बताते है की बचपन में गोबरहा अन्न की रोटी भी खाना पड़ा था। चैली फसल को दो बैलों की जोड़ी से दंवाई कराई जाती।

भारत में समस्याओं का एक विशेष कारण है। वह है वर्ण–व्यवस्था जिसमें कई समाज होते हैं। कोई भी समाज कई तरह की समस्याओं का सामना करता है। किन्तु दलितों के लिए यह समस्या एक विकराल रूप में ही सामने आती है। इन सामाजिक समस्याओं के अंतर्गत आर्थिक, धार्मिक और राजनैतिक सभी प्रकार की समस्याओं का समावेश हो जाता है। वर्ण–व्यवस्था द्वारा बने दलित समाज को आज जिन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, उसकी मुख्य देन यही वर्ण व्यवस्था ही है। इन वर्ण व्यवस्था को समाप्त करना बहुत ही कठिन कार्य है। दलितों की पीड़ा असहनीय है। इन्हें वही व्यक्ति अनुभूत कर सकता है, जिसने इन पीड़ाओं का अनुभव किया हो।

भारतीय समाज व्यवस्था में आजादी के इतने वर्षो के पश्चात आज भी दलित बहिष्कृत, अपमानित और शोषित ही हैं। कानून पाबंदी होने के बावजूद भी देश के अधिकांश राज्यों में छुआछूत की प्रथा जारी है।

मनुष्य समाज के सिवाय जी नहीं सकता। लेकिन समाज के बने–बनाए नियम, कानून उसका जीना हराम करते हैं। तब सामाजिक ढांचे के अंतिम श्रेणी में जीने वाला कोई व्यक्ति इसी 'तिरस्कृत' जिन्दगी में जिया हुआ सच लिखने लगता है और 'तिरस्कृत' नामक आत्मकथा के लेखक श्री सूरजपाल चौहान के जिन्दगी का जन्म होता है। 'तिरस्कृत' के लेखक श्री सूरजपाल चौहान के जिन्दगी का कड़वा सच इस में चित्रित हुआ है।

हिन्दू धर्म में दलित के लिए शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा नहीं है। सुविधा की बात दूर उन्हें शिक्षा प्राप्त करने की पाबंदी है। यह भी एक सामाजिक सच्चाई है कि 'आज भी कुछ भारतीय गावों में 'बेगार' प्रथा कायम है और उसमें भंगी और चमारों को काम करना पड़ता है। गांव के सभी भंगी और चमार सवर्णो की बेगारी करते हैं। लिपाई–पुताई से लेकर खेती की जुताई–बुवाई, जानवरों का चारा तैयार करने से लेकर कटाई–मड़ाई करना।' आजादी के कुछ वर्षो बाद तो यह दलितों की सवर्णी के प्रति देखने की ओर व्यवहार की दृष्टि हेय थी। दलित समाज का कोई व्यक्ति तरक्की करने आगे बढ़ता है तो उन्हे पसंद नहीं आता।'

भारतीय सामाजिक कुरीतियों में जकड़ा हुआ दलित घुटन भरा जीवन व्यतीत कर रहा है। वर्ण आधारित व्यवस्था के कारण दलितों को नारकीय जीवन जीना पड़ा है। इस बात की पीड़ा से व्यथित होकर भगवानदास जी लिखते हैं– 'श्मशान को मेरा घर बनाया गया। मुर्दो के कफन, फटे चिथड़े, काले रंग का लिबाज मेरी वेशभूषा, कौओं और मुर्गो के पंख मेंरा मुकुट, मिट्टी और लोहे के बरतन मेरी संपत्ति, जूठा बचा खाना और मरे हुए जानवरों का सड़ा मांस मेरी खुराक सुअरों और गंधों की संगत मेरे लिए। जूठन और उतरन मेरा इनाम बनाया गया।'

दलित हमेशा पेट के पीछे ही दौड़ता रहा है। उन्हें न कपड़ा मिला, न भर पेट रोटी मिली और न ही पैरों में डालने के लिए चप्पल। कितनी सोचने लायक बात है कि बस्ती में चमारों के सभी घरों में चप्पलें बनती थीं पर पहनने के लिए किसी को भी नसीब न होती थी। पूंजीवादी शोषण ने मेहनतकश लोगों का जीवन इस तरह अभावग्रस्त बना दिया है– 'बस्ती में घर–घर चप्पलें बनती थी लेकिन मेरे पांव में बरसों तक ढंग की कोई चप्पल नहीं आई।'

दलित पीड़ा और दु:ख से हमेशा धीरे रहे है। उसी प्रकार फंसे हुए थे। जिस प्रकार कोई दलदल से निकलने की कोशिश करता हो और अधिक से अधिक फंसता जाता हो। कोई भी मौसम हो दलितों की हालत अच्छी नहीं हो पाती थी। आर्थिक संकट से जूझते हुए गर्मी और बरसात के दिनों का विवरण करते हुए नैमिशराय जी लिखते हैं– 'गर्मी और बरसात के मौसम में चिप–चिप दिन और उमसभरी राते दोनों ही हमारे दुविधा और संकट के होते थे। हमारे लिए दिन और रात एक बराबर थे। हालांकि दिन सफेद होते थे हमारे लिए और रात काली। हमारे लिए रंगों का कोई मूल्य न था। हमारे तो अपने रंग अलग थे। जिनके संग जीने–मरने का नाता था। वे रंग थे गरीबी और अभाव के। वे रंग थे बीमारी और काम न मिलने की तकलीफ के।'

भारतीय समाज की समाजिक सच्चाई इतनी भयानक है कि आज भी मनुष्य के लिए जो बुनियादी जरूरतें है, वह मिलती नहीं है। यहां जानवरों के

लिए भर पेट मिलेगा, लेकिन जाति के कारण बहिष्कृत लोगों के नसीब में रोटी नहीं मिलेगी, यह पूर्ण सत्य अपने जीवन में भोगने वालों में ओमप्रकाश वाल्मीकि एक हैं। वे अपने भोगे हुए यथार्थ को अपनी आत्मकथा में लिखते हैं कि– 'शादी ब्याह के मौकों पर जब मेहमान या बराती खाना खा चुकने पर जूठी पत्तलें उन टोकरों में डाल दी जाती थी, जिन्हें घर ले जाकर वे जूठन इकट्ठी कर लेते थे। पूरी के बचे टुकड़े या थोड़ी बहुत सब्जी पत्तल पर पाकर बाछे खिल जाती है। जूठन चटखारे लेकर खाई जाती थी। जिस बारात के पत्तलों से जूठन कम उतरती थी तो कहा जाता था कि भुक्खड़ (भूखे) लोग आ गए। बारात में जिन्हें खाने के लिए कुछ नहीं मिला। सारा चाटकर गए। पत्तलों से जो पूरियों के टुकड़े एकत्र होते थे,धूप में सुखा लिया जाता था, चारपाई पर कोई कपड़ा डालकर उन्हे फैला लिया जाता था। अक्सर मुझे पहरे पर बैठाया जाता था क्योंकि सूखने वाली पूड़ियां बरसात के कठिन दिनों में बहुत काम आती थीं।'

वास्तव में दलित वर्ग की आर्थिक स्थिति इतनी ज्यादा खराब होती है कि दलित बच्चों को शैक्षणिक अवकाश के समय मजदूरी तक करनी पड़ती है। जिससे कि वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें या अपने परिवार का सहयोग कर सके। इस विषय में माता प्रसाद जी बताते हैं– 'एक बार गर्मी की छुट्टी में राजगीर के साथ आठ दिन रहकर मुहल्ला चौक के एक मकान में गिट्टी की पिटाई करनी पड़ी थी। उसमें मुझे एक रूपया मजदूरी मिलने पर बड़ी प्रसन्नता हुई थी।'

दलित वर्ग की दयनीय आर्थिक स्थिति, सवर्णों की शोषण संबंधी मानसिकता एवं दलित वर्ग का भोगा हुआ जीवन ही दलित जीवन का यथार्थ है। यह यथार्थ ही दलित आत्मकथा लेखन के लिए प्रेरित करता है, क्योंकि यह सत्य के अधिक निकट होता है। इसलिए ही दलित आत्मकथाएं यथार्थ आधारित होती हैं।

हिन्दी दलित आत्मकथाएँ न केवल आप बीती है न कोरा जीवन वृतांत वह तों बाढ आयी हुई, वह नदी है, जिस मे भावों अनुभावों का एक तीव्र वेग है! उदाम आवेग ,प्रकम्प उत्साह उमंग और उन वर्णवादी मानसिकता के खिलाफ आक्रोश है संर्घष है, जिसने दलित समाज को पीढ़ी दर पीढ़ी कुचलने का सिलसिला जारी रखे हुए है। दलित आत्मकथा उत्प्रेरित अंतर में से भावोर्मिया शब्द देह स्वरूप से अस्खलित रूप से बहने वाली सरिता है! जिस में छोटे बड़े जातिवादी सहित्य द्धीप अपना अस्तित्व विलीन होता हुआ महसूस कर रहे है।

हिन्दी के प्रमुख दलित साहित्यकारों ने अपनी आत्मकथाओं में न सिर्फ अपने जीवन को ही प्रस्तुत किया है, बल्कि सामाजिक आर्थिक कानूनी संवैधानिक व सांस्क्रतिक दृष्टि पर भी दृष्टिपात किया है! दलित समाज मे फैली धार्मिक अंधश्रध्दा से बाहर निकलकर दलितोध्दार के मार्ग को प्रशस्त करने का आह्वान इन दलित साहित्कारो में किया है!

इन आत्मकथाकारो ने अपनी आत्मकथाओं में अपने जीवन के यथार्थ की तस्वीर खीचीं है, और इतना ही नहीं वरन आत्मकथाकारों के जरिए पाठकों के साथ जीवंत संपर्क स्थापित किया है। इन आत्मकथाओ में आत्मवृत या आत्मचित्रण न करके अपने परिवेष और परिस्थितियों को जीवन के साथ जोडकर एक कथानक तैयार किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. तिरस्कृत – सूरजपाल चौहन ।
2. अपने–अपने पिंजरें – मोहनदास नैमिशराय ।
3. मुर्दहिया – तुलसीराम ।
4. झोपडी से राज भवन – माता प्रसाद ।
5. जूठन – ओंम प्रकाश वाल्मीकि ।

****

हिन्दू-मुस्लिम समाज,संस्कृति केन्द्रित उपन्यासों की विकास यात्रा

संजय तिवारी *

प्रस्तावना – उपन्यास अपने आरम्भ से मध्यगत् रूप में सामाजिक यथार्थ चित्रण से जुड़ा हुआ है। प्राय: हर साहित्य में तिलिस्मी,ऐयारी,रहस्य और चमत्कार प्रधान किस्सों से अलग होकर उपन्यास जब अपने पूर्व-रूप रोमांस से भिन्न एक स्वतंत्र कला-रूप के तौर पर स्थिर होता है, तो उसका प्रधान उपजीव्य समाज की विविध विषमताएं और समस्याएं ही बनती हैं। हिन्दी साहित्य के संदर्भ में ये समस्याएं दो रूपों में उपजती हैं। एक तो अपनी जातीय रूढ़ियों के कारण और दूसरी विदेशी यूरोपीय संस्कृति की चुनौती सामने आने से। यह संयोग से कुछ अधिक है कि हिन्दी का प्रथम मौलिक उपन्यास परीक्षा गुरु (1882) सांस्कृतिक और जातीय संघर्ष की कथा वस्तु को उठाता है।[1]

आरम्भिक उपन्यास तिलिस्मी, ऐयारी और जासूसी विषयों पर हुआ करते थे। उपन्यासकारों के ये पसंदीदा विषय थे। इनके पाठक भी अपनी रूचि अनुसार विषय चुनते थे। चन्द्रकांता एवं चंद्रकांता संतति देवकीनंदन खत्री का बहुत प्रसिद्ध उपन्यास था, वह कई खण्डों में विभक्त है। यह उपन्यास ऐयारी प्रधान है। इसके अलावा यह तिलिस्मी, शौर्यपूर्ण तथा रोमांच-रहस्य से भरपूर वातावरण की प्रधानता लिए है। ऐसा माना जाता है कि आधुनिक काव्य रूप की तरह उपन्यास का हिन्दी आरंभ अंग्रेजी सम्पर्क के कारण हुआ। इस सम्पर्क का माध्यम तत्कालीन परिस्थितियों के अनुकूल बंग्ला साहित्य था, स्वयं भारतेंदू का उपन्यास 'पूर्णप्रकाश चंद्रप्रभा' अनुवाद या रूपान्तरण है। भारतेंदू हरिश्चन्द्र ने एक भी उपन्यास नहीं लिखा लेकिन इनके उत्साह दिलाने से स्व. गोस्वामी राधाचरण ने दीपनिर्वाण और बा. गदाधार सिंह ने कादंबरी का संक्षिप्त तथा दुर्गेश नंदिनी का पूरा अनुवाद किया था।[2]

पं. रामशंकर व्यास ने मधुमती और बा.राधाकृष्णदास द्वारा स्वर्णलता अनुवादित हुई थी। चंद्रप्रभापूर्ण प्रकाश, सौंदर्यमयी आदि भी इसी प्रकार अनुवादित हुई थीं। उपन्यास विधा के आरम्भ होते ही हिन्दी के पाठकों में कई तरह के विवाद चले। पाठकों के इस विवाद का एक रूप देवकीनंदन खत्री के तिलिस्मी-ऐयारी उपन्यासों की यथार्थ स्थिति को लेकर थे। 19वीं शती के अंतिम तथा 20वीं शती के आरंभिक दशकों में उपन्यास की नयी विधा ने हिन्दी लेखकों को अपनी ओर आकृष्ट किया। इन रचनाकारों में बालकृष्ण भट्ट 'नूतन ब्रह्मचारी'1886, सौ अजान एक सुजान 1890, अयोधया सिंह हरिऔधा (ठेठ हिन्दी का ठाठ) 1899, अधाखिला फूल 1907,जगमोहनसिंह(श्यामा स्वप्न 1888)। इस युग के प्रमुख उपन्यासकार थे-देवकीनंदन खत्री, किशोरीलाल गोस्वामी, जयरामदास गुप्त, गोपालराम गहमरी आदि। इस बीस वर्ष की अवधि में केवल पांच पुस्तक, पत्रिकाएं प्रचलित थी जो उपन्यासों का प्रकाशन करतीं थी। इनमें उपन्यास लहरी (देवकीनंदन खत्री) उपन्यास (किशोरीलाल गोस्वामी) जासूस (गोपालराम गहमरी) उपन्यास बहार (जयरामदास गुप्त) दारोगा दफ्तर (रामलाल वर्मा)।हिन्दी के पहले उपन्यास के विषय में हिन्दी उपन्यास कोश के संपादक गोपालराम के अनुसार 'देवरानी-जेठानी की कहानी, पं. गौरीदत्त द्वारा लिखित उपन्यास है।[3]

इस उपन्यास का प्रकाशन 1870 में हुआ। कुछ आलोचक 'भाग्यवती' को पहला उपन्यास मानते हैं, इसके लेखक श्रद्धाराम फिल्लौरी थे। इस उपन्यास का प्रकाशन 1887 में हुआ। रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार पहला उपन्यास 'परीक्षा गुरु' इसके रचयिता श्रीनिवासदास तथा प्रकाशन 1882 में हुआ। पं. शुक्ल ने इसे अंग्रेजी ढंग का पहला उपन्यास कहा जो कि हिन्दी में निकला था।[4]

इस युग में प्राय: सभी शैलियों के उपन्यासकारों ने एक ओर तो आदर्श का चरम उदस्त रूप प्रस्तुत किया तो दूसरी ओर यथार्थ की एकदम शिथिल स्थिति का वर्णन। कुछ उपन्यासकारों में ये दोनों प्रवृत्तियां एक साथ मिल जाती हैं, जिसे शायद अपने ढंग से यथार्थ का वास्तविक रूप माना। उनकी दृष्टि में चरम आदर्श और नग्न यथार्थ मिलकर सामाजिक जीवन का असली चित्र प्रस्तुत करते हैं। यथार्थ की संश्लिष्ट और वास्तविक समझ आगे चलकर प्रेमचंद में विकसित होती है। इसके पूर्व के आदर्श और यथार्थ संयुक्त परिवार के सदस्यों की तरह एक-दूसरे से लड़ते-झगड़ते साथ बने रहते हैं। यथार्थ चित्रण में बहस किशोरीलाल गोस्वामी के उपन्यासों को लेकर अधिक चली। किशोरीलाल गोस्वामी के ऐतिहासिक, सामाजिक तथा तिलिस्मी-ऐयारी सभी शैलियों के उपन्यासों में प्राकृतवादी चित्रण कुछ अधिक ही गहरा है। उपन्यास के विकास का प्रथम चरण सभी तरह की प्रवृत्तियों के साथ उनके साठ से अधिक उपन्यासों में देखा जा सकता है। जिसने आरम्भ से ही समाज के चित्रण को लक्ष्य बनाया, चाहे वह समाज ऐतिहासिक काल का हो या समकालीन। आगे चलकर जयशंकर प्रसाद का उपन्यास 'कंकाल' यह सामाजिक उपन्यास और इरावती (अपूर्ण) ऐतिहासिक। ये दोनों बिंब-प्रतिबिंब भाव से समाज के विदूरप का चित्रण करते हैं। एक का परिदृश्य समकालीन है तो दूसरे में परवर्ती बौद्धकालीन। उपन्यास ने अत्यन्त बलपूर्वक मध्यमवर्गीय परिवारों के जीवन में प्रवेश और हस्तक्षेप किया था और तब यह स्वाभाविक था कि समाज का अधिक सतर्क वर्ग इधर ध्यान दे कि उनका व्यापक जन-रूचि पर कैसा प्रभाव पड़ता है। इस समय साहित्य परिदृश्य पर प्रेमचंद और प्रसाद का आगमन हो जाता है। प्रेमचंद के आरंभिक कई उपन्यास तब तक प्रकाशित हो चुकते हैं, पहले महत्वपूर्ण उपन्यास सेवासदन का लेखन चल रहा होता है। प्रसाद अन्य माध्यमों में रचना पहले करते हैं, उपन्यास विधा के सामाजिक यथार्थ की ओर वे बाद में झुकते हैं।

*शोधार्थी (हिंदी) महाराजा छात्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

भारत–पाक विभाजन और हिन्दू–मुस्लिम संस्कृति पर तात्कालिक साहित्यकारों ने विभाजन को पूरी संवेदना के साथ अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। आचार्य चतुरसेन का उपन्यास धर्मपुत्र, यशपाल का झूठा–सच, भीष्म साहनी का तमस तथा राही मासूम रजा का आधा गांव उपन्यास भारत–पाक विभाजन और हिन्दू–मुस्लिम संस्कृति के इर्द–गिर्द बुने उपन्यास हैं। इसके बाद एक लंबे अंतराल के बाद बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक के उपन्यासकारों ने हिन्दू–मुस्लिम संस्कृति के अंतर्सम्बंधों पर नये सिरे से प्रकाश डाला। अंतर्संबंधों में गुथे हुए ये उपन्यास विभाजन के दर्द के उपन्यास हैं। इसलिए इनमें सांप्रदायिकता का तनाव होते हुए भी संवेदना के स्तर पर परस्पर जुड़ाव देखने को मिलता है। ढ़ेर सारे प्रेम प्रसंगों, तीज–त्यौहारों, आपदाओं में एक–दूजे का साथ देते हुए ये संस्कृतियां राष्ट्रीय और भौतिक विकास में जिस तरह से परस्पर की भागीदार बन रहीं हैं, उस समग्र यथार्थ को इन उपन्यासकारों ने व्यापकता से अपने कथ्य में प्रस्तुत किया है। इस संदर्भ में प्रतिनिधि उपन्यास एवं उपन्यासकार निम्नवत् हैं –

तमस – भीष्म साहनी, जहरवाद,
मुखड़ा क्या देखें – अब्दुल बिस्मिल्लाह
संगसार – नासिरा शर्मा
सात आसमान – असगर बजाहत,
कोरजा मेहरून्निसा परवेज
तेरा और उसका सच – इकबाल मजीद
वे वहां कैद हैं – प्रियंवद
समर शेष है – विवेकी राय,
सभा पर्व – बदी उज्जमां
सूखा बरगद – मंजूर एहतेराम
दासता के नये रूप – गुरुदत्त।

प्रेमचंद द्वारा सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से संघर्षपरक स्थितियों का युग है। ऐसी विपरीत परिस्थितियों में प्रेमचंद ने इस साहित्यिक धरती को अपने श्रम रूपी जल से सींचा और उसमें नयी स्फूर्ति पैदा की। प्रेमचंद युगीन समाज व्यवस्था अस्त–व्यस्त और जीवन विड्म्बनापूर्ण था। भारतीय जीवन की तमाम विसंगतियों को साहित्य में पिरोकर प्रेमचंद ने बड़ा सराहनीय कार्य किया। भारतीय जीवन का आधार कृषि है। यह कृषि ही आर्थिक समस्याओं की जड़ है और जब कृषि में दुर्भिक्ष और अकाल जैसी स्थिति आ जाए तो वह बड़ी पीड़ादायक स्थिति बन जाती है। दूसरी तरफ समाज के उच्च वर्ग द्वारा शोषण और उत्पीड़न का चक्र कृषक और मजदूर वर्ग पर चले तो इस वर्ग की स्थिति बड़ी दयनीय हो जाती है। प्रेमचंद ने समाज के इस वर्ग के लोगों का जीवन चक्र अपने साहित्य में साकार किया है। साहित्य क्षेत्र में प्रेमचंद के पूर्ववर्ती कथाकारों ने जो रंगीन कल्पनाओं के मोहक चित्र खीचे हैं, उनको यथार्थ की कठोर भूमि पर उतारने में प्रेमचंद ने बहुत श्रम तथा संघर्ष किया। सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में हो रहे मुखरित स्वर को उन्होंने अपने साहित्य में रचा। अशिक्षा, निर्धनता, अभावग्रस्तता, अन्धविश्वास, पिछड़ापन आदि से ग्रस्त ग्रामीण जनता अपने जीवन को अभिशाप मानती थी। पराधीन भारत में जनसामान्य की ऐसी दुर्दशा को प्रेमचंद ने अपने कथा साहित्य में प्रस्तुत किया। पुराने मूल्यों की नींव हिल रही थी। परम्परागत् विश्वासों को चुनौती दी जा रही थी। जीवन के हर पक्ष में व्यापक परिवर्तन हो रहे थे ।[5]

प्रेमचंद के कथा साहित्य में इस प्रकार के चित्र उकेरे गये हैं। यह स्थिति सामाजिक, राजनैतिक और साहित्यिक चेतना के कारण उत्पन्न हुई। इस समय ऐसे ही साहित्य की आवश्यकता थी, जो दीन–दरिद्र जनता की हीनदशा से विक्षिप्त और सर्वोपरि भारत की मूक जनता के जीवन को ही प्रदर्शित करके उसकी आशाओं और अभिलाषाओं को वाणी देने वाला हो।[6]

समाज में जिस प्रकार की परिस्थितियां निर्मित होती हैं, साहित्यकार उसी प्रकार की अभिव्यक्ति अपनी रचनाओं में करता है। प्रेमचंद ने भी अपने रचना संसार में समाज के प्रति क्षण परिवर्तित परिस्थितियों को चित्रित किया है। समाज सापेक्ष जीवन में संघर्ष सत्य है, उसका अपना महत्व है, परन्तु सद्भाव की प्रतिष्ठा वहां अनिवार्य है। संघर्ष के पश्चात् जो सफलता मिलती है, वह संतोष और आनंद का मूल है। प्रेमचंद इसे मानसिक तृप्ति मानते हैं। इस आनंद का मूल सत्य और सुन्दर है।[7]

प्रेमचंद का साहित्य केवल प्रदर्शन की वस्तु अथवा सुधारवादी भावना का प्रतीक मात्र नहीं है, वरन् उसमें जीवनानुभव की व्यापकता भी मौजूद है।

भारतीय जीवन पद्धति और धर्म–दर्शन के मूल में आशा, विश्वास, परोपकार, अहिंसा आदि हैं। यह भारतीय संस्कृति की विशेषताएं हैं। प्रेमचंद ने मानव जीवन की इन सभी विशेषताओं की अपने कथा साहित्य में इस प्रकार व्यापक किया है कि ये युगीन जीवन की विशेषताए बन गई हैं।[8]

सामाजिक दबाव से उत्पन्न व्यक्ति की मानसिक प्रतिक्रिया में व्यक्ति का दर्द तो उभरता ही है, साथ ही सामाजिक संगठन की विडम्बना भी निरुपित होती है। प्रेमचंद में सामाजिक वेदना की परिणति व्यक्ति पीड़ा में तथा व्यक्ति पीड़ा सामाजिक वेदना में परिणति हो जाती है। सामाजिकता के विशिष्ट संदर्भ में व्यक्ति की अस्मिता को स्थापित करना प्रेमचंद साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता है। प्रेमचंद जीवन के प्रति आस्थावान थे। मनुष्य जीवन में कई बार ऐसी स्थितियां आती हैं, जिन्हें न चाहते हुए मनुष्य को उनकी चिंता होती है। इसमें समाज, व्यक्ति, राजनीति आदि सभी का समावेश रहता है। प्रेमचंद युगीन घटनाए उस युग एवं जीवन का दस्तावेज बन गई।[9]

छठे–सातवें दशक में उपन्यासकारों की जो पीढ़ी सामने आती है, उसमें मुसलमान उपन्यासकार मात्र दो थे–राही मासूम रजा और गुलेश्वर खॉ शानी। इनमें से भी राही मासूम रजा उर्दू से हिन्दी में आए थे। शानी अकेले ऐसे मुस्लिम उपन्यासकार थे, जिन्होंने सीधे–सीधे हिन्दी में उपन्यास रचना की। लेकिन बीसवीं शताब्दी के आठवें–नवें दशक में हिन्दी में उपन्यास लिखने वाले मुसलमान लेखकों की संख्या में काफी बढ़ोत्तरी हुई, लेखक ही नहीं लेखिकाएं भी सामने आयीं। इस संख्या वृद्धि की व्यंजनाएं बड़ी महत्वपूर्ण हैं। इसकी एक व्यंजना तो यह है कि धर्म के आधार पर हिन्दी–उर्दू का विभाजन मिथ्या है। यह कहना कि हिन्दी हिन्दुओं की भाषा है, उर्दू मुसलमानों की गलत है। इससे यह सिद्ध होता है कि धर्म के आधार पर जो दो राष्ट्रों का सिद्धांत गढ़ा गया और जिसके आधार पर भारत का विभाजन हुआ वह गलत था। इसे रचनात्मक स्तर पर हिन्दी के कई मुस्लिम उपन्यासकारों ने सिद्ध किया है।[10] बदीउज्जमां के मार्मिक उपन्यास 'सभापर्व'में भी उन्होंने यही सिद्ध किया है। सभापर्व आकार की दृष्टि से उनका सबसे बड़ा उपन्यास है। आत्मकथ्यात्मक शैली में लिखे इस उपन्यास में उन्होंने अपने छात्र जीवन से लेकर विभाजन की मनोभूमि तैयार होने तक का इतिहास प्रस्तुत करते हुए हिन्दू–मुसलमानों के बीच अंग्रेजों के द्वारा नफरत पैदा करने की साजिश और उसकी सफलता को केन्द्रीय वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया है।[11] अंग्रेज सफल इसलिए हुए कि इन दोनों धर्मावलंबियों की अंतश्चेतना में इसके बीज विद्यमान थे। फिर स्वार्थवश दोनों धर्मों के कुछ लोग अंग्रेजों का साथ दे रहे थे। इसका अंग्रेजों ने खूब लाभ उठाया और विभाजन के पूर्व देश की स्थिति महाभारत के सभापर्व जैसी हो गयी।[12] देश का विभाजन हुआ, लेकिन

विभाजन ने समस्याओं को हल नहीं किया, बल्कि ऐसी समस्याओं को जन्म दिया जो पहले नहीं थीं। मंजूर एहतेशाम के उपन्यास 'सूखा बरगद'में स्वाधीनता के बाद आए मुस्लिम मनोवृत्ति के मौलिक परिवर्तन को केन्द्रीय वस्तु बनाया गया है। मुसलमानों को वैयक्तिक और सामाजिक स्तर पर बदलते संबंधों और अविश्वास की स्थितियों से गुजरना पड़ रहा है। प्रेमचंद के बाद कोई दूसरा उपन्यासकार नहीं हुआ, जिसने हिन्दू–मुस्लिम दोनों का जीवन युगपत चित्रित किया हो। प्राय: सभी उपन्यासकार पूरा गांव चित्रित करने के स्थान पर आधा गांव ही चित्रित करते रहे। नयी पीढ़ी के मुस्लिम उपन्यासकारों ने अपने–अपने ढंग से इस कमी को पूरा किया। मेहरुन्निसा परवेज ने अपने उपन्यास संगसार में मध्यप्रदेश के बस्तर क्षेत्र की पृष्ठभूमि में मुस्लिम और ईसाई समाजों का चित्रण किया है। उनके उपन्यासों की केन्द्रीय वस्तु मुस्लिम समाज में स्त्री का शोषण है। यह समाज स्त्री के प्रति बहुत अनुदार है। इसके विपरीत ईसाई समाज में स्त्री अधिक स्वाधीन है। लेकिन चाहे मुस्लिम समाज हो, चाहे ईसाई समाज हो, चाहे हिन्दू समाज ही क्यों न हो, स्त्री सर्वत्र शोषित और व्यथित है।[13] अब्दुल बिस्मिल्लाह ने 'झीनी–झीनी बोनी चदरिया' में बनारस के निम्न मध्यम वर्गीय बुनकर मुसलमानों की दयनीय आर्थिक स्थिति, शोषण और संघर्ष का प्रामाणिक चित्रण किया है। इन बुनकरों की जीवन स्थितियां अत्यन्त निराशाजनक हैं, लेकिन उपन्यासकार आशावादी है। अब्दुल विस्मिल्लाह समाज और समय को वर्ग दृष्टि से देखते हैं। जो साम्प्रदायिक विष गांवों तक फैला है। उसका चित्रण उन्होंने अपने उपन्यास 'मुखड़ा क्या देखें' में किया है। लेकिन इस साम्प्रदायिक समस्या का समाधान पलायन नहीं है। इसका समाधान अपना गांव छोड़कर भाग गये, अली के गांव लौटकर दयाशंकर पाण्डे के पास पहुंचकर कहे गये, इन शब्दों में है – 'लगता है आप लोगों ने तय कर लिया है कि इस गॉव में हम लोगों की अब कोई जरूरत नहीं है' मगर ई सुन लीजिए महाराज कि लोगन को चाहे हमारी जरूरत हो, और चाहे न हो, मुलां हमें जरूरत है। आज लोगन की नहीं, ई गॉव की। ई धरती की। ई देस की। मुलां अब हम कहीं नहीं जाएगे। ई धरती में हमारी नार गड़ी है .... जहां हमारी नार गड़ी है, हुवंई हमारी लहास भी गड़ेगी।[14] यह स्वाधीन भारत का यथार्थ है। इसे आम आदमी समझता है। इसे राजनेताओं को समझने की आवश्यकता है। असगर बजाहत ने अपने दोनों उपन्यासों 'सात आसमान' और 'कैसी आगलगामी' में मुस्लिम सामांतों के अतीत और वर्तमान की तुलना प्रस्तुत की है। उनका अतीत जितना भव्य था, उनका वर्तमान उतना ही दयनीय है। इससे मुक्ति का रास्ता अतीत मोह नहीं, वर्तमान की स्वीकृति है। विगत् पच्चीस वर्षों के हिन्दी उपन्यास में वस्तु और शिल्प, दोनों के स्तर पर अत्यधिक प्रयोग शीलता आयी है। नयी पीढ़ी के उपन्यासकारों के लिए मौलिकता बीजमंत्र हो गई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास: रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1988, पृ. 136
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास: रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1988, पृ. 136
3. हिन्दी उपन्यास कोष: गोपालराय
4. हिन्दी साहित्य: पूर्वोक्त, पृ. 137
5. हिन्दी उपन्यास: पूर्वोक्त, पृ. 48
6. प्रेमचंद युगीन भारतीय समाज: डॉ. इन्द्रमोहन त्रिपाठी, पृ. 427
7. हिन्दी उपन्यास: पूर्वोक्त, पृ. 51
8. कौमुड़ी (1979–80), पृ. 59
9. हिन्दी उपन्यास: पूर्वोक्त, पृ. 50
10. हिन्दी साहित्य का इतिहास: संपादक डॉ. नागेन्द्र, डॉ. हरदयाल, मयूर बुक्स दिल्ली, 2018, पृ. 721
11. — वही — पृ. 721
12. — वही — पृ. 721
13. उसका घर
14. मुखड़ा क्या देखें, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृ. 221

****

छायावादी काव्य में नारी का बदलता दृष्टिकोण - एक अध्ययन

डॉ. ओ. एस. परिहार *

प्रस्तावना – नारी के योगदान का मूल्यांकन साहित्य में करना हो या अन्य क्षेत्र में आज सभी क्षेत्रों में नारी ने पुरूषों से साझेदारी निभाई है। साहित्य में महिलाओं की भागीदारी जिस तीव्र गति से हो रही है। उसे देखते हुए नारी अभिव्यक्ति की सामर्थ्य पर हैरान होने जैसी कोई बात नहीं रहेगी। नारी के बिना पुरूष का कोई अस्तित्व नही, सम्पूर्ण भारतीय साहित्य नारी के विभिन्न चित्रों से ओतप्रोत है। जिस युग में नारी का जो स्थान था, उस युग के साहित्य में नारी उसी रूप में चित्रित की गयी। साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज की सभी मान्यताएं उसके युग के साहित्य में स्वत: उभर उठती है। यही कारण है कि आदिकाल से वर्तमान तक साहित्य में नारी के विविध रूपों का चित्रण किया गया है।

आधुनिक काल में भारतेन्दु ने नारी को बन्धन से निकाल कर नीलदेवी जैसी क्षत्राणी के रूप में उसके व्यक्तित्व को स्वीकार कर उसे प्राणों की रागिनी एवं दीप्ति की प्रतिभा घोषित किया। डॉ. मातादीन शर्मा के शब्दों में 'गोस्वामी तुलसीदास ने मध्यकाल के मरणोन्मुख समाज को नूतन और पुरातन के समन्वय का आदर्श उपस्थित कर नवजीवन दिया। आधुनिक युग में भारतेन्दु बाबू ने भी युग की विविध आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर नूतनता और पुरातन का समन्वय का सजग समाजशास्त्री की भाँति किया।'[1] कवि वचन सुधा पत्रिका के सिद्धांत वाक्य में जहाँ 'स्वत्व निज भारत गहै', की अभिलाषा है वही 'नारी नर सम होहि' की भी घोषणा की गई है। स्पष्ट है कि भारतेन्दुजी नारियों के समानाधिकार एवं स्त्री शिक्षा के पक्षपाती थे। भारतेन्दु का ध्यान इसी दिशा में केन्द्रित हुआ कि अंधविश्वास छूटें और विभिन्न नवीन मूल्यों की ओर लोग प्रवृत्त हो। 'इसी उन्नति पथ का अवरोध हम लोगों की वर्तमान कुल परम्परा मात्र है और कुछ नही। आर्यजन मात्र को विश्वास है कि हमारे यहाँ सर्वथा स्त्रीगण इसी अवस्था में थी। इस विश्वास के भ्रम को दूर करने ही के हेतु यह ग्रंथ विचरित होकर आप लोगों के कोमल कर कमलों में समर्पित होता है।'[2] निश्चय ही भारतेन्दुजी ने सभी योग्य मूल्यों को तोड़कर नवीन विकासोन्मूख दृष्टि का सूत्रपात किया।

वस्तुत: छायावादी काव्य स्वच्छन्दतावादी कम और पुनरूत्थानवादी अधिक था। छायावादी काव्य की अभिव्यंजता-पद्धति भी नवीनता और ताजगी लिए हुए है। इस युग के कवियों ने प्रधान रूप से प्रणय की अनुभूति को व्यक्त किया है। उनकी कविताओं में प्रणय से समबद्ध विविध मानसिक अवस्थाओं का मार्मिक चित्रण मिलता है। छायावादी काव्य की चेतना व्यक्ति निष्ठ होते हुए भी मूर्त उपकरणों द्धारा व्यंजित की गयी है। अर्थात हमारा ध्यान छायावादी चेतना के सौन्दर्य-पक्ष की ओर आकृष्ट हो जाता है। सौन्दर्य का प्रधान स्त्रोत प्रकृति है। इसका तात्पर्य यह नही है कि छायावादी कवियों ने मानव के सौन्दर्य का चित्रण नहीं किया। नारी के शारीरिक सौन्दर्य के अनेक मोहक चित्र प्रणय कविताओं में बिखरे हुए मिलते है। यह सौन्दर्य प्रत्यक्षरूप से नायिका के रूप वर्णन में भी दिखायी देता है। प्रसाद कृत 'आंसू' तथा कामायनी में प्रस्तुत किया गया नायिका का सौन्दर्य, सुमित्रानंदन पंत कृत 'भावी पत्नि के प्रति' में व्यक्त नायिका का सौन्दर्य। प्रसाद ने छायावाद की परिभाषा देते हुए कहा है-'कविता के क्षेत्र में पौराणिक युग की किसी घटना अथवा देश विदेश की सुन्दरी के बाह्य वर्णन से भिन्न वेदना के आधार पर स्वानुभूतिमयी (प्रेमपूर्ण) अभिव्यक्ति होने लगी, तब हिन्दी में उसे छायावाद के नाम से अभिहित किया गया।'[3] प्रसादजी के समय दो काव्यधाराएँ प्रवाहित हो रही थी-एक रीतिकाल से प्रभावित श्रृंगार के नग्नरूप को अपनाए हुई थी जो नारी के नग्न और स्थूल चित्रण को प्रमुखता देती थी और दूसरी विचारधारा रीतिकाल की प्रतिक्रियास्वरूप द्विवेदी-युग से इतिवृतात्मक रूप में प्रकट हुई। प्रसादजी ने काव्य में नूतन विषयों का समावेश किया। नारी का नग्न रूप उनको प्रिय नहीं था। उन्होंने नारी के प्रति केवल वासनात्मक दृष्किोण न होकर प्रसाद ने उसे दया, माया, ममता, बलिदान, सेवा समर्पण आदि का स्त्रोत बताया। रीतिकाल के अश्लील श्रृंगार से लथ-पथ नारी प्रसाद के काव्य में आकर श्रद्धा, विश्वास से युक्त होकर मानव जीवन के समतल में अमृत की धार बनकार फूट पड़ी।

छायावाद सुन्दरता और सुकुमारता का काव्य है। छायावादी कवि के हृदय में प्रेम और श्रृंगार की भावना हिलोरे ले रही थी। यदि किसी कवि के हृदय में साज-सज्जा के लिए बाल-सुलभ उमंग थी, तो किसी के मन में यौवन-सुलभ श्रृंगार की तरंग और किसी में अल्हड मस्ती की अदा।'[4] प्रसाद जी ने नारी के रूप और सौन्दर्य प्रकृति रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। प्रेम और सौन्दर्य एक-दूसरे का पूरक है। अपने रूप में मादकता लिए नारी जब पुरूष के जीवन में प्रवेश करती है तो पतझड़, समान उसके जीवन में मध्मास बसंत आ जाता है। प्रसादजी ने आंसू में इस भाव की अभिव्यक्ति इस प्रकार की है।

'पतझड़ था, झाड खडें थे, सुखी सी फुलवारी में,
किसलय नव कुसुम बिछाकर आये तुम इस क्यारी में।।'[5]

निराला के हृदय में नारी के प्रति गहरी सहानुभूति है। कही वह जीवन की सच्चाई है, कहों प्रेयंसी तो कहो प्रकृति में व्याप्त अलौकिक भावों से अभिभूत करती दिखायी देती हैं। 'अपरा' की कविताओं में नारी को प्रेयसी एवं प्रेरणा शक्ति में चित्रित किया गया है। निरालाजी की 'तोड़ती पत्थर' कविता में नारी के प्रति करूणा दिखायी पड़ता है- 'देखा मुझे उस दृष्टि से, जो मार खा रोई नही' 'राम की शक्ति पूजा' की रचना में नारी ही जीवन की प्रेरणा है, यथा-

'देखा राम ने सामने श्री दुर्गा भास्वर, श्री राघव हुए प्रणत मन्द-

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, मण्डलेश्वर (म.प्र.) भारत

स्वर–वन्दन कर,
होगी जय होगी जय हे पुरूषोत्तम नवीन। कह महाशक्ति राम के वंदन में हुई लीन।।'[6]

निराला के लिए नारी जीवन का प्रकाश है– 'जो दिया मुझे तुमने प्रकाश, प्राचीन–दिगन्त उर में पुश्कल रवि–रेखा।।'

निराला के लिए प्रेम एक शाश्वत और उदात्त भावना है, 'प्रेयसी' कविता में प्रेम के आवेगपूर्ण वर्णन के साथ–साथ अद्भूत अलौकिकता भी है। नारी पुरूष रूपी शव को शिव में बदलने वाली महाशक्ति है। नारी सदैव पुरूष को संभालती है–'

' रूप के द्वार पर, मोह की माधुरी, कितनी बार पी मुर्च्छित हुए ही प्रिय, जागती मै रही, गह बाँह–बाँह में भरकर संभाला तुम्हें।'

नारी के साथ होने वाले अत्याचारों के विरूद्ध सशक्त स्वर छायावादी युग की कविता में सुनाई देते हैं। सुमित्रा नंदन पंत ने एक मजदूर की दयनीय दशा का यथार्थ चित्रण इस प्रकार किया है–

'नारी की संज्ञा भुला, नरों के संग बैठ, विचार जन्म सुहद–सी जन हृदय में सहस पैठ,
जो बँटा रही तुम जग जीवन का काम–काज, तुम प्रिय हो मुझे न छूती तुमको काम लाज।'[7]

छायावाद की नारी शक्ति, सहचरी, प्रेयसी, जीवन संगिनी, ममतामयी माँ है। इस युग की नारी पुरूष के पैरों की जूती बनने वाली नहीं है और न ही वे केवल कामिनी है। इस युग में जो नवीनता का आग्रह देखा गया उसके परिणामस्वरूप नारी की परिकल्पनाओं तथा तदजनित मान्यताओं में एक युगान्तकारी परिवर्तन सामने आया। छायावादी युग के कवियों ने नारी की सत्ता को स्वीकार करते हुए तिरस्कृत और केवल भोग्या मात्र समझने के स्थान पर उन्हें इष्टदेव के मंदिर की पूजा–सी पवित्र समझा जाने लगा। छायावाद ने नारी को जो गौरव था, जो सम्मान दिया, हिन्दी साहित्य में इससे पूर्व किसी भी युग में नारी को गौरव नही दिया गया। इस युग में नारी को अपने अधिकार की मांग उठाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। डॉ. नामवर सिंह के अनुसार– 'नारी के प्रति पहले जो दया का भाव था, वह बदल गया। इस युग में नारी ने पुरूष से दया के स्थान पर अपने अधिकारो की मांग की। इस अधिकार भावना ने नारी–पुरूष के बीच कही समानता का भाव पैदा किया, कहीं स्पर्धा का भाव और कही उसकी शक्ति स्वीकार का भाव। कुल मिलाकर भिखारिणी अब मानसिक रूप से स्वामिनी बनी।'[8] नारी की मुक्ति की कामना एवं पीड़ा का यथा चित्रण छायावाद में ही पाया जाता है। पन्त ने उनबी की प्रति समाज में हो रहे शोषण का विरोध किया और उसे मुक्त करने की आवाज उठायी। उन्होंने मुक्त स्वर में कहा है–

'मुक्त करो नारी को, मानव चिर बंदिनी, नारी को,
युग–युग की बर्बर कारा से जननी, सखी प्यारी को।।'[9]

महादेवी वर्मा को छायावाद–युग के सबसे प्रमुख रचनाकारों में गिना जाता है। उनकी रचनाओं में छायावाद एक अव्यक्त प्रेम की तरह अन्तर्निहित दिखायी पड़ता है। रचनाकार होने के साथ–साथ एक नारी का प्रेम के प्रति दृष्टिकोण भी बहुत स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। छायावाद की नारी कभी बेटी, कभी सखी, कभी प्रेमिका और कभी माँ का जीवन अलग–अलग चरित्रों को निभातें हुए बीतता है। परन्तु फिर भी वह एक दीप की भांति जलती है जो प्रकाशित करती है। उस सबका जीवन जो उसके सम्पर्क में आते है। महादेवी के हृदय में कवि की कोमल भावनाओं के साथ–साथ नारी हृदय की स्वाभाविक सात्विकता भी समाहित है। उनकी करूण पुकार में नारी हृदय की वेदना का स्पष्ट अंकन दिखायी पड़ता है। नारी के आदर्शों को देख कर आज के युग की पुकार है कि हमें रीतिकालीन युग की वासनात्मक नारी नहीं चाहिए, हमें आदर्श माँ चाहिए। दिनकर जी ने भी नारी की प्रतिभा की भूरी–भूरी प्रशंसा की–

'तुम्हारें अधरों का रसपान, वासना तट पर पीया अधीर।
अरी ओ माँ, हमने है पिया, तुम्हारे स्तन का उज्जवल क्षीर।।'

सुमित्रा नंदन पंत ने भी नारी को अकेली सुंदरता की कल्याणी ही नहीं कहा बल्कि उसे समस्त एष्वर्यों की खोज के रूप में प्रकट किया है। नारी शक्ति के विविध रूपों का वर्णन करते हुए पंतजी ने कहा है– 'देवी, माँ, सहचरी, प्राण।

अन्ततः निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि हिन्दी साहित्य में छायावाद से पूर्व किसी भी युग में नारी को वो गौरव नहीं मिला जो छायावाद में आकर नारी को दिया गया। काव्य में अनादिकाल से नारी का चित्रण होता रहा है। वेद और उपनिषद साहित्य में नारी का गरिमापूर्ण वर्णन मिलता है। वीरगाथा काल मे काव्य–प्रेरणा के रूप में नारी को स्थान दिया गया। सन्त–काव्य में माया कहकर उसे घृणा की दृष्टि से देखा गया। भक्तिकाल में भक्तों ने अपने आराध्य के सामने नारी की उपेक्षा ही की। तुलसीदास ने नारी की समाज में स्थिति का चित्र प्रस्तुत करते हुए लिखा है–

'कत विधि सृजी, नारी जग माहीं। पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।।'

रीतिकालीन काव्य में नारी को पुरूष की भोग्या बना दिया गया। भारतेन्दु–युग में नारी के प्रति संयम आ गया। द्विवेदी–युग में नारी के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन देखने को मिला। अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' अपनी रचनाओं में भविष्य के प्रति आशावादी दृष्टिकोण अपनाते हैं–'उन्होंने बाल–विवाह, विधवा–विवाह आदि सामाजिक समस्याओं को भी उठाया है।'[10] मैथिलीशरण गुप्त ने नारी की दयनीय स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है–'अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी। आंचल में है दूध और आँखों में पानी।।'

छायावादी काव्य में नारी के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ। छायावादी कवियों ने काव्यगत रूढ़ियाँ, तोड़ी, पुरानी मान्यताओं को ध्वस्त किया और नया का सृजन किया। इन कवियों ने अपने काव्य में नारी को प्रधानता दी। प्रसाद, पन्त और निराला के काव्य में नारी अति मानवीय रूप लेकर सामने आई। उन महाकवियों का दृष्टिकोण नारी के प्रति भावुकता प्रधान और अतीन्द्रिय रहा। छायावाद में नारी सौन्दर्य का पुंज है और प्रेरणा का स्त्रोत भी। प्रसाद कृत कामायनी की 'श्रद्धा' तथा निराला कृत 'तुलसीदास' की रत्नावली ऐसी ही नारियाँ है, जो पुरूष की प्रेरक शक्ति को उजागर करती है। 'राम की पूजा' में नारी शक्ति का स्त्रोत बनकर उपस्थित होती है। 'बहु' कविता में नारी 'मनोरमा', 'मनमोहिनी' तथा जीवन के अन्धकार में 'जलती हुई शमां' बनकर सामने आती है–

'मन मोहिनी मनोरमा है,
जलती अन्धकार मय जीवन का वह एक शमां है।'

छायावादी कवियों ने युगों–युगों से उपेक्षित नारी को कल्पना के माध्यम से पुरूष के समान अधिकार देने की बात की है–

'नर–नारी दो भवनो में हो,'बंटे क्षुद्र जिस जग में,
प्राणों के स्वप्न पथिक को, रूकना पड़ता पग–पग में।'[11]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. मातादीन शर्मा– भारतेन्दु कालीन साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन (शोध प्रबन्ध पटना वि.वि. 1965 पृष्ठ 197)

2. भारतेन्दु ग्रंथावली भाग–1, पृष्ठ 519
3. काव्य और कला तथा अन्य निबंध–प्रसाद, पृष्ठ 123
4. छायावाद डॉ. नामवर सिंह पृष्ठ 84
5. प्रसाद का सम्पूर्ण काव्य, सम्पादक डॉ. सत्यप्रकाश मित्र आँसू, पृष्ठ 308।
6. राम की शक्ति पूजा–सूर्यकांत त्रिपाठी निराला।
7. तारापथ, सुमित्रा नंदन पंत, पृष्ठ 135
8. छायावाद, डॉ. नामवर सिंह पृष्ठ 48
9. युगवाणी, सुमित्रा नंदन पंत पृष्ठ 64
10. हिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास– डॉ. वासुदेव सिंह, पृष्ठ 316
11. लोकायतन, सुमित्रा नंदन पंत, पृष्ठ 196

****

केशवदास की काव्य साधना

डॉ. वन्दना जैन *

प्रस्तावना – केशव दास मध्यकालीन हिन्दी साहित्य के दैदीप्यमान प्रकाशपुंज है। उनके कुछ वर्ष पूर्व महाकवि सूरदास, अपनी मधुरवाणी से समस्त उत्तरी भारत को रससिक्त कर चुके थे तथा रामकथा के अमरगायक महाकवि तुलसी भी केशव के समकालीन थे। इस प्रकार हिन्दी साहित्य गगन में सूर, तुलसी और केशव सूर, चन्द्र और उडुगन के रूप में अपनी अनुपम ज्योति विकीर्ण कर रहे थे।

केशव ओरछा के राजा रामशाह के अनुज इन्द्रजीतसिंह के गुरू, मित्र और दरबारी कवि थे। साहित्य, नृत्य और संगीत के मर्मज्ञ इन्द्रजीतसिंह के दरबार में सुप्रसिद्ध नृत्यांगना राय प्रवीण भी थी, जिसे काव्यशिक्षा देने के उद्देश्य से केशव ने 'कविप्रिया' ग्रन्थ का प्रण किया और अपने आश्रयदाता इन्द्रजीतसिंह के लिए उन्होंने 'रसिकप्रिया' की रचना की।

महाकवि केशव की प्रामाणिक रचनाओं की संख्या नौ है। विद्वानों ने केशव की जिन नौ रचनाओं को प्रामाणिक माना है, उनके नाम हैं– रतनबावनी, रसिकप्रिया, नखशिख, रामचन्द्रिका, कविप्रिया, छन्दमाला, वीरसिंह देव गीत, विग्यानगीता और जहांगीर जस चन्द्रिका।

सम्पूर्ण केशव साहित्य में हमें आचार्यत्व और कवित्व इन दो प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं। आचार्यत्व से संबंधित केशव की चार रचनाएँ हैं– रसिकप्रिया, कविप्रिया, नखशिख और छन्दमाला। केशव के पूर्व यद्यपि कृपाराम की 'हिततरंगिणी' प्रकाश में आ चुकी थी तथापि आचार्यत्व के सभी पक्षों का निर्वाह हिन्दी में सबसे पहले आचार्य केशव ने किया, इसीलिए वे हिन्दी काव्यशास्त्र के जन्मदाता माने जाते हैं। वे सर्वांग निरूपक आचार्य थे।

'रसिकप्रिया' काव्य रासिकों के लिए रची गई है। इसमें उन्होंने श्रृंगार के रस राजत्व की प्रतिष्ठा का प्रयास किया है और सभी रसों का श्रृंगार में ही अंतर्भाव किया है। यह रचना रीतिकालीन श्रृंगार रासिकों की गीता है। इसमें नायक नायिका भेद का निरूपण सविस्तार किया गया है, जो बहुत कुछ भानुदत्त की 'रसमंजरी' और विश्वनाथ के साहित्य दर्पण पर आधारित है। काव्य के लिए रस अनिवार्य तत्व है।
क्योंकि–

'ज्यों विनु डीठि न सोभिजे, लोचन लोल विसाल,
त्योंही केसव सकल कवि, विनुबानी न रसाल।'

इसीलिये वे काव्य के रचयिताओं से आग्रह करते हैं–

'ताते रूचि सौं सोचि पचि कीजै सरस कवित्र,
केसव स्याम सुजान को, सुनत होई वसचित्र।'

'कविप्रिया' की रचना राय प्रवीण को काव्य शिक्षा देने हेतु की गई है। इस ग्रन्थ उद्देश्य सुकुमार बुद्धि पाठकों के लिए काव्य शास्त्र जैसे कठिन विषय का सुगम रूप से बोध कराना है। यह अंलकार निरूपक ग्रन्थ है।

राजशेखर से चली आने वाली काव्यशिक्षा की परंपरा को अपनाकर केशव ने 'कविप्रिया' ग्रंथ की रचना की। यह मूलत: अलंकार निरूपक ग्रंथ है, जिसमें केशव की अलंकार विषयक धारणा का प्रतिपादन हुआ है। केशव अलंकार को व्यापक अर्थ में ग्रहण करते हैं। उनकी दृष्टि में काव्य के सभी वर्ण्य विषय, उनको विभूषित करने वाले उपकरण काव्यशास्त्र के सभी उपादेय अंग तथा काव्य के अंतरंग उपकरण अंलकार के अंतर्गत आ जाते हैं।

केशव अंलकार को काव्य का अनिवार्य तत्व मानते हैं। भामह के मत का समर्थन करते हुए कहते हैं–

'जदपि सुजाति सुलच्छनी सुबरन सरस सुवृत्त।
भूषण बिनु ना बिराजहीं, कविता, वनिता, मित्त।'

आचार्य दण्डी और उद्भट की भाँति केशव ने भी नवरस का निरूपण रसवत अंलकार के अंतर्गत किया है।

छन्दमाला में अनेक छन्दों का परिचय दिया गया है। इसका उद्देश्य भाषा के नवोदित कवियों को छन्द ज्ञान कराना है।

इस प्रकार केशव ने रस, अलंकार और छन्द तीनों काव्यांगों का निरूपण किया है। इसके साथ ही साथ दोष, वृत्ति, चित्रकाव्य एवं कविशिक्षा के अन्य प्रकरणों के बारे में भी प्राचीन आचार्यों की परंपरा का उन्होंने निर्वाह किया। इसीलिए वे सर्वांग निरूपक आचार्य कहे जाते हैं।

कवित्व की दृष्टि से भी केशव का महत्वपूर्ण स्थान है। उनके काव्य में वीर काव्य, श्रृंगार काव्य, भक्ति, वैराग्य काव्य और रीति शास्त्रीय काव्य इन चार प्रमुख प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं जो रीतियुग में मुख्य रूप से चलती रही। वे मधययुग के एक मात्र ऐसे कवि हैं, जिन्होंने ब्रज भाषा में प्रबन्ध और मुक्तक दोनों प्रकार की काव्य रचनाए की।

कवित्व की दृष्टि से केशव की सर्वश्रेष्ठ रचना 'रामचन्द्रिका' है, जिसमें मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान 'राम' की कीर्ति का गान किया गया है। 'रामचन्द्रिका' में वर्णनों की प्रधानता है। वर्णनों के अतिरिक्त सम्वादों का कौशल भी उत्कृष्ट बन पड़ा है। केशव की सम्वाद योजना उत्कृष्ट और भव्य है। ये सम्वाद वाग्वैदग्धय के सुन्दर प्रमाण हैं। आनंद रावण संवाद का एक उदाहरण प्रस्तुत है–

'कौन के सुत ? बालि के, वह कौन बालि ? न जानियै।
कांख चांपि तुम्हें जो सागर सात न्हात बखानियै।।'

उपर्युक्त पंक्तियों में केशवदास के सुन्दर, सरस, सजीव संवाद योजना के दर्शन होते हैं।विद्वानों की ऐसी मान्यता है कि केशव ऐसे काव्य की रचना करना चाहते थे जिसमें प्रबंधात्मकता के स्थान पर वर्णनात्मकता की प्रमुखता हो जो शास्त्रानुमोदित होते हुए भी अपनी विशिष्टताएं रखता हो। इस दृष्टि

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

से रामचन्द्रिका हिन्दी महाकाव्यों में अनूठा प्रयोग है। वह छन्दान्तर शैली में लिखी गई है और एक एक छन्द के कई कई अर्थ भी निकलते हैं। इस आधार पर उसमें दुरूहता भी है।

केशव के काव्य पर कई आक्षेप भी लगाए गए है जैसे वे कठिन काव्य के प्रेत थे। उनको कवि ह्रदय नहीं मिला था। उनमें सहदयता और भावुकता का अभाव था। ये आंक्षेप आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जैसे समीक्षक ने लगाए हैं।

यह सही है कि केशव के काव्य में कठिनता है, दुरूहता है क्योंकि वे संस्कृत के प्रकांड पंडित थे और उनके घर के दास तक भाषा बोलना नहीं जानते थे, लेकिन उसमें सहदयता से पूर्ण अनेक मार्मिक प्रसंग और स्थल भी हैं। जैसे राम और लक्ष्मण को विश्वामित्र को सौंपते समय दशरथ की वेदना पूर्ण मन: स्थिति, सीता हरण के पश्चात् सुग्रीव मिलन पर राम की विरहावस्था का चित्रण, सीताहरण के अवसर पर सीता का करूण क्रंदन आदि मार्मिक प्रसंग है। अशोक वाटिका में वियोगिनी सीता की स्थिति कितनी मर्म स्पर्शी है। देखिए:

'धारै एक बैनी मिली मैल सारी, मृणाली मनौ पंक तें काढ़िडारी।
सदा राम नामै रटै दीन वानी चहु ओर है राकसी दु:खदानी।'

इसी प्रकार हनुमान द्वारा प्राप्त राम की अँगूठी के प्रति सीता के उद्गारों में जो मार्मिकता है, वह केशव पर लगाए गए ह्रदय हीनता के आरोप को निर्मूल करने के लिए पर्याप्त है–

'श्रीपुर में वन मधय हों, तू मग करी अनीति।
कहि मुंदरी अब तियन की, को करि है परतीति।'

इस प्रकार केशव सहदय कवि थे और उससे भी बढ़कर आचार्य थे। कवि के रूप में उन्होंने जहाँ उत्कृष्ट भक्ति, वीर और श्रृंगार काव्य का सर्जन प्रबंधा और मुक्तकों के रूप में किया वहाँ अपनी विद्धत्ता और पांडित्य प्रतिभा से काव्यशास्त्रीय परम्परा को हिन्दी में सबसे पहले प्रस्तुत किया। रीतिकाल की लगभग दो सौ वर्ष की अवधि में केशव का काव्य और उनकी काव्यशास्त्रीय मान्यताएँ छायी रही तथा परवर्ती कवि और आचार्य केशव के मार्ग का अनुसरण करते रहे।

इस प्रकार केशव का बहुविधा काव्य अपनी भावगत रमणीयता, कलात्मक, उत्कर्ष और विचारगत गंभीरता के कारण हिन्दी साहित्य का गौरव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. केशवदास– डॉ. विजयपाल सिंह
2. आचार्य केशव–डॉ. हीरालाल दीक्षित
3. विन्ध्यभूमि साहित्य अंक– 15 जून 1956

****

मालवी कवि संत पीपा

डॉ. मुग्धा राजपूत *

प्रस्तावना – एक मालवी कहावत है कि 'छ: कोस पे पानी बदले, बारह कोस पे बानी' अर्थात लगभग हर पंद्रह किलोमीटर पर पानी व हर तीस किलोमीटर पर साधारणतया किसी क्षेत्र की बोली में क्रमश: परिवर्तन आने लगता है। इस परिवर्तन में क्षेत्र की पृष्ठभूमि, काल, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियाँ एवं मानवीय प्रवृत्तियाँ अपनी भूमिका अदा करती हैं। इन्दौर, उज्जैन, धार, देवास, शाजापुर जिलों में बोली जाने वाली मालवी बोली कहलाती हैं। इसी मालवा क्षेत्र में संतों ने प्रारम्भिक मालवी साहित्य को अप्रतिम समृद्ध किया है। जिसके जीवन का उद्देश्य सत्य का आचरण हो, सत्य का मन, वचन एवं कर्म से रसास्वादन कर संसार को वही मधुररस प्रदान करें वह संत है। संत व्यष्टि के केन्द्र में ऊँचा उठकर समष्टि जीवन के प्रति आस्थावान होते हैं। ये बह्मा के सगुण एवं निर्गुण दोनों ही स्वरूपों के उपासक रहे हैं। इन संतों ने रामानन्द, कबीर, नानक, दादू, रैदास, मीरा आदि की ही भाँति अपने काव्यात्मक उपदेशों द्वारा जन-जन के आत्म जागरण एवं स्वानुभूति-कथन पर विशेष जोर दिया। कबीर ने कहा है- 'निगुणराम, निगुणराम, जपहु मेरे भाई'।[1] मालवा के इन संत कवियों की वाणी में ज्ञान एवं भक्ति का सहज समन्वय हुआ है।

संत पीपा प्रतापराव खीची राजपूत थे। मालवा का गागरोन उनके राज्य की राजधानी था। पीपा एक प्रसिद्ध शासक थे, जो सन् 1360 ई. में गागरोन राजगद्दी पर बैठे।[2] शस्त्र एवं शास्त्र दोनों प्रवीण इस शासक ने 25 वर्षों तक शासन किया। इसके उपरान्त उनका झुकाव अध्यात्म की ओर हो गया। उन्होंने महान संत रामानन्द का शिष्यत्व ग्रहण किया और राजपद अपने गोद लिये भतीजे भोजराव को सौंपकर अपनी भार्या सीतादेवी के साथ सन्यास ग्रहण किया। वे संत शिरोमणि पीपाजी महाराज (बप्पाजी) के नाम से लोकप्रिय हुए। यह प्रसिद्ध है कि –

'पूरबभयोय 'रैदास-कबीरा', सब काहू को दीनी धीरा।
दक्षिण भक्ति, 'नामदे राखी, जाकी निस दिन दिजै राखी।।
पच्छिम 'पीपा' परगट किन्हीं, भक्ति बताई सबन कूँ दीनी।।'

संत पीपा ने अपने गुरू के पद चिन्हों पर चलते हुए एकेश्वर वाद का प्रतिपादन, गुरू-साधु महिमा, संसार की नश्वरता, मूर्तिपूजा का विरोध, पाखण्ड की निन्दा और नाम की महत्त गाई –

'इण घट अन्दर अनहद गूंजे
इणमें सब संसारा रे।
पीपा ने तो घणो भरोसो
उण माँ सांई म्हारा रे।।'

अर्थात इस घट (शरीर) में ईश्वर रूपी अनहद गुंज रहा है। एवं संसार में ढुढ़ने की अपेक्षा भीतर छुपे सांई को पहचानना आवश्यक है। इस विषय पर डॉ. नगेन्द्र के अनुसार-'संतों ने आत्मा की सर्वरूपता सर्वात्म भावना एवं सर्वशक्तिमत्त प्रतिपादित की हैं।'[3] गुरू के प्रति असीम आस्था प्रकट करते हुए आपने कहा

'पीपा के पंजर बस्यो रामानन्द को रूप।
सर्व अन्धेरा मिटि गया, देख्या रतन अनूप।।

पीपा अपने निगुर्ण राम को स्वयं के भीतर ही पाते है। उस परम सत्त के विलक्षण प्रताप से अज्ञानरूपी अंधेरा समाप्त हो जाता है एवं अनिर्वचनीय अनुभूति प्राप्त होती है। डॉ. बाबू राव जोशी के अनुसार-'पीपा के काव्य में परोक्ष सत्त का निरूपण करना बडा कठिन है तथापि इतना अवश्य कहा जा सकता है कि उनका राम लोक में प्रत्यक्ष होने वाला अवतारी राम नहीं है बल्कि वह तत्व रूप में है।'[4]

वे जीवमात्र की समानता के पक्षधर थे। उनके मतानुसार ईश्वर के समक्ष सभी जीव समान हैं। उसके दरबार में राजा-रंक, दाता-याचक, पुरूष और नारी एवं छोटे-बडे में कोई भेद नहीं है। मूर्ति पूजा में पूर्णतया अनास्था व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि-'ईश्वर सभी प्राणी मात्र में परिव्याप्त है।

'मेहंदडी माँ लालडी
तिलवा माइन तेल
पीपा त्यों संसार मां
चाले सत से खेल।।'

जिस प्रकार मेहंदी में लाल रंग और तिल में तेल छुपा होता है, उसी प्रकार संसार में परमात्मा छिपा रहता है। संत पीपा की दृष्टि लोकोन्मुखी है और अभिव्यक्ति सरलभाषा में सशक्त। समकलीन होने पर कबीर ने पीपा का उल्लेख किया और पीपा ने कबीर का। अत: दोनों का परस्पर प्रेम एवं आदर रहा। कई स्थान पर कबीर और पीपा के सहित्य में समानता मिलती है। कबीर के समान ही पीपा भी उनकी निन्दा करते हैं, जिनका लोक जीवन में तन उजला हो, पर मन काला।

'पीपा जिनके मन कपट तन पर उजलो भेष।
तिनको मुख कालो करो संत जना को लेख।।

एक अन्य स्थान पर वे कहते है –

पीपा मन पंछी भया, जहाँ वहाँ उड़ जाय।
जाँह जेसी संगत करे, ताँह तेसा फल पाय।।'

इस पद में संगत के महत्व को प्रतिपादित किया है। इसी प्रकार जब सांसारिक मोह में मनुष्य ईश्वर को अनुभूत नहीं कर पाता-

'पीपा देर न कीजिये, भज लीजे हरि नाम।
कुण जाणे क्या होवसी, छुट जावेंगे प्रान।।'

इस पद में संत पीपा ने प्रभुनाम का सतत् स्मरण करने का आग्रह

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) संत हिरदाराम कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

किया है। साथ ही जीवन की क्षण भंगुरता को बहुत सुंदरता से प्रकट किया है।

संत पीपा ने अपनी वाणी द्धारा लौकिक जीवन के उत्कर्ष एवं पारलौकिक जीवन की संभावनाओं का समन्वित सन्देश अपने शिष्यों को दिया। स्पष्ट है कि संत पीपा एक निर्गुणी संत रहे हैं। दार्शनिक दृष्टि से भी वे परिपक्व थे। आपने मालवी साहित्य की निर्गुण परपंरा को समृद्ध किया। आपकी सार ग्राहिणी प्रवृत्ति ही आपका सबसे बड़ा गुण है। पीपा की मौलिकता इसी बात में है कि उन्होंने विभिन्न दार्शनिक और धार्मिक विचारधाराओं को अपनी प्रतिभा के ढांचे में ढ़ालकर एक नया रूप रंग प्रदान किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कबीर ग्रंथावली पद – 49 पृष्ठ 104, इंडियन प्रेस लिमिटेड प्रयाग।
2. मालवी साहित्य का इतिहास – पृष्ठ 50, श्याम सुन्दर निगम साहित्य अकादमी म.प्र. संस्कृति परिषद भोपाल।
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास – पृष्ठ 121, मयूर पेपर बैक्स, ए–95, सेक्टर–5 नोयडा–201301
4. सन्त काव्य में परोक्षसत्त का स्वरूप – पृ. 321, कैलाश पुस्तक सदन ग्वालियर।

****

वृन्दावनलाल वर्मा का स्त्री चिंतन

मेघा मिश्रा *

प्रस्तावना – सुविख्यात उपन्यासकार श्री वृन्दावनलाल वर्मा जी के प्रसिद्ध उपन्यास – झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, रामगढ़ की रानी, महारानी दुर्गावती, अहिल्याबाई, मृगनयनी, विराटा की पद्मिनी, सोना, गढ़ कुंडार, कचनार, कुंडली– चक्र आदि उपन्यास स्त्री प्रधान चरित्र एवम् स्त्री के नाम पर आधारित है जिनमे एक स्त्री का सशक्त रूप देखने को मिलता है। वर्मा जी के उपन्यासों को स्त्री चिंतन के रूप में देखा जा सकता है। वह स्त्री को सकारात्मक पहलू से देखते है। वह स्त्री के भौतिक सौन्दर्य और बाह्य आकर्षण तक ही सीमित नहीं रह जाते अपितु वे उसमे दैवीय गुणों के दर्शन करते हैं। उनका लक्ष्य स्त्री के बाह्य और आतंरिक गुणों में सामंजस्य स्थापित करना होता है। उनकी स्त्री, पुरुष के सम्मान नहीं बल्कि पुरुष से ऊँची है। उनकी दृष्टि में यदि पुरुष शक्ति है, तो स्त्री उसकी संचालन की प्रेरणा। उनके स्त्री पात्र प्रेरणा ही नहीं देते अपितु संसार के संघर्षो से स्वयं झूझते हुए अपनी शक्ति का परिचय देते है। सर्वाधिक प्रसिद्ध उपन्यास 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ' में वर्मा जी ने रानी के चरित्र में प्रधान गुण– वीरता, देशभक्ति, कर्मयोग की भावना, लगन, दृढ़ता, बुद्धिमत्ता, प्रेरकशक्ति, युद्ध कौशल, तथा गौण गुण यथा महत्वाकांक्षा, निर्भीकता, वाचालता, चपलता, व्यंगात्मक्ता, सरलता, उदारता, स्वाभिमान, करुणा, संयम, क्षणिक दुर्बलता, सैद्धान्तिकता, सूक्ष्म–निरीक्षण शक्ति, प्रबंध कौशल, कलाप्रेम, साहित्य प्रेम, प्रजातंत्रीय दृष्टिकोण, निराशावादिता जैसे सत्ताईस गुणों का समावेश कराया है। इन गुणों में से अधिकतर गुण प्रत्येक स्त्री में वर्मा जी देखते है और स्त्री को शक्ति और सशक्त रूप में प्रस्तुत करते है।

'लक्ष्मीबाई' स्त्री की सर्वांगीण शक्ति का प्रतीक है, वह प्रेरणा दे सकती है और स्वयं जीवन संग्राम में कूद कर पुरूषों को संचालित भी करती है। स्त्री का यह संस्करण अत्यंत ही प्रबल है। वर्मा जी का स्त्री के प्रति दृष्टिकोण रानी के संवाद से झलकता है– 'फूलों से नाता बनाए रखो परन्तु मिटटी से सम्बन्ध तोड़कर नहीं' अर्थात वे स्त्री के मौलिक गुण – प्रेम, ममत्व, लज्जा, सौंदर्य प्रेम और कलाप्रेम के साथ–साथ मानवीयता, स्वाभिमान को बनाये रखने की बात कहते हैं। वे स्त्री को केवल उसके रंग रूप, उसकी कोमलता के साथ नहीं देखते बल्कि उसे पुरुष की भांति शक्तिशाली, स्वाभिमानी और ऊर्जावान रूप में देखते हैं। 'मृगनयनी' उपन्यास में उन्होंने साधारण सी 'गूजरी कन्या' के रानी बनने के सफर और स्वाभिमान को दिखाया है। यह स्त्री जौहर जैसे कार्य को साहस का कार्य नहीं मानती बल्कि दुश्मनों से युद्ध करते हुए बलिदान को साहस का कार्य मानती है, मृगनयनी का यह विचार कि 'सुनती तो यही आई हूँ परन्तु क्या (जौहर करने वाली स्त्रियों के) हाथ पैर इतने निकम्मे होते होंगे की अपने ऊपर आँख और हाथ डालने वाले पुरुष को घूंसे से धरती न सुंघा सकें'? यही नहीं, स्त्री पुरुष की प्रेरणा है, पुरुष को सही मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करती है। वर्मा जी ने 'विराटा की पद्मिनी' उपन्यास की नायिका 'कुमुद' में दैवीय गुणों की स्थापना कर उसे पूज्य बनाया है। कुमुद के स्वाभिमान की रक्षा के लिए किस तरह सारा राज्य एकजुट हो जाता है और अपने प्राणों का बलिदान करने को भी तत्पर हो जाता है। स्त्री के प्रति इतना समर्पण और श्रृद्धा, वर्मा जी के स्त्री के प्रति सम्मान को दर्शाता है।

'कचनार' उपन्यास नारीत्व रक्षा की महत्वपूर्ण समस्या और उसका हल प्रस्तुत करता है। उपन्यास में कचनार स्त्री पात्र है, जिसमें सौन्दर्य, कोमलता और तीखापन है। नारीत्व के शोषकों के प्रति वह उग्र है। संयम और साधना के प्रति उसमें घोर निष्ठा है। पुरुषों जैसी साहस और दृढ़ता है। वह आदर्श की निष्प्राण मूर्ति नहीं वरन् दृढ़ता और कोमलता से निर्मित सौन्दर्यमयी स्त्री है।

उपन्यास 'गढ़कुंडार' में भी वर्मा जी ने स्त्री चरित्र 'तारा' में बाह्य सौन्दर्य के साथ–साथ दैवीय गुणों को स्थापित किया है। दैवीय तत्त्व के स्पर्श से साधारण स्त्री 'तारा' का स्वरुप भी गरिमापूर्ण एवं स्पृहणीय बन पड़ा है। तारा अपने धैर्य और सतत् प्रयास से अपने आत्मिक प्रेम को पा लेती है। स्त्री का धैर्य और सतत प्रयास उसकी बहुमुखी प्रतिभा को उभार कर लाता है। राजरानियां और असाधारण स्त्रियाँ जैसे रामगढ़ की रानी अवंतीबाई, अहिल्याबाई और रानी दुर्गावती के असाधारण व्यक्तित्व को वर्मा जी ने अपने उपन्यासों में बहुत खूबसूरती से उभारा है। इसके अलावा वर्मा जी के अन्य उपन्यासों में स्त्री के कई पहलू देखने को मिलते हैं, जिसमें स्त्री के विविध रूप देखने को मिलते हैं। उपन्यास 'प्रेम की भेंट' की ईर्ष्यालु प्रेमिका 'उजियारी' जिसमें प्रेम की प्रचंडता अति प्रतिहिंसा है। यह हिंसा में इतनी बढ़ जाती है कि जिससे वह प्रेम करती है वह उसी के प्राण अप्रत्यक्ष रूप से ले लेती है। 'विराटा की पद्मिनी' की 'गोमती' अतिमहत्वाकांक्षी है, उसकी महत्वाकांक्षा इतनी बड़ी है कि वह पूर्ण न होने पर शोककुल, निस्तब्ध और निष्प्राण हो जाती है। उपन्यास 'अचल मेरा कोई' में स्त्री पात्र 'कुंती' आधुनिक, मादक, हठी और लालसामयी स्त्री है। वह अपनी लालसा और वासना के कारण दुःख उठाती है और अंत में आत्मघात कर लेती है। उपन्यास 'टूटे कांच' की स्त्री पात्र 'रोनी' शरीर से सुन्दर और स्वभाव से कर्कश है। वह अपने पति को हमेशा व्यंग्य बाणों से छेदती रहती है।

वर्मा जी ने अपने उपन्यासों में स्त्री के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों रूपों का बड़े यथार्थता के साथ चित्रण किया है पर वर्मा जी का स्त्री के प्रति भाव सकारात्मक है। वे उसे सिर्फ स्त्री के तौर पर नहीं देखते वरन् स्त्री को मानव के रूप में देखना पसंद करते है। उनका स्त्री के प्रति चिंतन आज के सन्दर्भ में विमर्श का विषय है और यह विमर्श साहित्य के लिए अमूल्य भण्डार है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

* (शोधार्थी) महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

मालवी के मानद कवि-बालकवि बैरागी

डॉ. पारसमणि गुप्ता *

प्रस्तावना – मालवा देश मे बोली जाने वाली भाषा, मालवी भाषा है। इस भाषा का साहित्य उन्नत है। इसकी लिपि प्राचीन समय मे 'मालविनी' कही जाती थी। वर्तमान समय मैं इसकी लिपि देवनागरी है। इसके मानद कवि के रूप में बाल कवि बैरागी जी प्रसिद्ध हैं, वे कुछ सौभाग्यशाली ऐसे लोगों में से एक है। जो अपना जीवन शून्य से शुरू कर, अपने पीछे कई शून्य लगा लेते है। उनका व्यक्तित्व संघर्षशील व्यक्तित्व है।

बैरागी जी का वास्तविक नाम नंदराम दास बैरागी था। उनका जन्म स्थान रामपुरा जिला नीमच था। माता-पिता इतने विपन्न अवस्था में थे कि जीविका चलाने के लिए भिक्षावृत्ति को अपनाना पड़ा था। इन्होंने बड़ी मुश्किलों में रहकर बी.ए. किया। प्रतिभा संपन्न होने के कारण 9 वर्ष की अवस्था से ही कविता लिखना आरंभ कर दिया। तब से निरंतर लेखन कार्य चलता रहा।

बैरागी जी राजनीतिक प्रतिभा के धनी रहे है, 15 वर्ष की उम्र में ही वे राजनीति मे सक्रिय हो गए थे। वे दो बार विधायक और म.प्र. शासन में संसदीय सचिव रहे है। वे राज्यमंत्री भी बने। वे मंदसौर जावरा क्षेत्र के लाकसभा सदस्य निर्वाचित हुए साथ ही राज्यसभा सदस्य भी रहे।

बैरागी जी मूल रूप से मालवी के कवि रहे है, वे कवि सम्मेलनों में काव्यपाठ भी करते थे उनकी गायन शैली को विशेष सम्मान प्राप्त था। मालवी भाषा में 'चटक म्हारा चम्पा' तथा 'जावो मैदान' उनकी बहुमुखी साहित्य साधना के प्रतीक है। 'दरद दीवानी', 'जूझ रहा है हिन्दुस्तान, 'गौरवगीत' ललकार', भावी रक्षक देश के, 'दो टूक रेत के रिश्ते', 'कोई तो समझे ओय, अमलतास जैसे हिन्दी काव्य संकलन भी लिखे है। इनके मनुहार भाभी और बिजू बाबू-दो कहानी संग्रह, भी प्रकाशित हुए है। 'शीलवती आग' और आलोक अट्टहास विविध साहित्य है। इसके साथ ही कविताएँ यात्रा वर्णन, संस्मरण, आलेख भी इनके द्धारा लिखे गए है।

मालवी कविताओं में ग्राम्य संस्कृति के, लोकजीवन के बहुरंगी चित्र उभरे है। वर्षा और बसंत पर उनकी लेखनी खूब चली है। राष्ट्रीय भावना के साथ ही मानवतावादी जीवन दर्शन के चित्रण ने कविताओं को एक अनुपम उच्चता प्रदान की है। 'बाजे रे ढोल' इनका जागरण गीत है, पसीनो ललाट को में परिश्रम की महत्त बतायी है-

भाग भरोसे आंगने मत कर दु:ख का ढेर
चोटी ली ऐड़ी तलक श्रम का मोती पेर।

यहाँ गांव से लेकर विश्वस्तर पर आए परिवर्तनों की झलक देखते ही बनती है-

बदल्यों रे बदल्यो यो देस म्हारो बादल्यो
आनी मानी लाल गुमानी अब विपदा नहीं झेलेगा
कंगाल की कम्मरतोड़ी भरसाणां में झेलेंगा।
जामण को सिणगार करीद्या अपना खून पसीनाती
इकी ई ललकाराँ अइरी मथरा और मदीनाती।

मालवी कविताओं की भाषा मंदसौरी मालवी की छटा लिए हुए है तथा इसमें मेवाड़ी मालवी की छाया भी परिलक्षित है भाषा शुद्ध संयत प्रवाहपूर्ण और अर्थ गाम्भीर्य लिए हुए है।

इतना गौरवमय जीवन जीने के बाद 13 मई 2018 को बैरागी जी का अवसान हो गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।
2. मालवी लोक साहित्य-डॉ-श्याम परमार।
3. मालवी भाषा और साहित्य सं. हरिमोहन-बुधोलिया।

* प्राध्यापक, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

Women Empowerment in the Novels of Premchand

Ravindra Kumar *

Abstract - Munshi Premchand is regarded as a one of the greatest and finest writers of the early twentieth century. His works on terrible conditions of the Indian society and the oppression of the peasant by the riches and depiction of the social ills back then portrays the life of the poor and needy during colonialisation. He always took his characters from the people around him. Most of his works are in Hindi and Urdu and he initially wrote in Urdu and later shifted to Hindi due to publication problems in Hindi. His novels portray child marriage, dowry, oppression, poverty and racial discrimination. Some of his stories were stopped from publishing and distribution by the British due to the extreme description of the freedom struggle which were a danger to the British since they were inducing the minds of youngsters [1].

His novels portrayed the strong characteristics of women even when they were not given any importance in the society. His stories shed a light on the patriarchal society and he used his works to describe the difficulties face by women in those times. Women were subjected to various forms of cruelty like sati, child marriage, dowry and prevented from education. While the men went through two to three marriages with complete freedom. This deeply affected the author and his novels also portrayed these characters of women in the society.

Keywords - Women empowerment,Child Marriage,Dowry,colonialisation,racial discrimination,patriarchal society.

Introduction - Women empowerment is defines as the ability of the women to enjoy their right to control and benefit from the resources, assets, income and their own time along with the ability to face risks and increase their status in the society. Before the independence women empowerment was a challenge to most of the individuals in the society. The role of women have been enhancing from the day the world was created. From being a domestic house wife, to a space traveler her growth has been immense. Even though various factors have tried to suppress women from time to time, in name of culture and safety, she had broken them down and risen up high.

Every culture's richness is determined by the way they treat and protect their women. India has always considered women a goddess and named the rivers, country and every respectable thing after them, to show their love and respect for women. Despite all these efforts women have been subjected to various forms of tortures and practices. The Indian government has also produced several welfare policies and created laws to protect women from time to time. Let's see the growth of Indian women and the role of our government in it.

During early ancient period, Indians respected women and treated them equally, infact women were allowed to attend and learn Vedas and they were given equal roles in ruling the country. They were also allowed to choose their marriage and partners through the ceremony of Swayamvar. Degradation of woman was considered as an awful sin during those times.

In the medieval period, during the invasions of the Mughul emperors, the power and respect of women began to reduce gradually. The Rajput women after the Islamic invasion were taken to be sold and raped. To prevent them from being taken away the system of Jahuar was introduced where women molested themselves and destroyed themselves, through fire or knife.

In the later period came Sati where a widowed woman, was burnt alive on her husband's funeral pyre. Along with these, there were also practices of polygamy and polyandry which continued from old times. Women were banned from going outside and socializing with others, and they were required to stay within their house. Education was denied for them. One of the most painful practices, that emerged during this period were child marriage where children below the age of 18 were married. Male children were considered a boon, while the female child was considered a curse. This led to killing of female infants during birth in old times. In modern time the sex selective abortion was practiced by deducting the sex of the baby in early stages of pregnancy through several tests.

Women were also denied legal rights in the property, while men were made the legal heir. Women empowerment had been a topic of discussion for most of the writers and writers like Anita Desai, Kamala Markandaya have written many novels about it. Along with them Premchand has also described women empowerment in a few of his novels. He portrayed his women as beautiful and strong character that faced their problems with courage and love.

*Research Scholar (English) Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA

Munshi Premchand is an Indian author who had written more than a dozen novels in Hindi and Urdu. His works are highly based on oppression and he thought that it was the duty of the writers to enlighten the minds of the suppressed against the colonialised British in India. His works showed the exploitations of the rich from the poor and how the peasants suffered during this period. He worked as a writer for nearly 30 years and he even had a own publishing company which went under a major loss and he accepted it himself that starting the publishing company was the biggest mistake of his life. He suffered a huge loss due to this company. He even worked in the Hindi film industry for a few years. But he moved away as he felt that their works were non literature in nature. He also left his job in the school he worked to write after being inspired by the noncooperation movement of Gandhiji. As a prolific writer his works and ideas behind them are suitable to the audience even today and his works are all based on women empowerment and freedom struggle and rights. Even though the condition and strength of women have developed from the times of Premchand, the concept and the oppression of women still fits and many can still relate their story to the women in these novels[2].

Review of Literature - The women in Premchand's novels were brave enough and they had the strength to face the problems.

In his novel Thakur ka Kaun he portrays the character of a woman named Gangi who is one of the most famous characteristics in his novels. She is a Dalit woman, and her husband is severely ill. When there is situation where she has to get a bucket of drinking water for her husband from the well of the Takur, she does it by risking her honor and bones in the dark against thakur's men, dogs and other perils in the dark. Exclusion and discrimination is the base of this story. The story also tells how women are strong and dedicated to their husbands. Even now the discrimination against the Dalit women and men is a normal occurrence in India. The readers are left with the impression that the female character is brave and intelligent at the end of the novel[4].

Sevasadan is a story that is way ahead of its time and it portrays the life of women named Suman who is born in a good family and married to an Brahmin man. Because of her unfulfilled love life she leaves her house and husband to become a courtesan. But when they are forced to relocate outside the city by the political leader she leaves and joins a home to serve the widows. Later she moves away from them to her sister's home where her husband happens to be her former admirer. To save her sister's marriage she moves away from there to and joins as a teacher in a school that houses former courtesans. The home is called Seva sadan and hence the name of the novel. The character stands by her choices despite everything the society throws at her[4].

In his other novel Godan he describes about Dhania the wife of the central character Hori a peasant. She is described as a woman immersed in miseries, and also she is depicted as a strong woman who stands by her choices. She refuses to bow down and supports her own who are ridiculed by their own. The character is bold, determined and fights against the injustice of the society. She is also a devoted wife and a caring mother. When her husband revolves in complications she boldly goes against the society and her husband to and also struggles to make her husband understand the complications of the society. She is shown as a principle follower of dharma and ignores the traditions when they conflict with the dharma. She is a woman who tries to help the needy despite the caste and creed[3]. [4].

The character Anandi from Bade Ghar ki Beti is a daughter of a rich family background and married into a poor family. She initially feels difficult to get accustomed to the poor lifestyle of her husband and in laws. She also faces huge discrimination from her in laws and often fights with them. She is also strong and refuse to bow down which causes more problems in the family. The beauty and problems of the joint family are portrayed intensively in this story. But Anandi faces the situation and takes wise decisions at each and every point of the story[4].

Niramala from the novel Nirmala portrays the woman who is one the central characters in premchand's novel discussion. Though she didn't fight any form of injustice or patriarchy her character shows the way the women were treated and the problems faced by the women in an normal house hold. It revolves around the evils of dowry system. The author voices his wish to bring social reform in the society and the status of the women. The woman is married to a old man who is her father's age, but she is true and devoted to him. The novel shows her transition as a woman from student to a strong wife and mother is worth a reflection. She has identity crisis but she reforms herself and solves the problems thrown at her[4].

Karma Bhoomi is one of the Hindi novels by Premchand. The story is set in UttarPradesh. This also shows the exploitation of the poor by the rich and it was written after Premchand was inspired by the movements of Gandhi. The climax is placed in an assembly of the poor and dispossessed, when they strike demanding their land back. Even though the policeman kills some persons during the strike, the whole movement gains them victory at last. Amarkanth is an intelligent and idealistic weak young man who hates the activities of his father and his hindu beliefs. He then marries Sukhanda who is beautiful, intelligent and down to earth character and gains his affection from the start. But she starts to dominate him eventually, so Amarkant start to fall for watchman's daughter which is rejected by his father. So he leaves his village and wander along the country. Finally he settles in a village and teaches children and helps the villagers who were rejected by other for being untouchables.Sukhanda initially hates his husband's activities but later gets drawn to the movements after seeing the injustice meted to them by the police firing. Soon she is

accepted by the villagers and then elected as a leader. Amarkanth to gain recognition like his wife leaves his non violence movement and starts to follow the concept of violence. But finally he realizes his mistake and returns back to Gandhiji's principle of non-violence.

The character of Sukhanda shows how women men were jealous of their wives and she despite her husband's shortcoming rise up in the society. The male character also realizes his mistakes in the end and comes back to his wife.

Conclusion - Premchand has allowed everyone to analyze the dimensions of each character and he still lives through his works even after his death in the minds of several million people around the world. Most of his books are made into movies in Bollywood. His work touched the hearts and minds of the under privileged and they live beyond age and time. The world needs to look at them now due to the whole lot of new problems.

The women even though developed still face the oppression and some troubles. The author in his other novels even though he hasn't portrayed women as a main character he still have shown them as a strong individual. The author himself married a young widow woman to show his views and his marriage was not well accepted in the society. Being a reformer himself his stories were based on revolutionary ideas and against the oppressors in the society.

Even though his novels are in Hindi and Urdu only some were translated. But still it is advices for the people of this generation to study the novel and understand the concept of revolution literature. Modern society views some of his women characters as conservative, but the fact is though the women were conservative they were stronger and bolder in their mindset compared to the modern woman.

The women in these novels goes through the problems alone and reforms themselves understanding the problems. The author with ease explains each and every aspect of the Indian society from all the angles through his characters. He also explained the concepts of widow remarriage in his novel Pratigya. He takes the story a step ahead of the society with his beliefs which was not a possibility in the world he was living in.

References :-

1. "Premchand". *En.Wikipedia.Org*, 2019, https://en.wikipedia.org/wiki/Premchand.
2. "Women empowerment". *En.Wikipedia.Org*, 2019, https://en.wikipedia.org/wiki/Womenempowerment .
3. "English Summary OfGaodan | Urdu". *Pages. Wustl. Edu*, 2019, https://pages.wustl.edu/urdu/urdu-readings/gaodan/english-sumamry-gaodan.
4. "5 Strong Female Characters From Munshi Premchand's Stories." *SheThePeople TV*, 31 July 2018, www.shethepeople.tv/news/five-strong-female-characters-munshi-premchands.

****

The Theme Of Alienation In The Works Of Bharati Mukherjee

Dr. Neha Gupta*

Abstract - An important concern of post-colonial literature is related to locale, dislocation and relocation.Displacement of dislocation often leads to a sense of nowhereness and identity crisis. Exile, refugee, diasporic, expatriate and immigrant are related yet slightly different terms concerning the domicile of a person. The experience of an exile or expatriate grants a special insight which is not available to an insider. Majority of exile writers including JhumpaLahiri and Bharati Mukherjee nostalgically present their native land. Indian diasporic community reflects the heterogeneous native of the Indian culture with its variety and complexity governed by caste, religion and linguistic differences. Yet most of them share a common factor, a sense of rootlessness.
Key Words: Expatriate, diaspora, alienation, displacement, transplantation, dislocation, relocation, nostalgia, migration.

Introduction - The history of immigration is history of alienation and its consequences. The effect of transfer will be harsh upon the people than the society they enter. It takes the people out of traditional environments and transplants into a strange ground where strange customs and climate prevail. They are compelled to readjust and redefine themselves. In transplantation, from the old roots to the establishment of new mooring, the immigrant exists in an extreme situation the shock of which sometimes reaches down to generations.

A migrated man, uprooted from his roots tries to adjust in a foreign culture with the utmost of his power but he lives in the two worlds, looks backward and forward. Eachimmigrant, regardless of sex and nationality passes through a traumatic transitional stage. Loneliness, despair, estrangement from familial grounds and their own insignificance in the new realm haunt the migrants.

Exile, refugee, diasporic, expatriate and immigrant are related yet slightly different term concerning the domicile of a person. They indicate the ideologies, choices, reasons and compulsions which govern the cause of migrations from their home. The word 'home' has more connotations than just a devilling place: it is where one belongs to. Home is above all, "that ambience in which one's childhood has flowered and natured into youth". Exile is loss of home.

The three factors that collectively determine expatriate adjustment in the host country are the immigrant's reason for migration, his own ability to adapt to the new environment and his experience and his experience in the host country. After the initial stages of enchantment comes a period of disillusionment and alienation. The merger become different for the host and often refuses to understand the problem of an expatriate. Yet the immigrant nurtures the hopes of assimilating with the host culture as in a metling pot. Maya of BharatiMukharjee's "A Woman's Story" voices the awkwardness an Indian feels in his pre-assimilation period: "First you don't exist. Then you are invisible. Then you are funny, Then you are disgusting. 'Insult', my American friends tell me is a kind of acceptance. No instant dignity here".

The usual thematic core of expatriate writing, the conflict between the native and the alien, the self and the other seems to have acquired a new richness and complexity in the novelistic vision of Bharati Mukherjee owning to her "Singular dovetailing of the narrative line with diverse perspectives: Indian, feminine and immigrant". The immigrant perspective may involve an increased awareness of the value of one's mother country and culture besides a kind of critical distance which the experience of alienation may bring. Affiliation to the culture they have come to "alienates from that which they had left". Through Tara Catright Banerjee, the protagonist of "The Tiger's Daughter", Mukherjee powerfully portrays a fascinating study of a displaced person in native as well as in alien soil.

However, an expatriate like Bharati Mukherjee can be able to write objectivey and accurately about both countries, the natives and the host, but is depends on the attitude and honesty of the writer. Bharati Mukherjee often becomes satiric in her portrayal of her character Tara. Juxtaposition is a technique that is adopted by the novelist to bring the two countries together.

Shyam M. Asnani states that the strength of the modern literary imagination "lies in its evocation of the individual's predicament in terms of alienation, immigration, expatriation, exile and his quest for identity".

***Asst. Professor (English) Sant Hirdaram Girls College, Bhopal Lake Road, Sant Hirdaram Nagar, Bhopal (M.P.) INDIA**

The protagonist Maya of the story "The Tenant" is portrayed as one who slept with married man, nameless men, with adolescent boys but never with an Indian. Through Tara and Maya, Bharati Mukherjee shows different phases of restlessness, repression of the earlier self and over acceptance of the present.

Mukherjee depicts the psychological traumas of a frustrated, immature housewife who fails to adapt to the cross-culture world of the American situation in the novel 'The Wife' also. Dimple the protagonist of "Wife" feels disoriented when confronted with an exotic culture. The narrative minutely examines the enclosed domestic space and charts the gradual disintegration of her personality.

Displacement in Bharati Mukherjee often leads to alienation and search for the self. Instead of focusing on nostalgia, she stresses on the changing identities and the need for refashioning oneself. Dislodgement in the native and the alien environment leads to problems of adjustment. The loneliness of an immigrant has the breadth of unfamiliarity and the painful depth of isolation.

The expatriate writers including Bharati Mukherjee combines the past with the present to recreate a future. All writings, conceive a 'living present' and a past which was 'present before'. There can be the relational configurations in such narratives the assimilatory and the disintegratory. While the former follows, "a characteristic paradigm of beginning with rootlessness, repression of the past and an overt acceptance of the present, the latter begins with a feeling of loss, passing through various shades of nostalgia and culminating into schizophrenic".

References :-

1. Shyam M. Asnani, "Identity crisis of Indian Immigrants: A study of three novels", writers of the Indian Diaspora (p.73)
2. Shyam M. Asnani, "On the Borderlines of the present: Temporal strategies in Bharati Mukherjee and Mistry, writers of the Indian Diaspora" (New Delhi: Mittal, 1985), p.93
3. T. Padma, Issues and Images: Studies in Indian English Literature. P.228
4. Anita Desai, Bye-Bye Blackbird (New Delhi: Orient, 1985) pg.25
5. Chandra B. Joshi, V.S. Naipaul: The voice of Exile (New Delhi: Sterling, 1994), p.2
6. BharatiMukharjee, Darkness (New Delhi: Pengium, 1985), p.2

****

Love, Sex And Marriage In K. A. Porter's Ship Of Fool's

Dr. Anita Tripathi *

Introduction - Love, sex and jealousy are introduced in the first pairings on the Vera. The potential for love exists within as surely as does the potential for evil, but like evil it has to be tapped or "learned". Porter says;

It is hardly possible to exaggerate the lovelesness in which most live, men and women: wanting love, unable to give it, or inspire it, not knowing how to treat it, lacking the humility, or the very love itself that could teach them how to love: it is the pain fullest thing in human life (CE, 53).1

Elsa Lutz yearns for love without knowing what it is. She described her dilemma to jenny :

My father, all my life, told me to believe in love, and to be loving, and it would make me happy, but my mother says it is all just make-believe. Sometimes I wish I knew — I love my mother, but it seems to me that my father knows more (SF, 66).2 Jenny later finds that Elsa on the one hand confuses lust with love, probably as a result of her mother's views, but on the other hand idealizes it as her father does. Freytag has romantic notions about love not very different from Elsa's. When Freytag talks to Jenny about love, Jenny's honest reaction, that Freytag's words seem "Sick and sentimental and false" (SF, 168), reflects Porter's already established view of romantic love.3 Freytag's declarations of profound love for te elusive Mary Champagne have a hollow ring in view of his morous attentions to both Jenny and Mrs. Treadwell. Even Mrs. Treadwell recognizes lust but fears evn the word love, Only Jenny and Dr. Schumann (and parhaps La Condesa) undestand the integrating relationship between sesual and spiritual love that gives the lie to the romantic notions of Freytag and Elsa.

La Condesa is the agent of Dr. Schumann's progress towards truth. At first the doctor takes interest in her out of pit and curiosity, but once he begins to visit her in her cabin, the nature of the relationship changes. Thought he tells her that he cannot love her if he knows at all "in the least what love is" (SF, 202), he begins to love her, One one of his visits to her he tries to confort her, but she rejects the consolation with the question :

Oh, my friend, have you gone mad with virtue and piety, have you lost you human feelings, how can you have forgotten what suffering is? .. Did you come in here last night and kiss me ? Did you put your arms around me and almost raise me up from my pillow, and call me your love ? Tell me.. (SF, 367-68).

Dr. Schumann at this, folds her into his arms, and lays down his head on her shoulder and draws her face to his and groans, "I did, I did.. I did, my darling" (SF, 368-69). La Condesa thinks that the innocent romantic love" she should have had in her girlhood has come to her "so late, so strangely" that she could not understand it. But the doctor says, "I have not loved you innocently... but guiltily and I have done you great wrongs, and I have ruined my life...", La Condesa says.

My life was ruined so long ago, I have forgotten what it was like before.. So you are not to have me on your mind... I shall find a way out of everything. And now, now my love, let's kiss again realy this time in broad daylight and with each other well, for it is time for us to say good'bye (SF, 369).

Dr. Schumann sees his recent actions as symptomatic of his "moral collapse".

He had refused to acknowledge the wrong he had done La Condesa, his patient (to provide drugs to her).. he had tormented her with his guilty love and yet had refused her — and himself — any joy in it. He had let her go in hopelessness without even that faintest promise of future help of deliverance. What a coward, what a swine (SF, 373).

In reaction to his new truth, he sends her a professional massage, that of a guilt-ridden physician inquiring after a patient he has improperly treated. His message deserves no reply from La Condesa and receives none. Afterwards Dr. Schumann has the dream of the betrayer. But unlike Laura he does not awake afraid of the darkness that contains the truth; he accepts the suffering that accompanies it. Porter makes La Condesa's Madness uncertain, even ambiguous. Madness like love is inexplicable and irreducible, and cannot be placed in a pattern. Observing her he thinks, "At the very bottom of life there is an unanswerable riddle" (SF, 115-16).

Jenny and David, both knowing each other's weaknesses, use theme as weapons to injure. David has enough of a superficial love for her to keep her close and vulnerable, but his deep insecurity leads him repeatedly to injure her and retreat. She thinks of how he drank and practiced oter "dull excesses in a methodical,

*Professor (English) Govt. Girls College, Satna (M.P.) INDIA

uncommunicative frenzy of cold yet sensual enjoyment. and when he made love, jenny knew he forgot who she was" (SF,147). Jenny admits to herself that she sees love as a trap and yet falls in and out of it like "falling off a cliff". David has rigid ideas about art, love, sex, and politics, in contrast to Jenny's fresh and unrestricted responses. In Porter's view it is the contrast between life and death, and the most important step Jenny takes in her own process of vision is to recognize David's life-negating characteristics. Porter has explained the impossibility of fully knowing someone else. Denny tells David the he would put Jenny "out of circulation" if she belonged to him. David responds: "Well, she doesn't belong to you", and adds with a stroke of lightning revelation, "she doesn't belong to anybody, not even to herself!" (SF, 438-39). David's new truth consists of knowing that one cannot own another. Both Jenny and David know that their love affair is over, but neither is ready to let go.

Remembering the dream-memory of a fight to the death between an Indian man and woman and seeing the faces change slowly into David's and her own, Jenny later thinks, "We aren't going to kill each other because I mean to get away before that happens'. And she adds, in a horrible travesty on the procreative purpose of marriage, "I'II be carrying like a monotonous foetus for the rest of my life" (SF, 169).

Theyy had agreed.. not to marry because they must be free, marriage was a bond cramping and humiliating to civilized beings; yet what was this tie between them but marriage, and marriage of the worst sort, with all the restraints and jealousies and burdens, but with none of its dignity, none of its warmth and protection (SF, 145).

Every marriage is predominantly unhappy, and only inferior characters are portrayed in stable unions. The happiness of the newly weds, apparently an exception, is, as in similar cases in Old Mortality and Pale Horse, Pale Rider, only a temporary romantic euphoria, remote from the surrounding reality and based primarily on the first strong waves of sexual pleasure which soon inevitably diminish. The union between Jenny and David is mutually destructive; and that between Dr. Schumann and La Condesa is, in a subtler way, equally. We learn that Dr. Schumann's marriage is typically unhappy. When Freytag is removed from the Captain's table because his wife is Jewish, he repents of his marriage. Frau Hutten, "the ideal German wife", remembers bitter pills of submission she had to swallow for the health of her marriage :

She knew well that upon the woman depends the whole crushing weight of responsibility for happiness in marriage. At times this had seemed to be just one more unbearable burden which fell to the lot of wives (SF, 284-285).

Mrs. Treadwell's hatred for men is her resentment shared with her resentment shared with her more frankly puritanical counterparts in the Old Order and with the wives in That Tree and A Day's Work, at man's violation of her virginity and the solitary integrity it symbolizes so organically. She complains that her husband "preferred sleeping with any chance slut" rather than with her, though she tried hard to be "slut enough to please him" (SF,141).

The atmosphere of cold, queasy sexuality, and the accompanying imagery of revulsion, radiates outward from the dancers to condition each of the other sexual relationships. La Condesa croons seductively to Dr. Schumann and he has "a savage impulse to strike her from him, this diabolical possession, this incubus fastened upon him like a bat". Even when the incredibly stuffy Huttens make love, we find ourselves back with Pepe and Amparo: the same stressed male violence, the same abased female satisfaction, the same description of their bodies "grappled together like frogs". Sex on Miss Porter's "ship of this world" is Denny's constant goatish leer; it is the "monkey faced" snickering of the Cuban students and the impassioned face of La Condesa, "her eyes.. wild and inhuman as a monkey's. Sex is Jenny's gesture, "unselfconscious as a cat", of slapping inner thigh; it is the Baumgartner's terrifying their child who lies awake in the next berth; in sum, it is David Scott's moment of introspection when "slowly there poured through all his veins again that deep qualm of loathing and intolerable sexual fury, a poisonous mingling of sickness and death like pleasure" (SF, 314-326).

This is what Miss Porter's "magnificent lack of illusion" comes For Miss Porter's versions of political action, artistic creation, religious belief, teaching, and so forth are no less skewed and embittered than her versions of copulation.

References :-

1. The Collected Essays and Occasional Writings of Katherine Anne Porter.
2. Ship of Fool's.
3. Roy Newquist : "An Interview with Katherine Anne Porter", McCall's 92, August 1965, 139. Porter told Newquist, " God knows I'm not for all moon-light and roses".
4. J. DeMouy : Katherine Anne Porter's Women : The Eye of Her Fiction, Austin, Texas Press, 1983, 145.
5. G. Hendrick : Katherine Anne Porter, New York, Twayne, 1965, 72. D.H. Unrue : Understanding Katherine Anne Porter, Columbia, University of South Carolina Press, 1988, 105.

****

महिलाओं एवं पुरूषों में मधुमेह रोग के प्रति जागरूकता का अध्ययन

सुधा शाक्य *

शोध सारांश – प्रस्तुत अध्ययन महिलाओं एवं पुरुषों में मधुमेह रोग के प्रति कितने जागरुक हैं, और जागरुकता किसमें अधिक है, के उद्देश्य से किया गया है। इस हेतु मधुमेह रोग से ग्रस्त 50 महिलाओं एवं 50 पुरुषों के प्रतिदर्श का चयन उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन पद्धति के द्वारा किया गया, और इस प्रकार सर्वेक्षण शोध अभिकल्प की रचना की गई। प्रदत्त संकलन हेतु मधुमेह रोग के प्रति जागरुकता से संबंधित स्वनिर्मित प्रश्नावली का निर्माण किया गया तथा सर्वेक्षण अवलोकन विधि से आंकड़ों का संकलन किया गया। प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण प्रतिशत प्राप्तांकों के आधार पर किया गया। परिणामों का विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि महिलाओं एवं पुरुषों में मधुमेह रोग के प्रति जागरुकता में अंतर पाया गया पुरुषों की तुलना में महिलाओं में जागरुकता अधिक है, अर्थात प्रस्तुत अध्ययन की शून्य परिकल्पना कि महिलाओं एवं पुरुषों में मधुमेह रोग के प्रति जागरुकता में अंतर नहीं पाया जाएगा अस्वीकृत होती है। निष्कर्ष कहा जा सकता है कि महिलाएं पुरुषों की तुलना में अधिक जागरुक हैं।

प्रस्तावना – आज भारत जैसे विकासशील देश में विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने इतनी तरक्की की है कि भौतिक संसाधनों की उपलब्धता बहुत आसान हो गई है। दैनिक व्यस्ताओं, आलस्य एवं समय प्रबंधन की कमी के कारण व्यक्ति की दिनचर्या पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है, तनावभरी जिन्दगी जीने से आज व्यक्ति के शरीर में मोटापा, कैंसर, अर्थराइटिस, अस्थमा, अवसाद, हृदय संबंधी विकार और मधुमेह रोग बढ़ रहा है। मधुमेह जैसी गंभीर और खतरनाक रोग एक विकृत जीवनशैली जन्य रोग है, जिसमें रक्त में शर्करा की मात्रा सामान्य स्तर से अधिक हो जाती है, और मूत्र के द्वारा ग्लूकोज बाहर निकलने लगता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 2007 में भारत के भविष्य के लिए एक चेतावनी जारी की थी कि 2020 तक 70 लाख भारतीयों की मौत जीवनशैली आधारित बीमारियों के कारण होगी।

मधुमेह चयापचय संबंधी रोग है शरीर में रक्त में शर्करा की मात्रा को नियंत्रित करने वाले इंसुलिन नामक हार्मोन का निर्माण बहुत कम होता है या इंसुलिन अपना कार्य ठीक से नहीं कर पाता। मधुमेह का ज्लचम ८ इस प्रकार से शरीर में इंसुलिन बनना बंद हो जाता है और उपचार के लिए इंसुलिन ही देना पड़ता है। यह बच्चों एवं किशोरों में अधिक होती है और Type I में 40 वर्ष की उम्र के बाद होती है, जिसमे इंसुलिन पर्याप्त मात्रा में स्त्रवित नहीं होता। ज्यादा प्यास लगना, मुंह सूखना, बार-बार मूत्र आना, मन घबराना, थकावट होना, हाथ पैरों का सुन्न होना, मुंह से दुर्गंध आना, भूख ज्यादा लगना, वजन एकदम बढ़ जाना, आंखों में धुंधला दिखना आदि लक्षण दिखलाई देते हैं। अनुवांशिकता, आहार, मोटापा, मानसिक तनाव, अंत:स्त्रावी ग्रंथियों की विकृति आदि मधुमेह के कारण होते हैं।

भारत में 50.8 मिलियन व्यक्ति मधुमेह के शिकार हैं, तथा प्रतिवर्ष 35 लाख व्यक्तियों की मौत इस रोग से होती है। स्त्रियों की तुलना में पुरुषों में यह रोग अधिक पाया जाता है, अभी तक हुए अनुसंधानों से यह स्पष्ट है कि 2025 तक भारत में हर पांचवा व्यक्ति इसका शिकार हो जाएगा।

परिकल्पना – महिलाओं एवं पुरुषों में मधुमेह रोग के प्रति जागरुकता में नहीं अंतर नहीं पाया जाएगा।

न्यादर्श – प्रस्तुत अध्ययन हेतु नरसिंहपुर जिले में रहने वाले 60 वर्ष से कम उम्र के मधुमेह ग्रस्त 50 महिलाओं एवं 50 पुरुषों का चयन किया गया।

अभिकल्प – सर्वे शोध अभिकल्प का निर्माण किया गया। जिसके अंतर्गत मधुमेह ग्रस्त 50 महिलाओं एवं 50 पुरुषों का चयन कर उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन पद्धति के द्वारा किया।

उपकरण – मधुमेह के प्रति जागरुकता से संबंधित स्वनिर्मित प्रश्नावली, अवलोकन तथा साक्षात्कार विधि का उपयोग किया।

कार्यविधि – आंकड़ों में संकलन हेतु मधुमेह ग्रस्त 50 महिलाओं एवं 50 पुरुषों से मधुमेह के प्रति जागरुकता से संबंधित स्वनिर्मित प्रश्नावली को प्रशासित कर हां और नहीं में उत्तर प्राप्त किए तथा अवलोकन एवं साक्षात्कार विधि के द्वारा रोग के प्रति अन्य जानकारियां प्राप्त की तथा सर्वेक्षण कार्य पूर्ण किया।

परिणाम एवं विवेचना – तालिका-1 से स्पष्ट है कि मधुमेह की दवा का नियमित सेवन करने वाली महिलाओं की संख्या 72% है तथा न करने वाली महिलाओं का 28% जबकि पुरुषों की संख्या 81% एवं 19% है। परिणामों से स्पष्ट है कि महिलाओं की तुलना में नियमित दवा का सेवन करने में पुरुष अधिक जागरुक हैं, क्योंकि महिलाएं आज दोहरी जिम्मेदारी निभा रहीं हैं, कभी-कभी कार्य की अधिकता और तनाव के कारण वे समय पर दवा लेना भूल सकती हैं, जबकि 30% वृद्ध महिलाएं तथा 20% वृद्ध पुरुष समय पर दवा नहीं लेते हैं। महिलाओं ने इस बात को स्पष्ट किया कि कभी-कभी दवा समय पर न लेने के कारण परेशानी हो जाती है और तनाव बढ़ जाता है।

परिणाम तालिका-1

1. क्या आप मधुमेह की दवा का सेवन नियमित करते हैं ?

	हाँ	नहीं
महिला	72%	28%
पुरुष	81%	19%

स्त्रोत-सर्वेक्षण पर आधारित

परिणाम तालिका-2

2. क्या आप चिकित्सक के पास नियमित जांच के लिए जाते हैं ?

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

	हाँ	नहीं
महिला	78%	22%
पुरुष	63%	37%

स्त्रोत–सर्वेक्षण पर आधारित

तालिक–2 से स्पष्ट है कि चिकित्सक के पास 78% महिलाएं तथा 63% पुरुष नियमित जाँच के लिए जाते हैं, जबकि 22% महिलाएं तथा 37% पुरुष नहीं जाते हैं, इसमे भी मधुमेह रोग के प्रति महिलाएं पुरुषों की तुलना में अधिक जागरुक हैं। कुछ अध्ययनों (1972) में पाया गया कि स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा सुझाव ग्रहण शीलता अधिक पाई जाती है, इसी से प्रेरित हो कर वे चिकित्सक के सुझाव और बातों पर अधिक ध्यान देती हैं, और नियमित जांच के लिए जाती हैं तथा चिकित्सक के परामर्श को स्वीकार करती है।

परिणाम तालिका–3

3. क्या आपकी दिनचर्या नियमित है ?

	हाँ	नहीं
महिला	76%	24%
पुरुष	66%	34%

स्त्रोत–सर्वेक्षण पर आधारित

तालिका–3 से स्पष्ट है कि नियमित दिनचर्या में भी महिलाओं का संख्या 76% तथा पुरुषों की संख्या 66% अर्थात नियमित दिनचर्या के लिए पुरुषों की तुलना में महिलाएं अधिक जागरुक हैं। साक्षात्कार के दौरान महिलाओं ने बतलाया कि वे सुबह टहलने जाती हैं, और घर में कार्य नियमित समय पर करना, चिकित्सक की सलाह मानती तथा अपना ध्यान भी रखती है।

जबकि नियमित दिनचर्या नहीं होने में महिलाओं की संख्या 24 प्रतिशत तथा पुरुषों की संख्या 34 प्रतिशत है। नौकरी के दबाब और बाहर जाने के कारण कभी–कभी पुरुषों की दिनचर्या अनियमित हो जाती है। एसोसिएट चेम्बर ऑफ कामर्स एंड इंडस्ट्री (2011) द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार 21 से 52 वर्ष की 60–70 प्रतिशत महिलाओं की जीवन शैली जनित रोगों जैसे मोटापा, पीठदर्द, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, अवसाद और तनाव से पीड़ित पाया गया।

परिणाम तालिका–4

4. क्या आप अपने खानपान के प्रति जागरुक हैं ?

	हाँ	नहीं
महिला	60%	40%
पुरुष	44%	56%

स्त्रोत–सर्वेक्षण पर आधारित

तालिका–4 से स्पष्ट है कि खानपान के प्रति जागरुकता में महिलाओं की संख्या 60% तथा पुरुषों की संख्या 44% है, अर्थात खानपान का ध्यान रखने में पुरुषो की अपेक्षा महिलाएं ज्यादा जागरुक हैं, जबकि जागरुक न रहने में महिलाओं की संख्या 40% पुरुषों की संख्या 56% है। साक्षात्कार में पुरुषों ने इस बात का जिक्र किया कि खानपान समय वे कभी–कभी लापरवाह हो जाते हैं, और भूख से अधिक भोजन कर लेते हैं, जिसका दुष्प्रभाव भी कभी–कभी झेलना पड़ता है, विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO)(2012) की रिपोर्ट के अनुसार भारतवर्ष में 11.1 प्रतिशत वयस्क पुरुष एवं 10.8 प्रतिशत वयस्क महिलाओं में रक्तशर्करा बड़ी हुई पाई गई है, अर्थात खानपान में लापरवाही तथा व्यायाम न करना इसका मुख्य कारण है। खानपान के प्रति लापरवाही का परिणाम है कि आज कई व्यक्तियों की मृत्यु मधुमेह, हृदयरोग आदि से हो रही है।

परिणाम तालिका–5

5. क्या आप मानसिक तनाव का अनुभव करते हैं ?

	हाँ	नहीं
महिला	71%	29%
पुरुष	39%	61%

स्त्रोत–सर्वेक्षण पर आधारित

तालिका 5 से स्पष्ट है कि मानसिक तनाव का अनुभव करने में महिलाओं की संख्या 71 प्रतिशत है, जबकि पुरुषों की संख्या 39 प्रतिशत है, अर्थात पुरुषों की तुलना में मधुमेह के प्रति अधिक मानसिक तनाव अनुभव करती हैं। जबकि 29 % महिलाएं एवं 61% पुरुष तनाव का अनुभव नहीं करते साक्षात्कार के दौरान भी यह तथ्य सामने आया है कि महिलाएं संवेदनशील होने के कारण ज्यादा परेशान हो जाती हैं तथा अपने परिवार की चिन्ता अधिक रहती है, क्योंकि महिलाएं ही परिवार की धुरी होती है, जो पूरे परिवार को संभाले रहती हैं। कुमार एवं सहयोगी (1987) ने हृदय रोगियों में पुरुषों की अपेक्षा महिला रोगियों में मृत्यु के प्रति अधिक चिन्ता के बारे में परिणाम प्राप्त किए हैं। कैंसरग्रस्त महिलाओं में मृत्यु के प्रति चिन्ता की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक है।

प्राप्त परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि मधुमेह रोग के प्रति जागरुकता पुरुषों की तुलना में महिलाओं में अधिक है। मधुमेह एक ऐसा रोग है, जिसमे जागरुकता की अत्यन्त आवश्यकता है, अन्यथा ये रोग शरीर के अंदर के नाजुक अंगों, जैसे आंख, किडनी, यकृत आदि को क्षतिग्रस्त कर देता है। जिससे भविष्य में इसके दुष्परिणाम अत्यन्त घातक होते हैं। भारत में प्रत्येक आयुवर्ग में 25.8 मिलियन व्यक्तियों को यह रोग है जिसमे 18.8 मिलियन व्यक्तियों को ही पता है कि उन्हें यह रोग है, जबकि 7.0 मिलियन व्यक्तियों को यह पता ही नहीं है कि उन्हें यह रोग है। यही कारण है कि भारत में 35 लाख व्यक्ति प्रतिवर्ष काल के ग्रास हो जाते हैं। मधुमेह के बढ़ने की गति अतितीव्र है। अभी तक के अनुसंधान कह रहे हैं कि 2025 तक भारत में हर पांचवा व्यक्ति इसका शिकार हो जाएगा इसलिए इसका नियंत्रण अतिआवश्यक है। कुछ महिलाओं एवं पुरुषों ने यह स्वीकार किया कि वे विज्ञापनों में आने वाली दवाओं का सेवन बिना चिकित्सक के परामर्श से कर लेते हैं। सुझाव के तौर पर उन्हें ऐसा न करने की सलाह दी क्योंकि इसके दुष्प्रभाव भविष्य में घातक हो सकते हैं।

निष्कर्ष – मधुमेह रोग के प्रति पुरुषों की तुलना में महिलाएं अधिक जागरुक पाई गई तथा मधुमेह से उत्पन्न होने वाली समस्याओं का समाधान भी उन्होंने स्वयं करने का प्रयास किया। साथ ही चिकित्सकीय परामर्श पर भी जोर दिया। मनोवैज्ञानिक परामर्श तथा कुछ सावधानियां वरत कर व्यक्ति जीवन भर मधुमेह के साथ भी स्वस्थ्य और खुश रह सकता है।

सुझाव :

1. अष्टांग योग एवं अध्यात्म को अपनाएं।
2. मनन, शिथलीकरण की प्रक्रिया को अपनाए।
3. रोगियों को सामाजिक सहयोग अवश्य दें।
4. अपनी दिनचर्या को नियमित रखे एवं नियमित व्यायाम करें।
5. चिकित्सकीय परामर्श को अवश्य स्वीकार करें।
6. मानसिक तनाव को कम करने की कोशिश करें।
7. यदि वजन अधिक है तो कम करने की कोशिश करें।
8. खानपान पर नियंत्रण रखें तथा कोर्बोहाइड्रेट/फैट संतुलित मात्रा में

ले।

9. समय पर दवाईयों का सेवन करें और अपने मन से किसी भी दवा को न लें।
10. सकारात्मक सोच को अपनाएं।
11. हर तीन महिने में रक्त, शर्करा तथा साल में एक बार आंखों, हृदय, यकृत तथा गुर्दे की जांच अवश्य कराएं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल,एन, (2012), आरोग्यधाम, डायविटीज-गुर्दे रोग विशेषांक, जुलाई 2012, मुजफ्फरनगर, पृ. 116-117
2. ब्रूटा, के.डी. (2002), व्यवहारपरक अनुसंधान में प्रायोगिक अभिकल्प, प्रथम संस्करण, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निर्देशालय, नई दिल्ली पृ. 23-24
3. शर्मा, आर.एवं नेमा, ए. (2014), जीवन शैली जनित स्वास्थ्य समस्याएं एवं समाधान, कृष्णा कम्प्यूटर एंड प्रिंटर्स, सागर, पृ. 84-85, 182
4. सिंह, ए.के. (2014), मनोवैज्ञानिक शोध विधियां, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली पृ. 119-120
5. विश्वकर्मा एन.एवं परांजये, एन. (2004) विभिन्न गंभीर रोगों (कैंसर हृदय मस्तिष्क आघात) से ग्रस्त रोगियों की मृत्यु के प्रति चिंता का तुलनात्मक, रिसर्च लिंक जर्नल, इंदौर, 16, पृ. 136-137

****

उच्च समायोजनशील तथा निम्न समायोजनशील युवाओं में आक्रामकता का तुलनात्मक अध्ययन

भारती साहू*

प्रस्तावना – समायोजन – मानव जीवन में दुख – सुख, आशा – निराशा, उत्साह – निरूत्साह आदि विषम परिस्थतियों के क्षण निरन्तर आते रहते है। जो व्यक्ति अपने गुणो से जीवन में आने वाली समस्याओं तनावों चिन्ताओं तथा अन्तंद्धदों का सामना सहर्ष कर लेता है तथा इन समस्याओ के प्रति उचित प्रतिक्रिया करता है, वही है, समायोजन।

बोरिंग (1962) के अनुसार –'समायोजन वह प्रक्रिया है, जिसके द्धारा जीव अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति को प्रभावित करने वाली परिस्थतियों में सन्तुलन रखता है।' समायोजन सुव्यवस्थित ढंग से परिस्थतियो के अनुकूलन की प्रक्रिया है, जिससे व्यक्ति की आवश्यकताओ की पूर्ति होती है तथा मानसिक द्धन्द नहीं उत्पन्न होने पाता है।

बेरिंग, लैगफेल्ड व वेल्ड के अनुसार – 'समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्धारा प्राणी अपनी आवश्यकताओ और इन आवश्यकताओ की पूर्ति को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों में संतुलन रखता है।'

गेट्स एवं अन्य (1965) के अनुसार – 'समायोजन निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है, जिसके द्धारा व्यक्ति अपने और अपने वातावरण के बीच सन्तुलित सम्बधं बनाये रखने के लिए अपने व्यवहार में परिवर्तन करता है।'

समायोजित व्यक्ति के लक्षण – समायोजित व्यक्ति वातावरण और परिस्थिति का ज्ञान और नियन्त्रण रखता है और उन्ही के अनुकूल आचरण करता है। वह अपने और वातावरण के बीच सन्तुलन बनाये रखता है। अपनी आवश्यकताओं और इच्छा के अनुसार सन्तुलित व्यक्ति वातावरण और वस्तुओ का लाभ उठाता है।अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वह समाज के अन्य लोगों को कष्ट नहीं पहुँचाता है। साधारण परिस्थति में वह सन्तुलन और सुखी रहता है तथा अपनी कार्य कुशलता को बनाए रखता है। समायोजित व्यक्तित्व में सामाजिकता की भावना होती है तथा आदर्श चरित्र वाला, संवेगात्मक रूप से सन्तुलित तथा उत्तदायित्व साकार करने वाला तथा उनको निवाहने वाला होता है। समायोजित व्यक्ति के स्पष्ट उद्देश्य होते है तथा साहसपूर्ण व उचित ढंग से कठिनाइयों व समस्याओं का सामना करता है।

गेट्स व अन्य विद्धानो के अनुसार – 'संक्षेप में समायोजित व्यक्ति वह है जिसकी आवश्यकताएँ एवं तृप्तियाँ सामाजिक दृष्टीकोण तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की स्वीकृति के साथ संगठित हो।'

कुसमायोजित व्यक्ति के लक्षण – कुसमायोजित व्यक्ति अपने को वातावरण के अनुकूल नही बना पाता है। वह असमायोजित व स्वार्थी और दुखी व्यक्ति होता है। वह संवेगात्मक रूप से असन्तुलित रहता है और उद्देश्य अनिश्चित व अस्पष्ट होते है। धृणा द्धेष व बदले की भावना रखने वाला होता है। उसके सामने यदि साधारण सी बाधा उत्पन्न हो जाएं तो वह अपना संन्तुलन खो बैठता है। ये स्नायुरोग से पीड़ित होते है मानसिक द्धन्द एवं कुण्ठा से ग्रस्त तथा तनाव से युक्त होता है।

आक्रामकता – मनुष्य के सामाजिक व्यवहार का आक्रामकता एक अविभाज्य अंग है, आक्रामकता एक प्रकार का वह व्यवहार है, जिसका उद्देश्य दूसरो को नुकसान या चोट पहुँचाना होता है। आक्रामकता की अभिव्यक्ति में हथियारो का विशेष रूप में उपयोग किया जाता है। तो आक्रामक व्यवहार हिंसा और विध्वंस का रूप धारण कर लेता है इस दिशा में अक्रामक व्यवहार विनाशकारी हो जाता है। आक्रामकता एक ऐसा व्यवहार है जो मनुष्य ओर पशुओं दोनों में पाया जाता है। अत: आक्रामक व्यवहार एक सार्वजनिक घटना है।

Aggression is the internation ijury of anather berkowitz (1975) - आक्रामकता एक ऐसा शारीरिक या शाब्दिक व्यवहार है, जिसका उद्देश्य दूसरो को चोट पहुचॉना होता है। myres (1988) आक्रामकता एक ऐसी अनुक्रिया है, जो दूसरे प्राणी को एक अनिष्ठकर उद्दीपन प्रदान करता है Buss (1961)

उपकल्पना – उच्च समायोजन शील तथा निम्न समायोजन शील युवाओं की आक्रामकता में अंतर नहीं पाया जाएगा।

शोध अध्ययन विधि – न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन में उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन विधि से नरसिंहपुर नगर के 20 उच्च समायोजन शील तथा 20 निम्न समायोजनशील युवाओं का चयन न्यादर्श हेतु किया गया। जिसका विवरण न्यादर्श तालिका में प्रस्तुत है तथा समायोजन के उच्च समायोजनशील व निम्न समायोजनशील व्यक्ति का चयन करने के लिए प्रष्नावली का उपयोग किया गया।

न्यादर्श तालिका 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

प्रायोगिक अभिकल्प – प्रस्तुत शोध अध्ययन में उच्च समायोजन शील तथा निम्न समायोजनशील व्यक्तियो की आक्रामकता के अध्ययन हेतु द्धि समूह अभिकल्प का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकी – प्रस्तुत शोध अध्ययन में उच्च समायोजन शील एवं निम्न समायोजन शील युवाओ की आक्रामकता में सार्थक अन्तर की जांच हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी – टेस्ट की गणना की गई है।

प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में दो प्रश्ना वली समायोजन सूची व आक्रामकता मापनी का प्रयोग किया गया है। डी.एन. श्रीवास्तव एवं गोविंद तिवारी द्धारा निर्मित समायोजन मापनी का प्रयोग किया गया है जिसकी विश्वसनीयता .95 तथा वैद्यता का सहसम्बंध गुणाकं .70 है तथा दूसरी मापनी डॉ. प्रीति तिवारी द्धारा निर्मित आक्रामकता मापनी जिसकी विश्वसनीयता .91 तथा वैद्यता का सहसबंध गुणांक .78 है।

*अतिथि शिक्षक (मनोविज्ञान) स्वामी विवेकानंन्द शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र) भारत

आकड़ो का संकलन – आकड़ो के संकलन हेतु नरसिंहपुर नगर के 20 उच्च समायोजनशील तथा 20 निम्न समायोजन शील युवाओं से व्यक्तिगत रूप से मिलकर परीक्षण प्रपत्र भरवाकर आकंडों का संकलन किया गया।

परिणाम एवं विवेचना– प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राप्त परिणाम, परिणाम तालिका में अंकित है –

परिणाम तालिका 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

प्रस्तुत शोध अध्ययन में उच्च समायोजन शील एवं निम्न समायोजनशील युवाओं की आक्रामता का मापन किया गया। जिसमें उच्च समायोजनशील की आक्रामकता का मध्यमान 23.8 एवं मानक विचलन 7.25 प्राप्त हुआ, इसी तरह से निम्न समायोजनशील युवाओं की आक्रामकता का मध्यमान 32.65 तथा मानक विचलन 7.70 प्राप्त हुआ मध्यमान व मानक विचलन के आधार पर दोनों ही समूहों में अर्थात उच्च समायोजन एवं निम्न समायोजन शील युवाओ की आक्रामकता में अंतर पाया गया। प्रस्तुत शोध अध्ययन में t का मान 3.75 प्राप्त हुआ है जो कि 38 df पर 0.05 P पर प्राप्त t के मान 2.02 एवं 0.01 P पर प्राप्त t के मान 2.71 से अधिक है। अत: प्राप्त परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि उच्च समायोजनशीलता तथा निम्न समायोजनशील युवाओ की आक्रामकता में सार्थक अन्तर पाया गया।

जो व्यक्ति उच्च समायोजनशील होते है, वे हर कार्य को व्यवस्थित ढंग से करते है, जिससे उन्हें बेवजह की समस्याओ से नहीं जूझना पड़ता है। और न ही वे किसी कार्य को लेकर चिंतित रहते है या परेशान रहते है जो व्यक्ति उच्च समायोजन शील हो उनकी आक्रमकता हर क्षेत्र में कम होती है चाहे परिवारिक क्षेत्र हो या व्यवसायिक क्षेत्र हो इनका सभी से सौहापूर्ण संबंध होता है उच्च समायोजन शील व्यक्ति चिंतित कम रहते है क्योंकि वह अपना हर कार्य एक योजनाबद्ध तरीके से करता है। उनकी सोच धनात्मक दिशा में होती है व आशावादी प्रवत्ति के होते है। जिससे वे हर क्षेत्र में सफल होते है और व्यक्ति में कुठा उत्पन्न नहीं होती तथा आक्रमकता भी निम्न समायोजन शील व्यक्तियों की तुलना में कम पायी जाती है।

डोलार्ड एवं उनके सहयोगी (1939) के अनुसार – 'कुठा से हमेशा किसी न किसी प्रकार की आक्रमकता उत्पन्न होती है व्यक्ति में जितनी मात्रा में कुठा उत्पन्न होगी उतनी ही मात्रा में आक्रमकता भी उत्पन्न होगी' जब व्यक्ति अपने लक्ष्य को लेकर बार बार असफल होता है या किसी लक्ष्य को प्राप्त करने में बाधा महसूस करता है तो वह अपने आत्मविश्वास में कमी पाता है दूसरे लोग उसकी कार्यक्षमता या योग्यता पर उगली उठाते है तो व्यक्ति में हीन भावना का विकास हो जाता है और इसकी सोच ऋणात्मक दिशा में परिवर्तित होती है या व्यक्ति ऋणात्मक दिशा में सोचने लगता है वह अपने किसी कार्य को अच्छे ढंग से नहीं कर पाता और कुठित होने से उसमें आक्रामकता बहुत अधिक उत्पन्न होती है उच्च समायोजनशील तथा निम्न समायोजनशील व्यक्तियों की आक्रामकता में अंतर का एक कारण कुठा भी होता है।

डी.एन. श्रीवास्तव (1975) – शैक्षिक उपलब्धि और समायोजन संबंधी अध्ययन में ट्राईवरिएट ऐनालिसिस के आधार पर यह स्थिर किया कि इंटरमीडिएट और स्नातकोत्तर के विद्यार्थियो में यह चर एक दूसरे से धनिष्ठ रूप से संबंधित है इस अध्ययन में देखा गया है कि उच्च समायोजशील उच्च शैक्षिक उपलब्धी में सहायक है।

व्यक्ति अनेक मानसिक अवस्थाओ में विभिन्न प्रकार की अनेक समस्याओं के साथ समांजस्य और अनुकूलन करता है। तनाव, दबाव, चिंता द्वंद, कुण्ठा यदि व्यक्ति इनके साथ अनुकूलन करने में असफल होता है तो व्यक्ति का समायोजन कुसमायोजित या निम्न समायोजनशील होता है और ऐसे व्यक्तियों में आक्रामकता उच्च समायोजनशील की तुलना में अधिक पाई जाती है।

बैंडूरा एवं रासॅ (1974) ने अपने अध्ययन के आधार पर यह बताया कि उन बच्चों में आक्रामक व्यवहार की संख्या बढ गई जिन्हें टेलीविजन पर आक्रामक दृश्य वाले फिल्म दिखलाये गए थे जबकि जिन बच्चों को ऐसा फिल्म देखने का मौका नहीं मिला था, उनमें आक्रामकता में कोई वृद्धि नहीं आई थी उच्च समायोजनशील व्यक्ति कम आक्रामकता तथा निम्न समायोजनशील व्यक्ति अधिक आक्रामकता व्यवहार प्रदर्शित करता है इसका कारण यह होता है कि जिस व्यक्ति का उच्च समायोजन है वह अपनी समझ से परिस्थिती की अनुकूलता पर ध्यान देगा व आक्रामक व्यवहार प्रदर्शित करने में बुद्धि का सहारा लेता है। समझदार होने के साथ साथ ये छोटी छोटी बातों पर उत्तेजित नहीं होते है। वह अपने सावेगिक व्यवहार पर नियंत्रर रखते है और निम्न समायोजनशील व्यक्ति जरा जी बात पर उत्तेजित हो जाते है और अपने सावेंगिक व्यवहार पर नियंत्रण नही रख पाते है व उत्तेजना की स्थिति में अशाब्दिक आक्रामकता प्रदर्शित करते है क्योंकि वह इतना समझदार व सहनशील नहीं होता।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राप्त परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि उच्च समायोजनशील तथा निम्न समायोजनशील युवाओ की आक्रामकता में सार्थक अंतर पाया गया। अत: प्रस्तुत लधु शोध हेतु बनाई गयी उपकल्पना को अस्वीकृत किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सिंह अरूण कुमार, समाज मनोविज्ञान की रूप रेखा (2003), मोतीलाल बनारसीदास, छठा संस्करण पृष्ठ क्रं. (707–729)
2. सिंह अरूण कुमार एवं आशीष सिंह, व्यक्तित्व का मनोविज्ञान (2000) मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण।
3. भार्गव विवेक शैक्षिक मनोविज्ञान 2007 राखी प्रकाशन, प्रथम संस्करण।
4. श्रीवास्तव डी.एन. सामाजिक मनोविज्ञान (1998), साहित्य प्रकाशन, सातवां संस्करण।
5. वर्मा प्रीति, डी.एन. श्रीवास्तव, आधुनिक प्रयोगात्मक मनोविज्ञान चौदहवे संस्करण पृष्ठ क्रं. (670–673)
6. वर्मा प्रीति एवं डी.एन. श्रीवास्तव, मनोविज्ञान और शिक्षा में साख्यिकीय (2005), विनोद पुस्तक मंदिर, सोलहवा पुनमुद्रित संस्करण पृष्ठ क्रं. (239–240)
7. श्रीवास्तव राम जी, समाज मनोविज्ञान (2003),मोतीलाल बनारसीदास, प्रथम संस्करण बंगलो रोड दिल्ली 110007।
8. कपिल एच. के., अनुसंधान विधिया (2001), भार्गव बुक हाउस, एकादष संस्करण पृष्ठ क्रं. (51–72)।
9. शुक्ल ओ.पी., शिक्षा मनोविज्ञान (2006), भारत प्रकाशन लखनऊ, द्वितीय संस्करण पृष्ठ क्रं. (486–488)।

न्यादर्श तालिका 1

क्र.	परिवर्त्य	सख्या	लिंग	आयु	स्थान
1.	उच्च समायोजन शील	20	पुरूष	18 – 25	नरसिंहपुर नगर
2.	निम्न समायोजन शील	20	पुरूष	18 – 25	नरसिंहपुर नगर

परिणाम तालिका 2

परिवर्त्य	मध्यमान	मनक विचलन	t का मान	Df(38)	विशेष विवरण
उच्च समायोजनशील	23.8	7.25	3.75	0.05 पर t का मान 2.02	सार्थक अंतर है।
निम्न समायोजनशील	32.65	7.70		0.01 पर t का मान – 2.71	

****

अनुसूचित जन जाति एवं सामान्य जाति के छात्र/छात्राओं में उपलब्धि अभिप्रेरणा पर प्रभाव

घनश्याम डेहरिया*

प्रस्तावना – भारतीय परंपरा में सामाजिक व्यवस्था के वर्गीकरण के अनुसार सम्पूर्ण समाज को चार वर्णो में विभाजित किया गया है जिसमें से तीन वर्ग ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य सामान्य जाति के अन्तर आते है एवं चौथा वर्ग अनुसूचित जातियों के स्वरूप में जाना जाता है। अनुसूचित जन जातियों से हमारा तात्पर्य ऐसे सामाजिक समूहों से है। जो कि एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में रहते है तथा आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षिक विकास से पिछड़े है इनमें प्रेरणा का अभाव है। व्यक्ति विकास में प्रेरणा महत्वपूर्ण होती है। इन जनजातियों के लोग आदिम मानव की तरह जीवन व्यतीत करते है इनका रहन सहन परिवर्तन शील नहीं है। मानव व्यवहारों में सुधार एवं परिवर्तन हेतु अभिप्रेरणा एक महत्वपूर्ण तत्व है उपलब्धि अभीप्रेरणा से व्यक्ति के अपने कार्यो में सफल होने तथा दूसरे से श्रेष्ट बनने की आवश्यकता का बोध होता है आवश्यकताओं का पूरा न होने के कारण उनकी आर्थिक दशा का पिछडा होना है। मनुष्य की आवश्यकता अनन्त है, मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की श्रंखला में अत्यधिक व्यापक रूप से प्रयोग में आने वाले उपलब्धि परीक्षण हमारे शैक्षिक आर्थिक जीवन में अत्यंत सहायक होते है, यह जनजाति शैक्षणिक रूप से भी पिछडी है। शिक्षा के किसी भी पहलू का मापन केवल उपलब्धि परीक्षणो द्वारा ही संभव है इसके अभाव में शैक्षिक विकास की प्रक्रिया पूर्णतया असंभव है। उपलब्धि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में फैली है। अनुसूचित जनजाति में प्रेरणा का अभाव ही उनकी प्रगति एवं अन्य व्यवहार में बाधक है वास्तव में अभिप्रेरणा ही व्यक्ति से विभिन्न तरह के व्यवहार कराती है। शिक्षा उद्योग या किसी भी कार्य में उन्नति हेतु या किसी क्षेत्र में परिवर्तन के लिए अभिप्रेरणा की महत्वपूर्ण भूमिका है। शायद इसी कारण से लेटिन में उन्हें मोटस 'एनिम' कहा गया है अर्थात जो निरंतर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करे। अभिप्रेरणा से ही मानसिक अवस्थाओं में व्यक्ति संक्रिय रहता है और मिलता जुलता व्यवहार करता है क्योकि इन अवस्थाओं में व्यक्ति का व्यवहार किसी लक्ष्य की और निर्देशित होता है, व्यक्ति अभिप्रेरणा प्राप्त कर दूसरों के भागों को समझ कर संबंधो को बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। उपलब्धि परीक्षण शिक्षा के क्षेत्र में अत्यंत सहायक होते है।

चर –

1. **स्वतंत्र चर –** अनुसूचित जन जाति एवं सामान्य जाति के छात्र छात्राएँ।
2. **परतंत्र चर –** उपलब्धि अभिप्रेरणा, विश्वसनीयता पुन: परीक्षण विधि से (9 माह के अंतर में) 0.87 पाया गया है, वैधता उपलब्धि अभिप्रेरणा परीक्षण की वैधता डॉ. विश्वनाथ मुखर्जी के द्वारा .80 दी गई।
3. **नियंत्रित चर –** हाई स्कूल स्तर के 14 – 16 वर्ष के बालक बालिकाएँ।

परिकल्पना –

1. सामान्य एवं अनुसूचित जनजाति के बालक बालिकाओं उपलब्धि अभिप्रेरणा का प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. सामान्य एवं अनुसूचित जन जाति के बालक बालिकाओं का उच्च एवं निम्न उपलब्धि अभिप्रेरणा का अध्ययन।

न्यायदर्श

जाति	बालक	बालिका	योग
अनुसूचितजन जाति	50	50	100
सामान्य जाति	50	50	100
योग	100	100	200

अंतिम न्यायदर्श

जाति	उपलब्धि अभिप्रेरणा	बालक	बालिक	योग
अनुसूचित जन जाति	उच्च	20	20	40
	निम्न	20	20	40
समान्य जाति	उच्च	20	20	40
	निम्न	20	20	40
योग	उच्च	40	40	80
	निम्न	40	40	80

उच्च एवं निम्न उपलब्धि अभिप्रेरणा तुलनात्मक परिणाम तालिका **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

सारांश तालिका व ग्राफ **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

0.05 स्तर पर सार्थकता के लिए एफ का मान 2.29

0.01 स्तर पर सार्थकता के लिए एफ का मान 3.17 क्योंकि प्राप्त एफ मान 2.82 आया है जो कि 0.05 स्तर पर साथकता के लिए निधारित मान 2.29 की अपेक्षा अधिक उच्च है अत: यह परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

निष्कर्ष – छात्र छात्राओं पर उपलब्धि अभिप्रेरणा पर प्रभाव पड़ता है क्योंकि प्राप्त एफ का मान 2.82 आया है जो 0.05 स्तर पर सार्थकता के लिए न्युनतम निर्धारित मान 2.29 की अपेक्षा अधिक उच्च है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कपिल डॉ. एच. के अनुसंधान – विधियाँ प्रथम संस्करण, 1978 हर प्रसाद आर्गव एण्ड सन्स।
2. मंगल, डॉ. एस. के (1990) शिक्षा मनोविज्ञान परिमार्जित संस्करण, वंडन एजुकेशन पब्लिकेशन।
3. सिंह अरूण कुमार (1992) मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ प्रथम संस्करण, मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो

* अतिथि विद्वान (मनोविज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

रोड़ दिल्ली।

4. कपिल डॉ. एच. के सांख्यिकी के मूल तत्व द्वितीय संस्करण, 1998 विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
5. सिंह अरूण कुमार – आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान, संशोधन एवं परिवर्तित संस्करण, 2000 मोतीलाल बनारसीदास, 41 यू. ए. बंगलो रोड़, जवाहर नगर दिल्ली।
6. श्रीवास्तव, डी. एन., वर्मा डॉ. प्रीति मनोविज्ञान, शिक्षा और अन्य सामाजिक मनोविज्ञानो में सांख्यिकीय, नवीनतम संस्करण 2018, श्री विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।

उच्च एवं निम्न उपलब्धि अभिप्रेरणा तुलनात्मक परिणाम तालिका

उपलब्धि अभिप्रेरणा	समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचनन
उच्च	समान्य जाति	20	89.85	10.29
	अनुसूचित जन जाति	20	91.05	8.15
निम्न	समान्य जाति	20	88.00	8.68
	अनुसूचित जन जाति	20	88.65	7.67

सारांश तालिका

प्रसरण के स्त्रोत	स्वतंत्रता के अंश	वर्गो का योग	मध्यवर्ग	एफ अनुपात	सार्थकता
समूहो के बीच	5	1148.35	229.67	2.82	0.05 स्तर पर सार्थक
समूहो के मध्य	114	9282.65	81.42		
योग	119	10341.01			

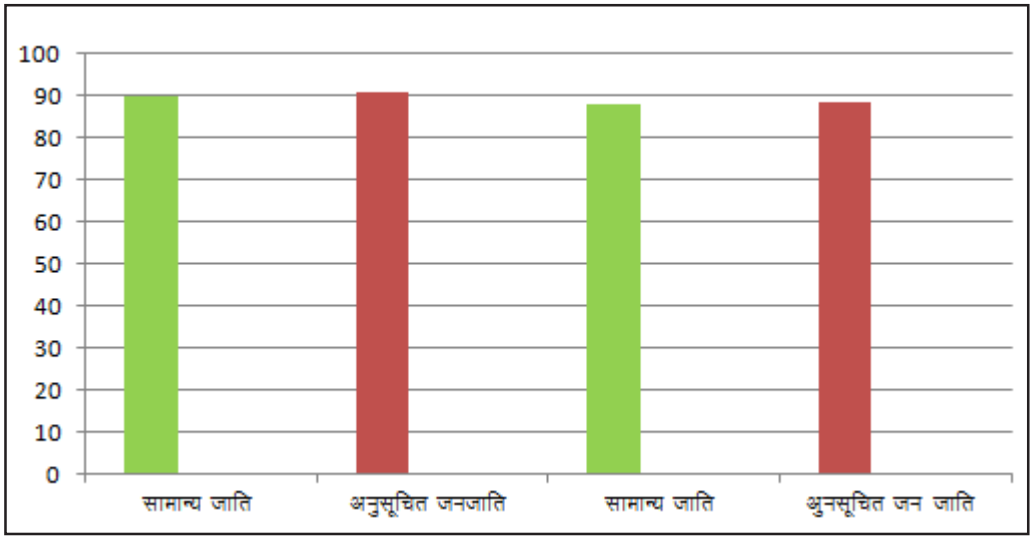

****

A Comparative Study On Agility And Explosive Power Between Kabaddi And Korfball Players Of Agra District

Dr. Ramneek Jain*

Abstract - The intention of this study was to compare agility and explosive strength levels between College level Kabaddi and Korfball players of Agra District. 25 Kabaddi and 25 Korfball players totaling 50 male subjects were randomly selected for the study. Their age ranged from 18-25 years. The objective was to identify witch group of subjects had better agility and explosive power. For agility Shuttle run and for explosive power standing broad jump tests were administered. The results showed that there is significant difference between Kabaddi and Korfball players. Korfball players have more explosive power and agility.
Key words - Agility, standing broad Jump, Kabaddi, Korfball.

Introduction - "Physical education" is not just confined to limited boundaries of study, it is relatively multifarious and weaves into its base the subjects like philosophy, kinesiology, research methodology, biomechanics, sports nutrition and sports. The various branches connected to physical education like motor behavior, biomechanics, exercise physiology, sociology, health fitness, teaching and coaching are brought up into this paper and the aims and objective of physical education as an apt carrier choice and profession is also highlighted in this study.

Practically physical education and sports hold it's unique in the field of education in any country. Thus a country must have to concentrate on development and promotion of physical education and sports . On the one hand sports increasingly cherished in media while on the other hand its being continuously ignored in t he education system. The development in infrastructure which a ids the discipline of sports must be taken case in order to improve such situations.

Long time, since physical education has been included in curriculum of education but the harsh (?) reality is that it has never gained the same panel of importance like other subjects of education. Moreover educational administrations, academicians and even students do not take it seriously as an important subject. The image of physical education is deeply sculpted in the mindset of general public as a monotonous play thing with no work and special effort to put in, though it is debatably false.

Abraham Lincoln in one of his spell bounding speech quotes that "sportsman is the best ambassador of a nation". Thus intellectually claimed – physical education director / teachers can also be regarded as the best ambassador of an institution / universities.

As well as the physical benefits, playing in a team helps develop children psychologically allowing them to make friends and feel involved with his/her peer group. Team sports also improve a child's ability to communicate and solve basic problems. Korfball will teach children social skills and managing strategies that could be useful at school, home and in peer relationships.

Objectives :

1. To Study the agility in Kabaddi and Korfball players.
2. To Study the Explosive Power in Kabaddi and Korfball players.

Hypothesis :

1. There will be no significance agility difference between Kabaddi and Korfball players.
2. There will be significance explosive power difference between Korfball and Kabaddi players

Delimitation :

1. The study is delimited to college level 18-25 Years boys from Agra District. Kabaddi and Korfball players.
2. The study is delimited to 25 Kabaddi players and 25 Korfball players of college level.
3. The study is delimited on physical fitness components like agility and explosive power only.

Methodology - To achieve the purpose of the study the investigator randomly selected 25 male Kabaddi and Korfball players from various high schools in Pondicherry. Their age ranged between 12 to 14 years. The selected players were divided into two groups. Group-I consisted of Kabaddi and group II consisted of Korfball players. Totally 50 subjects were selected. The variables selected for this study was Agility and Explosive power. The norms as suggested in the AAHPER youth fitness test was considered suitable for this study. Shuttle run test for agility and standing broad jump for explosive power was administered for the subjects. T-test was used to find out the significance differences if any between the two groups.

Analysis of Data - The analyses of the results on the

***Associate Professor (Physical Education) Madhav University, Pindwara (Raj.) INDIA**

selected variables on Kabaddi and Korfball players have been presented in the tables and figures below.

Level of Significance - For testing mean difference among the Kabaddi and Korfball players the level of significance was fixed at 0.05 level of confidence.

The data was collected as per the standard procedure. It was compared by calculated means of scores. The standard deviation and standard error for the collected data was computed.

Further "t" ratio was calculated for all the scores (Agility & explosive power). The resultant data was analyzed statically and the result are presented below.

Table 1 (see in next page)

It may be understood from the table above that there is a significant difference in the level of agility between Kabaddi and Korfball players, since the calculated value of 3.747 is higher than the table value of 2.048 at 0.05 level of confidence. Hence the hypothesis accepted.

Hence, it could be concluded that the level of agility of the Korfball players was found to be better than the Kabaddi players.

Figure I (see in next page)

Table 2 (see in next page)

It is clear from the table above that there is a significant difference in the level of explosive power between Kabaddi and Korfball players, since the calculated value of 2.207 is higher than the table value of 2.048 at 0.05 level of confidence. Hence the hypothesis was accepted.

Therefore it could be concluded that explosive power of the Korfball players was better than the Kabaddi players.

Figure II (see in next page)

Discussion on the Findings - This study was taken up to determine whether Kabaddi and Korfball players had better agility and explosive strength between them. For this purpose, 50 subjects 25 each from Kabaddi and Korfball were randomly selected as subjects. They were from the high schools of Pondicherry.

From this study it was known that there is a significant difference between Kabaddi and Korfball players so that hypothesis one was accepted.

This study shows that Korfball Players have more Agility than Kabaddi players so that hypothesis two was rejected. From this study it was known that the Korfball players have more explosive power than Kabaddi players so that hypothesis three was accepted.

Conclusions - It was concluded that the kho kho player will have lesser agility than the basket ball player.

It was concluded that the Korfball players are having more explosive power then the Kabaddi players.

It seems that kho kho players can improve their agility equal to Korfball players. Whereas they can't improve explosive power why because the Korfball game has certain equipments like baskets, Ball. Korfball game has movement of vertical jump whereas kho kho game does not have.

References :-

1. Arjunan, R. (2016). Somatotype Characteristics of College Kabaddi Players. Global Journal For Research Analysis, 4(10).
2. Azizul Haque et al (2014) A Comparative Study of Aerobic and Anaerobic Fitness between Indigenous and Non-Indigenous Game Players in West Bengal International Journal of Multidisciplinary and Current Research, Vol.2.
3. Azizul Haque (2014) A Comparative Study of Aerobic and Anaerobic Fitness between Indigenous and Non-Indigenous Game Players in West Bengal, Vol.2
4. Baker, L. B.(2007). Dehydration impairs vigilance-related attention in male Korfball players. MSSE, 39(6), 976-983.
5. Brancazio, P. J. (1981). Physics of Korfball. AJP,49(4), 356-365.
6. Chittibabu, B et.al (2011). Physiological Changes In Male Kho Kho Players During A Periodized Training Year. Asian Journal of Science and Technology, 1(12), 076-078.
7. Coutts, K. D. (1992). Dynamics of wheelchair Korfball. MSSE, 24(2), 231-234.
8. Dougherty, K. A (2006). Two percent dehydration impairs and six percent carbohydrate drink improves boys Korfball skills. MSSE, 38(9), 1650-1658.
9. Dr. Sandip Sankar Ghosh, et al July (2013) A Study on Agility and Dynamic Balance of Kabaddi Handball and Korfball Players, IJSR, Volume: 2
10. Häkkinen, K. (1993). Changes in physical fitness profile in female Korfball players during the competitive season including explosive type strength training. JSMPF, 33(1), 19-26.
11. Liu, S., & Burton, A. W. (1999). Changes in Korfball shooting patterns as a function of distance. Perceptual and Motor Skills, 89(3 Pt 1), 831-845.
12. Madhu Gaur *(2013) A Comparative Study Of Physical Fitness Between Korfball And Hockey Players Of Uttar Pradesh, IJPEHSS,Vol.02
13. Malina, R. M et al (2010). Growth, maturation, functional capacities and sport-specific skills in 12-13 year-old-Korfball players. The Journal of sports medicine and physical fitness,50(2), 174-181.
14. Stone, W. J., & Steingard, P. M. (1993). Year-round conditioning for Korfball. Clinics in sports medicine, 12(2), 173-191.
15. Wilson, B. (1997). Good black's and bad black's Media Constructions of African-American Athletes in Canadian Korfball. International Review for the Sociology of Sport, 32(2), 177-189.

Table 1 - Computation of mean, standard deviation, mean difference and "t" ratio for agility between Kabaddi and Korfball players

Group	Mean	Standard Deviation	Mean Difference	't' Ratio
Kabaddi Players	15.838	.2329	1.085	3.747*
Korfball players	16.922	.8042		

*The table value is 2.048 and level of confidence 0.05.

Figure I - Bar diagram showing the differences of Agility between Kabaddi Players and Korfball Players

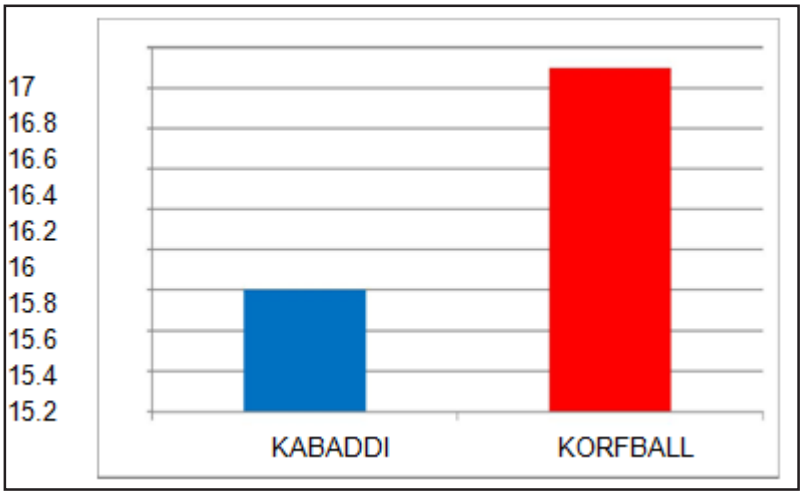

Table 2 - Computation of mean, standard deviation, mean difference and "t" ratio for explosive power between Kabaddi and Korfball Players

Group	Mean	Standard Deviation	Mean Difference	't' Ratio
Kabaddi Players	1.9672	.0865	0.0603	2.207*
Korfball players	2.277	.1469		

*The table value is 2.048 and level of confidence .05.

Figure II - Bar diagram showing the differences of explosive power between Kabaddi and Korfball Players

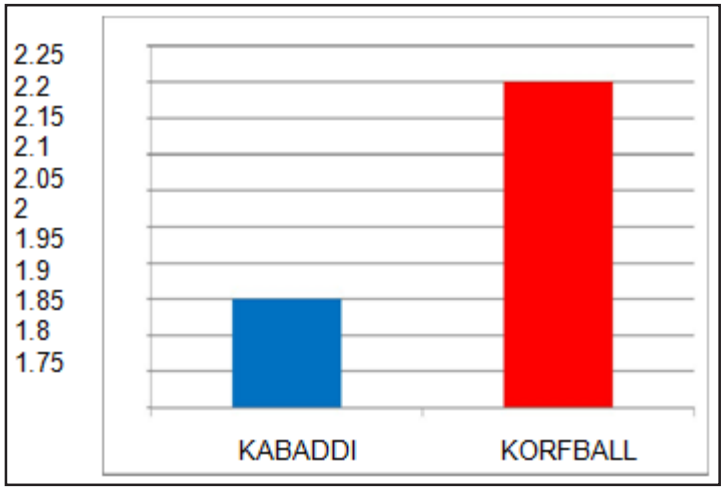

****

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में श्री अरविन्द के शिक्षा-दर्शन की प्रासंगिकता-एक अध्ययन

डॉ. शुभा श्रीवास्तव *

शोध सारांश – भारत भूमि महापुरुषों की जन्मदात्री रही है जिसकी धरती ने ऐसे महामानवों को जन्म दिया है, जिनके प्रभामण्डल से निकली ज्ञान की ज्योति ने सम्पूर्ण विश्व को आलोकित किया है, उन्हीं महामानवों में से एक हैं, महर्षि अरविन्द। वर्तमान समय में जब सम्पूर्ण समाज भौतिकतावाद की अंधी दौड़ में स्वार्थपरक होकर आदर्श शून्यता के भँवर में डूब रहा है, युवा शक्ति दिग्भ्रमित हो रही है। ऐसे में श्री अरविन्द के विचार प्रेरणा स्त्रोत हैं जिन्होंने भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को आधार मानते हुए, समन्वित रचनात्मक दर्शन के आधार पर नवीन शैक्षिक विचारधारा का प्रतिपादन भारतीय मनोवैज्ञानिक तथ्यों को समावेशित करते हुए तात्कालिक आवश्यकताओं के अनुरूप किया है।

प्रस्तावना – भारतीय सभ्यता, संस्कृति, धर्म एवं दर्शन का गौरवशाली अतीत रहा है। भारतीय दार्शनिकों ने अपने अमूल्य विचारों, चिन्तन एवं दार्शनिक सिद्धान्तों से शिक्षा की किरण को जन-साधारण तक पहुँचाने में अपना व्यावहारिक योगदान दिया है। उन्हीं विचारकों में पूर्व एवं पश्चिम संस्कृतियों के समन्वयक की कड़ी, सर्वांग विश्व दर्शन के प्रणेता, मानवतावादी, शिक्षाविद्, दार्शनिक योगिराज श्री अरविन्द हैं। उन्होंने समन्वित रचनात्मक दर्शन के आधार पर एक नवीन विचारधारा का प्रतिपादन किया, जिसमें आदर्शवाद, मानवतावाद, प्रयोजनवाद, प्रकृतिवाद एवं यथार्थवाद का सुन्दर समन्वय दर्शित है।

वर्तमान परिवेश में उत्पन्न गम्भीर चुनौतियों का सामना करने, युवा पीढ़ी के व्यवहार एवं आचरण में नैतिक, चारित्रिक मूल्यों को प्रतिष्ठित करने हेतु, अपनी संस्कृति की रक्षा करने एवं वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान बनाने में महर्षि अरविन्द के विचार उपयोगी एवं प्रेरणा स्त्रोत हैं।

शिक्षा का अर्थ – महर्षि अरविन्द ने शिक्षा का व्यापक, नवीन, व्यावहारिक एवं तार्किक स्वरूप प्रस्तुत करते हुए कहा, 'वास्तविक शिक्षा वह है जो व्यक्ति के मन, बुद्धि, विवेक एवं आत्मा को उचित प्रशिक्षण दे, जिससे व्यक्ति में अन्तर्निहित शक्तियों का विकास हो सके।' उनका मानना था कि शिक्षा मानव की आध्यात्मिक एवं भौतिक शक्तियों के विकास का साधन है। श्री अरविन्द के अनुसार अन्त:करण या मानस शिक्षा के मुख्य अंग हैं और इसके चार स्तर चिन्तन, मनस, बुद्धि एवं ज्ञान का क्रमिक विकास मानव में होता है।

आत्म शिक्षा को सच्ची शिक्षा मानते हुए उन्होंने कहा कि, 'विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को एकत्र करना शिक्षा नहीं है, वरन् मानव के मस्तिष्क एवं शक्तियों का सृजन करना शिक्षा है।'

शिक्षा का उद्देश्य – श्री अरविन्द का शिक्षा-दर्शन उनके जीवन-दर्शन का प्रतिफल है। उनके अनुसार बालक की शिक्षा, उसकी प्रकृति में जो कुछ सर्वोत्तम, सर्वाधिक शक्तिशाली, अन्तरंग और जीवन पूर्ण है, उसे अभिव्यक्त करना होना चाहिये। मानव में आध्यात्मिक तत्व सर्वोच्च है, अत: शिक्षा का उद्देश्य भी इस तत्व की पूर्णता को अभिव्यक्त करना है। महर्षि अरविन्द के विचारानुसार 'मानव एक विकासशील प्राणी है जो पशु से देवता, भोगी से योगी, अज्ञानी से ज्ञानी तथा मानव से अतिमानव बन सकता है।' अत: मानव की चेतना को प्रशिक्षित करना, उसे विकास की चरम सीमा तक पहुँचाना एवं उसका सर्वांगीण विकास करना शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। शिक्षा ही वह माध्यम है जो व्यक्ति का उचित मार्गदर्शन कर के उसमें मानवता को उभारने में सहायक है। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में यह विश्वास जागृत करना है कि वह मानसिक एवं आत्मिक दृष्टि से पूर्ण सक्षम है तथा शनै: शनै: अतिमानव (Superman) की स्थिति में आ रहा है। श्री अरविन्द मस्तिष्क को छठीं इन्द्रिय मानते थे। अत: उनके अनुसार शिक्षा का प्रयोजन इन 6 इन्दियों का सदुपयोग करना सिखाना होना चाहिए।

पाठ्यक्रम – जीवन का स्त्रोत आध्यात्मिक किन्तु आधार भौतिक है। अत: श्री अरविन्द की शिक्षा योजना में न तो आध्यात्मिकता और न ही भौतिकता की उपेक्षा की गयी है। बालक की अन्तर्निहित शक्तियों के विकास तथा भौतिक, नैतिक, आध्यात्मिक, मानसिक सभी दृष्टियों से सर्वांगीण विकास को लक्ष्य करते हुए पाठ्यक्रम में भाषा, ललित कला, विज्ञान एवं तकनीकी, इतिहास एवं संस्कृति, मनोविज्ञान, दर्शन एवं तर्कशास्त्र आदि विषयों के साथ-साथ पाठ्यान्तर क्रियाओं को उन्होंने विशेष महत्व दिया है, जिससे समग्र जीवन दृष्टि विकसित हो सके। श्री अरविन्द पाठ्यक्रम के द्वारा संस्कृति की शिक्षा, राष्ट्रीयता की भावना, वैश्विक कल्याण हेतु मानवता एवं त्याग, आध्यात्मिकता एवं अन्तर्राष्ट्रीयता की शिक्षा देने के पक्षधर हैं।

समग्र जीवन दृष्टि हेतु योगाभ्यास को महत्व प्रदान करते हुए उन्होंने कहा है कि, 'योग द्वारा ही मानसिक सुख शांति व जीवन की समस्याओं का सामना साहस के साथ किया जा सकता है।'

शिक्षा का माध्यम – मातृभाषा को महर्षि अरविन्द शिक्षा का उपयुक्त माध्यम मानते हैं क्योंकि इसी से बालक अपने देश की संस्कृति, साहित्य एवं इतिहास का परिचय प्राप्त करता है और उसे अपने चारों ओर के जीवन को समझने में सहायता मिलती है। मातृभाषा पर अधिकार होने के पश्चात् अन्य भाषा एवं अन्तर्राष्ट्रीय भाषा का ज्ञान दिया जाना चाहिए।

'शिक्षा का सच्चा आधार मानव, मस्तिष्क, शिशु किशोर एवं वयस्क का अध्ययन है।' अत: शिक्षा पूर्णरूपेण मनोवैज्ञानिक तथ्यों को आधार

* एसोसिएट प्रोफेसर (बी.एड. विभाग) दिग्विजयनाथ पी0जी0 कालेज, गोरखपुर (उ.प्र.) भारत

बनाकर दी जानी चाहिए।

शिक्षण विधि – महर्षि अरविन्द ने छात्र की इच्छा, रूचि, जिज्ञासा बौद्धिक, चेतना, निरीक्षण शक्ति का विकास, स्मृति, तर्क–वितर्क, कल्पना, चिन्तन एवं इन्द्रिय–प्रशिक्षण, एकाग्रता जैसी मानसिक शक्तियों के विकास व प्रशिक्षण हेतु ऐसी शिक्षण विधि के प्रयोग की बात कही है, जिससे विषय सामग्री का चयन कुशलतापूर्वक किया जा सके।

छात्रों को स्वतन्त्र रूप में, उनका सहयोग लेते हुए, उन्हें सक्रिय बनाना, उनकी प्रकृति के अनुरूप उनकी क्षमता का उपयोग करके सिखाना, निष्क्रियता से सीखने का प्रशिक्षण देना, रटने के स्थान पर स्वयं करके सिखाना, सहानुभूतिपूर्वक सिखाने के साथ समकालिक एवं क्रमिक प्रणाली को प्रस्तुत करने पर उन्होंने बल दिया है। अत: प्रत्येक विद्यार्थी की व्यक्तिगत अभिवृत्ति, योग्यता, स्वधर्म के अनुसार शिक्षण कार्य किया जाना चाहिये।

विद्यालय – श्री अरविन्द के अनुसार विद्यालय को भौतिक तथा आध्यात्मिक विकास के केन्द्र के रूप में समाज के लघु स्वरूप को दर्शित करने वाला तथा योग क्रिया के केन्द्र के रूप में स्थापित किया जाना चाहिए। बालकों में प्रजातांत्रिक मूल्यों, राष्ट्रीयता, मानवता, विश्वबन्धुत्व की भावना आदि को विकसित करने का कार्य विद्यालय में किया जाना चाहिए। विद्यालय में विद्यार्थियों का प्रवेश योग्यता के आधार पर ही होना चाहिए।

महर्षि अरविन्द ने अपने दार्शनिक विचारों को मूर्त रूप देने हेतु पाण्डिचेरी में आश्रम तथा श्री अरविन्द अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की।

शिक्षक एवं शिक्षार्थी – शिक्षक के महत्व को बताते हुए श्री अरविन्द ने कहा, 'शिक्षक प्रशिक्षक नहीं है, वह तो सहायक एवं पथ–प्रदर्शक है। वह केवल ज्ञान ही नहीं देता वरन् ज्ञान प्रदान करने की दिशा भी दिखलाता है। शिक्षण पद्धति की उत्कृष्टता उपयुक्त शिक्षक पर ही निर्भर करती है।'

शिक्षक के दायित्वों को निर्धारित करते हुए उन्होंने अपेक्षा की कि, एक शिक्षक को उपदेशक, सहायक, निर्देशक, मार्गदर्शक, आदर्श के रूप में, बाल मनोविज्ञान ज्ञाता एवं राष्ट्र निर्माता तो होना ही चाहिए, साथ ही साथ इन सभी से ऊपर वह आध्यात्मवेत्ता है क्योंकि उसे मानवता के अग्रदूत के रूप में मानवों को मानव के लिए विकसित करने की जिम्मेदारी का निर्वहन करना होता है।

शिक्षार्थी के सम्बन्ध में महर्षि अरविन्द ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि विद्यार्थी को आत्मानुशासित, ब्रह्मचर्य का पालन करना, ज्ञानेन्द्रियों को शुद्ध रखना, विनम्र, स्वाध्यायी, एकाग्रचित, मानव मात्र की सेवा हेतु तत्पर रहते हुए आध्यात्मिक पूर्णता की प्राप्ति हेतु उत्कंठित होना चाहिए।

अनुशासन – श्री अरविन्द कठोर, दण्डात्मक अनुशासन को अमानवीय कृत्य मानते हुए उसका विरोध करते हैं। उनका मानना है कि, प्रभावात्मक एवं आत्मानुशासन द्वारा बालकों में उत्तरदायित्व की भावना, नैतिक, चारित्रिक विकास एवं कर्त्तव्यपरायणता जैसे गुणों का विकास किया जाना चाहिए।

नारी शिक्षा के प्रति विचार – महर्षि अरविन्द नारी शिक्षा के समर्थक हैं एवं शिक्षा व्यवस्था में बालक–बालिकाओं हेतु समान अवसर उपलब्ध कराने के साथ एक ही प्रकार के पाठ्यक्रम को उनके लिए निर्धारित किए जाने पर उन्होंने बल दिया है।

महर्षि अरविन्द के शिक्षा–दर्शन की प्रासंगिकता – श्री अरविन्द के शिक्षा–दर्शन सम्बन्धी विचारों पर अध्ययनोपरान्त यह स्पष्ट होता है कि उनके द्वारा प्रदत्त अमूल्य विचार सार्थक एवं महत्वपूर्ण हैं, जिनमें वर्तमान की विभिन्न समस्याओं एवं चुनौतियों के उत्तर निहित हैं। इस महान मनीषी ने अपने दार्शनिक, शैक्षिक, प्रगतिशील विचारों से राष्ट्र निर्माण, मानव निर्माण, नैतिक व चारित्रिक विकास, सामाजिक जागरूकता, सांस्कृतिक व आध्यात्मिक मूल्यों का विकास, भौतिक–तकनीकी ज्ञान एवं योग–दर्शन को महत्ता प्रदान करते हुए, शिक्षा द्वारा पुनर्जागरण हेतु उन्होंने तीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है –

1. प्राचीन आध्यात्म ज्ञान की पुनर्स्थापना।
2. इस आध्यात्म–ज्ञान का, दर्शन, साहित्य कला, विज्ञान एवं विवेचनात्मक ज्ञान में प्रयोग।
3. वर्तमान समस्याओं का भारतीय आत्म–ज्ञान की दृष्टि से समाधान की खोज तथा आध्यात्म प्रधान समाज की स्थापना।

महर्षि अरविन्द का शिक्षा–दर्शन लक्ष्य की दृष्टि से आदर्शवादी, उपागम की दृष्टि से यथार्थवादी, क्रिया की दृष्टि से प्रयोजनवादी एवं महत्वाकाँक्षा की दृष्टि से मानवतावादी है।

उनके शिक्षा–दर्शन में निहित विचारों, आदर्शों मूल्यों को शिक्षा व्यवस्था में नीतिबद्ध रूप से पुनर्गठित, पुनर्संयोजित करके सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था को सार्थक बनाकर, तात्कालिक समस्याओं का समाधान करने के साथ ही युवा पीढ़ी को उचित मार्गदर्शन दिया जा सकता है। श्री अरविन्द के आत्मानुशासन, तर्क, चिन्तनशील प्रवृत्ति, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, बाल–केन्द्रित शिक्षा, त्याग एवं साधन, स्वाध्यायी, व्यावहारिक एवं गतिशील शिक्षा, राष्ट्र प्रेम एवं एकता, संकल्पशीलता, मानवता, राष्ट्रीयता एवं अन्तर्राष्ट्रीयता, विज्ञान व तकनीकी शिक्षा, नारी शिक्षा, सबके लिए शिक्षा, योग दर्शन, नि:शुल्क अनिवार्य शिक्षा, मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त, वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना जैसे प्रेरक विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक है, जितने कि पहले।

'यह देश यदि पश्चिम की शक्तियों को ग्रहण करें और अपनी शक्तियों का भी विनाश नहीं होने दें तो उसके भीतर से जिस संस्कृति का उदय होगा वह अखिल विश्व के लिए कल्याणकारिणी होगी वास्तव में वही संस्कृति विश्व की अगली संस्कृति बनेगी।' आज उनकी इसी बात को अपनाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ग्रोवर, डॉ0 इन्द्रा – संसार के महान शिक्षाशास्त्री, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1978
2. चौबे, डॉ0 एस0पी0 एण्ड चौबे डॉ0 अखिलेश – भारत और पश्चिम के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री भवदीय प्रकाशन, अयोध्या, 2002
3. दिवाकर, आर0आर0– महायोगी श्री अरविन्दो लाइफ डिसिप्लिन एण्ड टीचिंग चतुर्थ संस्करण विद्या भवन, बम्बई, 1967
4. दूबे, डॉ0 रमाकान्त – विश्व के कुछ महान शिक्षाशास्त्री, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ (सातवाँ प्रसंस्करण)।
5. भट्टाचार्य, आर0एन0 – द सोशल फिलॉसफी ऑफ द श्री अरविन्दो, विनीत, मेरठ, 1980
6. श्री अरविन्द – भारत में पुनर्जागरण।
7. सिंह, ओ0पी0 – शिक्षा–दर्शन एवं शिक्षाशास्त्री, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2004

भारतीय चित्रकला में राग रागिनी का सौन्दर्यपूर्ण अंकन

अर्चना *

शोध सारांश – मानवीय भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम ललित कला है, जो व्यक्ति को तनाव मुक्त कर आनन्द प्रदान करती है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में कोई भी प्राणी संगीत की मधुरता से अछूता नहीं रहा है। कलाओं का मानव जीवन में अपना ही महत्व है। यदि दो कलाए आपस में मिल जाती है तो एक अद्भुत कृति का निर्माण होता है। यदि भारतीय चित्रकला की बात की जाए तो प्रागैतिहासिक काल से लेकर वर्तमान तक संगीत से सम्बन्धित अनेकों सर्वश्रेष्ठ चित्रों का निर्माण हुआ तथा राग रागिनी से सम्बन्धित चित्र भारतीय चित्रकला में विशिष्ठ स्थान प्राप्त किए हुए है। जिनका भारतीय चित्रकला में अपना एक विशेष महत्व है।

प्रस्तावना – द्रुहिणेत यदन्विष्टं प्रयुक्त भरतेन च।
महादेण्स्य पुरतस्तन्मागरिण्य विमुक्तदम्।।

अर्थात् ब्रह्मा ने जिस संगीत को शोधकर निकाला भरतमुनि ने महादेव के सामने जिसका प्रयोग किया तथा जो मुक्तिदायक है, वह 'मार्गी' संगीत कहलाता है। प्रागैतिहासिक काल से ही व्यक्ति संगीत को अनुभव करता रहा है क्योंकि मानव ने उस काल में संगीत से सम्बन्धित चित्रों को गुफाओं में उकेरा है। समय के साथ–साथ व्यक्ति ने संगीत से सम्बन्धित अनेकों चित्रों का निर्माण किया है। यदि बात राग से सम्बन्धित चित्रों की की जाए तो असंख्य रागों का चित्रण भारतीय चित्रकला में प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में हर राग का अपना एक रूप एक व्यक्तित्व होता है। जो उसमें लगने वाले स्तरों और लय पर निर्भर करता है। किसी राग की जाति इस बात से निर्धारित होती है कि उसमें कितने स्तर है। आरोह – अवरोह में सातों स्वर होने पर राग 'सम्पूर्ण जाति' का कहलाता है। पाँच स्वर लगने पर राग 'औडव' और छ: स्वर लगने पर 'षाडव' राग कहलाता है। यदि आरोह में सात और अवरोह में पाँच स्तर है तो राग 'सम्पूर्ण औडव' कहलाएगा। इस तरह कुल 9 जातियाँ तैयार हो सकती है। जिन्हें राग की उपजातियाँ भी कहते है।

साधारण गणित के हिसाब से देखे तो एक 'थाट' के सात स्वरों में 484 राग तैयार हो सकते है। लेकिन कुल मिलाकर कोई डेढ़ सौ राग ही प्रचलित है। लेकिन यह केवल साधारण गणित की बात है। आरोह में 7 और अवरोह में भी सात स्वर होने पर सम्पूर्ण जाति बनती है, जिससे केवल एक ही राग बन सकता है। वहीं आरोह में 7 और अवरोह में 6 स्तर होने पर 'सम्पूर्ण षाडव' जाति बन जाती है। कम से कम पाँच और अधिक से अधिक 7 स्वरों से मिलकर राग बनता है। राग को गाया बजाया जाता है और ये कर्णप्रिय होता है। इन सभी रागों का चित्रण भारतीय चित्रकला में देखने को मिल जाता है। जिसे भारतीय चित्रकारों से बडे ही मनोहारी ढंग से व सौन्दर्य के साथ प्रस्तुत किया है। हर राग की अपनी कुछ न कुछ विशेषताएँ होती है जिन्हें भारतीय चित्रकारों ने पूर्ण सौन्दर्य के साथ धरातल पर उकेरा है। भारतीय चित्रकला में असंख्य रागों का चित्रण हुआ है। जिसका उदाहरण हम कॉंगडा के रागमाला चित्रों में देख सकते है। जिसमें अलग–अलग रागों का चित्रण सौन्दर्यात्मक ढंग से किया गया है।

राग बसन्त नामक राग फागुन के समय में गाया जाता है। राग बसन्त से सम्बन्धित चित्र को भारतीय चित्रकारों ने बडे ही मनोहर ढंग से प्रस्तुत किया है। इस राग से सम्बन्धित चित्र में कृष्णा यमुना के किनारे नृत्य कर रहे है जिसने दाहिना हाथ ऊपर की तरफ उठा व हल्का सर की तरफ झुका है और दूसरा हाथ पीछे की ओर फैला है। इस चित्र में राधा मंदग बजा रही है और पीछे एक गोपी खड़ताल बजा रही है और पीछे की ओर हरे – भरे पेड़ों का अंकन है। इसी तरह पंचम राग नामक चित्र में राजा एक चौकी पर बैठे है और उन्हें हीरन का समूह घेरे हुए है, जैसे राजा ने हीरन के एक छोटे से परिवार को पाया हो और वे राजा के साथ प्रेम पूर्वक खेल रहे है चित्र में एक तालाब भी अंकित है। जो कमल पुष्पों से भरा है। जिसके कारण इस चित्र की शोभा और अधिक बढ रही है। इस तरह ही राग भासकर चित्र में कलाकारों ने सम्पूर्ण राग की विशेषताए इस चित्र में प्रदर्शित कर दी है। प्रात: काल का समय मानों चित्र में ठहर गया है। उगते सूर्य की लालिमा भूमि पर पड़ रही है। जो व्यक्ति को स्वत: ही अपनी और आकर्षित कर रही है। एक राजा पूजा की मुद्रा में अंकित है, जो इस चित्र की शोभा को ओर अधिक बढा रहा है। इन राग के अलावा भी मेघ राग, हिण्डोल राग, दीपक राग, पंचम राग, सारंग राग, आदि का चित्रण भारतीय चित्रकला में सौन्दर्यात्मक ढंग से किया गया है जो दृश्क को अपनी और स्वत: ही आकर्षित कर लेते है। कॉंगडा शैली में रागमाला का चित्रण भारतीय कला में विशेष महत्व लिये हुए है। राग– रागिनी सम्बन्धित चित्रों को कलाकारों ने पूर्ण सौन्दर्य के साथ सम्पूर्ण किये है जो देखने वाले को आनंदित करते है। भारतीय कलाकारों का मुख्य उद्देश्य ही सौन्दर्यपूर्ण चित्रण रहा है। विषय चाहे कोई भी रहा हो भारतीय कलाकारों ने सभी चित्रों को इतने अधिक भाव पूर्ण चित्रित किये है कि उसके विषय की हम सरलता से समझ पाते है और ये चित्र आज भी व्यक्ति को स्वत: ही अपनी ओर आकर्षित कर लेते है। जो भारतीय चित्रकला की महान विशेषता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Randhawa M.S., Kangra Ragamala Painting, National, Museum, New Delhi, 1971.
2. सक्सेना डॉ. सुनील कुमार, कॉंगडा की चित्रकला में श्रृंगार, कला प्रकाशन, वाराणसी, 2009.
3. वीरेश्वर डॉ. प्रकाश, शर्मा डॉ. नूपुर, कला दर्शन, कृष्णा प्रकाशन मीडिया (प्रा0) लि0, मेरठ, 2005.

*शोधार्थी, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.) भारत